श्रीमद्वाल्मीकिरामायणे

सुन्दरकाण्डम्

हिन्दी टीका सहित



टीकाकार

विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्र

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई-४

श्रीमद्वाल्मीकिरामायणे

सुन्दरकाण्डम्

हिन्दी टीका सहित

टीकाकार

विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्र



खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई-४

संस्करण : अप्रैल २०१३, संवत् २०७०

मूल्य : २४० रुपये मात्र।

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास™,
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass,
Prop: Shri Venkateshwar Press,
Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi,
Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s. Khemraj Shrikrishnadass, Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai - 400 004,
at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013.

दोहा—कनक वरण अरु शैल सम, धारे रूप विशाल । गर्जि घोर रामहि सुमिर, चल्यौ अंजनी लाल ॥ १ ॥

उसके पीछे शत्रुओंके दमन करनेवाले हनुमानूजी रावणसे हरी सीताजीके ढूँढनेको जिस मार्गमें सिद्ध चारण गण जाया करते हैं, उसी आकाश मार्गमें होकर जानेकी इच्छा करने लगे ॥१॥ जो दूसरेसे न करा जावे ऐसा दुष्कर कर्म करनेके अभिलाषी होकर विघ्नरहित गर्दन और मस्तक उठाये बडे वृषभके समान महावीर शोभायमान होने लगे ॥२॥ तहाँ वह धीर महाबली हनुमान् वैदूर्यमणिके वर्णके समानऔर जलप्राय हरी २ घासोंके समूहमें यथासुख विचरने लगे ॥३॥ वह हनुमानूजी वहांके रहने वाले पक्षियोंको त्रासित करते, अपनी छातीकी रगडसे वृक्षोंको गिराते, अति बढे हुए बहुतसे मृगोंको हनन करते हुए सिंहके

श्रीरामचंद्रायनमः ॥ ॥ ततोरावणनीतायाःसीतायाःशत्रुकर्षणः ॥ इयेषपदमन्वेष्टुंचारणाचरितेपथि ॥ १ ॥ दुष्करंनिष्प्रतिद्वंद्वंचि
कीर्षन्कर्मवानरः ॥ समुदग्रशिरोग्रीवोगवांपतिरिवाबभौ ॥ २ ॥ अथवैदूर्यवर्णेषुशाद्वलेषुमहाबलः ॥ धीरःसलिलकल्पेषुविचचारयथासुखम्
॥ ३ ॥ द्विजान्वित्रासयन्धीमानुरसापादपान्हरन् ॥ मृगांश्चसुबहून्निघ्नन्प्रवृद्धइवकेसरी ॥ ४ ॥ नीललोहितमांजिष्ठपद्मवर्णैःसितासितैः ॥
स्वभावसिद्धैर्विमलैर्धातुभिःसमलंकृतम् ॥५॥ कामरूपिभिराविष्टमभीक्ष्णंसपरिच्छदैः ॥ यक्षकिन्नरगंधर्वैर्देवकल्पैःसपन्नगैः ॥ ६ ॥ सतस्या
गिरिवर्यस्यतलेनागवरायुते ॥ तिष्ठन्कपिवरस्तत्रह्रदेनागइवाबभौ ॥ ७ ॥ ससूर्यायमहेंद्रायपवनायस्वयंभुवे ॥ भूतेभ्यश्चांजलिंकृत्वाचकार
गमनेमतिम् ॥ ८ ॥ अंजलिंप्राङ्मुखं कुर्वन्पवनायात्मयोनये ॥ ततोहिववृधेगंतुंदक्षिणोदक्षिणांदिशम् ॥ ९ ॥ प्लवगप्रवरैर्दृष्टःप्लवनेकृत
निश्चयः ॥ ववृधेरामवृद्ध्यर्थंसमुद्रइवपर्वसु ॥ १० ॥

समान शोभित होते हुए ॥४॥ पर्वतके स्वभावसिद्ध श्वेत, कृष्ण, कनेरी, मजीठी रंगकी पद्मराग मणियोंसे और पर्वतोंपर आप उत्पन्न हुई विमल धातुओंसे अलंकृत ॥५॥ अनेक भाँतिके भूषण वस्त्र धारण किये अपने २ परिवारों सहित, देवताओंके समानकामरूपी यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, और सर्पोंसे सेवित ॥६॥ और श्रेष्ठ हाथियोंसे व्याप्त उस महेन्द्र पर्वतकी तलैटीमें इस प्रकार रहनेसे वानरश्रेष्ठ हनुमान् सरोवरमें स्थित हाथीके समान शोभित हुए ॥ ७ ॥ तब हनुमानजी सूर्य महेंद्र, पवन और दूसरे प्राणियोंको हाथ जोडकर आकाशमें जानेकी मति करते हुए ॥८॥ वह चतुर अपनी उत्पत्तिके हेतु पवनदेवताको पूर्वमुख हो प्रणाम करके दक्षिण दिशाको गमन करनेके लिये बढ़ने लगे ॥९॥ वानरश्रेष्ठोंने देखा कि, श्रीरामचन्द्रजीके हितार्थ समुद्र लांघनेके लिये निश्चय करे हुए हनुमानूजीका शरीर

ऐसे बढने लगा, जैसे पूर्णमासीके पूर्ण चन्द्रमाको देख समुद्रकी लहरें बढ़ती हैं ॥१०॥ हनुमानूजी प्रमाणरहित देहधारण करतेहुए समुद्रको लांघनेके अभिलाषी हो भुजा और चरणोंसे पर्वतको पीडित करने लगे ॥११॥ जब हनुमानूजीने उसको पीडित किया तब मुहूर्त्तभरतक वह पर्वत चलायमान रहा, जिसके कि फूले फले वृक्षोंके समस्त पुष्प गिरगये ॥१२॥ जब उन समस्त सुगंधित पुष्पोंने वृक्षोंपरसे गिरकर उस पर्वतको ढक लिया तब ऐसा ज्ञात हुआ मानो समस्त पर्वतही फूलोंका बना हुआ है ॥ १३ ॥ वह महेन्द्र पर्वत, बलवान् वीर्यवान् कपिश्रेष्ठ हनुमानूजीसे पीडित होकर मतवाले हाथीके मद चुआनेके समान जल बहाने लगा ॥ १४ ॥ हनुमानूजीसे पीडित हो इस पर्वतके चारों ओरसे कांचनके और चांदीके वर्णवाले अनेक भांतिके सोते बहने लगे ॥१५॥ और वह पर्वत मनशिलयुक्त बडी २

निष्प्रमाणशरीरःसँल्लिलंघयिषुरर्णवम् ॥ बाहुभ्यांपीडयामासचरणाभ्यांचपर्वतम् ॥११॥ सचचालाचलश्चाशुमुहूर्तंकपिपीडितः॥ तरूणांपुष्पिताग्राणांसर्वंपुष्पमशातयत ॥१२॥ तेनपादपमुक्तेनपुष्पोघेणसुगंधिना॥ सर्वतःसंवृतःशैलोबभौपुष्पमयोयथा॥१३॥ तेनचोत्तमवीर्येणपीडयमानःसपर्वतः॥ सलिलंसंप्रसुस्रावमदमत्तइवद्विपः ॥१४॥ पीडयमानस्तुबलिना महेंद्रस्तेनपर्वतः॥ रीतीर्निर्वर्तयामासकांचनांजनराजतीः ॥ १५ ॥मुमोचचशिलाःशैलोविशालाःसमनःशिलाः॥मध्यमेनार्चिषाजुष्टोधूमराजिरिवानलः॥ १६ ॥हरिणापीडयमानेनपीडयमानानिसर्वतः॥गुहाविष्टानिसत्त्वानिविनेदुर्विकृतैःस्वरैः ॥१७॥ समहान्सत्त्वसन्नादःशैलपीडानिमित्तजः॥ पृथिवींपूरयामासदिशश्चोपवनानिच ॥१८॥ शिरोभिःपृथुभिर्नागव्यक्तस्वस्तिकलक्षणैः॥वमंतःपावकंघोरंददंशुर्दशनैःशिलाः ॥१९॥ तास्तदासविषैर्दष्टाःकुपितैस्तैर्महाशिलाः॥ जज्वलुःपावकोदीप्ताबिभिदुश्चसहस्रधा ॥ २० ॥ यानित्वौषधजालानितस्मिञ्जातानिपर्वते ॥ विषघ्नान्यपिनागानांनशेकुःशमितुंविषम् ॥ २१ ॥

शिलायें छोडने लगा, तो उससे ऐसी शोभा हुई कि, मानो अग्निका मध्यस्थान जलता है और वह चारों ओरसे धुएकी राशि छोडता है ॥१६॥ हनुमानूजीसे पीडित होनेके कारण इस पर्वतकी गुहाओंमें रहनेवाले प्राणी सब भाँतिसे सताये जाकर विकट शब्दसे चिल्लाने लगे ॥१७॥ पर्वतकी पीडाके निमित्त उन प्राणियोंके उस चिल्लाहटकी ध्वनिसे पृथ्वी व दशों दिशा और सब उपवन पूरित होगये ॥१८॥ फनेवाले सर्प नीले रेखाओंसे युक्त अपने बडे मस्तकसे भयंकर अग्नि उगलते हुए दांतोंसे शिलाओंको काटने लगे ॥१९॥ तब बडे २ पत्थर उन विषयुक्त क्रोधित सर्पोंसे काटे जाकर अग्निसे प्रदीप्त वस्तुके समान चलकर हजार २ टुकडे होगये ॥ २० ॥ उस पर्वतमें विषकी नाश करनेवाली जो दवाइयें थीं वह सब दवाइयें भी इन सर्पोंके विषको निवारण नहीं कर सकतीं ॥ २१ ॥

उस पर्वतको ब्रह्मराक्षसादि भूतोंसे फटका हुआ जान कर तपस्वीलोग और अपनी २ स्त्रियोंके सहित विद्याधर लोग उसपरसे चले गये ॥२२॥ मदपानकरनेके सुवर्णमय पात्र, मद पीनेके स्थानमेंही छोड दिये; इनके अतिरिक्त सुवर्ण चांदीके भोजनादि करनेके, बडे मूल्यवान पात्र और सुवर्णके कमंडलु सब वहींपर छोडदिये ॥२३॥ चाटनेकी चटनी आदि विविध पादार्थ और भोजनकरनेके अनेक प्रकारके मांस और बैलोंके चमडेसे बँधे, मृगादिकोंके चर्मसे मढे सुवर्णकी मूठें लगे हुये खड्ग ॥२४॥ आदि पदार्थोंको छोडकर मतवाले माला पहरे चन्दनादि लगाये अरुण और कमल नेत्र युक्त विद्याधरगण मानो उच्चस्वरसे गान करते आकाशको चले गये ॥२५॥ श्रेष्ठ हार धारण करे नूपुर और बाजू पहरे विद्याधरों की स्त्रियें विस्मित हो कुछेक हास्य करती हुई अपने २ स्वामियोंके साथ आकाशमें खड़ी रहीं

भिद्यतेऽयंगिरिर्भूतैरितिमत्वातपस्विनः ॥ त्रस्ताविद्याधरास्तस्मादुत्पेतुःस्त्रीगणैःसह ॥ २२ ॥ पानभूमिगतंहित्वाहैममासनभाजनम् ॥ पात्राणिचमहार्हाणिकरकांश्चहिरण्मयान् ॥२३॥ लेह्यानुच्चावचान्भक्ष्यान्मांसानिविविधानिच ॥ आर्षभाणिचचर्माणिखड्गांश्चकनकत्सरून् ॥२४॥ कृतकंठगुणाःक्षीबारक्तमाल्यानुलेपनाः ॥ रक्ताक्षाःपुष्कराक्षाश्चगगनंप्रतिपेदिरे ॥२५॥ हारनूपुरकेयूरपारिहार्यधराःस्त्रियः ॥ विस्मिताःसस्मितास्तस्थुराकाशेरमणैःसह ॥२६॥ "दर्शयंतोमहाविद्यांविद्याधरमहर्षयः ॥ सहितास्तस्थुराकाशेवीक्षांचक्रुश्चपर्वतम् ॥२७॥ शुश्रुवुश्चतदाशब्दमृषीणांभावितात्मनाम् ॥ चारणानांचसिद्धानांस्थितानांविमलेंबरे ॥ २८ ॥" एषपर्वतसंकाशोहनुमान्मारुतात्मजः॥तितीर्षतिमहावेगःसमुद्रंवरुणालयम् ॥२९॥ रामार्थंवानरार्थंचचिकीर्षन्कर्मदुष्करम् ॥ समुद्रस्यपरंपारंदुष्प्रापंप्राप्तुमिच्छति ॥३०॥ इतिविद्याधरावाचःश्रुत्वातेषांतपस्विनाम् ॥ तमप्रमेयंददृशुःपर्वतेवानरर्षभम् ॥ ३१ ॥ दुधुवेचसरोमाणिचकंपेचानलोपमः ॥ ननादचमहानादंसुमहानिवतोयदः ॥ ३२ ॥ आनुपूर्व्याचवृत्तंतल्लांगूलंलोमभिश्चितम् ॥ उत्पतिष्यन्विचिक्षेपपक्षिराजइवोरगम् ॥ ३३ ॥

॥२६॥ तब महर्षि और विद्याधर लोग परस्पर मिल वह महाविद्या दिखाते आकाशमें टिके उस महेन्द्र पर्वतको देखने लगे ॥२७॥ तब निर्मल आकाशमें टिके हुए विशुद्धचित्त ऋषि सिद्ध और चारणोंका यह वचन श्रवण करते हुए ॥ २८ ॥ यह महा वेगवान् पर्वताकार पवन कुमार हनुमान्जी वरुणालय समुद्रके पार जानेका अभिलाष करते हैं ॥२९॥ यह हनुमान्जी श्रीरामचन्द्रजी और वानरोंके निमित्त दुष्करकार्य करने के अभिलाषी हो समुद्रके उतरनेकी इच्छा करते हैं ॥ ३० ॥ तपस्वी लोगोंके यह वचन सुन कर विद्याधरोंने उस पर्वतपर टिके हुए अप्रमाण प्रभाववाले कपिश्रेष्ठ हनुमान्जीको देखा ॥३१॥ इस ओर पावक के समान पवन कुमार हनुमान्जी स्वयं कम्पायमानहो अपने रुओंको फुलाते महा मेघके समान महानादसे शब्द करते हुये ॥३२॥ और कूदने की वासना कर

क्रमसे गोलाकार रुओंसे छाई हुई अपनी पूंछ हिलाई, जैसे गरुड़जी सर्पको पकडकर हिलाते हैं ॥३३॥ पीछेसे हिलती हुई इनकी पूंछ गरुड़जीसे पकडे हुए अजगर सर्पके समान हिलती हुई दृष्टि आती थी॥३४॥ कूदनेके समय उन्होंने अपनी परिघ आकारवाले महाबाहु दृढ किये, और कमरके धोरसे बहुतही सुकड गये और चरणोंको भी सकोड लिया ॥ ३५ ॥ हाथ शिर व ओष्ठ भी इस भांति सकोड लिये, और तेज, सत्य, वीर्यमें भी महावीर्यवान् हनुमान्‌जी प्रविष्ट होगये ॥३६॥ और ऊपरको दृष्टिकर दूरसे आकाश मार्गको देखते हुये हृदयमें प्राणवायुको रोक ॥३७॥ वह कपिकुंजर महा बलवान् श्रेष्ठ हनुमान्‌जी दोनों कानोंको सकोड दोनों चरणोंको जमाय कूदनेके समय ॥३८॥ वानर श्रेष्ठोंसे कहने लगे कि जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीके छोडे हुए बाण वायुके समान गमनकरते हैं ॥३९॥ वैसेही हम रावणसे पाली हुई लंकानगरीमें चले जायँगे । यदि जनककुमारी सीताजीको हम वहां न देख पावेंगे ॥४०॥ तो यही वेग धारण किये

तस्यलांगूलमाविद्धमतिवेगस्यपृष्ठतः ॥ ददृशेगरुडेनेवह्रियमाणोमहोरगः॥३४॥बाहूसंस्तंभयामासमहापरिघसन्निभौ॥आससादकपिःकट्यां चरणौसंचुकोचच ॥३५॥ संहृत्यचभुजौ श्रीमांस्तथैवचशिरोधरान्॥तेजःसत्त्वंतथावीर्यमाविवेशसवीर्यवान् ॥३६॥ मार्गमालोकयन्दूरादूर्ध्वं प्रणिहितेक्षणः ॥ रुरोधहृदये प्राणानाकाशंमवलोकयन्॥३७॥पद्भ्यांदृढमवस्थानंकृत्वासकपिकुंजरः ॥ निकुच्यकर्णौहनुमानुत्पतिष्यन्महाबलः ॥३८॥वानरान्वानरश्रेष्ठइदंवचनमब्रवीत् ॥ यथाराघवनिर्मुक्तःशरः श्वसनविक्रमः ॥३९॥ गच्छेतद्वद्गमिष्यामिलंकांरावणपालिताम् ॥ नहि द्रक्ष्यामियदितांलंकायांजनकात्मजाम् ॥४०॥ अनेनैवहिवेगेनगमिष्यामिसुरालयम् ॥ यदिवात्रिदिवेसीतांनद्रक्ष्यामिकृतश्रमः॥ ॥४१॥ बद्ध्वा राक्षसराजानमानयिष्यामिरावणम् ॥ सर्वथाकृतकार्योहमेष्यामिसहसीतया ॥४२॥ आनयिष्यामिवालंकांसमुत्पाटचसरावणाम्॥एवमुक्त्वा तुहनुमान्वानरान्वानरोत्तमः॥४३॥उत्पपाताथवेगेनवेगवानविचारयन् ॥ सुपर्णमिवचात्मानंमेनेसकपिकुंजरः॥४४॥ समुत्पततिवेगात्तुवेगात्तेन गरोहिणः॥संहृत्यविटपान्सर्वान्समुत्पेतुः समंततः॥४५॥ समत्तकोयष्टिभकान्पादपान्पुष्पशालिनः॥उद्वहन्नुरुवेगेनजगामविमलेंबरे ॥४६॥

हुए स्वर्गको चले जायँगे । यदि वहां भी सीताजीको न देख पाकर हम विफल यत्नहो ॥४१॥ तो राक्षस राजरावणको बांधकर ले आवेंगे या तो हम सब प्रकारसेसफल मनोरथ हो सीताजीके साथही लौटेंगे ॥४२॥ अथवा रावण सहित समस्त लंकानगरीको उखाड कर यहां ले आवेंगे । वानर श्रेष्ठ हनुमान्‌जी वानरों से इस प्रकार कह ॥४३॥ समुद्र लांघनेके क्लेशको न विचार कर वह वेगवान् अति वेगसे कूदेऔर उस समय अपने आपको गरुड़के समान कपियोंमें श्रेष्ठ हनुमान्‌जी मानते हुए ॥४४॥ अब महावीरजी कूदे तब उस पर्वत करके उत्पन्न हुये समस्त वृक्ष उनके वेगकी झोंकसे अपनी शाखाओंको संकुचित कर चारों ओरसे ऊपरको उछलने लगे ॥ ४५ ॥ हनुमान्‌जी अपने वेगसे मतवाले कोकिलादि पक्षियोंसे सेवित पुष्पोंसे अलंकृत वृक्ष अपनी जंघाओंके वेगसे उखाडते

निर्मल आकाशमें गमन करने लगे ॥४६॥ बंधुलोग जिस प्रकार दूर देश जाते हुए बंधुके साथ थोडी दूर चलते हैं, वैसेही उन कपिश्रेष्ठ हनुमानूजी की जंघाओंके वेगसे हुए वृक्ष एक मुहूर्त तक उनके पीछे २ चले गये ॥४७॥ सेनाके सिपाही जिस प्रकार राजाके पीछे २ चलते हैं, वैसेही शाल व और दूसरे उत्तम वृक्ष हनुमानूजी की जंघोंके वेगसे उखडे हुए उनके पीछे २ चले ॥४८॥ तब वानर श्रेष्ठ हनुमानूजी अनेक पुष्पित वृक्षोंसे युक्त होकर अद्भुत आकारवाले पर्वतके समान शोभित हुए ॥४९॥ फिर जिस प्रकार समस्त पर्वत इंद्रजीके भयसे वरुणालय समुद्रमें डूबे थे वैसेही भारी २ वृक्ष थोडी दूर हनुमानूजी के साथ चलकर लवण समुद्रमें गिरने लगे ॥५०॥ जिस प्रकार पर्वत बहुत सारे पट बीजनोंसे युक्त होकर शोभायमान होता है, वैसेही मेघाकार वानर श्रेष्ठ हनुमानूजी अंकुरित पुष्पित और कलीदार अनेक प्रकारके पुष्पोंसे युक्त होकर शोभित हुए ॥५१॥ हनुमानूजी के वेगसे छूटे हुए समस्त वृक्ष पुष्प छोडकर समुद्रके जलमें ऐसे गिरे जिस

ऊरुवेगोत्थितावृक्षामुहूर्तंकपिमन्वयुः ॥ प्रस्थितंदीर्घमध्वानंस्वबंधुमिवबांधवाः ॥४७॥ तमूरुवेगोन्मथिताःसालाश्चान्येनगोत्तमाः ॥ अनुजग्मुर्हनूमंतंसैन्याइवमहीपतिम् ॥ ४८ ॥ सुपुष्पिताग्रैर्बहुभिःपादपैरन्वितःकपिः ॥ हनुमान्पर्वताकारोबभूवाद्भुतदर्शनः ॥४९॥ सारवंतोऽथयेवृक्षान्यमज्जँल्लवणांभसि ॥ भयादिवमहेंद्रस्यपर्वतावरुणालये ॥५०॥ सनानाकुसुमैःकीर्णःकपिःसांकुरकोरकैः॥शुशुभेमेघसंकाशःखद्योतैरिवपर्वतः॥५१॥विमुक्तास्तस्यवेगेनमुक्त्वापुष्पाणितेद्रुमाः॥व्यवशीर्यंतसलिलेनिवृत्ताःसुहृदोयथा ॥५२॥ लघुत्वेनोपपन्नंतद्विचित्रंसागरेऽपतत् ॥ द्रुमाणांविविधंपुष्पंकपिवायुसमीरितम् ॥५३॥ पुष्पौघेणसुगंधेननानावर्णेनवानरः ॥ बभौमेघइवोद्यन्वैविद्युद्गणविभूषितः ॥५४॥ तस्यवेगसमुद्धूतैःपुष्पस्तोयमदृश्यत ॥ ताराभिरभिरामाभिरुदिताभिरिवांबरम् ॥ ५५ ॥ तस्यांबरगतौबाहूददृशातेप्रसारितौ ॥ पर्वताग्राद्विनिष्क्रांतौपंचास्याविवपन्नगौ ॥ ५६ ॥ पिबन्निवबभौचापिसोर्मिजालंमहार्णवम् ॥ पिपासुरिवचाकाशंददृशेसमहाकपिः ॥ ५७ ॥

प्रकार दूर देशको जानेवाले पथिक के भाई बंधु उसको थोडी दूर पहुंचाकरहम जाते हैं।॥५२॥वृक्षोंके जो अनेक प्रकारके पुष्प जो कि हनुमानूजीके उछलनेको पवनके प्रेरित और उनके शीघ्रगमनसे थोडी दूरतक चले आये थे वहसब समुद्रमें गिरपडे॥५३॥उस कालमें रंग बिरंगे सुगंधियुक्त समूहसे भूषित उदित हो कपि श्रेष्ठ पवन कुमार हनुमानूजी बिजली की रेखाओंसे विभूषित उदित मेघके समानशोभायमान हुए॥५४॥जिस प्रकार आकाश मंडल उदय हुए रमणीय तारागणोंसे गुच्छोंसे सज जाता है,वैसेही समुद्रका जल हनुमानूजीके वेगसे उड आये हुए पुष्पोंके समूहसे शोभित होने लगा॥५५॥उस काल हनुमानूजीके फैलाये हुये दोनोंहाथ आकाशमें ऐसे दृष्टि आये मानो पर्वतके शिखरसे पांच शिरवाले दोसर्पनिकल रहे हैं॥५६॥वह वानरश्रेष्ठ हनुमानूजी तरंगमाला शोभित महासागरको

मानो पिये लेते हैं अथवा मानो समस्त आकाशके पीनेको उद्यत हुए हों इस प्रकारसे दृश्यमान और शोभायमान होने लगे ॥५७॥ जब कि वह वायुमार्गके अनुसार चलनेलगे तब उनके बिजलीके समान प्रभायुक्त दोनोंनेत्र पर्वतके शिखर परकी दो अग्नियोंके समान प्रकाशित हुए॥५८॥ उन कपिश्रेष्ठके गोलाकार पीछे मण्डलवालेबडे २ दोनोंनेत्र आकाशमें स्थित हुए सूर्य चन्द्रमाके समान प्रकाशित होने लगे॥५९॥उनकी लाल नासिका व लालही वदन संध्यासमयके सूर्यनारायणके मण्डलके समान शोभित हुआ ॥ ६० ॥ आकाशमें चलते हुए पवन कुमार हनुमान्‌जीकी हिलती हुई पूँछ इन्द्रध्वजके समान शोभा धारण करती हुई ॥ ६१ ॥ महाप्राज्ञश्वेत दांतवाले कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जी पूंछके चक्रसे युक्त होकर मण्डलयुक्त सूर्य भगवान्‌के समान शोभित हुए ॥६२॥ उनकी कम

तस्यविद्युत्प्रभाकारेवायुमार्गानुसारिणः ॥ नयनेविप्रकाशेतेपर्वतस्थाविवानलौ ॥५८॥ पिंगेपिंगाक्षमुख्यस्यबृहतीमरिमंडले ॥ चक्षुषीसंप्रकाशेतेचंद्रसूर्याविवस्थितौ ॥ ५९ ॥ मुखंनासिकयातस्यताम्रयाताम्रमाबभौ ॥ संध्ययासमभिस्पृष्टंयथास्यात्सूर्यमंडलम् ॥६०॥ लांगूलंचसमाविद्धंप्लवमानस्यशोभते॥अंबरेवायुपुत्रस्यशक्रध्वजइवोच्छ्रितम्॥६१॥ लांगूलचक्रोहनुमाञ्छुक्लदंष्ट्रोऽनिलात्मजः॥व्यरोचतमहाप्राज्ञःपरिवेषीवभास्करः॥६२॥स्फिग्देशेनातिताम्रेणरराजसमहाकपिः॥महतादारितेनेवगिरिर्गैरिकधातुना ॥ ६३ ॥ तस्यवानरसिंहस्यप्लवमानस्यसागरम् ॥ कक्षांतरगतोवायुर्जीमूतइवगर्जति ॥ ६४ ॥ खेयथानिपतत्युल्काउत्तरांताद्विनिःसृता॥दृश्यतेसानुबंधाचतथासकपिकुंजरः ॥६५॥ पतत्पतंगसंकाशोव्यायतःशुशुभेकपिः ॥ प्रवृद्धइवमातंगःकक्ष्ययाबध्यमानया ॥ ६६ ॥ उपरिष्टाच्छरीरेणच्छाययाचावगाढया ॥सागरेमारुताविष्टानौरिवासीत्तदाकपिः ॥ ६७ ॥ यंयंदेशंसमुद्रस्यजगामसमहाकपिः ॥ सतुतस्यांगवेगेनसोन्मादइवलक्ष्यते ॥ ६८ ॥

रका स्थान अधिक लाल होनेसे वह बहतेहुए श्रेष्ठ गेरूकी धातुसे ढके पर्वतके समान शोभित हुए ॥ ६३ ॥ समुद्रको लांघनेके समय कपिश्रेष्ठ हनुमानजीकी बगलोंमें जाता हुआ पवन मेघके समान गर्जने लगा ॥६४॥ वह कपिकुञ्जर हनुमान्‌जी ऊर्ध्व भागसे निकली हुई दूसरी उल्काके सहितगमन करनेको तैयार दूसरी उल्काके समान दृष्टि आने लगे ॥ ६५ ॥ तब गमनकरते हुए सूर्यके समान बडे आकारवाले कपिश्रेष्ठ हनुमानजी, कमरमें रस्सा बँधे हुए महागजके समान शोभायमानहोने लगे॥६६॥उन हनुमान्‌जीकी आकाशमें लम्बायमान शरीरकी परछाई समुद्रमें पडनेसे वह पाललगी हुई नौकाके समान शोभाको प्राप्त हुए॥६७॥वह वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जी समुद्रके जिस जिस स्थानमेंजाते थे,उस उस स्थानमें समुद्र उनके शरीरके वेगसे क्षुभितहो उन्मत्तके समान दृष्टि आताथा

॥ ६८ ॥ हनुमानूजी पर्वतके समान अपनी चौडी व कडी छातीसे समुद्रकी तरंगोंको हत करते हुए महावेगसे समुद्रके पार होने लगे॥६९॥उस कालमेंहनुमानूजीके वेगसे चलनेके पवनसे और आकाशमण्डलकी पवनके घातसे भयंकर गर्जनवाला समुद्र कम्पायमान होनेलगा॥७०॥वह कपिश्रेष्ठ हनुमानूजी क्षारसमुद्रके बडी लहरियोंको इधर उधरसे खैंचते मानो स्वर्ग और पृथ्वीको पृथक् करते२ समुद्रके पार होने लगे ॥ ७१ ॥ ऐसेही मेरु और मन्दराचल पर्वतके समान ऊंची समुद्रसे उत्पन्न हुई सब तरंगोंको मानों गिनते २ महा वेगसे हनुमानूजी उन सबको उल्लंघन करते हुए॥७२॥उस समय समुद्रका जल उन हनुमानजीके वेगसे उछला हुआ और मेघमंडलके छूजानेसे शरद्कालके बडे मेघके समान विराजमान हुआ ॥ ७३ ॥ और प्राणियोंके शरीरके वस्त्र उतार डालनेसे जिस

सागरस्योर्मिजालानामुरसाशैलवर्ष्मणा॥अभिघ्नंस्तुमहावेगःपुप्लुवेसमहाकपिः॥६९॥कपिवातश्चबलवान्मेघवातश्चनिर्गतः॥सागरंभीमनिर्ह्रादंकंपयामासतुर्भृशम् ॥ ७० ॥ विकर्षन्नूर्मिजालानिबृहंतिलवणांभसि ॥ पुप्लुवेकपिशार्दूलोविकिरन्निवरोदसी ॥ ७१ ॥ मेरुमंदरसंकाशानुद्गतान्सुमहार्णवे ॥ अत्यक्रामन्महावेगस्तरंगान्गणयन्निव ॥७२॥ तस्यवेगसमुद्घुष्टंजलंसजलदंतदा ॥ अंबरस्थंविबभ्राजेशरदभ्रमिवाततम्॥ ॥ ७३ ॥ तिमिनक्रझषाःकूर्मादृश्यंतेविवृतास्तदा ॥ वस्त्रापकर्षणेनेवशरीराणिशरीरिणाम् ॥ ७४ ॥ क्रममाणंसमीक्ष्याथभुजगाः सागरंगमाः व्योम्नितंकपिशार्दूलंसुपर्णमिवमेनिरे ॥ ७५ ॥ दशयोजनविस्तीर्णात्रिंशद्योजनमायता ॥ छायावानरसिंहस्यजवेचारुतराऽभवत् ॥ ७६ ॥ श्वेताभ्रघनराजीववायुपुत्रानुगामिनी ॥ तस्यसाशुशुभेछायापतितालवणांभसि ॥ ७७ ॥ शुशुभेसमहातेजामहाकायोमहाकपिः ॥ वायुमार्गेनिरालंबेपक्षवानिवपर्वतः ॥७८॥ येनासौयातिबलवान्वेगेनकपिकुंजरः ॥ तेनमार्गेणसहसाद्रोणीकृतइवार्णवः ॥ ७९ ॥

प्रकार दिखाई देते हैं; वैसेही तिमि; नाके, कछुए और बडे मच्छ जलके ऊपर आय २ दिखलाई देने लगे ॥ ७४ ॥ कपिशार्दूल हनुमानजी आकाशमार्गमें समुद्रके पार होते हैं,यह देखकर समुद्रके रहनेवाले सांप उनको गरुड समझने लगे॥७५॥बडे वेगसे गमन करते हुये हनुमानजीकी परछाई चालीसकोसकी मोटी और एक सौ वीस कोसकी लम्बी मनोहर थी॥७६॥पवनकुमार हनुमानजीके पीछे पीछे चलनेसे उनकीपरछाई क्षार समुद्रमें पडनेसे श्वेत, श्रेष्ठ बादर पंक्तिके समान शोभा धारण करती थी ॥७७॥ वह महातेज सम्पन्न महाकाय वानरश्रेष्ठ अवलंब रहित आकाश मार्गमें टिके हुये,पंख लगे पर्वतके समान शोभायमान होने लगे ॥ ७८ ॥ वानरश्रेष्ठ बलवान् हनुमानजी जिस २ मार्गमें वेग सहित गमन करने लगे,उसीउसी मार्गमें,नदियोंका पति समुद्र मानों जलधारा निकलते

हुए पतनालोंके समान चलता था॥७९॥इस प्रकारसे हनुमानजी आकाशमार्गमें गरुडजीके समान गमन करते हुये, पवनके समान मेघजालको छिन्न भिन्न करने लगे॥८०॥ श्वेत,नील, अरुण व मंजीठ रङ्गके बादर वानरश्रेष्ठ हनुमानजीसे खैंचे जाकर पवनसे चलायमान किये हुये मेघोंके समान शोभा धारण करते हुये ॥८१॥ हनुमानजी वारंबार मेघमंडलमें प्रवेश करके छिप जाते, कभी उनमेंसे निकलकर प्रकाशित होजाते, इससे वह बादरोंमें छिपते,प्रकाशित होते चंद्रमाके समान दृष्टि आने लगे ॥ ८२ ॥ तब देव, दानव और गन्धर्व लोग उन कपिश्रेष्ठ हनुमानजीको वेगसहित समुद्र लांघते देख वहां पर फूलोंकीवर्षा करने लगे ॥८३॥सूर्य भगवान्‌ने समुद्र लांघते हुए उन वानरराजको अपनीकिरणोंसे संतापित नहीं किया; और पवनजीभी श्रीरामचन्द्रजीके कार्यकी सिद्धिके लिये हनु

आपातेपक्षिसंघानांपक्षिराजइवव्रजन् ॥ हनुमान्मेघजालानिप्रकर्षन्मारुतोयथा ॥८०॥ पांडुरारुणवर्णानिनीलमंजिष्ठकानिच ॥ कपिनाकृष्य माणानिमहाभ्राणिचकाशिरे ॥८१॥ प्रविशन्नभ्रजलानिनिष्पतंश्चपुनःपुनः ॥ प्रच्छन्नश्चप्रकाशश्चचंद्रमाइवदृश्यते ॥ ८२ ॥ प्लवमानंतुतंदृष्ट्वा प्लवगंत्वरितंतदा ॥ ववृषुस्तत्रपुष्पाणिदेवगंधर्वदानवाः ॥ ८३ ॥ ततापनहितंसूर्यःप्लवंतंवानरेश्वरम् ॥ सिषेवेचतदावायूरामकार्यार्थसिद्धये ॥८४॥ ऋषयस्तुष्टुवुश्चैनंप्लवमानंविहायसा ॥ जगुश्चदेवगंधर्वाःप्रशंसंतोवनौकसम् ॥ ८५ ॥ नागाश्चतुष्टुवुर्यक्षारक्षांसिविविधानिच ॥ प्रेक्ष्य सर्वेकपिवरंसहसाविगतक्लमम् ॥८६॥ तस्मिन्प्लवगशार्दूलेप्लवमानेहनूमति ॥ इक्ष्वाकुकुलमानार्थीचिंतयामाससागरः ॥८७॥ साहाय्यं वानरेंद्रस्ययदिनाहंहनूमतः ॥ करिष्यामिभविष्यामिसर्ववाच्योविवक्षताम् ॥ ८८ ॥ अहमिक्ष्वाकुनाथेनसागरेणविवर्धितः ॥ इक्ष्वाकुसचिव श्चायंतन्नार्हत्यवसादितुम् ॥८९॥ तथामयाविधातव्यंविश्रमेतयथाकपिः ॥ शेषंचमयिविश्रांतःसुखीसोऽतितरिष्यति ॥ ९० ॥

मानजीका श्रम हरनेकी वासनासे धीरे धीरे चलने लगे॥८४॥ऋषिलोग उन आकाश मार्गमें चलते हुये कपिश्रेष्ठ हनुमानजीकी स्तुति करते हुये और देवता व गन्धर्वगण उनकी बडाई गाने लगे, ॥८५॥ यक्ष, रक्ष, नागगण, विगत क्लेश कपिश्रेष्ठ हनुमानजीका साहस देखकर "धन्य है २" ऐसा कहने लगे ॥८६॥ जब वानरश्रेष्ठ हनुमानजी समुद्रके पार जाने लगे,तब समुद्र इक्ष्वाकुकुलके सन्मान करनेका अभिलाषी होकर चिन्ता करने लगा॥८७॥यदि हम इस समय वानर राज हनुमानजीकी सहायता न करेंगे,तो सर्व लोकोंके समीप निंदनीय होंगे॥८८॥हम इक्ष्वाकुनाथ सगरजी करके बढाये गये हैं, और यह कपिश्रेष्ठभी इक्ष्वाकु वंशमें उत्पन्न हुये श्रीरामचन्द्रजी का दूत है,इस लिये इनका श्रम न हरना हमको उचित नहीं है॥८९॥अब जिससे यह कपिश्रेष्ठ सावधान होजायँ ऐसा अनुष्ठान

हमको अवश्य करना चाहिये, और हमारे ऊपर टिक कर, श्रमको बहाय, वह सुखपूर्वक बाकी रहा अंश कूद जायँ ऐसा विधान करना हमको उचित है॥९०॥ नदियोंका पति समुद्र इस प्रकार साधुसंकल्प मनमें विचार अपने जलके मध्यटिके हुये सुवर्ण मय पर्वत श्रेष्ठ मैनाकसे बोला॥९१॥कि, महात्मा देवराजइन्द्रजीने पातालनिवासी असुरोंके द्वारकामार्ग रोकनेके लिये परिघ रूप तुमको यहाँ रक्खा है॥९२॥पातालसे फिर निकलआनेकी इच्छा किये महापराक्रमी उन सबअसुरोंकाअप्रमाणवाला पातालका द्वार तुमहीं रोके हुये टिके हो॥९३॥हे पर्वत श्रेष्ठ! ऊंचे नीचे और टेढे बढने की सब प्रकार सामर्थ्य तुम रखते हो, इस लिये हे गिरि श्रेष्ठ! हमारे कहनेसे तुम ऊपरको बढो॥९४॥इस समय देखो कि, रामचन्द्रजीका कार्य साधन करनेको भयंकर कर्मकारी, गगन विदारी, वीर्यवान् कपिश्रेष्ठ हनुमान्

इतिकृत्वामतिंसाध्वींसमुद्रश्छन्नमंभसि ॥ हिरण्यनाभंमैनाकमुवाचगिरिसत्तमम् ॥९१॥ त्वमिहासुरसंघानांदेवराज्ञामहात्मना ॥ पातालनिलयानांहिपरिघःसन्निवेशितः ॥९२॥ त्वमेषांज्ञातवीर्याणांपुनरेवोत्पतिष्यताम् ॥ पातालस्यप्रमेयस्यद्वारमावृत्यतिष्ठसि ॥ ९३ ॥ तिर्यगूर्ध्वमधश्चैवशक्तिस्तेशैलवर्धितुम् ॥ तस्मात्संचोदयामित्वामुत्तिष्ठगिरिसत्तम ॥ ९४ ॥ सएषकपिशार्दूलस्त्वामुपर्येतिवीर्यवान् ॥ हनूमान्रामकार्यार्थीभीमकर्माखमाप्लुतः ॥ श्रमंचप्लवगेन्द्रस्यसमीक्ष्योत्थातुमर्हसि ॥ ९५ ॥ हिरण्यगर्भोमैनाकोनिशम्यलवणांभसः ॥ उत्पपातजलात्तूर्णंमहाद्रुमलतावृतः ॥ ९६ ॥ ससागरजलंभित्त्वाबभूवात्युच्छ्रितस्तदा ॥ यथाजलधरंभित्त्वादीप्तरश्मिर्दिवाकरः ॥९७॥ समहात्मामुहूर्तेन पर्वतःसलिलावृतः ॥ दर्शयामासशृंगाणिसागरेणनियोजितः ॥ ९८ ॥ शातकुंभमयैःशृंगैःसकिन्नरमहोरगैः ॥ आदित्योदयसंकाशैरुल्लिखद्भिरिवांबरम् ॥९९॥ तस्यजांबूनदैःशृंगैःपर्वतस्यसमुत्थितैः ॥ आकाशंशस्त्रसंकाशमभवत्कांचनप्रभम् ॥ १०० ॥

तुम्हारेऊपरीभागमें आयाही चाहते हैं और इससमय यह परिश्रमके मारे थकेसे जान पडते हैं, सो ऐसाकरो कि, यह तुम्हारे ऊपर कुछ देर टिककर आराम लेलें इसलिये इन कपिवरका श्रम देखकर तुमको भी अवश्य उठना कर्त्तव्य है॥९५॥बडे२वृक्ष और लता पत्रादिकोंसे युक्त मैनाक पर्वत लवण समुद्रकेवचन सुनकर तत्क्षण जलसे ऊपरको उठा॥९६॥तेज किरणोंवाले सूर्य भगवान् जिस प्रकार बादलोंको भेदकर निकल आते हैं, वैसेही मैनाक पर्वत समुद्रके जलको भेदकर अत्यन्त ऊंचा बढा॥९७॥इस प्रकार समुद्रसे ढके हुये उन महात्मा मैनाक पर्वतने समुद्रके कहनेसे एक मुहूर्तमें अपने शृङ्गऊपर प्रकाशित किये॥९८॥सुवर्णमय प्रभात कालीन सूर्य के समान प्रभावाले, किन्नर और बडे २ सर्पोंसे सेवित उस मैनाक पर्वतके शृंग मानो आकाश स्पर्श करतेहीसे उठे॥९९॥मैनाक पर्वतके

हिरण्मय श्रृङ्गोंसेसुवर्णके समान प्रकाशित होनेसे आकाश मंडलशस्त्रोंके समान शोभायमान हुआ॥१००॥और अतिशय प्रभा और शोभा सम्पन्न इन सबसुवर्ण मय श्रृंगोंसे युक्त होनेके कारण गिरिराज मैनाक अनेक सूर्योंके समान शोभायमान हुआ॥१०१॥हनुमान्‌जीने लवण समुद्रमेंसे सहसा उठेहुये उस पर्वतको देख कर यह निश्चय कियाकि,हमें रोकनेके लिये समुद्रमेंसे कोई विघ्न उठ खडा हुआ है ॥ १०२ ॥ पवन जिस प्रकार मेघको टक्कर देता है वैसेही हनुमान्‌जीने मैनाक पर्वतके अति ऊंचे श्रृंगोंको अपनी छातीके धक्केसे अति वेग सहित नीचेको बैठा दिया ॥ १०३ ॥ गिरिश्रेष्ठहनुमान्‌जी की रगडसे नीचेको बैठ उनके बलका वेगदेख आनंदके मारे शब्द करनेलगा॥१०४॥फिर मैनाक पर्वत प्रसन्न और हर्षयुक्त हृदयसेआकाशको उठकरवहांपर प्राप्त हुये हनुमान्‌जीसेबोला ॥१०५॥वहमनुष्यका रूप धारण करके अपने एकशिखरपर खडे हो हनुमान्‌जीसे बोला कि,हे वानर श्रेष्ठ!तुम अतिकठिन कार्य करनेको तैयार हुएहो॥१०६॥

जातरूपमयैःश्रृंगैर्भ्राजमानैर्महाप्रभैः ॥ आदित्यशतसंकाशःसोऽभवद्गिरिसत्तमः ॥१०१॥ समुत्थितमसंगेनहनूमानग्रतःस्थितम् ॥ मध्येलव णतोयस्यविघ्नोऽयमितिनिश्चितः ॥१०२॥ सतमुच्छ्रितमत्यर्थंमहावेगोमहाकपिः ॥ उरसापातयामासजीमूतमिवमारुतः ॥ १०३ ॥ सतदा सादितस्तेनकपिनापर्वतोत्तमः ॥ बुद्ध्वातस्यहरेर्वेगंजहर्षचननादच ॥१०४॥ तमाकाशगतंवीरमाकाशेसमुपस्थितः ॥ प्रीतोहृष्टमनावाक्यमब्र वीत्पर्वतःकपिम् ॥१०५॥ मानुषंधारयन्रूपमात्मनःशिखरेस्थितः ॥ दुष्करंकृतवान्कर्मत्वमिदंवानरोत्तम ॥१०६॥ निपत्यममश्रृंगेषुसुखंवि श्रम्यगम्यताम् ॥ राघवस्यकुलेजातैरुदधिःपरिवर्धितः ॥१०७॥ सत्वांरामहितेयुक्तंप्रत्यर्चयतिसागरः ॥ कृतेचप्रतिकर्तव्यमेषधर्मःसनातनः ॥१०८॥ सोऽयंतत्प्रतिकारार्थीत्वत्तःसंमानमर्हति ॥ त्वन्निमित्तमनेनाहंबहुमानात्प्रचोदितः॥१०९॥योजनानांशतंचापिकपिरेषखमाप्लुतः॥ तवसानुषुविश्रान्तःशेषंप्रक्रमतामिति ॥११०॥ तिष्ठत्वंहरिशार्दूलमयिविश्रम्यगम्यताम् ॥ तदिदंगंधवत्स्वादुकंदमूलफलंबहु ॥ १११ ॥

इसलिये हमारे श्रृङ्गोंपरबैठ कुछदेरतक विश्राम लेकर यथासुखसे चले जाओ । रघुकुलमें उत्पन्न हुए पुरुषोंने समुद्रको बढाया है॥१०७॥और तुम भी उन्हींरघुकु लमें जन्म लिये श्रीरामचन्द्रजीकाकार्य साधन करनेमें नियुक्त हो इस लिये स्वयं नदियोंके पति समुद्र तुम्हारी पूजाकरते हैं,क्योंकि जो अपने साथमेंउपकारकरे उसके साथमें प्रत्युपकार करनाहीसनातन धर्म है॥१०८॥यह समुद्र रघुवंशका प्रत्युपकार किया चाहता है सो तुमसेसमुद्रके संमानकी रक्षा होनी अवश्य योग्य है, इससमुद्रने तुम्हारा सत्कार करनेकेलिये हमको अनेक मान दे इस प्रकारसे यहाँ भेजा है॥१०९॥उन्होंने कहा कि,यह हनुमान्‌जी शतयोजन समुद्रके पारजानेके निमित्त आकाशमार्गमें गमन करतेहैं,इसलिये तुम्हारे श्रृंगोंपर कुछदेर तकटिककरयह शेष मार्गकोलांघ जायँ॥११०॥इसलियेहे वानर श्रेष्ठ!तुम हमारे श्रृंगोंपरटिक

कर थोडीदेर विश्राम पाय फिरचले जाओ हे हरिश्रेष्ठ! हमारे शृंगोंपर स्वादवाले और सुगन्धिवाले जो कंदमूल फलदृष्टि आते हैं॥ १११॥ उन सबको भोजनकर विश्राम पाय फिर तुम चले जाना, हे कपिश्रेष्ठ ! तुम्हारे सहित हमारा भी त्रिलोक विख्यात महागुण युक्त सम्बन्ध है॥ ११२॥ हे पवनकुमार! इसलोकमें जितने कूदने फांदनेवाले वेगवान् वानर हैं, हे कपिकुंजर ! उन सबमें हम तुमको मुख्यसमझते हैं॥ ११३॥ विशेष करके जो पुरुष धर्म जिज्ञासु हैं उनको प्राकृत अतिथि को भीपूजा करना कर्त्तव्य है, फिर तुम्हारे समान गुणवान् अतिथिकी पूजा करना तोहमको भली भाँति से उचित है॥ ११४॥ तुम देवताओंमें श्रेष्ठ महात्मा पवन जीके पुत्रहो, और वेगमेंभी तुम हे कपिकुंजर ! उनकेही समान हो॥ ११५॥ हे धर्मज्ञ ! तुम्हारी पूजा करनेसे मानो पवनजीहीकी पूजा होगई, इसी कारणसे तुम

तदास्वाद्यहरिश्रेष्ठविश्रांतोऽथगमिष्यसि ॥ अस्माकमपिसंबंधःकपिमुख्यत्वयाऽस्तिवै ॥ प्रख्यातस्त्रिषुलोकेषुमहागुणपरिग्रहः ॥ ११२ ॥
वेगवंतःप्लवंतोयेप्लवगामारुतात्मज ॥ तेषांमुख्यतमंमन्येत्वामहंकपिकुंजर ॥११३॥ अतिथिःकिलपूजार्हःप्राकृतोपिविजानता ॥ धर्मंजिज्ञा
समानेनकिंपुनर्यादृशोभवान् ॥११४॥ त्वंहिदेववरिष्ठस्यमारुतस्यमहात्मनः ॥ पुत्रस्तस्यैववेगेनसदृशःकपिकुंजर ॥११५॥ पूजितेत्वयिध
र्मज्ञपूजांप्राप्नोतिमारुतः ॥ तस्मात्त्वंपूजनीयोमेशृणुचाप्यत्रकारणम् ॥११६॥ पूर्वंकृतयुगेतातपर्वताःपक्षिणोभवन् ॥ तेपिजग्मुर्दिशःसर्वाग
रुडाइववेगिनः ॥११७॥ ततस्तेषुप्रयातेषुदेवसंघाःसहर्षिभिः ॥ भूतानिचभयंजग्मुस्तेषांपतनशंकया ॥ ११८ ॥ ततःक्रुद्धःसहस्राक्षःपर्वतानां
शतक्रतुः ॥ पक्षांश्चिच्छेदवज्रेणततःशतसहस्रशः ॥ ११९ ॥ समामुपगतःक्रुद्धोवज्रमुद्यम्यदेवराट् ॥ ततोऽहंसहसाक्षिप्तःश्वसनेनमहात्मना
॥१२०॥ अस्मिँल्लवणतोयेचप्रक्षिप्तःप्लवगोत्तमः ॥ गुप्तपक्षःसमग्रश्चतवपित्राभिरक्षितः ॥ १२१ ॥

हमारे पूजनीय हो। इस विषयमें एक और भी कारण है वह भी तुमसुनो॥ ११६॥ हे तात ! पहले सत्ययुगमें सर्वपर्वतोंके पंख होनेके कारणवह गरुडजीके समान वेगसहित सब दिशाओंमें गमन करने लगे॥ ११७॥ पर्वतोंको उडता देखकर देवगणऋषिगणऔर सबही प्राणीगण उनके गिरनेकी शंकासे भीत होगयेकि यह कहीं किसीके ऊपर न गिरे ॥११८॥ तब हजार नेत्रवाले इन्द्रजीने क्रोधित होकर अपने वज्रसे सैकडों हजारों पर्वतोंके पंख काट डाले ॥ ११९ ॥ फिर वह बडा क्रोधकर बलसे वज्र उठाये, हमारे निकट भी हमारे पंख काटनेको आये । हे वानरश्रेष्ठ तब महात्मा पवनजीने यह देख उसी क्षण हमको वहांसे उठाय ॥ १२० ॥ इस क्षारसमुद्रमें फेंक दिया, उन्होंने हमारे पंखभी बचाये और किसी प्रकारका घावभी देहमें न होने दिया व सबही प्रकारसे रक्षा की ॥१२१॥

हेपवनसुत! इसहीकारणसे तुम हमारे मान्य हो वइससे हम औरभी तुमसे संभाषण करते हैं हेकपिश्रेष्ठ ! तुम्हारे सहित यह संबन्ध है और यह सबन्धमहागुणयुक्तहै
॥१२२॥हे महामते ! प्रत्युपकार करनेका यह अवसर उपस्थित है इसलिये तुमको प्रसन्न होकर वह करना जिससे हमारी और समुद्रकी प्रसन्नता हो॥१२३॥हेकपि
श्रेष्ठ हम तुम्हारे मान्यभी हैं क्योंकि तुम्हारे पिताजीसे हमारा सम्बन्ध भी है इसलिये श्रमको दूरकर पूजा पाय तुम हमको प्रसन्न करो इस समय तुमको देखकर
हमें बडी प्रीति उपजी है ॥१२४॥जब पर्वतराज मैनाकने इस प्रकारसे कहा तबकपिश्रेष्ठ हनुमानूजी उससे बोलेकि आपनेहमारी पहुनाई भी भलीभांतिकी और
हमभी बहुत प्रसन्न हुए परन्तुहम जो आपकीदी हुई पूजा ग्रहण न करसकें उसके लिये आपको क्षोभन करना चाहिये॥१२५॥एक तो कार्यका समयतुमकोशीघ्र

ततोऽहंमानयामित्वांमान्योसिममममारुते ॥ त्वयाममैषसंबंधःकपिमुख्यमहागुणः ॥१२२॥ अस्मिन्नेवंगतेकार्येसागरस्यममैवच ॥ प्रीतिंप्री
तमनाःकर्तुंत्वमर्हसिमहामते ॥१२३॥ श्रमंमोक्षयपूजांचगृहाणहरिसत्तम ॥ प्रीतिंचममममान्यस्यप्रीतोऽस्मितवदर्शनात् ॥ १२४ ॥ एवमुक्तः
कपिश्रेष्ठस्तंनगोत्तममब्रवीत ॥ प्रीतोस्मिकृतमातिथ्यंमन्युरेषोपनीयताम् ॥ १२५ ॥ त्वरतेकार्यकालोमेअहश्चाप्यतिवर्तते ॥ प्रतिज्ञाचमया
दत्तानस्थातव्यमिहांतरा ॥१२६॥ इत्युक्त्वापाणिनाशैलमालभ्यहरिपुंगवः ॥ जगामाकाशमाविश्यवीर्यवान्प्रहसन्निव ॥१२७॥ सपर्वतसमु
द्राभ्यांबहुमानादवेक्षितः ॥ पूजितश्चोपपन्नाभिराशीर्भिरभिनंदितः ॥ १२८ ॥ अथोर्ध्वंदूरमाप्लुत्यहित्वाशैलमहार्णवौ ॥ पितुःपंथानमासा
द्यजगामविमलेंबरे ॥१२९॥ भूयश्चोर्ध्वगतिंप्राप्यगिरिंतमवलोकयन् ॥ वायुसूनुर्निरालंबोजगामकपिकुंजरः ॥१३०॥ तद्द्वितीयंहनुमतोदृष्ट्वा
कर्मसुदुष्करम् ॥ प्रशशंसुःसुराःसर्वेसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ १३१ ॥

ता करता है, दूसरे दिनभी बीता चाहता है, और तीसरे हमने सर्व वानरोंके सामने यह प्रतिज्ञा भी की हम बीचमें कहीं न ठहरेंगे बराबर चले जायँगे॥१२६ ॥
वीर्यवान् कपिश्रेष्ठ हनुमानूजी यह कह अपने हाथसे पर्वतराज मैनाकको स्पर्श कर आकाशका आश्रय ले हँसते२चलेगये॥१२७॥पर्वत और समुद्र दोनोंनेबार २
उन हनुमानूजीको निहार तत्कालोचित आशीर्वादसे उनका आदर मान कियाऔर चलते समय पूजा करके आशीर्वाद भी दिया॥१२८॥फिर हनुमानूजी पर्वत
और समुद्र दोनोंको त्यागकर पहलेसे और भी अधिक ऊंचे उठ वायुमार्गकाआश्रय ले निर्मल आकाशमंडलमें गमन करने लगे॥१२९॥इस प्रकार कपिकुंजर
हनुमानूजी बहुत ऊंचे उड कर गिरिश्रेष्ठ मैनाकको देखते२अवलंबन विहीन आकाशमार्गमें चले गये ॥१३०॥देव सिद्ध और परमर्षिगण सबही उनका यह और

किसीसे न होने योग्य अति कठिन कार्य देखकर प्रशंसा करने लगे॥१३१॥मैनाकपर्वतपर खडे हुए और आकाशमें टिके हुए इन्द्रादि देवगणभी अच्छी नाभी वाले सुवर्णमय मैनाकपर्वतके इस कार्यसे बडे प्रसन्नहुये॥१३२॥फिर शचीके पतिसहस्र नेत्रवाले बुद्धिमान् इन्द्रजी प्रसन्न हो गद्गद बचनोंसे सुशोभित मेखलायुक्त पर्वत श्रेष्ठ मैनाकसे कहने लगे॥१३३॥हे हिरण्यनाभ सौम्य पर्वतराज! हम तुम्हारे ऊपर बहुतही प्रसन्न हुए हैं हम तुमको अभय देते हैं कि, जब तुम्हारीजहां इच्छा हो वहां फिरा करो हम तुम्हारे पंख न काटेंगे॥१३४॥हनुमान्जीको भयरहित विश्राम लिये विना शत योजनके समुद्र पार होते देख कदाचित् पीछे यह किसीसंकटमें न पडे यह विचारकर तुमने उनकी विशेष सहायताकी है॥१३५॥दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजीकाही हित करनेकेलिये यह कपिश्रेष्ठ हनुमानजी जाते

देवताश्चाभवन्हृष्टास्तत्रस्थास्तस्यकर्मणा ॥ कांचनस्यसुनाभस्यसहस्राक्षश्चवासवः ॥१३२॥ उवाचवचनंधीमान्परितोषात्सगद्गदम् ॥ सुनाभंपर्वतश्रेष्ठंस्वयमेवशचीपतिः ॥१३३॥ हिरण्यनाभशैलेंद्रपरितुष्टोऽस्मितेभृशम् ॥ अभयंतेप्रयच्छामिगच्छसौम्ययथासुखम् ॥१३४॥ साह्यंकृतंतेसुमहद्विश्रांतस्यहनूमतः ॥ क्रमतोयोजनशतंनिर्भयस्यभयेसति ॥ १३५ ॥ रामस्यैषहितायैवयातिदाशरथेः कपिः ॥ सत्क्रियांकुर्वताशक्त्यातोषितोऽस्मिदृढंत्वया ॥ १३६ ॥ सतत्प्रहर्षमलभद्विपुलंपर्वतोत्तमः ॥ देवतानांपतिंदृष्ट्वापरितुष्टंशतक्रतुम् ॥१३७॥ सवैदत्तवरःशैलोबभूवावस्थितस्तदा ॥ हनुमांश्चमुहूर्तेनव्यतिचक्रामसागरम् ॥ १३८ ॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ अब्रुवन्सूर्यसंकाशांसुरसांनागमातरम्॥१३९॥अयंवातात्मजःश्रीमान्प्लवतेसागरोपरि॥हनूमान्नानातस्यत्वंमुहूर्तंविघ्नमाचर॥१४०॥राक्षसंरूपमास्थायसुघोरंपर्वतोपमम्॥ दंष्ट्राकरालंपिंगाक्षंवक्रंकृत्वानभःस्पृशम् ॥ १४१ ॥

हैं सो तुमने यथाशक्ति उनका आदर करके हमको अति संतुष्ट किया॥१३६॥समस्त देवताओंके राजा इन्द्रजीको प्रसन्न देखकर पर्वतश्रेष्ठ मैनाक अति हर्ष प्राप्त करता हुआ॥१३७॥और इन्द्रजीसे ऐसा अभय वर पाय यथास्थानमें टिकगया इधर हनुमान्जीभी मैनाकके अधिकारवाला समुद्रका भाग एक मुहूर्तमें उतर गये ॥१३८॥ हनुमानजी समुद्रके पार चलेही जाते थे कि; इतनेमें देव; गन्धर्व, सिद्ध और महर्षिगण सबही हनुमान्जीके बुद्धिबलकी परीक्षाके निमित्त सूर्यके समान प्रकाशवाली, नागमाता सुरसासे बोले ॥१३९॥ कि, वायुनन्दन श्रीमान् हनुमानजी समुद्रके पार होनेको आकाशमार्गसे चले जारहे हैं, सो तुमको एक मुहूर्ततक उनके गमन करनेमें विघ्न डालना पडेगा ॥ १४० ॥ इसलिये तुम अतिभयंकर पर्वताकार राक्षरूप धारणकरके पीले वर्णवाले नेत्रोंसहित भयंकर

दाँतयुक्त वदन इतनी ऊंची हो कि (आकाशको छूलो) ॥१४१॥ तब पवन कुमार उपाय करके तुमको जीत लेते, या विषादित होते हैं,बस उनका यह बल बुद्धि और पराक्रम हम लोग जानना चाहते हैं॥१४२॥ जब देवतालोगोंने अति आदर सन्मानसे इस प्रकार कहा, तब देवी सुरसा समुद्रके मध्यमें राक्षसरूप धारण करती हुई ॥ १४३ ॥ उसका यह रूप बिकट विरूप और सर्वका भय उपजाने वाल था तब सुरसा समुद्रके पार जाते हुए हनुमानजीका मार्ग रोककर बोली ॥१४४॥ हे वानरश्रेष्ठ! देवतालोगोंने तुमको हमारा भोजन बताया है इस लियेहम तुमको खा जायँगी, सो तुम हमारे इस मुखमें प्रवेश करो ॥ १४५ ॥ और ब्रह्माजीने पहलेसे हमको यह वरदानभी दे रक्खा है यह कहकर सुरसाने अति मुखफैलाया, और हनुमानजीके आगे खडी होगई ॥१४६॥ जब सुरसाने इस प्रकार कहा तब हनुमानजी हँसकर बोले, कि दशरथजीके राम नामक पुत्र अपने भाई लक्ष्मण और अपनी स्त्री वैदेहीजीके सहित दंडकारण्यमें आये ॥१४७॥

बलमिच्छामहेज्ञातुंभूयश्चास्यपराक्रमम् ॥ त्वांविजेष्यत्युपायेनविषादंवागमिष्यति ॥१४२॥ एवमुक्तातुसादेवीदैवतैरभिसत्कृता ॥ समुद्रमध्ये सुरसाबिभ्रतीराक्षसंवपुः॥१४३॥विकृतंचविरूपंचसर्वस्यचभयावहम्॥प्लवमानंहनूमंतमावृत्येदमुवाचह॥१४४॥ममभक्ष्यःप्रदिष्टस्त्वमीश्वरैर्वा नरर्षभः॥अहंत्वांभक्षयिष्यामिप्रविशेदंममाननम्॥१४५॥नरएषपुरादत्तोममधात्रेतिसत्वरा ॥ व्यादायवक्त्रंविपुलंस्तितासामारुतेःपुरः ॥१४६॥ एवमुक्तःसुरसयाप्रहृष्टवदनोऽब्रवीत् ॥ रामोदाशरथिर्नामप्रविष्टोदंडकावनम् ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्रावैदेह्याचापिभार्यया ॥ १४७ ॥ अस्यका र्येविषक्तस्यबद्धवैरस्यराक्षसैः ॥ तस्यसीताहृताभार्यारावणेनयशस्विनी ॥ १४८॥ तस्याःसकाशंदूतोऽहंगमिष्येरामशासनात् ॥ कर्तुमर्हसि रामस्यसाह्यंविषयवासिनि ॥१४९॥ अथवामैथिलींदृष्ट्वारामंचाक्लिष्टकारिणम् ॥ आगमिष्यामितेवक्त्रंसत्यंप्रतिशृणोमिते ॥१५०॥ एवमु क्ताहनुमतासुरसाकामरूपिणी ॥ अब्रवीन्नातिवर्तेन्मांकश्चिदेषवरोमम ॥१५१॥

सो किसीकार्यसे उनमें और राक्षसोंमें परस्पर वैर बँधगया, और उनकी यशस्विनी भार्या जानकीजीको रावणने हरण कर लिया ॥१४८॥ हम उन्हींके दूत हैं और उन्हीश्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञासे जानकीजीके निकटजाते हैं, और तुमभी रामचंद्रजीकेराज्यमें बसती हो,इस लिये इसकार्यमें तोतुमको भी हमारी सहायता करनी चाहिये उलटा विघ्न करना तुमको नहीं सोहता॥१४९॥और जो तुम हमें भोजन करनाही चाहती हो,तो हमसीताजीके दर्शन करकेक्लेशरहितश्रीरामचंद्र जीको उनका समाचारदे फिर यहांआय तुम्हारेवदनमें प्रवेश करेंगे।बस तुम्हारे निकट यह प्रतिज्ञा हमनेसत्यही सत्यकी है सीताका वृत्तान्त इस कारण कहा कि,यहभी स्त्री है स्त्रीका पक्ष करेंगी॥१५०॥हनुमानजीके यह वचनसुनकर कामरूपिणी सुरसा उनसे बोली कि,हमको ब्रह्माजीने यह वर दिया है कि,तुम्हारे आगेसे कोई

भी जीवित न जा सकेगा॥ १५१॥ हनुमानजीकोगमन करते हुये देखकरनागमाता सुरसा उनकी शक्तिकी परीक्षा लेनेके लिये उनसे बोली ॥ १५२॥ हे वानर श्रेष्ठ! विधाताने हमको यही वरदान दियाहै कि, जो तुम्हारे आगे आवेगा वह तुम्हारे वदनमेंही होकरजाय सकेगा सो यदि तुममें शक्तिहो तो आज हमारेमुखमें प्रवेश करके चले जाओ॥ १५३॥ यह कहकर नागमाता सुरसा; बडाभारीमुख फैलाय शीघ्रतासे पवनकुमार हनुमानजीके आगे खडी होगई तब सुरसाके ऐसे वचन सुनकर वानरश्रेष्ठ हनुमानजीको भी क्रोध उत्पन्न हुआ॥ १५४॥ हनुमानजीने उससे कहा कि, जिसमें हम लंबे चौड़े समासके उतना बड़ा मुख तू फैला, इतना कहने पर सुरसाने दशयोजन मुख फैलाया॥ १५५॥ सुरसापर क्रोधित हो पवनकुमार भी उसी समय दशयोजनके होगये। यह देखकर सुरसाने भी अपने मुखको बीस

संप्रयांतंसमुद्वीक्ष्यसुरसावाक्यमब्रवीत ॥ बलंजिज्ञासमानासानागमाताहनूमतः ॥१६२॥ निविश्यवदनंमेद्यगंतव्यंवानरोत्तमे ॥ वरएषपुराद त्तोममधात्रेतिसत्वरा ॥१६३॥ व्यादायविपुलंवक्रंस्थितासामारुतेःपुरः ॥ एवमुक्तःसुरसयाक्रुद्धोवानरपुंगवः ॥१६४॥ अब्रवीत्कुरुवैवक्रंयेन मांविषहिष्यसि ॥ इत्युक्त्वासुरसांक्रुद्धोदशयोजनमायताम् ॥१६५॥ दशयोजनविस्तारोहनूमानभवत्तदा ॥ चकारसुरसाप्यास्यंविंशद्योजनमा यतम् ॥ १६६ ॥ तद्दृष्ट्वाव्यादितंत्वास्यवायुपुत्रःसबुद्धिमान् ॥ दीर्घंजिह्वंसुरसयासुभीमंनरकोपमम् ॥१६७॥ "तद्दृष्ट्वामेघसंकाशंविंशद्योजन मायतम् ॥ हनुमांस्तुततःक्रुद्धस्त्रिंशद्योजनमायतः॥चकारसुरसावक्रंचत्वारिंशत्ततोच्छ्रितम् ॥ बभूवहनूमान्वीरःपंचाशद्योजनोच्छ्रितः॥चकार सुरसावक्रंषष्टियोजनमुच्छ्रितम्॥तदैवहनुमान्वीरःसप्ततियोजनोच्छ्रितः॥चकारसुरसावक्रमशीतियोजनोच्छ्रितम्॥ हनूमानचलप्रख्योनवतियो जनोच्छ्रितः ॥ चकारसुरसावक्रंशतयोजनमायतम्॥" ससंक्षिप्यात्मनःकायंजीवमूतइवमारुतिः॥तस्मिन्मुहूर्तेहनुमान्बभूवांगुष्ठमात्रकः॥१६८॥

योजन फैलाया ॥ १५६ ॥ परम बुद्धिमान पवनकुमार सुरसाके मुखको बीसयोजन विस्तारित देख जो बड़ी जिह्वासे युक्त अतिशय भयंकर साक्षात नरकके समान थी ॥ १५७ ॥ (क्षेपक) "उस मेघके समान वदन मंडलको बीस योजनक विस्तारवाला देखकर हनुमानजी क्रोधित होकर तीस योजनके लंबे चौडे होगये फिर सुरसाने चालीसयोजन चौडा मुख फैलाया तब महावीर्यवान् हनुमानजी पचास योजनके बडे होगये॥ यह देखकर सुरसाने अपने मुखका विस्तार साठ योजनका किया तब हनुमानजीने अपने शरीरको सत्तर योजन विस्तारा, तब सुरसा अपने मुखको अस्सी योजन विस्तार करती हुई, यह देखकर साक्षात् कालके समान पवनकुमार हनुमानजी नब्बे योजनके होगये, फिर सुरसाका मुख शत योजनका बडा हुआ" (इति क्षेपक) तब हनुमानजी मेघके

समान अपनी देहको सकोडकर उसी मुहूर्तमें अंगूठेके समान शरीर बना लेते हुए॥ १५८॥ और सुरसाके मुखमें बडी शीघ्रताके साथ प्रवेश कर और तत्क्षण ही उसमेंसे निकल आकाशमें निकलकर उससे बोले ॥ १५९ ॥ हे दाक्षायणि ! तुमको नमस्कार है हम तुम्हारे मुखमें प्रवेशकरके निकल आये, तुमने वर जो पाया था वह भी सत्य होगया; इसलिये अब हम जानकीजीके निकट गमन करेंगे॥ १६०॥ राहुकेमुखसे चन्द्रमाके समान हनुमानजीको अपने मुखसे छूटाहुआ देख, देवी सुरसा अपना रूपधारण कर उनसेबोली॥ १६१॥ हे कपिश्रेष्ठ ! तुम अपने कांर्यकी सिद्धिके लिये सुखपूर्वक चले जाओ, और जानकीजीको लायकर श्रीरामचन्द्रजीसे मिलादो ॥ १६२ ॥ इससमय देवतालोग हनुमानजीका यह तीसरीबार अति कठिन कर्म देख वारंवार "धन्य है धन्य है" कह कर बडाई

सोऽभिपद्याथतद्वक्त्रंनिष्पत्यचमहाबलः ॥ अंतरिक्षेस्थितःश्रीमानिदंवचनमब्रवीत् ॥ १५९ ॥ प्रविष्टोऽस्मिहितेवक्त्रंदाक्षायणिनमोस्तुते ॥
गमिष्येयत्रवैदेहीसत्यश्चासीद्वरस्तव ॥१६०॥ तंदृष्ट्वावदनान्मुक्तंचंद्रराहुमुखादिव॥ अब्रवीत्सुरसादेवीस्वेनरूपेणवानरम्॥ १६१॥ अर्थसिद्ध्यैह
रिश्रेष्ठगच्छसौम्ययथासुखम् ॥ समानयचवैदेहींराघवेणमहात्मना॥ १६२॥ तत्तृतीयंहनुमतोदृष्ट्वाकर्मसुदुष्करम् ॥ साधुसाध्वितिभूतानिप्रश
शंसुस्तदाहरिम् ॥ १६३ ॥ ससागरमनाधृष्यमभ्येत्यवरुणालयम् ॥ जगामाकाशमाविश्यवेगेनगरुडोपमः ॥१६४॥ सेवितेवारिधाराभिः
पतगैश्चनिशेविते॥ चरितेकैशिकाचार्यैरैरावतनिषेविते॥ १६५॥ सिंहकुंजरशार्दूलपतगोरगवाहनैः॥ विमानैःसंपतद्भिश्चविमलैःसमलंकृते ॥१६६॥
वज्राशनिसमस्पर्शैःपावकैरिवशोभिते ॥ कृतपुण्यैर्महाभागैःस्वर्गजिद्भिरधिष्ठिते ॥ १६७ ॥ वहताहव्यमत्यंतसेवितेचित्रभानुना ॥ ग्रह
नक्षत्रचंद्रार्कतारागणविभूषिते ॥ १६८ ॥

करने लगे ॥ १६३ ॥ इस ओर पवनकुमार हनुमानजी वरुणालय समुद्रके ऊपर आकाश मार्गका आश्रय ले गरुडजीके वेगके समान गमनकरने लगे ॥ १६४॥ वह वायुमार्ग, जलधारा, विहङ्गम समूह, गाने बजानेमें पंडित तुम्बरु, इत्यादिका स्थान, ऐरावतगजसे सेवित ॥ १६५ ॥ आकाशचारी, सिंह, व्याघ्र, हस्ती, पक्षी और सर्पसमूह आदिके चलने और विमल विमानोंके आवागमनसे सज्जित ॥ १६६ ॥ वज्र और अशनिके समान स्पर्शवाले, पावक सदृश पुण्यकर्मकारी महाभाग स्वर्गके जीतनेवाले पुरुषोंसे शोभित ॥ १६७ ॥ सदाही हव्य लिये अग्नि, ग्रह, नक्षत्र, चन्द्र, सूर्य और तारागणोंसे सेवित ॥ १६८ ॥

महर्षि, गन्धर्व, नागऔर यक्ष समूहसे समाकुल एकान्त विमलविशाल और विश्वावसुसे सेवित ॥ १६९ ॥ देवराजके वाहन ऐरावत हाथीसे रौंदा हुआ चन्द्रमा और सूर्यभगवानूका कल्याणरूप पंथ जीवलोकका आश्रयस्वरूप इस विमल मार्गको ब्रह्माजीने बनाया है ॥ १७० ॥ ऐसे बहुतसारे वीर विद्याधर लोगोंसे सेवित वायुमार्गमें पवनकुमार हनुमानूजी, गरुडजीके वेगके समान वेगसे गये ॥ १७१ ॥ हनुमानूजी चलते समय बादलोंके समूहको खैंचे हुए चले जाते थे,उस समय सब मेघकाले, अगर श्वेत और लाल पीले वर्णहोगये ॥१७२॥ वानरवर हनुमानूजीके खैंचनेसे सब बादलोंके झुंड शोभा यमान हुये,और हनुमानूजी कभी मेघोंमें छिप जाते कभी उनमेंसे निकल आते थे॥१३७॥उनके वारंवार मेघोंमें प्रवेश करने और निकलनेसे वह वर्षाकालीन

महर्षिगणगंधर्वनागयक्षसमाकुले ॥ विविक्तेविमलेश्वेविश्वावसुनिषेविते ॥ १६९ ॥ देवराजगजाक्रांतेचंद्रसूर्यपथेशिवे॥वितानेजीवलोकस्यवि मलेब्रह्मनिर्मिते॥१७०॥बहुशःसेवितेवीरैर्विद्याधरगणैर्वृते ॥ जगामवायुमार्गेचगरुत्मानिवमारुतिः ॥ १७१ ॥ हनुमान्मेघजालानिप्राकर्षन्मा रुतोयथा ॥ कालागुरुसवर्णानिरक्तपीतसितानिंच ॥१७२॥ कपिनाकृष्यमाणानिमहाभ्राणिचकाशिरे॥प्रविशन्नभ्रजालानिनिष्पतंश्चपुनःपुनः ॥ १७३ ॥ प्रावृषींदुरिवाभातिनिष्पतन्प्रविशंस्तथा ॥ प्रदृश्यमानःसर्वत्रहनूमान्मारुतात्मजः ॥१७४॥ भेजेऽबरंनिरालंबंपक्षयुक्तइवाद्रिराट्॥ प्लवमानंतुतंदृष्ट्वासिंहिकानामराक्षसी॥१७५॥मनसाचिंतयामासप्रवृद्धाकामरूपिणी॥अद्यदीर्घस्यकालस्यभविष्याम्यहमाशिता ॥ १७६ ॥ इदंममहासत्त्वंचिरस्यवशमागतम्॥इतिसंचिन्त्यमनसाछायामस्यसमाक्षिपत् ॥१७७॥ छायायांगृह्यमाणायांचिंतयामासवानरः ॥ समाक्षिप्तोऽस्मिसहसापंगूकृतपराक्रमः ॥ १७८ ॥ प्रतिलोमेनवातेनमहानौरिवसागरे ॥ तिर्यगूर्ध्वमधश्चैववीक्षमाणस्तदाकपिः ॥ १७९ ॥

चन्द्रमाके समान विराजमान हो सबको भली भाँतिसे दृष्टि आते थे॥१७४॥ हनुमानजी पंख धारणकिये पर्वतश्रेष्ठके समान अवलंब रहित आकाशमार्गमें चले इनकोदेख सिंहिका नाम राक्षसी॥१७५॥मनही मनमें विचार करने लगी कि;आजपेट भर जायगा यह अति बूढी और कामरूपिणी थी और बहुत दिनोंसे भूखी थी ॥१७६॥ बहुत दिनोंके पीछे यह बडा प्राणी मेरे वशमें आया है मनही मन इसप्रकारसे चिन्ताकर राक्षसीने हनुमानजीकी परछांई को पकडकर खैंचा ॥१७७॥जब सिंहिका राक्षसीने हनुमानजीकी परछांई पकड़कर खींची, तब पवनकुमार हनुमानजी चिन्ता करने लगे कि,अचानक खैंचे जानेसे हमारा पराक्रम शिथिल होगया,मानो किसीने खैंचकर हमको पंगुही कर दिया॥१७८॥और यह समुद्रके मध्यमें प्रतिकूल चलनेवाले पवन करके रोकी हुई महा नौकाके

समान हीनतेज होगये । इस प्रकार चिन्ताकर उसी क्षण हनुमानजीने, तिरछे, ऊंचे, सब ओरकोदृष्टि फैलाय कर देखा ॥१७९॥ तो लवणसमुद्रके मध्यमें कोई एक बडा भारी जीव उतरता हुआ देखपडा हनुमानजी उस विकटबदन बडे प्राणीको देख चिन्ता करने लगे॥१८०॥कि कपिराज सुग्रीवजीने जो अति अद्भुत, महावीर्यवान् परछांई पकडनेवाले जीवकावृत्तान्त कहा था बस निःसन्देह यह वही जन्तु छायाका पकडनेवाला है ॥१८१॥ तब हनुमानजीने अर्थ और ज्ञानके अनुसार इस प्राणीको सिंहिका नाम राक्षसी स्थिर करके, वर्षाकालके बादलके समान अपने शरीरको बहुत ही बढाया॥१८२॥सिंहिकाराक्षसीने हनुमानजीका शरीर बढता हुआ देखकर उनसे अपना एक अधर पतालमें और एक अधर आकाशमें लगा दिया, इतना अपने मुखको बढाया ॥१८३॥और मेघके समान गर्जती २ अतिवेगसे हनुमानजीके सन्मुख धाई, तब हनुमानजी उसका महा विकटाकार वाला मुख देखकर॥१८४॥वह बुद्धिमान् समझे कि इसमे हमारा समस्त

ददर्शसमहासत्त्वमुत्थितंलवणांभसि ॥ तद्दृष्ट्वाचिंतयामासमारुतिर्विकृताननाम् ॥१८०॥कपिराज्ञायथाख्यातसत्त्वमद्भुतदर्शनम् ॥ छायाग्राहिमहावीर्यंतदिदंनात्रसंशयः ॥१८१॥ सतांबुद्ध्वार्थतत्त्वेनसिंहिकांमतिमान्कपिः ॥ व्यवर्धतमहाकायः प्रावृषीवबलाहकः ॥१८२॥ तस्यसाकायमुद्वीक्ष्यवर्धमानंमहाकपेः ॥ वक्त्रंप्रसारयामासपातालांबरसन्निभम् ॥ १८३ ॥ घनराजीवगर्जतीवानरंसमभिद्रवत् ॥ सददर्शततस्तस्याविकृतंसुमहन्मुखम् ॥ १८४ ॥ कायमात्रंचमेधावीमर्माणिचमहाकपिः ॥ सतस्याविवृतेवक्त्रेवज्रसंहननःकपिः ॥ १८५ ॥ संक्षिप्यमुहुरात्मानंनिपपातमहाकपिः ॥ आस्येतस्यानिमज्जंतंदद्दृशुःसिद्धचारणाः॥१८६॥ग्रस्यमानंयथाचंद्रंपूर्णंपर्वणिराहुणा ॥ ततस्तस्यानखैस्तीक्ष्णैर्मर्माण्युत्कृत्यवानरः ॥ १८७ ॥ उत्पपाताथवेगेनमनःसंपातविक्रमः ॥ तांतुदिष्ट्याचधृत्याचदाक्षिण्येननिपात्यसः ॥ १८८ ॥ कपिप्रवीरोवेगेनववृधेपुनरात्मवान् ॥ हृतहृत्साहनुमतापपातविधुरांभसि ॥ स्वयंभुवैवहनुमान्सृष्टस्तस्यानिपातने॥ १८९ ॥

शरीर प्रवेश कर जायगा, और इसीसेहम इसके मर्मस्थानभी चीर फाड डालेंगे । यह शोचकर वज्रके समान दृढ शरीरवाले पवनकुमारजी तत्क्षण उसके अति बडे मुखमें ॥ १८५ ॥ अपने शरीरको सकोडकर उसके वदनमें घुसगये, उस राक्षसीके मुखमें पैठतेहुये सिद्ध चारणोंने हनुमानजी को देखा ॥ १८६ ॥ पूर्णमासीके दिनपूर्णचन्द्र जिस प्रकार राहुसे ग्रस लिया जाता है, हनुमानजीभी वैसेही सिंहिकाके मुखमें पडे।इधर हनुमानजीने उसके मुखमें जाय अपने तेज नखोंसे उस राक्षसी के मर्मस्थानको॥१८७॥अतिशीघ्रतासे चीर फाडकर मनके समान वेगविक्रमसे ऊपरको उछले, उस राक्षसीको बडे भाग्य धीरता और चतुरतासे मारकर॥१८८॥ कपिश्रेष्ठ हनुमानजी फिर अति वेगसेबढने लगे, राक्षसीभी हनुमानजीसे मारखाय भिन्न हृदय और पीडित होकर, समुद्रके बीचमें गिरपडी ब्रह्माजीने इस राक्षसीका

संहार करनेके लिये हनुमानजीको उत्पन्न किया, नहीं तो इस राक्षसीको कौन मार सकता॥१८९॥ हनुमानजीके द्वारा शीघ्र प्राण त्यागकर समुद्रमें गिरती हुई सिंहिकाको देखकर आकाशचारीप्राणीगण उन वानरश्रेष्ठसे कहने लगे॥१९०॥ हे कपिवर ! इससमय तुमने अति बडे प्राणीको वधकरके अतिकठिनकार्य किया है, अब तुम विघ्नरहित होकर अपना कार्यसाधन करो ॥१९१॥ हे वानरेन्द्र ! तुम्हारे समान जिस पुरुषमें धीरता, दृष्टि बुद्धि और चतुरता यह चार गुण हैं; वह कभी कार्य पडने पर व्याकुलनहीं होते ॥१९२॥ पूजनीय हनुमानजी उन प्राणियोंसे पूजित और कार्य सिद्धहोनेके विषयमें प्रसन्न होकर गरुडजीके वेगके समान आकाशमें उडने लगे ॥१९३॥ और समुद्रकी दूसरी पारके प्रायः निकट पहुँच कर चारोंओर दृष्टि डाली तब शत योजनके पीछे एक बडीभारी वनकी श्रेणी उन्होंने देखी ॥ १९४ ॥ फिर वानरश्रेष्ठ पवनकुमार हनुमानजी चलते विविध द्रुमभूषित द्वीप और मलयपर्वतपर लगे हुये उपवनोंको देखते हुये

तांहतांवानरेणाशुपतितांवीक्ष्यसिंहिकाम् ॥ भूतान्याकाशचारीणितमूचुःप्लवगोत्तमम्॥१९०॥भीममद्यकृतंकर्ममहत्सत्त्वंत्वयाहतम् ॥ साध
यार्थमभिप्रेतमरिष्टंप्लवतांवर ॥१९१॥ यस्यत्वेतानिचत्वारिवानरेंद्रयथातव ॥ धृतिर्दृष्टिर्मतिर्दाक्ष्यंसकर्मसुनसीदति॥१९२॥सतैःसंपूजितः
पूज्यःप्रतिपन्नप्रयोजनैः ॥ जगामाकाशमाविश्यपन्नगाशनवत्कपिः ॥१९३॥ प्राप्तभूयिष्ठपारस्तुसर्वतः परिलोकयन्॥योजनानांशतस्यांतेवनरा
जींददर्शसः ॥ १९४ ॥ ददर्शचपतन्नेवविविधद्रुमभूषितम् ॥ द्वीपंशाखामृगश्रेष्ठोमलयोपवनानिच ॥१९५॥ सागरंसागरानूपान्सागरानूपजा
न्द्रुमान् ॥ सागरस्यचपत्नीनांमुखान्यपिविलोकयत् ॥१९६॥ समहामेघसंकाशंसमपक्ष्यात्मानमात्मवान् ॥ निरुंधंतमिवाकाशंचकारमतिमा
न्मतिम् ॥ १९७ ॥ कायवृद्धिंप्रवेगंचममदृष्ट्वैवराक्षसाः ॥ मयिकौतूहलंकुर्युरितिमेनेमहामतिः॥१९८॥ ततःशरीरंसंक्षिप्यतन्महीधरसन्निभम् ॥
पुनःप्रकृतिमापेदेवीतमोहइवात्मवान् ॥ १९९ ॥ तद्रूपमतिसंक्षिप्यहनूमान्प्रकृतौस्थितः ॥ त्रीन्क्रमानिवविक्रम्यबलिवीर्यहरोहरिः ॥२००॥

॥ १९५ ॥ सागर तथा समुद्रकी वेलाभूमि; और वहां पर लगे हुये सब वृक्षोंको देखते और समुद्रकी नारी सब नदियोंके संयोग स्थानोंको देखकर॥१९६॥ महामतिमान् आत्मवान् पवनकुमार हनुमानजीने मेघाकार आकाशको रोकनेवाली अपनी देहको देखा और विचारा ॥ १९७ ॥ उन महामतिने समझा कि, राक्षस लोग हमारा अतिलंबा चौडा शरीर और महावेग देख कर हमको एक खेल समझेंगे ॥ १९८ ॥ यह विचार उन्होंने पर्वताकार अपने शरीरको उसी समय छोटा कर कामादि मोह विहीन जीवन्मुक्त योगीके समान फिर अपना लघुरूप जोसदा रहता था धारण करलिया॥१९९॥और वामनजीने जिस प्रकार तीन चरणसे तीनों लोक नाप राजा बलिका वीर्य हरण कर फिर अपना रूप धारण करलिया था, वैसेही हनुमानजीने अपने रूपको बहुत

छोटाकर फिर अपना पहला रूप धारण कर लिया ॥ २०० ॥ इस प्रकारसे विविध मनोहर रूप धारण करनेवाले हनुमानजी समुद्रके पार जाय इसका भली भाँति विचारकर कि, अब क्या करना होगा, अपना कार्य सिद्ध करनेके लिये बहुतही छोटा शरीर धारण करते हुये ॥ २०१ ॥ फिर वह महामेघसम समूहाकार महात्मा हनुमानजी लंबनामक पर्वतकेशिखरपर कूदे वह पर्वत विचित्र शृङ्ग समूहसे अलंकृत और परमसमृद्धि सम्पन्न था, व इसपर केतक, उद्दालक और नारियलके बहुतही वृक्ष लग रहे थे ॥ २०२ ॥ इस प्रकारसे हनुमानजी समुद्रके तीरको प्राप्त होकर त्रिकूट पर्वतके शिखर पर बसीहुई लंका नगरीको देख बडे आकारसे अपनारूप छोटा बनाय मृग और पक्षियोंको त्रासित करते हुये इस त्रिकूट पर्वत पर कूदे॥२०३॥उस कालमें दानव और सर्पगणोंसे व्याप्त महा तरंगशाली महासागर अपने बल और पराक्रमसे नांघकर और उसके किनारेपर पदार्पण करके अमरावतीके समान लंका नगरी हनुमानजीने देखी ॥ २०४ ॥

सचारुनानाविधरूपधारीपरंसमासाद्यसमुद्रतीरम् ॥ परैरशक्यंप्रतिपन्नरूपःसमीक्षितात्मासमवेक्षितार्थः ॥२०१॥ ततःसलंबस्यगिरेःसमृद्धे विचित्रकूटेनिपपातकूटे॥सकेतकोद्दालकनारिकेलेमहाभ्रकूटप्रतिमोमहात्मा॥२०२॥ततस्तुसंप्राप्यसमुद्रतीरंसमीक्ष्यलंकांगिरिवर्यमूर्ध्नि॥कपि स्तुतस्मिन्निपपातपर्वतेविधूयरूपंव्यथयन्मृगद्विजान्॥२०३॥ससागरंदानवपन्नगायुतंबलेनविक्रम्यमहोर्मिमालिनम्॥निपत्यतीरेचमहोदधेस्त ददर्शलंकाममरावतीमिव॥२०४॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये चतुर्विंशतिसाहस्र्यां संहितायांसुंदरकांडेप्रथमःसर्गः॥१॥ ससागरमनाधृष्यमतिक्रम्यमहाबलः ॥ त्रिकूटस्यतटेलंकांस्थितःस्वस्थोददर्शह ॥१॥ ततःपादपमुक्तेनपुष्पवर्षेणवीर्यवान् ॥ अभिवृष्टस्ततस्तत्र बभौपुष्पमयोहरिः॥२॥ योजनानांशतंश्रीमांस्तीर्त्वाप्युत्तमविक्रमः॥ अनिःश्वसन्कपिस्तत्रनग्लानिमधिगच्छति॥३॥शतान्यहयोजनानांक्रमे यंसुबहून्यपि॥किंपुनःसागरस्यांतंसंख्यातंशतयोजनम्॥४॥सतुवीर्यवतांश्रेष्ठःप्लवतामपिचोत्तमः॥जगामवेगवाँल्लंकांलंघयित्वामहोदधिम्॥५॥

इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥ महाबलवान् हनुमानजीने अपार समुद्रको अपने बलसे नांघकर त्रिकूटपर्वतके तटपर जाय सावधान होकर लंकापुरी देखी ❀ ॥१॥ महावीर्यवान् हनुमानजी उस पर्वतके लगे हुये वृक्षोंकी पुष्पवर्षासे युक्त होनेके कारण पुष्पमयवानरोंके समानशोभित होने लगे ॥ २ ॥ अतिश्रेष्ठ विक्रमवाले श्रीपवनकुमार शतयोजनका समुद्र नांघकर न तो कुछ हांफे और न उनको कुछ थकावट प्राप्त हुई ॥ ३ ॥ फिर हनुमानजी विचारने लगे कि, इस समुद्रके लांघनेको तो केवल शतयोजनकी मर्यादा है । और हम तो हजार लाखों शत योजन सरलतासे लांघ सकते हैं ॥ ४ ॥ यह विचार कर वह श्रेष्ठ वीर्यवान् वानरगणोंमें अग्रणीय महावेगवान् हनुमानजी समुद्रको लांघ लंकापुरीको गये ॥ ५ ॥

❀ रागनी—गये मारुत सागरतीर ॥ टेक ॥ चढे पहाड चितैं इस उत कपि लंकाको विस्तीर ॥१॥ देखे गज रथ अश्व अनकन पैंदल दलकी भीर ॥ २ ॥ यह निहारि हनुमंत निडर ह्वै चले सुमिरि रघुबीर ॥ ३ ॥ द्वार निहार लंकनी के इक मुष्टि के हन्यो, गंभीर ॥ ४ ॥ 'नारद' उछल कोट लंकापै चढचो पवनसुत बीर ॥ ५ ॥

जानेके समय अनेक२श्याम वर्णवाले दूबोंके खेतनीलरंगके मधुसहित सुगन्धित पर्वत सहित बनोंके बीचवाले मार्गमें होकर गये॥६॥वृक्षोंसे युक्त बहुत सारे पर्वत और फूली हुई काननश्रेणी इन सबके बीचमेंहोकर महातेजस्वी वानरश्रेष्ठ हनुमानजी विचरने लगे ॥ ७ ॥ पवनकुमार हनुमानजी लंबपर्वतपर ही टिके रहकर गिरि त्रिकूटपर बसी हुई लंकानगरी और वहांके वन उपवन समस्त देखे॥८॥सरलकार्णिकार, फूला हुआ खजूर, चिरौंजी, खिन्नी; महुआ,केयकी ॥ ९ ॥ गन्धपूर्ण प्रियंगु, कदम्ब, शतावरी, असन, कोविदार, पुष्पितकरवीर ॥ १० ॥ यह व और भी बहुत फूलोंके भारसे झुके और शोभित, पक्षियोंसे युक्त, पवनसे कम्पायमान वृक्षसमूह ॥ ११ ॥ और कमलके पुष्पोंसे शोभित हंस व कारण्डवोंसे व्याप्त वापियें विविध रमणीक क्रीडापर्वत जलाशय ॥ १२ ॥ और सब

शाद्वलानिचनिलानिगंधवंतिवनानिच ॥ मधुमंतिचमध्येनजगामनगवंतिच॥६॥शैलांश्चतरुसंछन्नान्वनराजीश्चपुष्पिताः॥ अभिचक्रामतेजस्वी हनुमन्प्लवगर्षभः ॥ ७ ॥ सतस्मिन्नचलेतिष्ठन्वनान्युपवनानिच ॥ सनगाग्रेस्थितांलंकांददर्शपवनात्मजः ॥ ८ ॥ सरलान्कर्णिकारांश्च खर्जूरांश्चसुपुष्पितान् प्रियालान्मुचुलिंदांश्चकुटजान्केतकानपि॥९॥प्रियंगून्गंधपूर्णांश्चनीपान्सप्तच्छदांस्तथा॥असनान्कोविदारांश्चकरवीरांश्चपुष्पितान् ॥१०॥ पुष्पभारनिबद्धांश्चतथामुकुलितानपि॥ पादपान्विहगाकीर्णान्पवनाधूतमस्तकान् ॥११॥ हंसकारंडवाकीर्णावापीःपद्मोत्पलावृताः॥आक्रीडान्विविधान्रम्यान्विधांश्चजलाशयान् ॥१२॥ सततान्विविधैर्वृक्षःसर्वर्तुफलपुष्पितैः ॥ उद्यानानिचरम्याणिददर्शकपिकुंजरः ॥१३॥समासाद्यचलक्ष्मीवाह्लँकांरावणपालिताम् ॥ परिखाभिःसपद्माभिःसोत्पलाभिरलंकृताम् ॥ १४ ॥ सीतापहरणात्तेनरावणेनसुरक्षिताम् समंताद्विचरद्भिश्चराक्षसैरुग्रधन्वभिः ॥ १५ ॥ कांचनेनावृतांरम्यांप्राकारेणमहापुरीम् ॥ गृहैश्चगिरिसंकाशैःशारदांबुदसन्निभैः ॥ १६ ॥ पांडुराभिः प्रतोलीभिरुच्चाभिरभिसंवृताम् ॥ अट्टालकशताकीर्णांपताकाध्वजशोभिताम् ॥ १७ ॥

ऋतुओंमें फल पुष्प देनेवाले अनेक प्रकारके वृक्षोंसे युक्त मनोहर फुलवाडियेंउन कपिकुंजर हनुमानजीने देखीं ॥१३॥ इस प्रकार देखते भालते श्रीमान् पवन कुमार हनुमानजी रावणसे पाली जाती हुई लंकापुरीके निकट आयकर देखते हुये कि,कमलपुष्पोंसे युक्त खाई जो लंकाके चारों ओर हैं,उनसे वह पुरी और भी शोभित होरही है॥१४॥सीताजीको जो रावण हरणकरले आया था,इससे वह पुरी और भी अधिक रक्षित हो रही थी,और राक्षसगण धनुष उठाये उसके चारोंओर घूमते थे॥१५॥चारों ओर सुवर्णकी अति रमणीक चहारदिवारी थीऔर शरदूकालके मेघकेसमान उज्ज्वल और पर्वताकार गृहसमूह बने थे॥१६॥ पांडुवर्णकी अति ऊंची सुहावन मनभावन खिडकियोंकी कतार, गलियें, ध्वजा और पताका युक्त सैकडों हजारों अटारियें शोभित होरही थीं ॥ १७ ॥

और सुवर्णमय नगरके दिव्य फाटकोंपर लतापत्रादिककी वन्दनवारें लगीथीं इन सबसेयह नगरी मनोहरी लंका चारोंओरसे पूर्ण देवताओंकीपुरीकेसमान शोभायमान हनुमानने देखी॥१८॥श्रीमान् देव पवनकुमारजी ने पर्वतके शिखर पर वसी हुई सैकडों हजारों श्वेतवर्णके परम सुन्दर मंदिरोंसे युक्त देखी कि; यह पुरी मानो आकाशको छुए ही लेती है ॥१९॥ यह नगरी राक्षस राजरावणसे पाली जाती थी और विश्वकर्माजीने इसको बनाया था कपिकेसरी हनुमान्‌जीने देखा कि चारों ओर बडी २ अटारियोंके होनेसे लंका पुरी मानो आकाशको उडी जाती हैं ॥२०॥ खाइयें और चहारदीवारी तो मानो उस पुरीकी मोटी जांघें सागर और वनराजि उसके वस्त्र शतघ्नी और शूल आदि अस्त्र शस्त्र उसके केश; और अटा अटारियें मानो उसके कर्णफूल थे ॥२१॥ विश्वकर्माने बहुतही मन लगायकर मानो उस पुरी

तोरणैःकांचनैर्दिव्यैर्लतापंक्तिविराजितैः॥ददर्शहनुमाल्लँकांदेवोदेवपुरीमिव॥१८॥गिरिमूर्ध्निस्थितांलकांपांडुरैर्भवनैःशुभैः॥ददर्शसकपिःश्रीमान्पुरीमाकाशगामिव॥१९॥ पालितांराक्षसेंद्रेणनिर्मितांविश्वकर्मणा॥प्लवमानामिवाकाशेददर्शहनुमान्कपिः॥२०॥वप्रप्राकारजघनांविपुलांबुवनांबराम्॥शतघ्नीशूलकेशांतामट्टालकावतंसकाम्॥२१॥मनसेवकृतांलंकांनिर्मितांविश्वकर्मणा॥द्वारमुत्तरमासाद्यचिंतयामासवानरः॥॥२२॥कैलासनिलयप्रख्यमालिखंतमिवांबरम्॥ध्रियमाणमिवाकाशमुच्छ्रितैर्भवनोत्तमैः॥२३॥संपूर्णांराक्षसैर्घोरैर्गुहामाशीविषैरिव॥ तस्याश्चमहतींगुप्तिंसागरंचनिरीक्ष्यसः॥ रावणंचरिपुंघोरंचिंतयामासवानरः॥२४॥आगत्यापीहहरयो भविष्यंतिनिरर्थकाः॥ नहियुद्धेनवैलंकाशक्याजेतुंसुरैरपि॥२५॥ इमांत्वविषमांलंकांदुर्गांरावणपालिताम्॥ प्राप्यापिसुमहाबाहुःकिंकरिष्यतिराघवः॥ २६॥

को बनाया है। ऐसी लंकापुरी के उत्तर द्वारपर क्रमसे हनुमान्‌जी पहुंच कर चिंता करने लगे॥२२॥कैलास पर्वत के समान उस पुरी का यह उत्तर द्वार ऊंचा; और श्रेष्ठभवनों के समूहसे मानो आकाश मंडल धारण करके उसको रेखाकर बना रहा है ॥२३॥ हनुमान्‌जी वहां पहुंचकर; महाविषधर सर्पोंसे परिपूर्ण पर्वत की गुफा के समान राक्षसोंसे भरी हुई सुरक्षित लंकानगरीके चारों ओर अपार समुद्र देखकर रावणको भयंकर शत्रु समझ इस प्रकारसे चिन्ता करने लगे ॥ २४॥ जो वानर गण किसी प्रकारसे यहां आय भी जावें, तोभी वह यहां पर सफल काम नहीं हो सकेंगे। क्योंकि देवता लोग भी युक्त करके लंकाको जीतनेकी सामर्थ्य नहीं रखते ॥ २५ महाबाहु श्रीरामचद्रजी भी अति विषम रावणसे पाली जाती हुई इस दुर्गम लंकापुरीमें आकर क्या करेंगे? ॥ २६ ॥

ऐसा समझमें आता है कि राक्षस लोग साम, दाम और युद्धसे भी वश होनेवाले नहीं, न इनके निकट भेद ही डालने का अवकाश है ॥ २७ ॥ वेगवान् वालिकुमार वानर राज अंगद, नील, सुग्रीव और हम यह चार जन बलवान् वानरोंमें ही यहां आनेकी सामर्थ्य है और किसीमें नहीं ॥ २८ ॥ अच्छा जोहो सो हो, अब पहले तो यह जानना ठीक है, कि जानकीजी जीवित हैं या नहीं इसलिये प्रथम उनको जीवित देखना चाहिये, फिर इन बातोंकी चिन्ताकी जायगी॥२९॥उसके पीछे वानरोंमें कुंजर हनुमानजी पर्वत के श्रृंग पर बैठे २मुहूर्त भरतक श्रीरामचन्द्रजी के इष्टकार्य साधनमें रत हुए मनही मन चिंता करने लगे॥३०॥इस प्रकार चिन्ता करते२मनमें यह बात समाई कि बलवान् और क्रूर स्वभाववाले राक्षसोंसे रक्षा की जाती लंकापुरीमें इसप्रकारसे हमारा प्रवेश करना उचित नहीं है॥३१॥ क्योंकि हमको उचित है कि जानकीजी के खोजनेके लिये, इन सब महावीर्य सम्पन्न महाबलवान् व महातेजस्वीराक्षसोंको धोखा

अवकाशोनसाम्नस्तुराक्षसेष्वभिगम्यते ॥ नदानस्यनभेदस्यनैवयुद्धस्यदृश्यते ॥२७॥ चतुर्णामेवहिगतिर्वानराणांतरस्विनाम्॥ वालिपुत्रस्य नीलस्यममराज्ञश्चधीमतः ॥ २८ ॥ यावज्जानामिवैदेहींयदिजीवतिवानवा ॥ तत्रैवचिंतयिष्यामिदृष्ट्वातांजनकात्मजाम् ॥ २९ ॥ ततःसचिं तयामासमुहूर्तंकपिकुंजरः ॥ गिरेःश्रृंगेस्थितस्तस्मिन्रामस्याभ्युदयंततः ॥३०॥ अनेनरूपेणमयानशक्यारक्षसांपुरी॥प्रवेष्टुंराक्षसैर्गुप्ताक्रूरैर्बल समन्वितैः॥३१॥महोजसोमहावीर्याबलवंतश्चराक्षसाः ॥ वंचनीयामयासर्वेजानकींपरिमार्गता ॥ ३२ ॥ लक्ष्यालक्ष्येणरूपेणरात्रौलंकापुरी मया॥प्राप्तकालंप्रवेष्टुंमेकृत्यंसाधयितुमहत् ॥ ३३ ॥ तांपुरींतादृशींदृष्ट्वादुराधर्षांसुरासुरैः ॥ हनुमांश्चिंतयामासविनिःश्वस्यमुहुर्मुहुः ॥३४॥ केनोपायेनपश्येयंमैथिलींजनकात्मजाम् ॥ अदृष्टोराक्षसेंद्रेणरावणेनदुरात्मना ॥३५॥ नविनश्येत्कथंकार्यंरामस्यविदितात्मनः॥ एकामेकस्तु पश्येयंरहितेजनकात्मजाम् ॥३६॥ भूताश्चार्थाविनश्यंतिदेशकालविरोधिताः ॥ विक्लवंदूतमासाद्यतमःसूर्योदयेतथा ॥ ३७॥

दें ॥३२॥ इसलिये ऐसा अलक्ष्यरूप धारण करें कि जिससे कोई हमको देख न सके रात्रिमें लंकापुरीको देखें,इस बडे भारी कार्य को पूरा करनेके लिये ऐसे ही रूप बनाकर लंकापुरी में पैठना ठीक है ॥३३॥ इस प्रकारसे हनुमानजी सुर असुरों को प्राप्त होनेके योग्य उस लंकापुरीको देखकर वारम्वार लम्बे २श्वास ले चिंता करने लगे ॥३४॥ हम किस उपायसे दुरात्मा राक्षस राज रावण की दृष्टि से न देखे जाकर जनककुमारी सीताजीके देखनेको समर्थ होवें ॥३५॥ त्रिभुवन विदित श्रीरामचन्द्रजी का कार्य किसप्रकारसे सिद्ध होगा? और किस उपायसे हम इकले एकान्तमें बैठीहुई विजनवासिनी जानकीजी को देखेंगे? ॥३६॥ देशकाल के ज्ञानको न रखनेवाला दूत सिद्ध होनेवाले समस्त कार्योंको भी देख कालके विरुद्ध करके नाशकर देता है; जैसे सूर्य भगवान्‌के उदय होनेसे अन्धकारका विनाश

हो जाता है॥३७॥और स्वयंस्वामी अपने मंत्रियोंके सहित परामर्श करके और अकर्तव्य के विषयमें जो निश्चितार्थ जाननेवाली बुद्धि करता है, वह भी उस दूतके दोषसे सिद्ध नहीं होती क्योंकि मूढ अपने आपको पंडित माननेवाले दूतकार्योंका नाश कर देते हैं ॥३८॥ इस लिये किस उपायका आश्रय करनेसे कार्य भी नष्ट नहीं हो और हमको व्याकुलता भी नहो; और कैसेही इस समुद्र का लांघना भी व्यर्थ न जाय॥३९॥विदितात्मा श्रीरामचन्द्रजी रावणका वध करनेको तैयार हुए हैं, इसलिये जो हमको राक्षसोंने कहीं देखा, तो उनका यह कार्य नष्ट हो जायगा ॥ ४० ॥ राक्षसोंका शरीर धारण करने वा और कोई रूप धारण करनेसे भी निशाचर लोगोंके अजाने रहना असंभव है। ऐसा करनेसे तो वह अवश्य हमको पहचान जायँगे॥४१॥हमको साफ मालूम पडता है कि पवन भी यहां पर गुप्तरू पसे विचरण करनेको समर्थ नहीं हैं, क्योंकि भयंकर कर्म करनेवाले राक्षस लोगोंको कुछ भी अविदित नहीं रहता यह सबही कुछ जानते हैं॥४२॥यदि हम अपना भयं

अर्थानर्थांतरेबुद्धिर्निश्चितापिनशोभते॥घातयंतीहकार्याणिदूताःपंडितमानिनः॥३८॥ नविनश्येत्कथंकार्यंवैक्लव्यंनकथंभवेत् ॥ लंघनंचसमुद्र स्यकथंनुनभवेद्वृथा॥३९॥ मयिदृष्टेतुरक्षोभीरामस्यविदितात्मनः॥भवेद्व्यर्थमिदंकार्यंरावणानर्थमिच्छतः ॥ ४० ॥ नहिशक्यंक्वचित्स्थातु मविज्ञातेनराक्षसैः॥अपिराक्षसरूपेणकिमुतान्येनकेनचित्॥४१॥वायुरप्यत्रनाज्ञानश्चरेदितिमतिर्मम॥नह्यत्राविदितंकिंचिद्रक्षसांभीमकर्मणाम् ॥४२॥इहाहंयदितिष्ठामिस्वेनरूपेणसंवृतः ॥ विनाशमुपयास्यामिभर्तुरर्थश्चहास्यति ॥ ४३ ॥ तदहंस्वेनरूपेणरजन्यांह्रस्वतांगतः ॥ लंका मभिपतिष्यामिराघवस्यार्थसिद्धये ॥४४॥ रावणस्यपुरींरात्रौप्रविश्यसुदुरासदाम् ॥ प्रविष्यचभवनंसर्वंद्रक्ष्यामिजनकात्मजाम्॥४५॥ इतिनि श्चित्यहनुमान्सूर्यस्यास्तमयंकपिः॥आचकांक्षेतदावीरोवैदेह्यादर्शनोत्सुकः ॥४६॥ सूर्यैचास्तंगतोरात्रौदेहंसंक्षिप्यमारुतिः ॥ वृकदंशकमात्रो ऽथबभूवाद्भुतदर्शनः ॥४७॥ प्रदोषकालेहनुमांस्तूर्णमुत्पत्यवीर्यवान् ॥ प्रविवेशपुरींरम्यांप्रविभक्तमहापथाम् ॥ ४८ ॥

कर रूपधारण करके इस स्थानमें टिके रहे, तो हमारा नाश होगा और प्रभुका कार्य भी नष्ट हो जायगा॥४३॥इसलिये हम अपने शरीरको बहुत छोटा बनाय श्रीराम चन्द्रके कार्यकी सिद्धिके निमित्त रात्रिके समय लंकापुरीमें प्रवेश करेंगे ॥४४॥ इस दुरासद रावणकी लंकानगरीमें रात्रिको प्रवेशकर प्रतिमंदिरमें जानकीजीको खोजकर देखेंगे ॥४५॥ इस प्रकारसे अपने चित्तमें विचार महाकपि हनुमानजी जानकीजीके दर्शन का अभिलाष कर सूर्य भगवान्‌के अस्त होनेकी राह परखते रहे ॥४६॥ इस प्रकार जब सूर्य भगवान् अस्त होगये, तब हनुमानजीने अपने शरीरको सकोडकर बिल्लीके समान छोटा और देखनेमें अति अद्भुत बनाया॥४७॥ और प्रदोष कालमें वह वीर्यवान् पवन कुमार हनुमानजी उसी क्षण कूदकर, सर्व भाँतिसे बडी सडकोंवाली रमणीय लंकापुरीमें प्रवेश करते हुये ॥ ४८ ॥

वहां पर हनुमानजीने देखाकि, शत २राजमंदिरोंकी श्रेणीसे अनेक सुवर्ण मय खंभोंसे; व सुवर्णमय झरोखोंसे यह लंका गन्धर्वनगरी के समान जान पडती है॥४९॥ उन्होंने उस पुरीके सत मंजिले आठ महले स्थान देखे, किसी स्थानमें स्फटिक औरर त्नजडे हुए और कहीं सम्पूर्ण सोनेकेही थे इस प्रकारकी रचनाओंसे राक्षसोंके घर शोभित थे ॥५०॥ राक्षसोंके मंदिरमें स्फटिक मणि व सुवर्णके जो स्थल बने थे उनसे अधिक शोभायमान हो रहेथे, उनमें सुवर्ण की वंदनवारें बंधरहीथीं, वेही गृह सब ओरसे सजे सजाये, लंकाको प्रकाशित कर रहेथे ॥५१॥ वैदेहीजीके दर्शनकी इच्छा किये महाकपि हनुमानजी इस प्रकारकी अचिन्त्य और अद्भुत आकार वाली लंकापुरीको देख कर प्रथम अति हर्षित हो, फिर उदासीन होगये॥५२॥हनुमानजीने देखा कि रावण रक्षित, यशस्विनी लंकानगरी, परस्पर श्रेणीबद्ध श्वेत

प्रासादमालाविततांस्तंभैः कांचनसन्निभैः ॥ शातकुंभनिभैर्जालैर्गंधर्वनगरोपमाम् ॥४९॥ सप्तभौमाष्टभौमैश्चसददर्शमहापुरीम् ॥स्थलैःस्फटिकसंकीर्णैःकार्तस्वरविभूषितैः ॥ तैस्तैःशुशुभिरेतानिभवनान्यत्ररक्षसाम्॥५०॥कांचनानिविचित्राणितोरणानिचरक्षसाम् ॥ लंकामुद्द्योतयामासुः सर्वतःसमलंकृताम् ॥ ५१ ॥ अचिंत्यामद्भुतकारांहृष्ट्वालंकांमहाकपिः ॥ आसीद्विषण्णोहृष्टश्चवैदेह्यादर्शनोत्सुकः ॥ ५२ ॥ सपांडुराविद्धविमानमालिनींमहार्हजांबूनदजालतोरणाम् ॥ यशस्विनीरावणबाहुपालितांक्षपाचरैर्भीमबलैःसुपालिताम् ॥५३॥ चन्द्रोपिसाचिव्यमिवास्यकुर्वंस्तारागणैर्मध्यगतोविराजन्॥ज्योत्स्नावितानेनवितत्यलोकानुत्तिष्ठतेनैकसहस्ररश्मिः ॥ ५४ ॥ शंखप्रभंक्षीरमृणालवर्णमुद्गच्छमानंव्यवभासमानम् ॥ ददर्शचंद्रंसकपिप्रवीरःपोप्लूयमानंसरसीवहंसम् ॥५५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ छ ॥ सलंबशिखरेलंबेलंबतोयदसन्निभे ॥ सत्वमास्थायमेधावीहनुमान्मारुतात्मजः ॥ १ ॥

बडे धवरहरोंसे महा मूल्यवान स्वर्ण मय जाल और फाटकोंसे अलंकृत है और भयंकर बलवान् राक्षसोंकी सेनाका बल चारोंओरसे उसकी रक्षा कर रहा है॥५३॥ इस समयमें चन्द्रमा अनेक सहस्र किरणोंको फैलाय और उनकी चांदनी छिटकाय उससे समस्तलोकोंको ढकतारागणोंके मध्यमें विराजमान हो मानो हनुमानजी की सहायता करनेकी वासनासे ही उदय होने लगा॥५४॥पवन कुमार हनुमानजीने देखा कि सरोवरमें हंस जिस प्रकार अतिशय उछला करते हैं, वैसेही क्षीर और मृणाल वर्ण, शंखके समान शशांक भी अतिशय विराजमान होकर उदय हो रहा है॥५५॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०सुन्दरकांडे भाषायां द्वितीयःसर्गः॥ २॥ देशकालके जाननेवाले महाबलवान् वानरोंमें श्रेष्ठ अति ऊंचे शिखरवाले और लम्बायमान मेघके समान लम्बमान पर्वत पर टिके हुए महावीरजी सत्वका आश्रय

करके ॥ १ ॥ रात्रिकालके समयमें महाबली कपिकुंजर लंकापुरीमें पैठे । वह लंका रमणीक वन जलसे युक्त, व रावणसे पालित ॥ २ ॥ शरद् कालीन बादलोंके समान श्वेतराक्षसों के मंदिरोंसे शोभायमान, समुद्र समान गंभीर गर्जनासे परिपूर्ण, सागर स्पर्शकारी पवनसे सेवित ॥३॥ परम हृष्ट पुष्ट राक्षसोंकी सेनासे चारोंओरसे रक्षित अलकापुरी के समान, बाहरके द्वारोंपर परम सुन्दर मदमत्त हाथियोंसे शोभित, सुधा संस्कार होनेके कारण श्वेतवर्णके, बाहर भीतर वाले द्वारोंसे युक्त ॥ ४ ॥ भोगवती सर्पोंकी पुरीके समान सब ओर सर्पोंसे शोभायमान, और राक्षसोंकी सीमासे रचित दामिनी युक्त बादलोंसे घिरी; तारागणोंसे शोभित ॥५॥ इन्द्रकी अमरावती पुरीके समान प्रचंड पवनके शब्दसे शब्दायमान सुवर्णकी बडी चहार दिवारीसे घिरी थी ॥६॥ और किंकिणीजालके समूहके प्रतिध्व

निशिलंकांमहासत्त्वोविवेशकपिकुंजरः॥रम्यकाननतोयाढ्यांपुरींरावणपालिताम् ॥२॥ शारदांबुधरप्रख्यैर्भवनैरुपशोभिताम् ॥ सागरोपम
निर्घोषांसागरानिलसेविताम्॥३॥सुपुष्टबलसंपुष्टांयथैवविटपावतीम् ॥ चारुतोरणनिर्यूहांपांडुरद्वारतोरणाम्॥४॥भुजगाचरितांगुप्तांशुभांभो
गवतीमिव ॥ तांसविद्युद्घनाकीर्णांज्योतिर्गणनिषेविताम् ॥५ ॥ चंडमारुतनिर्ह्रादंयथाचाप्यमरावतीम् ॥ शातकुम्भेनमहताप्राकारेणाभिसंवृ
ताम् ॥६॥ किंकिणीजालघोषाभिःपताकाभिरलंकृताम् ॥ आसाद्यसहसाहृष्टःप्राकारमभिपेदिवान्॥७॥विस्मयाविष्टहृदयःपुरीमालोक्यसा
र्वतः ॥ जांबूनदमयैर्द्वारैर्वैदूर्यकृतवेदिकैः ॥८॥ मणिस्फटिकमुक्ताभिर्मणिकुट्टिमभूषितैः ॥ तप्तहाटकनिर्यूहैराजतामलपांडुरैः ॥९॥ वैदूर्यकृत
सोपानैः स्फाटिकांतरपांसुभिः ॥ चारुसंजवनोपेतैःखमिवोत्पतितैः शुभैः ॥ १० ॥ क्रौंचबर्हिणसंघुष्टैराजहंसनिषेवितैः ॥ तूर्याभरणनिर्घोषैः
सर्वतःपरिनादिताम् ॥ ११ ॥

निसे गुंजायमान पताकाओंसे सजी धजी लंकापुरीके किलेकी भीत पर हनुमानजी उछलकर चढगये ॥७॥ उस भीत परसे उस पुरीको सब ओरसे निहार पवन कुमार बडेही विस्मित हुये कारण कि उस पुरीके सम्पूर्ण द्वार सुवर्णमय थे और उनमें चौखटें भी सुवर्णही की लगी थीं॥८॥उस पुरीमें द्वारोंके निकटवाली भीतों की चिनाई, मणि, स्फटिकमणि और मोतियोंसे हुई थी इसलिये वह द्वार अतिशय शोभायमान हो रहे थे जिनके ऊपरका भाग सुवर्ण और चांदीसे बनाया गया था, ऐसे तप्त सुवर्ण के बने मतवालेसे हाथी भी उन द्वारोंपर धरे थे॥९॥द्वारों में गमन करने के अर्थ वैदूर्य मणि की सीढियाँ बनी थीं और उन द्वारोंका सम्पूर्ण भीतरीदेश भी वैदूर्यमणियोंसे बनाया था, उन द्वारोंके ऊपर अत्युत्तम सभा मंदिर बने मानो आकाशसे बातें कर रहे थे ॥ १० ॥ उन द्वारों पर क्रौंच मयूरादि पक्षी

सुहावनी मनभावनी बोली बोल रहे थे, राज हंस भी विभूषित हो रहे थे नगाडे और आभूषणों के शब्द की गुंजार वज्झनकारसे वह सब ओरसे शब्दायमान हो रही थी ॥११॥ कुबेर की अलका नाम पुरीके समान आकाश मंडल को भेदती हुई लंकापुरी को देख हनुमानजी अत्यन्त हर्षको प्राप्त हुये ॥१२॥ उस राक्षस नाथ रावणकी श्रेष्ठ ऋद्धिमती लंका नगरीको देखकर वीर्यवान् हनुमानजी चिंताकरने लगे॥१३॥रावणकी नियत कीहुई सेना आयुध हाथमें लिये सर्वदा जिस प्रकार इसकी रक्षाकरती है जिससे और कोई भी बलपूर्वक इस पूरीमें चढाई करके नहीं आ सकता ॥१४॥ कुमुद, अंगद, महाकपि सुषेण, अथवा मैन्द और द्विविद येही कई एक जन इस प्रसिद्ध लंकापुरीमें आ सकते हैं ॥१५॥ और सूर्यपुत्र सुग्रीवजी, कुशपर्व सदृश रोमवाले ऋक्ष वानरोंमें श्रेष्ठ व जाम्बवानजी हम सब, यही लोग यहां आ सकते हैं और किसीमें यहां पहुँचनेकी गति नहीं ॥१६॥ यह सब बातें विचारते २ हनुमानजीको अकस्मात् महाबाहु श्रीरामचन्द्रजीके

वस्वोकसारप्रतिमांसमीक्ष्यनगरींततः ॥ खमिवोत्पतितांलंकांजहर्षहनुमान्कपिः॥१२॥तांसमीक्ष्यपुरींलंकांराक्षसाधिपतेःशुभाम् ॥ अनुत्त
माभृद्धिमतींचिंतयामासवीर्यवान् ॥१३॥ नेयमन्येननगरीशक्याधर्षयितुंबलात् ॥ रक्षितारावणबलैरुद्यतायुधपाणिभिः ॥ १४ ॥ कुमुदां
गदयोर्वापिसुषेणस्यमहाकपेः ॥ प्रसिद्धेयंभवेद्भूमिर्मैन्दद्विविदयोरपि ॥१५॥विवस्वतस्तनूजस्यहरेश्चकुशपर्वणः ॥ ऋक्षस्यकपिमुख्यस्यमम
चैवगतिर्भवेत ॥ १६ ॥ समीक्ष्यचमहाबाहोराघवस्यपराक्रमम् ॥ लक्ष्मणस्यचविक्रांतमभवत्प्रीतिमान्कपिः ॥१७॥ तांरत्नवसनोपेतांगो
ष्ठागारावतंसिकाम् ॥ यंत्रागारस्तनीमृद्धांप्रमदामिवभूषिताम् ॥ १८ ॥ तांनष्टतिमिरांदीपैर्भास्वरैश्चमहाग्रहैः ॥ नगरींराक्षसेंद्रस्यसददर्शमहा
कपिः ॥ १९ ॥ अथसाहरिशार्दूलंप्रविशंतंमहाकपिम् ॥ नगरीस्वेनरूपेणददर्शपवनात्मजम् ॥ २० ॥ सातंहरिवरंदृष्ट्वालंकारावणपालिता ॥
स्वयमेवोत्थितातत्रविकृताननदर्शना ॥ २१ ॥

पराक्रमकी और उनके छोटे भाई लक्ष्मणजीके विक्रमकी याद आ गई, बस इस बातके याद आतेही, हनुमानजीका विषाद दूर होकर प्रसन्न होगये॥१७॥रत्नमय गृह जो बन रहे थे वही मानो लंकाकेवसन हैं उनको पहरे गोष्ठ और बडे२गृहोंको कर्णभूषण बनाये धवरहरे आदिकोंके ऊपरवाले मुख्यद्वारोंको स्तनकिये इसप्रकार सर्व भाँतिसे भूषित सब भूषण धारण किये लंका नवीन स्त्रीहीके समानथी॥१८॥अनेक प्रकारकेरत्नोंसे प्रकाशमान भवनोंमें जो दीपक जल रहे थे इससे वहां पर अंधकारका लेशमात्रभी नहीं दिखाई देता था, इस भाँति रावणकी नगरी लंका महाकपि हनुमानजीने देखी ॥१९॥ उसके पीछे वानरश्रेष्ठ महाकपि हनुमान् जी प्रवेश करतेही हैं कि, इतनेमें स्वयं लंका अपनी अधिष्ठात्री देवताकी मूर्तिसे हनुमानजीको देखनेको आई ॥२०॥ इन वानरवरको देख रावणपालित महा

विकरालमुखी लंका अपने आपही उठधाई ॥ २१ ॥ और उन महावीर पवनकुमारका आगा घेर कर स्थिर हुई फिर घोर शब्दकर पवननंदनसे बोली ॥२२॥ हे वनवासी ! जब तक तुम्हारी देहमें प्राण रहें तबतक सत्यही सत्य बता दो कि, तुम कौन हो और किस कारणसे यहांपर आये हो? ॥२३॥ हे वानर! तुम इस लंकामें किसी प्रकारसे भी प्रवेश नहीं कर सकोगे क्योंकि रावणकी सेना सब प्रकार चारों ओरसे इस पुरीकी रक्षा कर रही है॥२४॥ तब वीर्यवान् हनुमान्‌जी सामने खड़ी हुई लंकानगरीसे कहने लगे कि, जो तुम हमसे पूछती हो हम तुम्हारे प्रश्नका ठीक उत्तर पीछेसे देंगे ॥ २५ ॥ परन्तु हे तीक्ष्णनेत्रवाली ! तुम क्यों पुरके द्वारपर खडी हुई हो ? और किस कारणसे क्रोधयुक्त होकर हमें डरा रही हो पहले यह कहो ? ॥ २६ ॥ पवनकुमार हनुमान्‌जीके वचन सुनकर

पुरस्तात्तस्यवीरस्यवायुसूनोरतिष्ठत ॥ मुंचमानामहानादमब्रवीत्पवनात्मजम् ॥ २२ ॥ कस्त्वंकेनचकार्येणइहप्राप्तोवनालय ॥ कथयस्वेहयत्तत्त्वंयावत्प्राणाधरंतिते ॥२३॥ नशक्यंखल्वियंलंकाप्रवेष्टुंवानरत्वया॥रक्षितारावणबलैरभिगुप्तासमंततः॥२४॥ अथतामब्रवीद्वीरोहनुमानग्रतःस्थिताम् ॥ कथयिष्यामितत्त्वंयन्मांत्वंपरिपृच्छसे ॥२५॥ कात्वंविरूपनयनापुरद्वारेऽवतिष्ठसे ॥ किमर्थंचापिमांक्रोधान्निर्भर्त्सयसिदारुणे॥ ॥२६॥ हनुमद्वचनंश्रुत्वालंकासाकामरूपिणी ॥ उवाचवचनंक्रुद्धापरुषंपवनात्मजम् ॥२७॥ अहंराक्षसराजस्यरावणस्यमहात्मनः ॥ आज्ञाप्रतीक्षादुर्धर्षारक्षामिनगरीमिमाम् ॥ २८ ॥ नशक्यंमामवज्ञायप्रवेष्टुंनगरीमिमाम् ॥ अद्यप्राणैःपरित्यक्तःस्वप्स्यसेनिहतोमया ॥२९॥ अहंहिनगरीलंकास्वयमेवप्लवंगम ॥ सर्वतःपरिरक्षामिअतस्तेकथितंमया ॥ ३० ॥ लंकायावचनंश्रुत्वाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ यत्नवान्सहरिश्रेष्ठःस्थितःशैलइवापरः ॥ ३१ ॥ सतांस्त्रीरूपविकृतांदृष्ट्वावानरपुंगवः ॥ आबभाषेऽथमेधावीसत्त्ववान्प्लवगर्षभः ॥ ३२ ॥

कामरूपिणी लंका क्रोधातुर होकर उनसे कठोर वचन बोली ॥ २७ ॥ हम राक्षसराज रावणकी आज्ञाके वशमें रहकर इस लंकानगरीकी रक्षा किया करती हैं ऐसा सामर्थ्य किसीमें नहीं है कि, जो हमको जीत सके ॥२८॥ तुम हमारा निरादर करके इस नगरके मध्य प्रवेश करनेकी सामर्थ्य नहीं रखते हो, तुम हमसे आज निहत हो प्राणोंको छोड़ महानिद्राको प्राप्त होगे ॥ २९ ॥ हे कपिवर! हमहीं साक्षात्‌लंकाकी अधिष्ठात्री हैं और सर्वभावसे सदा इसकी रक्षा किया करती हैं इसी लिये हमने तुमको भय दिखलाया और यह बात कही ॥ ३० ॥ वानरश्रेष्ठ पवननंदन हनुमान्‌जी लंकाके यह वचन सुन उसको पराजित करनेकी कामनासे यत्न कर दूसरे पर्वतके समान उसके आगे खड़े होगये ॥ ३१ ॥ फिर वीर्यवान् बुद्धिमान् वानरश्रेष्ठ पवनकुमार हनुमान्‌जी

उस विकटाकार स्त्रीरूप धारिणी लंकाकी ओर देखकर कहने लगे ॥३२॥ अति कौतूहल होनेके कारण धवरहरे, तोरण और अटारियोंसे परिपूर्ण लंकानगरीके देखनेकी इच्छा किये हम यहांपर आये हैं ॥ ३३ ॥ इस नगरीके वन उपवन कानन और अच्छे २ भवन देखनेकी वासनासे हमारा आना यहांपर हुआ है ॥ ३४ ॥ कामरूपिणी लंका हनुमान्‌जीके यह वचन सुनकर फिर उनसे अतिघोर कठोर वचन बोली ॥ ३५ ॥ रे अनसमझ वानर नीच ! यह पुरी राक्षसराज रावणसे पाली जाती है सो तू हमको बिना जीते इसका दर्शन न कर सकेगा॥३६॥तब कपिश्रेष्ठ हनुमानूजी उस राक्षसी रूप धारिणी लंका अधिष्ठात्रीसे बोले कि, हे भद्रे ! इस नगरीका दर्शनकर हम फिर अपने स्थानको चले जायँगे ॥ ३७ ॥ यह सुन लंकाने भयंकर नादकर अतिवेगसे हनुमान्‌जीको चरणका

द्रक्ष्यामिनगरींलंकांसाट्टप्राकारतोरणाम् ॥ इत्यर्थमिहसंप्राप्तःपरंकौतूहलंहिमे ॥ ३३ ॥ वनान्युपवनानीहलंकायाःकाननानिच ॥ सर्वतोगृहमुख्यानि द्रष्टुमागमनंहिमे ॥ ३४ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वालंकासाकामरूपिणी ॥ भूयएवपुनर्वाक्यंबभाषेपरुषाक्षरम् ॥ ३५ ॥ मामनिर्जित्यदुर्बुद्धेराक्षसेश्वरपालिताम् ॥ नशक्यंह्यद्यतेद्रष्टुंपुरीयंवानराधम ॥३६॥ ततःसहरिशार्दूलस्तामुवाचनिशाचरीम् ॥ दृष्ट्वापुरीमिमांभद्रेपुनर्यास्येयथागतम् ॥ ३७ ॥ ततःकृत्वामहानादंसावैलंकाभयंकरम् ॥ तलेनवानरश्रेष्ठंताडयामासवेगिता ॥ ३८ ॥ ततःसहरिशार्दूलोलंकयाताडितोभृशम् ॥ ननादसुमहानादंवीर्यवान्मारुतात्मजः ॥ ३९ ॥ ततःसंवर्तयामासवामहस्तस्यसोऽङ्गुलीः ॥ मुष्टिनाऽभिजघानैनांहनूमान्क्रोधमूर्च्छितः ॥४०॥ स्त्रीचेतिमन्यमानेननातिक्रोधःस्वयंकृतः ॥ सातुतेनप्रहारेणविह्वलांगीनिशाचरी ॥ पपातसहसाभूमौविकृताननदर्शना ॥४१॥ ततस्तुहनुमान्वीरस्तांदृष्ट्वाविनिपातिताम् ॥ कृपांचकारतेजस्वीमन्यमानःस्त्रियंचताम् ॥४२॥ ततोवैभृशमुद्विग्नालंकासागद्गदाक्षरम् ॥ उवाचागर्वितंवाक्यंहनूमंतंप्लवंगमम् ॥ ४३ ॥ प्रसीदसुमहाबाहोत्रायस्वहरिसत्तम ॥ समयेसौम्यतिष्ठंतिसत्त्ववंतोमहाबलाः ॥ ४४ ॥

प्रहार किया ॥ ३८ ॥ वीर्यवान् वानरशार्दूल पवननंदन हनुमान्‌जीने लंकासे अतिशय ताडित होकर घोरगर्जना करते हुये ॥ ३९ ॥ और बायें हाथकी उंगलियोंको सकोड बुक्का बांध क्रोधसे मूर्च्छितहो लंकाकेऊपर मुष्टिका प्रहार किया ॥४०॥ उसको स्त्री समझकर हनुमान्‌जीने बहुत क्रोध नहीं किया और बायें हाथसे एक साधारणसाही प्रहार किया परन्तु विकट मुखवाली और विकट दर्शन वाली राक्षसीरूपधारिणी लंका उस साधारणसे ही आघातके लगतेही कांपकर उसी समय पृथ्वीपर गिर गई ॥ ४१ ॥ उसको पृथ्वीपर गिरी हुई देख तेजस्वी और वीर्यवान् पवनकुमार हनुमान्‌जीने स्त्री समझ उसके ऊपर अनुग्रह प्रकाश किया॥४२॥ तब लंकादेवी अत्यन्त व्याकुल होकर गर्वरहित वाक्य और गद्गद कंठसे हनुमानजी को पुकार कर बोली ॥४३॥ हे प्रियदर्शन ! महा बलवान्

कपिश्रेष्ठ ! प्रसन्न होकर हमारा उद्धार करो स्त्री हत्या न करो ! हे सौम्य ! वीर्यसम्पन्न महाबलवान् पुरुष लोग स्त्री हत्या करनेके लिये कभी तैयार नहीं होते ॥४४॥ हे महाबलवान् वीर्यसम्पन्न कपिवर ! हमहीं स्वयं लंकाकी अधिष्ठात्री हैं तुमने अपने वीर्यके प्रभावसे सब प्रकार हमको पराजित किया है ॥ ४५ ॥ हे कपिश्रेष्ठ! स्वयं स्वयंभू ब्रह्माजीने हमको जो वरदान दिया था हम उसको वर्णन करती हैं, आप श्रवण करें उन्होंने यह कहा कि ॥४६॥ जब कि कोई वानर विक्रम प्रकाश करके तुमको अपने वशमें कर लेगा तबही तुम जान लेना कि, राक्षसोंको भय आय पहुँचा है॥४७॥हे प्रियदर्शन ! आज तुम्हारे दर्शन करनेसे वह ब्रह्माजीका नियत किया हुआ समय आय पहुँचा, यह इस अवश्य होनहार समयके टलनेकी किसी प्रकारसे संभावना नहीं है ॥४८॥ सीताके निमित्त दुरात्मा

अहंतुनगरीलंकास्वयमेवप्लवंगम ॥ निर्जिताहंत्वयावीरविक्रमेणमहाबल ॥ ४५ ॥ इदंचतथ्यंशृणुमेब्रुवंत्यावैहरीश्वर ॥ स्वयंस्वयंभुवादत्तंवरदानयथामम ॥४६॥ यदात्वांवानरःकश्चिद्विक्रमाद्वशमानयेत् ॥ तदात्वयाहिविज्ञेयंरक्षसांभयमागतम् ॥ ४७ ॥ सहिमेसमयःसौम्यप्राप्तोऽद्यतवदर्शनात् ॥ स्वयंभूविहितःसत्योनतस्यास्तिव्यतिक्रमः ॥ ४८ ॥ सीतानिमित्तंराज्ञस्तुरावणस्यदुरात्मनः ॥ रक्षसांचैवसर्वेषांविनाशःसमुपागतः ॥४९॥ तत्प्रविश्यहरिश्रेष्ठपुरींरावणपालिताम् ॥ विधत्स्वसर्वकार्याणियानियानीहवांछसि ॥५०॥ प्रविश्यशापोपहतांहरीश्वरःपुरींशुभांराक्षसमुख्यपालिताम् ॥ यदृच्छयात्वंजनकात्मजांसतींविमार्गसर्वत्रगतोयथासुखम् ॥५१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० च० सा० सुं० तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ सनिर्जित्यपुरींलंकांश्रेष्ठांतांकामरूपिणीम् ॥ विक्रमेणमहातेजाहनूमान्कपिसत्तमः ॥ १ ॥ अद्वारेणमहावीर्यःप्राकारमवपुप्लुवे ॥ निशिलंकां महासत्त्वो विवेशकपिकुंजरः ॥ २ ॥

राक्षस राज रावण और समस्त राक्षसोंके विनाशक काल आय पहुँचा है ॥ ४९ ॥ इसलिये हे कपिश्रेष्ठ ! तुम इस रावणकी पालित लंकापुरीमें प्रवेश कर अपनी इच्छानुसार सब कार्योंको पूरा करो जिस जिसकी तुमने इच्छा की है ॥५०॥ क्या कहें; राजा रावणसे पाली जाती हुई यह मनोहर लंकानगरी शाप * ग्रस्त हुई है, तुम इसमें प्रवेश करके अपनी इच्छानुसार सब जगह यथा सुखसे गमन करके पतिव्रता जनक कुमारी सीताजी को ढूँढो ॥ ५१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ महाबलवान्, महातेजस्वी कपि श्रेष्ठ हनुमानजी अपने विक्रमसे कामरूपिणी पुरियोंमें श्रेष्ठ लंकाको भली भांतिसे जीतकर ॥१॥ वह महावीर्यवान् कपिकुंजर द्वार कोछोड कूद कर प्राकार पर चढ रात्रिके समय लंकानगरीमें प्रवेश करते हुये॥२॥

* नंदीश्वरने शाप दिया था कि, जब इस पुरी में वानरराज प्रवेश करेंगे तबहीं इसका नाश हो जायगा ।

और कपिराज सुग्रीवजीके हितकारी हनुमानजीने इस लंकानगरीमें प्रवेश करके प्रथमही शत्रुगणोंके मस्तक पर अपना बायां चरण धर क्योंकि पंडित लोगोंने इसको शत्रुओंके परजय करनेका मुख्य कारण बताया है ॥३॥ इस प्रकारसे महापराक्रमी पवन कुमार हनुमानूजी रात्रिके समय पुरीमें प्रवेश कर खिले हुए पुष्पोंके समूहसे सुशोभित राजमार्गमें गमन करने लगे॥४॥हनुमानूजीने देखा कि, हास्यसे उत्पन्न हुए मनोहर शब्दसे विनादित विविध भाँतिके बाजोंकी ध्वनि; हीरकखचित झरोखोंसे युक्त ॥५॥ और हीरे मोती मणियोंसे बने हुए झरोखोंवाले गृहोंसे भूषित और उनको सघनतासे मेघमाला विराजित आकाश मंडलके समान लंका शोभापाय रही है॥६॥पद्म स्वस्तिक आदिश्वेत बादलके समान राक्षसोंके मन्दिरोंसे लंकापुरी शोभित होकर चमक दमक रही थी ॥७॥ और सब ओरसे सर्वतोभद्र वर्ध मान नन्द्यावर्त स्वस्तिक आदिगृहोंसे शोभायमान थी, जिसमें चार द्वार भीतर व चारों ओरको द्वार लगे हों उसे सर्वतोभद्र कहते हैं; जो इसमें

प्रविश्यनगरींलंकांकपिराजहितंकरः॥चक्रेऽथपादंसव्यंचशत्रूणांसतुमूर्धनि॥३॥प्रविष्टःसत्त्वसंपन्नोनिशायांमारुतात्मजः॥समहापथमास्थायमुक्तपुष्पविराजितम् ॥ ४ ॥ ततस्तुतांपुरींलकांरम्यामभिययौकपिः ॥ हसितोत्कृष्टनिनदैस्तूर्यघोषपुरस्कृतैः ॥५॥ वज्रांकुशनिकाशैश्चवज्रजालविभूषितैः॥गृहमेघैःपुरीरम्याबभासेद्यौरिवांबुदैः॥६॥प्रजज्वालतदालंकारक्षोगणगृहैःशुभैः॥ सिताभ्रसदृशैश्चित्रैःपद्मस्वस्तिकसंस्थितैः ॥७॥ वर्धमानगृहैश्चापिसर्वतःसुविभूषितैः॥तांचित्रमाल्याभरणांकपिराजहितंकरः॥८॥राघवार्थेचरञ्श्रीमान्ददर्शचननंदच॥ भवनाद्भवनंगच्छन्ददर्शकपिकुंजरः॥९॥विविधाकृतिरूपाणिभवनानिततस्ततः॥शुश्रावरुचिरंगीतंत्रिस्थानेस्वरभूषितम्॥१०॥स्त्रीणांमदनविद्धानांदिविचाप्सरसामिव॥शुश्रावकांचीनिनदंनूपुराणांचनिःस्वनम्॥११॥सोपाननिनदांश्चापिभवनेषुमहात्मनाम्॥आस्फोटितनिनादांश्चक्ष्वेडितांश्चततस्ततः ॥१२॥

पश्चिमकीओर का द्वार न लगा हो तो इसेही नन्द्यावर्त कहते हैं; इससे हीदक्षिण द्वार न होनेसे वर्धमान, और पूर्वके द्वार न होनेसे स्वस्तिक कहते हैं, इन सब शुभदायक भवनोंको जिनमें अनेक प्रकारके चित्र विचित्र माला आदि भूषण धरे थे देखते भालते सुग्रीवजी के हितकारी हनुमानजी चले जाते थे॥८॥श्रीरामचन्द्रजीके कार्यको सिद्ध करनेके मानससे जाते हुए हनुमानजी लंकापुरीको देख २ बडेही आनन्दित होते थे, इस मंदिरसे उसपर कूद वह उसपरसे दूसरे परको कूद भली भाँति जानकीजीको खोजते थे॥९॥जब एक भवनसे दूसरे भवनमें जाते हुये विविधाकार और विविधरूप भवनोंको हनुमानजी देखने लगे तब हृदय कण्ठ और शिर इन स्थानोंमें उत्पन्न हुवा मन्द; मध्य और तारस्वर अलंकृत मनोहर गीत उन्होंने सुना ॥ १० ॥ स्वर्गमें रहने वाली अप्सरागणोंके रागके समान मदन मिश्रित स्त्रियोंके शब्द उनकी क्षुद्रघंटिका, व नूपुर आदिका शब्द श्रवण करते ॥ ११ ॥ उन महात्माओंके भवन समूहोंमें स्त्रियोंके सीडियोंपर चढने का शब्द भी सुनते कहीं

प्रसन्नतासे ताली बजाने का शब्द और कहीं कहीं सिंहनाद सुनते २ हनुमानजी चले ॥ १२ ॥ राक्षसोंके भवनोंमें मंत्रोंकाजप सुनते और बहुत स्थानोंपर राक्षसोंको वेदाध्ययन करते भी हनुमानजीने देखा ॥१३॥और कहीं २ राक्षसलोग रावणकी स्तुति करनेमें लग रहे हैं, और अनेक राक्षसगण राजमार्गको सर्व प्रकारसे घेरेहुए थे ऐसा हनुमानजीने देखा ॥ १४ ॥ अनन्तर जाते २ हनुमानजी मध्य छावनीपै आये जहां उन्होंने बहुतसे निशाचरोंको अवलोकन किया। उनमें कोई मुंडित मुंड, कोई दीक्षित, कोई जटाजूट धारी, कोई मृगचर्म इत्यादिके वस्त्र धारण किये थे यह भेदलेते फिरते थे ॥ १५ ॥ इनमें कुशोंकी मुट्ठीही किसी २ के हथियार थे, और किसी २ के अग्निकुण्ड अस्त्रशस्त्र थे, और उनमें कोई २ कूट मुद्गर और दंडको ही आयुध बनाये हुये थे ॥१६॥

शुश्रावजपतांतत्रमंत्रान्रक्षोगृहेषुवै ॥ स्वाध्यायनिरतांश्चैवयातुधानान्ददर्शसः ॥१३॥ रावणस्तवसंयुक्तान्गर्जतोराक्षसानपि ॥ राजमार्गसमावृत्यस्थितंरक्षोगणंमहत् ॥१४॥ ददर्शमध्यमेगुल्मेराक्षसस्यचरान्बहून् ॥ दीक्षिताञ्जटिलान्मुंडान्गोजिनांबरवाससः ॥१५॥ दर्भमुष्टिप्रहरणानग्निकुंडायुधांस्तथा ॥ कूटमुद्गरपाणींश्चदंडायुधधरानपि॥१६॥एकाक्षानेककर्णांश्चचलदेकपयोधरान् ॥ करालान्भुग्नवक्त्रांश्चविकटान्वामनांस्तथा ॥१७॥ धन्विनःखड्गिनश्चैवशतघ्नीमुसलायुधान् ॥ पारघोत्तमहस्तांश्चविचित्रकवचोज्ज्वलान् ॥ १८ ॥ नातिस्थूलान्नातिकृशान्नातिदीर्घातिह्रस्वकान् ॥ नातिगौरान्नातिकृष्णान्नातिकुब्जान्नवामनान् ॥१९॥ विरूपान्बहुरूपांश्चसुरूपांश्चसुवर्चसः ॥ ध्वजिनः पताकिनश्चैवददर्शविविधायुधान् ॥ २० ॥ शक्तिवृक्षायुधांश्चैवपट्टिशाशनिधारिणः ॥ क्षेपणीपाशहस्तांश्चददर्शसमहाकपिः ॥ २१ ॥

और उन समस्त निशाचरगणोंकेमध्यमें किसी २ की एकही आंख थी, किसीके एकही कानथा, किसी २ की छातीपर एकही पयोधर झूल रहा था, उनके वदन विकराल थे. अंग अत्यन्त विषम थे आकार अतिविकट और अंग अतिछोटे थे ॥१७॥ सबहीके हाथमें धनुष, खड्ग, शीतघ्नी, मुसल और अतिश्रेष्ठ परिघ थे, और सबकेही शरीरोंपर विचित्र कवच चमक रहे थे ॥ १८ ॥ सबही न बहुत मोटे, न अति दुबले, न अति लम्बे, न अति छोटे, न अति गोरे, न अति काले; न अति कुबडे, न अति बौने ॥ १९ ॥ सबही विरूप, बहुरूप, बहुत तेजस्वी, और सबही ध्वजा पताका और विविध आयुध धारण किये हुये हनुमानजीने देखे ॥ २० ॥ उन राक्षसोंमें सबही शक्ति, वृक्ष, पटा, वज्र, धनवासी और फांसी धारण किये हुए थे ॥ २१ ॥

और सबही माला पहरे, चंदन लगाये, और श्रेष्ठ २ वस्त्राभूषण पहरे, अनेक प्रकारके वेष धारण करनेवाले इच्छानुसार चलनेवाले हनुमानजीने देखे ॥ २२ ॥ बहुत सारे तीक्ष्ण शूल और वज्र लिये महाबलवान् सावधानीसे एक लक्ष राक्षस मध्यम कक्षामें स्थित हुये ॥ २३ ॥ रावणकी आज्ञासे रनवासकी रक्षा करते हुए हनुमानजीने देखे, फिर सुवर्णमय रावणका बडी ध्वजायुक्त मंदिर देखा ॥ २४ ॥ वह राक्षसराजका विख्यात मंदिर पर्वतके बीच शिखर पर बना था, इसके चारों ओर परिखा बनी थी जिसमें अनेक प्रकारके श्वेत पद्म खिल रहे थे ॥ २५ ॥ चारों ओरसे यह भवन अति ऊंची भीतोंसे घिरा हुआ था; और साक्षात् स्वर्गसमान दिव्य भावसे सजरहा था मनोहर शब्द उसमेंसे उठ रहा था ॥२६॥ इसके द्वारपर घोडोंका शब्द प्रतिध्वनित होरहा था, वअति अद्भुत २ घोडे बँधे थे, रथवान् विमानोंमें हाथी, व अश्व जुते हुए थे॥२७॥और सब भाँतिसे सजे सजाये हाथी घोडे द्वारपर

स्रग्विणस्त्वनुलिप्तांश्चवराभरणभूषितान् ॥ नानावेषसमायुक्तान्यथास्वैरचरान्बहून् ॥२२॥ तीक्ष्णशूलधरांश्चैववज्रिणश्चमहाबलान् ॥ शतसाहस्रमव्यग्रमारक्षंमध्यमंकपिः ॥२३॥ रक्षोधिपतिनिर्दिष्टंददर्शांतःपुराग्रतः ॥ सतदातद्गृहंदृष्ट्वामहाहाटकतोरणम् ॥२४॥ राक्षसेंद्रस्यविख्यातमद्रिमूर्धिनप्रतिष्ठितम् ॥ पुंडरीकावतंसाभिःपरिखाभिःसमावृतम् ॥ २५॥ प्राकारावृतमत्यंतंददर्शसमहाकपिः ॥ त्रिविष्टपनिभंदिव्यंदिव्यनादविनादितम् ॥२६॥ वाजिह्रेषितसंघुष्टमद्भुतैश्चहयैस्तथा ॥ रथैर्यानैर्विमानैश्चतथाहयगजैःशुभैः ॥२७॥ वारणैश्चचतुर्दंतैःश्वताभ्रनिचयोपमैः ॥ भूषितैरुचिरद्वारंमत्तैश्चमृगपक्षिभिः ॥२८॥ रक्षितंसुमहावीर्यैर्यातुधानैःसहस्रशः ॥ राक्षसाधिपतेर्गुप्तमाविवेशगृहंकपिः ॥२९॥ सहेमजांबूनदचक्रवालंमहार्हमुक्तामणिभूषितांतम् ॥ परार्ध्यकालागुरुचंदनार्हंसरावणांतःपुरमाविवेश ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडेचतुर्थःसर्गः ॥४॥ "चंद्रोपिसाचिव्यमिवास्यकुर्वंस्तारागणैर्मध्यगतोविराजन् ॥ ज्योत्स्नावितानेननिपत्यलोकानुत्तिष्ठतेकेनसहस्ररश्मिः ॥१॥

टिकाये जाते थे, उनमें बहुत हाथी चौदन्ते व श्वेत बादरके समान बडे २ उज्ज्वल थे और अनेक प्रकारके सुन्दर पक्षी वहां द्वारपर बैठे शब्द कर रहे थे ॥२८॥ वीर्यवान् हजारों लाखों राक्षसोंसे यह भवन रखाया जाता था, परंतु महाकपि हनुमानजी ऐसे सुरक्षित रावणके गृहमें भी गुप्तभावसे प्रवेश करही गये ॥२९॥ इस प्रकारसे हनुमानजीने रावणके रनवासमें प्रवेश करके देखा कि उसके धवरहरे तप्त वर्णके सुवर्णसे बने हैं, और उन सबके ऊपरभाग महा मूल्यवान् मुक्तामणियोंके समूहोंसे सुशोभित और अति श्रेष्ठ कालेवर्णके अगर व चन्दनकी गन्धसे सुवासित होरहे हैं॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चतुर्थः सर्गः ॥४॥ " चंद्रमा भी महावीरजीको मंत्रीकी नाईं सहाय देता हुआ तारोंके बीचमें शोभित होने लगा और अपनी चांदनी संसारमें फैलाता हुआ सहस्रकिरणोंसे

युक्त उदय हुआ ॥ १ ॥ महावीरजी उस समय चंद्रमाको शंखकी कान्ति, दुग्ध, मृणालके समान कान्तिमान् देखकर सरोवरमें हंसके समान प्रकाश मान देखने लगे ॥ २ ॥ " अनन्तर बुद्धिमान् पवननंदन हनुमानजीने देखा कि रात्रिके प्रथम अधपहरेमें सूर्यके समान अधिक प्रकाशमान किरणों सहित चंद्रमा गोठमें भ्रमण करते हुये मतवाले वृषभके समान तारागणोंके मध्यमें प्राप्त होकर वारंवार चंद्रिका राशि छिरकाते हुए विहार कर रहे हैं ॥ १ ॥ चंद्रमाके उदय दर्शन करनेसे लोकोंके समस्त पाप नाशको प्राप्त हुए; समुद्र बढा, और सब ही प्राणी शोभायमान हुए ॥ २ ॥ जो लक्ष्मी पृथ्वीपर मन्दराचल पर्वतमें प्रदोषकालके समय समुद्र और दिनको जलकेमध्य कमल फूलोंके समूहोंमें मिली रहती है, वहीलक्ष्मी इस समय चंद्रमामें टिककर विराजमान होर ही है ॥३॥ चांदीके पींजरोंमें हंस, मन्दराचल पर्वतकी कन्दराओंमें सिंह और गर्वित हाथियोंपर चढे हुए वीर इन सबके समान आकाशमें उदय हुए चन्द्रमाकी कला

शंखप्रभंक्षीरमृणालवर्णंमुद्गच्छमानंव्यवभासमानम्॥ददर्शचंद्रंसकपिप्रवीरःपोप्लूयमानंसरसीवहंसम्२" ततःसमध्यंगतमंशुमंतंज्योत्स्नावितानं मुहुरुद्वमंतम्॥ददर्शधीमान्भुविभानुमंतंगोष्ठेवृषंमत्तमिवभ्रमंतम्॥१॥लोकस्यपापानिविनाशयंतंमहोदधिंचापिसमेधयंतम्॥भूतानिसर्वाणिवि राजयंतंददर्शशीतांशुमथाभियांतम्॥२॥याभातिलक्ष्मीर्भुविमंदरस्थायथाप्रदोषेषुचसागरस्था॥ तथैवतोयेषुचपुष्करस्थाररराजसाचारुनिशाक रस्था॥३॥ हंसोयथाराजतपंजरस्थःसिंहोयथामंदरकंदरस्थः ॥ वीरोयथागर्वितकुंजरस्थश्चंद्रोऽपिबभ्राजतथांबरस्थः ॥४॥ स्थितःककुद्मानिवती क्ष्णशृंगोमहाचलःश्वेतइवोर्ध्वशृंगः ॥ हस्तीवजांबूनदबद्धशृंगोविभातिचंद्रःपरिपूर्णशृंगः॥५॥विनष्टशीतांबुतुषारपंकोमहाग्रहग्राहविनष्टपंकः ॥ प्रकाशलक्ष्म्याश्रयनिर्मलांकोरराजचंद्रोभगवाञ्छशांकः॥६॥शिलातलंप्राप्ययथामृगेंद्रोमहारणंप्राप्ययथागजेंद्रः ॥ राज्यंसमासाद्ययथानरेंद्र स्तथाप्रकाशेविरराजचंद्रः॥७॥प्रकाशचंद्रोदयनष्टदोषःप्रवृद्धरक्षःपिशिताशदोषः॥रामाभिरामेरितचित्तदोषःस्वर्गप्रकाशोभगवान्प्रदोषः॥८॥

शोभित हो रही थी॥४॥चन्द्रमाके कलंक रूप हरिण शृङ्गके स्पष्ट प्रकाशित होनेसे ऐसा बोध हुआ मानो तेज सींगवाला बैल, ऊंचे शिखावाला श्वेत वर्णका महापर्वत अथवा जाम्बूनद सुवर्णके बंधनसे जिसके दांत बँधेहों ऐसा हाथी शोभायमान हो रहा है॥५॥वर्षा बीत जानेसे उसका शीतल जल बिन्दुरूप कीचड दूर होगया है महा ग्रह सूर्यकी किरणके संबंधसे, चन्द्रमाकी प्रभा अति बढगई व प्रकाश लक्ष्मीके आश्रय वश उसका कलंकभी अति स्पष्ट होगया है इस प्रकार चन्द्रमा शोभित होरहा है ॥ ६ ॥ शिलातल पर बैठे हुए मृगराज सिंहके समान, रणके बीचमें खडे महागजके समान, और राज्यपर स्थापित हुए राजाके समान चन्द्रमा अतिशय शोभायमान हो रहा है ॥७॥ प्रकाशमान चन्द्रमाके उदयसे समस्त अंधकारका नाश होने, राक्षसोंके मांस भक्षण दोषकी अधिकता होने,

स्त्रियोंके प्रतिपद प्रेमकलहके न होने और स्वर्गका सुख प्रकाशित होनेसे प्रदोषकाल गौरवयुक्त और शोभायमान हो रहा है॥८॥ कानोंको सुखदेनेवाली मनोहर झंकार इधर उधर सुनाई आ रही है। पतिव्रता स्त्रियें अपने २ स्वामीके साथ शयनकर रही हैं; और अतिशय अद्भुत घोरसर्म करनेवाले भयंकर वृत्ति निशाचर राक्षस लोग इधर उधर घूमते हुए विहार करनेमें लगरहे हैं ॥९॥ उसी समयमें परमबुद्धिमान हनुमानूजीने फिर देखा कि राक्षस गणोंके समस्त गृह, रथ अश्व और स्वर्णमय आसनोंसे पूरित होरहे हैं, वीर श्रीयुत और ऐश्वर्यमत्त व मदमत्त निशाचरगणोंसे भररहेहैं ॥१०॥ उनके मध्यमें प्रमत्त राक्षसोंका परस्पर अधिक उत्तर प्रत्युत्तर करते कोई दृढ हाथवाले उलझनयुक्त मतवालेप्रलापवचन परस्पर कहकर निन्दा कर रहे हैं ॥ ११ ॥ और कभी २ और कोई अपनी छातीको बजाय रहे हैं; कोई २ अपनी प्राणप्यारीको चिपटाय रहे हैं, कोई विचित्र विविध वेश धारण कर रहे हैं और अनेक धनुषको ही खैंच रहे हैं॥१२॥ अनन्तर

तंत्रीस्वराःकर्णसुखाःप्रवृत्ताःस्वपंतिनार्यःपतिभिःसुपृक्ताः ॥ नक्तंचराश्चापितथाप्रवृत्ताविहर्तुमत्यद्भुतरौद्रवृत्ताः ॥९॥ मत्तप्रमत्तानिसमाकुला निरथाश्वभद्रासनसंकुलानि॥ वीरश्रियाचापिसमाकुलानिददर्शधीमान्सकपिःकुलानि॥१०॥परस्परंचाधिकमाक्षिपंतिभुजांश्चपीनानधिविक्षि पंति ॥ मत्तप्रलापानधिविक्षिपंतिमत्तानिचान्योन्यमधिक्षिपंति ॥११॥ रक्षांसिवक्षांसिचविक्षिपंतिगात्राणिकांतासुचविक्षिपंति ॥ रूपाणिचि त्राणिचविक्षिपंतिदृढानिचापानिचविक्षिपंति ॥१२॥ ददर्शकांताश्चसमालभंत्यस्तथापरास्तत्रपुनःस्वपंत्यः ॥ सुरूपवक्त्राश्चतथाहसंत्यःक्रुद्धाः पराश्चापिविनिःश्वसंत्यः ॥१३॥ महागजैश्चापितथानदद्भिःसुपूजितैश्चापितथासुसद्भिः ॥ रराजवीरैश्चविनिःश्वसद्भिर्ह्रदोभुजंगैरिवनिश्वसद्भिः ॥ १४ ॥ बुद्धिप्रधानान्रुचिराभिधानान्संश्रद्दधानाञ्जगतःप्रधानान् ॥ नानाविधानान्रुचिराभिधानान्ददर्शतस्यांपुरियातुधानान् ॥ १५ ॥ ननंददृष्ट्वासचतान्सुरूपान्नानागुणानात्मगुणानुरूपान् ॥ विद्योतमानान्सचतान्सुरूपान्ददर्शकांश्चिच्चपुनर्विरूपान् ॥ १६ ॥

हनुमानूजीने देखा कि, स्त्रियें कोई अपने शरीरको चन्दनादि लगा रही हैं, कोई शयन करती हैं, कोई प्रफुल्लित वदनसे हँस रही हैं, कोई २ क्रोधयुक्त होकर लम्बे २ श्वास ले रही हैं॥१३॥ उस समय उस रनवासमें सजे सजाये मतवाले हाथियोंके समूहका गर्जन होनेसे और विभीषणादि महामान्य साधुचरित्र वीरोंके विश्वाससे श्वास लेते हुये सर्प समूहसे परिपूर्ण हृदयके समान लंकापुरीकी शोभा होरही थी॥१४॥ अनन्तर हनुमानूजीने उस लंकापुरीमें आस्तिक, मधुर वचन बोलनेवाले, विविध वेषधारी जगत्के मध्यमें प्रधान और सुन्दर रुचिके नाम धारी, मुखिया २ राक्षसोंकी देखा ॥१५॥ अधिक बुद्धिमान्, विविध गुणधारी अपने समान गुणवाले और स्वरूपवान राक्षसोंको देखकर हनुमानूजी बडे आनंदित हुए, उन राक्षसोंमें कोई २ अधिक विरूप होनेपर भी प्रभायुक्त होनेके

कारण स्वरूपवानके समान दृष्टि आने लगे ॥ १६ ॥ उसके पीछे हनुमान्‌जी ने देखा कि, उन स्थानोंमें अति उत्तम गहनोंसे सजधजकर तारागणोंके समान प्रियदर्शनवाली महानुभाव सुस्वभावयुक्त निशाचारियें मद्यपानादि प्रिय कार्योंमें आसक्त होकर हावभाव और कटाक्ष कर रही हैं ॥ १७ ॥ फिर हनुमान्‌जीने रात्रिके समय चलते २ देखा कि, विहंगी जिस प्रकार अपने स्वामीसे भेंटी जाती है, वैसेही अपने २ स्वामियोंसे चिपटाई जाकर कोई २ कामिनी महा लज्जा और हर्षके वशहो अपने रूपकी अधिकाईसे मानो प्रज्वलित हो रही हैं ॥ १८ ॥ बुद्धिमान् हनुमान्‌जीने फिर देखा कि, कोई २ मनमानी विवाहिता पतिव्रता स्त्रियें अटारियोंके नीचे और कोई २ अपने स्वामियोंकी गोदीमें मदनयुक्त चित्तसे बैठी हैं॥१९॥फिर हनुमान्‌जीने देखा कि, तपाये हुए सुवर्णके समान वर्णवाली व चन्द्र सदृश उजले वर्णयुक्त किसी २ स्त्रीकी ओढनी नहीं है और वह नंगी है. और कोई २ मानिनी होनेके कारण स्वामीके विनाही बैठी हैं॥२०॥ कोई २

ततोवराहाः सविशुद्धभावास्तेषांस्त्रियस्तत्रमहानुभावाः ॥ प्रियेषुपानेषुचसक्तभावाददर्शताराइवसुस्वभावाः ॥ १७ ॥ स्त्रियोज्वलंतीस्त्रपयोप
गूढानिशीथकालेरमणोपगूढाः ॥ ददर्शकाश्चित्प्रमदोपगूढायथाविहंगाविहगोपगूढाः ॥१८॥ अन्याःपुनर्हर्म्यतलोपविष्टास्तत्रप्रियांकेसुसुखोप
विष्टाः ॥ भर्तुःपराधर्मपरानिविष्टाददर्शधीमान्मदनोपविष्टाः ॥१९॥ अप्रावृताःकांचनराजिवर्णाःकाश्चित्पराध्र्यास्तपनीयवर्णाः ॥ पुनश्चका
श्चिच्छशलक्ष्मवर्णाःकांतप्रहीणारुचिरांगवर्णाः॥२०॥ ततःप्रियान्प्राप्यमनोभिरामान्सुप्रीतियुक्ताःसुमनोभिरामाः॥ गृहेषुहृष्टाःपरमाभिरामा
हरिप्रवीरःसददर्शरामाः ॥ २१ ॥ चंद्रप्रकाशाश्चहिवक्रमालावक्राःसुपक्ष्माश्चसुनेत्रमालाः ॥ विभूषणानांचददर्शमालाःशतह्रदानामिवचारु
मालाः ॥२२॥ नत्वेवसीतांपरमाभिजातांपथिस्थितेराजकुलेप्रजाताम् ॥ लतांप्रफुल्लामिवसाधुजातांददर्शतन्वींमनसाभिजाताम् ॥२३॥ सना
तनेवर्त्मनिसंनिविष्टारामेक्षणांतांमदनाभिविष्टाम् ॥ भर्तुर्मनःश्रीमदनुप्रविष्टांस्त्रीभ्यःपराभ्यश्चसदाविशिष्टाम् ॥ २४ ॥

मन भावते स्वामीके संगसे अतिशय प्रसन्न होरही हैं, और कोई २ फूलोंके गुच्छोंको धारणकर अतिशय मनोहारिणी और हर्षयुक्त होरही हैं; और कोई २ स्वभावसेही चित्तको खैंचे लेती हैं ऐसी स्त्री महावीरजीने देखी ॥ २१ ॥ शशिधरसदृश सुन्दरवदनोंके समूह, तिर्छी चितवन, सुकुमार भ्रुकुटी और उत्तम नेत्रोंकी राशि, व दामिनी मंडलके समान प्रभावान् गहने हनुमान्‌जीकी दृष्टि पडे॥२२॥परन्तु जो अतिशयकुलीनश्रेष्ठवंशमें उत्पन्न, जिनको विधाताने अपने मनकी कल्पनासे बनाया श्रेष्ठ प्रफुल्लिता लताके समान महा सुन्दरता व सुकुमारकी खानि हैं॥२३॥जो सदाही पतिव्रत मार्गमें सर्व भांतिसे टिकी हुई, श्रीरामचन्द्रमेंही जिनकी केवल एक दृष्टि और श्रीरामचन्द्रही जिनके एकमात्र कामलालसा, जिन्होंने स्वामीके निर्मल मनमें प्रवेशकिया है, जो समस्त श्रेष्ठ स्त्रीकुलके ललाम स्वरूप हैं ॥ २४॥

जो स्वामीके विरहमें दुःखित होकर सदाही रोती रहती हैं, पहले श्रीरामचन्द्रजीके सहवास समयमें अत्युत्तम गहनोंमें प्रथम गिनेजानेके योग्य पदिक जिनके कंठको शोभायमान करता, जिनकी भ्रुकुटियें सुकुमार हैं; व स्वरअति मधुर, जोकि, वनके मध्यमेंनृत्य करती हुई मोरनीके समान देखनेमें अति मनोहर हैं ॥२५॥ जो स्वामीके विरहमें भली भांति न प्रकाशती हुई चन्द्ररेखाके समान, धूरियुक्त सुवर्णके समान, व्रणयुक्त वर्णरेखाके समान अथवा पवनमथित मेघमालाके समान अति शोचनीय मूर्ति धारण किये हुए हैं ॥२६॥ उन नरेश्वर बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी की भार्या सीताजीको बहुत देरतक ढूंढनेसे भी न पायकर, कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जी कुछ क्षणके लिये अत्यन्त दुःखित और शिथिलयत्नहो गये ॥ २७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥

उष्णार्दितांसानुसृतास्रकंठींपुरावराहैंत्तमनिष्ककंठीम् ॥ सुजातपक्ष्मामभिरक्तकंठींवनेप्रवृत्तामिवनीलकंठीम् ॥२५॥ अव्यक्तरेखामिवचंद्रलेखांपांसुप्रदिग्धामिवहेमरेखाम् ॥क्षतप्ररूढामिववर्णरेखांवायुप्रभुग्नामिवहेमरेखाम् ॥२६॥सीतामपश्यन्मनुजेश्वरस्यरामस्यपत्नींवदतांवरस्य॥बभूवदुःखोपहतश्चिरस्यप्लवंगमोमंदइवाचिरस्य॥२७॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०सुन्दरकांडेपंचमःसर्गः॥५॥सनिकामंविमानेषुविचरन्कामरूपधृक्॥ विचचारकपिर्लंकांलाघवेनसमन्वितः ॥१॥ आससादचलक्ष्मीवान्राक्षसेंद्रनिवेशनम्॥ प्राकारेणार्कवर्णेनभास्वरेणाभिसंवृतम् ॥२॥ रक्षितंराक्षसैर्भीमैःसिंहैरिवमहद्वनम्॥ समीक्षमाणोभवनंचकाशेकपिकुंजरः ॥३॥ रूप्यकोपहितैश्चित्रैस्तोरणैर्हेमभूषणैः ॥ विचित्राभिश्चकक्ष्याभिर्द्वारैश्चरुचिरावृतम् ॥ ४ ॥ गजास्थितैर्महामात्रैःशूरैश्चविगतश्रमैः ॥ उपस्थितमसंहार्यैर्हयैःस्यंदनयायिभिः ॥ ५ ॥

इच्छानुसार रूप धारण किये कपिश्रेष्ठ श्रीमान् हनुमानजी सतखंड अठखंडे धवरहरोंपर, इच्छानुसार शीघ्रतासे भ्रमण करते हुए लंकापुरीमें घूमने लगे ॥ १ ॥ और बडी शीघ्रताके साथ राक्षसराज रावणके गृहके निकट पहुंचे। यह गृह सूर्य सम प्रकाशित और बाहर दिवारीसे घिरा हुआ था॥२॥ सिंहके समान महा बलवान् भयंकर राक्षसोंसे उस गृहको रक्षित देखकर कपि कुंजर हनुमान्‌जीने उसको जरा २ खोजनेका विचार किया ॥३॥ हनुमानजीने देखा कि यह भवन बहुत सारे उपगृहोंसे परिपूर्ण और विचित्र शोभासे शोभायमानहो रहा है, इसके विचित्र दरवाजे चांदीकेबने हैं, और इन पर सुवर्णकेकामहो रहे हैं, सबही द्वार मनोहर प्रकारसे स्थापित किये हुये थे इसलिये वह गृह अतिशय शोभायमान हो रहा था ॥४॥ शूरतायुक्त परिश्रमविहीन हाथियोंपर चढे महावत् गणोंसे, व

अति वेगवान् रथके खैंचने वाले घोडोंसे॥५॥सिंह और व्याघ्र चर्मको धारण किये, सुवर्ण, चांदी, व हाथीदांतकी प्रतिमा ओंसे सुसज्जित और गंभीर गर्जनशाली विचित्र रथ उसके किनारे २ घूम रहे थे॥६॥अनेक प्रकारके रत्न अति श्रेष्ठ आसन और बडे २ रथ व महारथोंके समूहसे शोभित॥७॥और परम सुन्दर सुहावने अनेक प्रकारके सहस्रों मृग और पक्षी इन सब वस्तुओंसे रावणका गृह भूषित और पूरित था॥८॥सीमारक्षक विनीत स्वभाव परम शिक्षित राक्षसगण बडी सावधानीसे उस गृहकी रक्षा कर रहे थे, और वह सुन्दर २ स्त्रियोंसे व्याप्त था॥९॥अनेक बडी स्त्रियों और प्रमोद युक्त प्रमदाओंसे वह स्थान चारों ओर भररहा है और अति श्रेष्ठ गहनेकी झनकार ध्वनिसे वह स्थान सागर तुल्य गंभीर भावसे शब्दयमान हो रहा था॥१०॥अधिक करके यह गृह सब राज चिह्नोंसे परिपूर्ण था, और अतिश्रेष्ठ महा-

सिंहव्याघ्रतनुत्राणैर्दांतकांचनराजतैः ॥ घोषवद्भिर्विचित्रैश्चसदाविचरितैरथैः ॥६॥ बहुरत्नसमाकीर्णंपरार्ध्यासनभूषितम् ॥ महारथसमावापं महारथमहासनम् ॥ ७ ॥ दृश्यैश्चपरमोदारैस्तैस्तैश्चमृगपक्षिभिः ॥ विविधैर्बहुसाहस्रैःपरिपूर्णंसमंततः ॥ ८ ॥ विनीतैरंतपालैश्चरक्षोभिश्चसुरक्षितम् ॥ मुख्याभिश्चवरस्त्रीभिःपरिपूर्णंसमंततः ॥ ९ ॥ मुदितप्रमदारत्नंराक्षसेंद्रनिवेशनम् ॥ वराभरणसंह्रादैःसमुद्रस्वननिस्वनम् ॥१०॥ तद्राजगुणसंपन्नंमुख्यैश्चवरचंदनैः ॥ महाजनसमाकीर्णंसिंहैरिवमहद्वनम् ॥ ११ ॥ भेरीमृदंगाभिरुतंशंखघोषविनादितम्॥ नित्यार्चितंपर्वसुतं पूजितंराक्षसैःसदा ॥१२॥ समुद्रमिवगंभीरंसमुद्रसमनिस्वनम्॥महात्मनोमहद्वेश्ममहारत्नपरिच्छदम् ॥१३॥ महारत्नसमाकीर्णंददर्शसमहाकपिः ॥ विराजमानंवपुषागजाश्वरथसंकुलम् ॥१४॥ लंकाभरणमित्येवसोऽमन्यतमहाकपिः ॥ चचारहनुमांस्तत्रराववणस्यसमीपतः ॥१५॥ गृहाद्गृहंराक्षसानामुद्यानानिचसर्वशः ॥ वीक्षमाणोप्यसंत्रस्तःप्रासादांश्चचचारसः ॥ १६ ॥

मोलके चन्दनके सुगंधसे और मुख्य २ राक्षसगणोंसे व्याप्त था जैसे सिंहोंसे बडा वन॥११॥भेरी, मृदंग और शंखके शब्दसे शब्दायमान हो रहा था, और राक्षसगण निरन्तर इस गृहमें अपने २ इष्ट देवताकी पूजा करते थे ॥१२॥ महात्मा राक्षसराज रावण का समुद्र तुल्य गंभीर और समुद्रके ही समान शब्दकारी इस प्रकार रत्नसामग्रीसे परिपूर्ण भवन था ॥१३॥ महाकपि हनुमानजीने अनेक रत्नोंसे युक्त उस गृहको देखा, उस गृहमें जहां तहां गज, अश्व और रथ व्याप्त थे॥१४॥ उस सुदृश्य भवनको देख कर महा कपि हनुमानजीने विचारा कि, यह गृह सब लंकाका भूषण रूप है, यह मानकर वह जहां रावण शयन कर रहा था वहां गये ॥ १५ ॥ इस प्रकार एक गृहसे दूसरे गृहमें गमन करते हुये मुखिया २ निशाचरों के गृह और फूलवाड़ियें देखते भालते उस मंदिरमें घूमने लगे ॥ १६ ॥

उसके पीछे महावीर्यवान् हनुमानजी महावेगसे छलांग मारकर प्रथम प्रहस्तके घरमें फिर वहांसे महापार्श्वके भवनमें प्रवेश करते हुये॥१७॥फिर वहांसे कुंभकर्णके मेघाकार गृहमें फिर वहांसे कूदकर विभीषणके घर पर महाकपि आये॥१८॥वहांसे महोदरके घरपर कूदे, उसके पीछे विरूपाक्षके स्थान पर आये फिर विद्युज्जिह्वका घर खोजा, फिर विद्युन्मालीके भवनको आन लिया॥१९॥वहांसे वज्रदंष्ट्रके गृह पर गये, फिर महाकपि हनुमानजी शुकके यहां पधारे, फिर बुद्धिमान् सारणके स्थानपर ॥ २० ॥ फिर वानर श्रेष्ठ हनुमानजी इन्द्रजीतके स्थान पर कूदे, वहांसे जम्बुमाली और सुमालीके भवनपर वानर श्रेष्ठ हो रहे ॥ २१ ॥ वहांसे रश्मिकेतुके भवन पर, रश्मिकेतुके भवनसे सूर्य शत्रुके यहां फिर वहांसे यह महाकपि वज्रकायके मंदिर पर पहुँचे॥२२॥ फिर पवन कुमार धूम्राक्ष, व सम्पाति

अवप्लुत्यमहावेगःप्रहस्तस्यनिवेशनम् ॥ ततोऽन्यत्पुप्लुवेवेश्ममहापार्श्वस्यवीर्यवान् ॥१७॥ अथमेघप्रतीकाशंकुंभकर्णनिवेशनम् ॥ विभीषण-स्यचतथापुप्लुवेसमहाकपिः॥१८॥महोदरस्यचतथाविरूपाक्षस्यचैवहि ॥ विद्युज्जिह्वस्यभवनंविद्युन्मालेस्तथैवच॥१९॥वज्रदंष्ट्रस्यचतथापुप्लु-वेसमहाकपिः ॥ शुकस्यचमहावेगःसारणस्यचधीमतः॥२०॥तथाचेंद्रजितोवेश्मजगामहरियूथपः ॥ जंबुमालेःसुमालेश्चजगामहरिसत्तमः॥२१॥ रश्मिकेतोश्चभवनंसूर्यशत्रोस्तथैवच ॥ वज्रकायस्यचतथापुप्लुवेसमहाकपिः ॥२२॥ धूम्राक्षस्याथसंपातेर्भवनंमारुतात्मजः ॥ विद्युद्रूपस्यभीमस्यघनस्यविघनस्यच ॥ २३ ॥ शुकनाभस्यचक्रस्यशठस्यकपटस्यच ॥ ह्रस्वकर्णस्यदंष्ट्रस्यलोमशस्यचरक्षसः ॥ २४ ॥ युद्धोन्मत्तस्यमत्तस्यध्वजग्रीवस्यसादिनः॥ विद्युज्जिह्वद्विजिह्वानांतथाहस्तिमुखस्यच॥२५॥करालस्यविशालस्यशोणिताक्षस्यचैवहि॥प्लवमानःक्रमेणैवहनूमा-न्मारुतात्मजः ॥२६॥ तेषुतेषुमहार्हेषुभवनेषुमहायशाः॥ तेषामृद्धिमतामृद्धिंददर्शसमहाकपिः ॥२७॥ सर्वेषांसमतिक्रम्यभवनानिसमंततः॥ आससादाथलक्ष्मीवान्राक्षसेंद्रनिवेशनम् ॥ २८ ॥ रावणस्योपशायिन्योददर्शहरिसत्तमः ॥ विचरन्हरिशार्दूलोराक्षसीर्विकृतेक्षणाः ॥ २९ ॥

के घर पर, वहांसे विद्युद्रूप, भीम, घन, विघनके स्थानपर ॥ २३ ॥ इसके पीछे शुकनाभ, चक्र, शठ, कपट, ह्रस्वकर्ण, दंष्ट्र, लोमश राक्षसोंके गृहोंपर॥ २४ ॥ युद्धोन्मत्त, मत्त, ध्वजग्रीव, सादी विद्युज्जिह्वके, द्विजिह्वके और फिर हस्तिमुखके स्थान पर॥२५॥वहांसे कराल, विशाल, शोणिताक्ष, इन सब राक्षसोंके भवनों पर पवन कुमार हनुमानजी बारीबारीसे घूमे कूदे ॥२६॥ और उन सब बडे भवनोंमें इन समस्त ऋद्धिशाली राक्षसोंकी परम समृद्धि महायशस्वी हनुमानजीने देखी ॥२७॥ इसप्रकारसे श्रीमान महाकपि हनुमानजी क्रमसे इन समस्त भवनोंपर घूम राक्षस रावणके गृहपर आये ॥ २८ ॥ वहांपर महावीरजीने देखा कि

विकराल नेत्रवाली राक्षसियें अलग २ अपने पहरेपर रावणके शयनगृहकी रक्षा करती हैं ॥ २९ ॥ इनके अतिरिक्त रावणके गृहमें इधर उधर विचरण करती हुई, शूल, मुद्गर, शक्ति, और तोमर धारण किये हुए असंख्य राक्षसियोंके झुण्ड हनुमानजीने देखे ॥ ३०॥ शस्त्र धारण किये हुए बडी २ देहवाले राक्षसोंके भवन समूहोंमें लाल, श्वेत, घोडे बँधे देखे जो कि अतिशीघ्र चलनेवाले थे॥३१॥और बडे २ श्रेष्ठरूपवाले वनके गजोंके मर्दन करनेवाले, भली भाँतिसे शिक्षित, युद्धमें ऐरावत हाथीके समान गज भी बँधे देखे॥३२॥वह हाथी देखते ही शत्रुओंकी सेनाका संहार करनेवाले थे व और पर्वतोंके समान जिनमेंसे मदका झर नासा झरता था॥३३॥समरमें शत्रुलोगोंसे जीतनेके अयोग्य, मेघोंके समान गर्जना करनेवाले हाथी, और बहुतसी सेना, सुवर्णकी सब सामग्रीसे सम्पन्न उस भवनमें

शूलमुद्गरहस्ताश्चशक्तितोमरधारिणीः ॥ ददर्शविविधान्गुल्मांस्तस्यरक्षःपतेर्गृहे ॥३०॥ राक्षसांश्चमहाकायान्नानाप्रहरणोद्यतान् ॥ रक्तान्श्वे-
तान्सितांश्चापिहरींश्चापिमहाजवान् ॥३१॥ कुलीनान्रूपसपन्नान्गजान्परगजारुजान् ॥ शिक्षितान्गजशिक्षायामैरावतसमान्युधि ॥३२॥
निहंतॄन्परसैन्यानांगृहेतस्मिन्ददर्शसः ॥ क्षरतश्चयथामेघान्स्रवतश्चयथागिरीन् ॥३३॥ मेघस्तनितनिर्घोषान्दुर्धर्षान्समरेपरैः॥ सहस्रंवाहिनी
स्तत्रजांबूनदपरिष्कृताः ॥ ३४ ॥ हेमजालैरविच्छिन्नास्तरुणादित्यसन्निभाः ॥ ददर्शराक्षसेंद्रस्यरावणस्यनिवेशने ॥३५॥ शिबिकाविविधा
काराःसकपिर्मारुतात्मजः ॥ लतागृहाणिचित्राणिचित्रशालागृहाणिच ॥ ३६ ॥ क्रीडागृहाणिचान्यानिदारुपर्वतकानिच ॥ कामस्यगृहकंर
म्यंदिवागृहकमेवच ॥ ३७ ॥ ददर्शराक्षसेंद्रस्यरावणस्यनिवेशने ॥ समंदरसमप्रख्यंमयूरस्थानसंकुलम् ॥ ३८ ॥ ध्वजयष्टिभिराकीर्णंददर्श
भवनोत्तमम् ॥ अनंतरत्ननिचयंनिधिजालंसमंततः ॥ धीरनिष्ठितकर्मांगंगृहंभूतपतेरिव ॥ ३९ ॥

जहाँ तहाँ छाई हुई देखी ॥ ३४ ॥ वह सेना सुवर्णकी कडियोंके जालका बख्तर पहने, प्रातःकालीन सूर्यके समान चमकती दमकती, राक्षसनाथ रावणके स्थानमें हनुमानजीने देखी ॥ ३५ ॥ अनेक प्रकारकी पालकियें चित्र विचित्र लतायुक्त गृह, और चित्रपट शोभित गृह हनुमानजीने देखे ॥ ३६ ॥ विहार गृह, और काठके बने हुये (नकली) क्रीडा पर्वत रमणीक रति करनेके समान और दिनको विहार करनेके गृह हनुमानजीने देखे॥३७॥और हनुमानजीने देखा कि रावणका गृह अतिश्रेष्ठ है, वह मन्दराचल पर्वतकी तलैटीके समान मनोहर मोरोंके स्थानोंसे व्याप्त है ॥ ३८॥ ध्वजा पताकाओंसे भूषित, असंख्य रत्न और ऋद्धि सिद्धिके समूहसे परिपूर्ण और वहांपर भय रहित स्थिर चित्त राक्षस लोग उन निधियोंकी रक्षामें नियुक्त थे, देखनेसे बोध होता था कि

मानो यक्षनाथ कुबेरजीका गृह विराजमान हो रहा है॥३९॥सब रत्नोंकी ज्योति और रावणके तेजके प्रभावसे हजार किरणोंसहित सूर्यके समान यह गृह प्रकाशमान हो रहा था ॥ ४० ॥ सुवर्णके बने हुए पलंग, आसन और सब बर्तन जोकि भोजनादि करनेके चांदीके बने थे, वह सब हनुमानजीने देखे॥४१॥ जब हनुमानजी इस मंदिरमें घुसे तो उन्होंने देखा कि यह गृह मधु व आसव (मदिराका रस) से गील होरहा है, मणिमय पात्रोंसे व्याप्त है, और कुबेरके भवनके समान रमणीक है ॥४२॥ और सर्वथा विघ्नरहित, नूपुर, काञ्ची, मृदंग, ताल इत्यादि बाजोंके शब्दसे शब्दायमान, गायकोंके शब्दसे पूर्ण ॥ ४३ ॥ अनेक २ अनुप धवरहरे और सैकडों हजारों स्त्रीरत्नोंसे घिरा हुवा बडी २ कक्षावाला जिसकी रक्षा भली भाँति होरही थी, ऐसे भवनमें हनुमानजीने प्रवेश किया ॥ ४४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥ महाबलवान् हनुमानजीने देखा कि इस गृहकी सब खिड़कियां सुवर्णकी

अर्चिर्भिश्चापिरत्नानांतेजसारावणस्यच ॥ विरराजचतद्वेश्मरश्मिवानिवरश्मिभिः॥४०॥जांबूनदमयान्येवशयनान्यासनानिच॥भाजनानिच शुभ्राणिददर्शहरियूथपः ॥४१॥ मध्वासवकृतक्लेदंमणिभाजनसंकुलम् ॥ मनोरममसंबाधंकुबेरभवनंयथा ॥ ४२ ॥ नूपुराणांचघोषेणकांचीनांनिस्वनेनच ॥ मृदंगतलनिर्घोषैर्घोषवद्भिर्विनादितम् ॥४३॥ प्रासासंघातयुतंस्त्रीरत्नशतसंकुलम्॥ सुव्यूढकक्ष्यंहनुमान्प्रविवेशमहागृहम् ॥ ४४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥ सवेश्मजालंबलवान्ददर्शव्यासक्तवैदूर्यसुवर्णजालम् ॥ यथामहत्प्रावृषिमेघजालंविद्युद्भिनद्धंसविहंगजालम् ॥ १ ॥ निवेशनानांविविधाश्चशालाः प्रधानशंखायुधचापशालाः ॥ मनोहराश्चापिपुनर्विशालाददर्शवेश्माद्रिषुचंद्रशालाः ॥२॥ गृहाणिनानावसुराजितानिदेवासुरैश्चापिसुपूजितानि ॥ सर्वैश्चदोषैःपरिवर्जितानिकपिर्ददर्शस्वबलार्जितानि ॥ ३ ॥ तानिप्रयत्नाभिसमाहितानिमयेनसाक्षादिवनिर्मितानि ॥ महीतलेसर्वगुणोत्तराणिददर्शलंकाधिपतेर्गृहाणि ॥४॥

बनी हैं; और वैदूर्यमणिसे खचित हैं, उनमें पक्षियोंके विराजमान रहनेसे विद्युज्जडित विहंगोंकी श्रेणीसे शोभित वर्षाकालके मेघके समान उस गृहकी शोभा होरही है ॥ १ ॥ उस अतिभारी मन्दिरके अन्दर विविध रहने बैठने इत्यादिके दर दालान बने ठने थे । उनमें शंख, व अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र और धनुषबाण सजे धजे थे और पर्वताकार भवनसमूहोंके ऊपर बनी हुई विशाल गृहावली अति मनोहर भावसे विराज रहीथीं, जिनपर सदा चन्द्रकिरण पडकर मन हरण किया करती थीं ॥ २ ॥ यह समस्त गृह विविध रत्नोंसे परिपूर्ण देवासुर गणोंसे भी पूजित, सर्व दोषोंसे रहित थे और इसमें सब वस्तुयें रावणकी बाहुबलसे इकट्ठी की हुई थीं ॥३॥ साक्षात् मयदानवके द्वारा अतियत्न पूर्वक बनाये जानेसे गुणग्राममें लंकापतिरावणके यह गृहसमूह सबपृथ्वीमें श्रेष्ठ थे सो देखे ॥४॥

ऊंचे मेघके समान सुवर्णके बने राक्षसराजके यह समस्त घर उसके बाहुवीर्यके समान मनोहर और उपमारहित थे ॥ ५ ॥ उसके देखनेसे ऐसा जान पड ताथा मानो पृथ्वीमें गिरे हुए स्वर्गके समान शोभासे यह भवन उजला होरहा है वह अनेक रत्नों करके पूर्ण रहनेके कारण ऐसा शोभायमान होरहा था मानो इधर उधर छितराये हुए पुष्पोंके परागसे ढके अनेक जातिके वृक्ष पुष्पाकीर्ण पर्वतके अग्रभागमें चमक दमक रहे हैं ॥६॥ रूपवान स्त्रियोंके विराजमान रहनेसे मानो वह गृह दामिनीयुक्त मेघमालाके समान शोभित हो रहा है अथवा दिव्य हंसोंकी कतारसे उठाया हुवा पुण्यवान् उनका आकाशचारी सुन्दर विमान शोभायमान होता है, इसी भाँतिसे उस भवनकी शोभा थी ॥ ७ ॥ जिस प्रकारसे पर्वतका अग्रभाग अनेक धातुओंसे चित्रित होता है जैसे ग्रह और चंद्रमासे आकाशमंडल चित्रित होता है और जैसे मेघ अनेक रंगोंसे चित्रित होते हैं इसी प्रकार अनेक रत्नोंके जडे रहनेसे विचित्र रावणका पुष्पक नामक विमान

ततोददर्शोच्छ्रितमेघरूपंमनोहरंकांचनचारुरूपम् ॥ रक्षोधिपस्यात्मबलानुरूपंगृहोत्तमंह्यप्रतिरूपरूपम् ॥५॥ महीतलेस्वर्गमिवप्रकीर्णंश्रिया ज्वलन्तंबहुरत्नकीर्णम् ॥ नानातरूणांकुसुमावकीर्णंगिरेरिवाग्रंरजसावकीर्णम् ॥६॥ नारीप्रवेकैरिवदीप्यमानंतडिद्भिरंभोधरमर्च्यमानम् ॥ हंस प्रवेकैरिववाह्यमानंश्रियायुतंखेसुकृतंविमानम् ॥७॥ यथानगाग्रंबहुधातुचित्रंयथानभश्चग्रहचंद्रचित्रम् ॥ददर्शयुक्तीकृतचारुमेघचित्रंविमानंबहु रत्नचित्रम् ॥८॥ महीकृतापर्वतराजिपूर्णाशैलाः कृता वृक्षवितानपूर्णाः ॥ वृक्षाःकृताःपुष्पवितानपूर्णाःपुष्पंकृतंकेसरपत्रपूर्णम् ॥ ९ ॥ कृतानि वेश्मानिचपांडुराणितथासुपुष्पाअपिपुष्करिण्यः ॥ पुनश्चपद्मानिसकेसराणिवनानिचित्राणिसरोवराणि ॥ १०॥पुष्पाह्वयंनामविराजमानंरत्न प्रभाभिश्चविघुर्णमानम्॥ वेश्मोत्तमानामपिचोच्चमानमहाकपिस्तत्रमहाविमानम्॥११॥कृताश्चवैदूर्यमयाविहंगारूप्यप्रवालैश्चतथाविहंगाः॥ चित्राश्चनानावसुभिर्भुजंगाजात्यानुरूपास्तुरगाःशुभांगाः ॥ १२ ॥

हनुमानजीने देखा ॥ ८ ॥ इस विमानमें बहुत जनोंके बैठनेके जो स्थानथे वह सुवर्णादिसे बने हुए नकली पर्वतोंके समूहसे परिपूर्ण थे, उन पर्वतोंपर बने हुए वृक्ष लगे हुये थे, और उन वृक्षोंपर फूल खिल रहे थे और अत्यन्त कारीगरीकी बात यह थी कि, उन फूलोंसे पराग झरता था ॥ ९ ॥ उस विमानमें श्वेत वर्णके अनेक भवन थे और अच्छे २ फूलोंसे शोभित अनेक तलैयां थीं उन तलैयोंमें परागसहित कमल फूले थे व उस घरमें विचित्रवन और सरोवर भी बने हुये थे ॥ १० ॥ महाकपि हनुमान्जीने वहांपर ऐसा पुष्पक नामक महाविमान देखा, यह विमान रत्नोंकी प्रभासे उज्ज्वल था और इधर उधर घूम रहा था, और अत्युत्तम विमानोंके समूहसे भी अधिक ऊँचा यह श्रेष्ठ विमान था ॥ ११ ॥ इस विमानमें वैदूर्यमणि मूंगा औरचांदीके पक्षी

बने थे, व सुवर्ण गठित विचित्र भुजंगम और जातिके अनुरूप सुन्दर शरीर तुरंगमसमूह भी हनुमानजीने देखे ॥ १२ ॥ जिनके पंखमें सुवर्ण और मूंगेके फूल सजाये गये थे जो संकुचित और कुटिल साक्षात् कामदेवके पक्षके समान शोभायमान थे, ऐसे सुन्दर मुखवाले और श्रेष्ठ पंखधारी पक्षी भी वहां बनाये गये थे ॥१३॥ इसके सिवाय वहां पर कमलवाली पुष्करणियोंमें सुशोभित कमलका फूल हाथमें लिये लक्ष्मीजी और उनका अभिषेक करनेमें नियुक्त सुन्दर शुण्ड सुशोभित कमल परागसे अलंकृत हाथी भी बने हुए थे ॥ १४ ॥ इस भाँति विस्मय युक्त हो सुन्दर कन्दरावाली अति शोभायमान जिसके स्थान उस लंकापुरीमें प्रवेश कर फिर वसन्तऋतु होनेसे सुन्दर सुगन्धित खोडलयुक्त शोभायमानवृक्षके समान उस गृहमें प्रवेश करते हुये ॥१५॥ इस प्रकारसे हनुमान्जी

प्रवालजांबूनदपुष्पपक्षाःसलीलमावर्जितजिह्मपक्षाः ॥ कामस्यसाक्षादिवभांतिपक्षाःकृताविहंगाःसुमुखाःसुपक्षाः ॥१३॥ नियुज्यमानाश्चग-जासुहस्ताःसकेसराश्चोत्पलपत्रहस्ताः॥बभूवदेवीचकृतासुहस्तालक्ष्मीस्तथापद्मिनिपद्महस्ता॥१४॥इतीवतद्गृहमभिगम्यशोभमानंसविस्मयो नगमिवचारुकंदरम् ॥ पुनश्चतत्परमसुगंधिसुंदरंहिमात्ययेनगमिवचारुकंदरम् ॥ १५॥ ततःसतांकपिरभिपत्यपूजितांचरन्पुरींदशमुखबाहुपा-लिताम्॥अदृश्यतांजनकसुतांसुपूजितांसुदुःखितांपतिगुणवेगनिर्जिताम्॥१६॥ततस्तदाबहुविधभावितात्मनःकृतात्मनोजनकसुतांसुवर्त्मनः॥ अपश्यतोभवदतिदुःखितंमनःसचक्षुषःप्रविचरतोमहात्मनः ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च० सा० सुं० सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥ सतस्यमध्येभवनस्यसंस्थितोमहद्विमानंमणिरत्नचित्रितम् ॥ प्रतप्तजांबूनदजालकृत्रिमंददर्शधीमान्पवनात्मजःकपिः ॥ १ ॥

उस दशमुख रावणकी भुजाओंसे रक्षित परम प्रशंसित लंकापुरीमें इधर उधर छलांगे मार २ कर घूमने लगे परतु अतिशय दुःखित सुपूजिता व पतिके गुणोंके वेगसे जीवित सीताजीको वहां न देख पाकर उनका मन अतिशय दुःखित हुआ ॥ १६ ॥ तब हनुमानजी जिनका चारित्र समस्त जगत्का आदर्श रूप अतिआदर पानेके योग्य व हृदय अति शिक्षित था वह शास्त्ररूपी नेत्रोंसे युक्त वे महात्मा जनकसुताको ढूंढने परभी न पाकर दुःखित हुए ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि सुन्दरकाडे भाषायां सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥ बुद्धिमान् पवनकुमार हनुमानजीने रावणके गृहमें टिककर अनेक प्रकारकी श्रेष्ठ मणि योंसे खचित, इस प्रकारका अति बडा पुष्पक नामक महाविमान देखा, यह विमान तपाये हुए सुवर्णके झरोखोंसे सजा हुआ था ॥ १ ॥

और अनुपम सुन्दरतायुक्त प्रतिमाइत्यादिकोंके सहितहोनेसे यह विमानविचित्रसुषमायुक्तथा, स्वयं विश्वकर्माने भली भाँति मनलगाकर इसको बनाया था और आकाशमार्गमें टिके वायुमार्गमें सूर्यके मार्गका चिह्नस्वरूप यह बिमान विराजमान हो रहा था ॥२॥ उस विमानमें ऐसा कुछ नहीं था जो महामूल्यवान् रत्नोंसे न बनाया हो देवतालोगोंके विमानोंमेंभी वैसी कारीगरी दृष्टि नहीं आती इस प्रकारकी उसमें सब ही रचनायें विशेष थीं उसमेंके सबही पदार्थ सब गुण सम्पन्न थे ॥३॥ रावणने तपस्या और समाधिसे प्राप्त किये पराक्रमकी सहायसे उसको प्राप्त किया था, यह विमान मनके संकल्पानुसार सबही जगह जासकता था अनेक प्रकारकी भली २ रचना और अनेक स्थानोंसे एकत्रकिये दिव्यविमानके बनानेके लायक विशेष २ बडे २ मोलके रत्नोंसे यह बनाया गया था ॥४॥ वह विमान महाधनशाली

तदप्रमेयप्रतिकारकृत्रिमंकृतंस्वयंसाध्विति विश्वकर्मणा ॥ दिवंगतेवायुपथैप्रतिष्ठितंव्यराजतादित्यपथस्थलक्ष्मतत् ॥२॥ नतत्रकिंचिन्नकृतंप्र यत्नतोनतत्रकिंचिन्नमहार्घरत्नवत् ॥ नतेविशेषानियताःसुरेष्वपिनतत्रकिंचिन्नमहाविशेषवत् ॥३॥ तपःसमाधानपराक्रमार्जितंमनःसमाधान विचारचारिणम् ॥ अनेकसंस्थानविशेषनिर्मितंततस्ततस्तुल्यविशेषनिर्मितम् ॥४॥ मनःसमाधायतुशीघ्रगामिनंदुरासदंमारुततुल्यगामिनम्॥ महात्मनांपुण्यकृतांमहर्द्धिनांयशस्विनामग्र्यमुदामिवालयम् ॥५॥ विशेषमालंव्यविशेषसंस्थितंविचित्रकूटंबहुकूटमंडितम् ॥ मनोभिरामंशर दिंदुनिर्मलंविचित्रकूटंशिखरंगिरेर्यथा ॥ ६ ॥ वहंतियत्कुंडलशोभिताननामहाशनाव्योमचरानिशाचराः ॥ विवृत्तविध्वस्तविशाललोचना महाजवाभूतगणाः सहस्रशः ॥ ७ ॥

यशस्वी पुण्यशील महात्मा लोगोंको अतिआनंदका देनेवाला था, जो महापरिश्रमसे न बनाया हो इसमें ऐसा कोई भी स्थान न था और यह अपने स्वामीके मनकी गतिको जान पवनके समान अतिवेगसे गमन करता इस लिये कोई भी इसका अनादर नहीं करसकता था ॥ ५ ॥ अधिक करके यह विमान विशेष २ गतिके अनुसार शून्यमार्गमें घूमता और वह समस्त अद्भुत पदार्थोंकेखानिरूप बहुतसे गृहोंसे विभूषित, अतिशयमनोरम, शरद ऋतुके चन्द्रमाके समान निर्मल और विचित्र शिखर समूहसे अलंकृत, सघन शिखरसे शोभित पर्वतके समान विराजमान था ॥ ६ ॥ जिनके नेत्र सदा घूमते रहनेवाले, निमेषरहित और विशाल थे, ऐसे आकाशमें चलनेवाले निशाचर और महावेगवान्, कुंडल धारण किये सहस्र२भूत गण अतिगंभीर शब्द करके इस विमानको लेकर चलते थे॥७॥

इस प्रकारसे वानरश्रेष्ठ वीरवर हनुमानजीने वसंत समयमें उत्पन्न हुये पुष्पोंके ढेरसे युक्त वसंत माससे भी अधिक परमसुन्दर देखनेके योग्य, यह श्रेष्ठपुष्पकविमान देखा ॥ ८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि सुन्दरकांडे भाषायामष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥ पवनकुमार हनुमानजीने उन सर्वश्रेष्ठ सुन्दर भवनोंके बीचमें अति सुन्दर विशाल वह निर्मल गृह देखा कि, जिसमें विमान धरा था॥ १॥ यह रावणका गृह बहुतही बडा था, इसका विस्तार दो कोश और लंबाई चार कोशकी थी और बहुत धवरहरे इत्यादिकसे यह घिरा हुआ था॥ २॥ शत्रुओंके मारनेवाले हनुमानजी वहांपर बडे २ नेत्रवाली विदेहनन्दिनी देवी सीताजीको ढूँढते हुये सब जगह विचरण करने लगे॥ ३॥ और राक्षस लोगोंके साधारण गृह देखते हुये हनुमानजी रावणके मुख्य लक्ष्मीवान् उत्तम गृहमें प्रवेश करते हुये॥ ४॥ यह गृह बहुतही बडा था,

वसंतपुष्पोत्करचारुदर्शनंवसंतमासादपिचारुदर्शनम् ॥ सपुष्पकंतत्रविमानमुत्तमंददर्शतद्वानरवीरसत्तमः ॥८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०सुंदरकांडे अष्टमः सर्गः ॥८॥ तस्यालयवरिष्ठस्यमध्येविमलमायतम् ॥ ददर्शभवनश्रेष्ठंहनूमान्मारुतात्मजः॥१॥ अर्धयोजनविस्तीर्णमायतंयोजनंमहत् ॥ भवनंराक्षसेंद्रस्यबहुप्रासादसंकुलम् ॥२॥ मार्गमाणस्तुवैदेहींसीतामायतलोचनाम् ॥ सर्वतःपरिचक्रामहनूमानरिसूदनः ॥ ३ ॥ उत्तमंराक्षसावासंहनूमानवलोकयन् ॥ आससादाथलक्ष्मीवान्राक्षसेंद्रनिवेशनम् ॥४॥ चतुर्विषाणैर्द्विरदैस्त्रिविषाणैस्तथैवच ॥ परिक्षिप्तमसंबाधंरक्ष्यमाणमुदायुधैः ॥५॥ राक्षसीभिश्चपत्नीभीरावणस्यनिवेशनम् ॥ आहृताभिश्चविक्रम्यराजकन्याभिरावृतम् ॥ ६ ॥ तन्नक्रमकराकीर्णंतिमिंगिलझषाकुलम् ॥ वायुवेगसमाधूतंपन्नगैरिवसागरम् ॥ ७ ॥ याहिवैश्रवणेलक्ष्मीर्याचंद्रेहरिवाहने ॥ सारावणगृहेरम्यानित्यमेवानपायिनी ॥ ८ ॥ याचराज्ञः कुबेरस्ययमस्यवरुणस्यच ॥ तादृशीतद्विशिष्टावाऋद्धीरक्षोगृहेष्विह ॥ ९ ॥

चौदन्ते और तिदंते हाथियोंके समूहसे व्याप्त था, हथियार उठाये हुये निशाचरगण सर्वदा इसकी रक्षा करते थे॥ ५॥ रावणकी राक्षस जातिकी निशाचर पत्नी, और बल सहित दूसरे राजाओंसे छीन लाई हुई राजकन्यागणोंसे पूर्ण होनेपर॥ ६॥ मानो नाके मकर, तिमिंगिल मछलियोंके समूह और सपोंसे परिपूर्ण व वायुके वेगसे चलायमान समुद्रके समान यह गृह हनुमानजीने देखा॥ ७॥ कुबेर चन्द्रमा व इन्द्रजीके भवनमें जो लक्ष्मी विराजमान हो रहती थी, रावणके इस भवनमें भी वही सर्व भुवनमनोहारिणी अनपायिनी लक्ष्मी नित्य विराजमान रहती थी॥ ८॥ और राजा कुबेरके, यम और वरुणके गृहमें जितना धन रहता व ऋद्धि सिद्धि विराजती,

रावणके इस गृहमें भी वैसेही वरन् इनके गृहसे भी अधिक ऋद्धि सिद्धि विराजमान रहती थी॥९॥पवन कुमार हनुमानजीने उस अति बडे भवनके भीतर शयन गृह और बहुत उत्तम बना, बहुत सारे मतवाले हाथियोंसे पूर्ण एक गृह देखा॥१०॥विश्वकर्माजीने स्वर्गमें रहकर अनेक प्रकारके रत्नोंसे सजायकर पुष्पक नामक जो दिव्य विमान ब्रह्माजीके निमित्त बनाया था ॥११॥ यक्षपति कुबेरजीने कठोर तपस्याके फलसे ब्रह्माजीसे उसको पाया, फिर राक्षसपति रावण अनेक बल वीर्य व तेजके प्रभावसे कुबेरजीको जीतकर वह विमान ले आया ॥१२॥वह सुवर्ण चांदीसे चित्रित मृग युक्त सुडोल खंभोंसे और अपनी श्रीसे मानो प्रज्वलित हो रहा था॥१३॥सुमेरु और मन्दराचल पर्वतके समान, सूर्याग्निकी नाईं आकाशको छूते हुये से शिखर गृह और विहार भवनोंसे सब कहीं शोभित हो रहा था ॥ १४ ॥ विश्वकर्माजीने बडी चतुराईसे जिसको बनाया था, जो सुवर्णकी सीढियें और अति उत्तम वेदियोंसे अलंकृत था॥१५॥जो कांचनमय और स्फटि

तस्यहर्म्यस्यमध्यस्थंवेश्मचान्यत्सुनिर्मितम् ॥ बहुनिर्यूहसंयुक्तंददर्शपवनात्मजः ॥१०॥ ब्रह्मणोऽर्थेकृतंदिव्यंदिवियद्विश्वकर्मणा ॥ विमानं पुष्पकंनामसर्वरत्नविभूषितम् ॥११॥ परेणतपसालेभेकत्कुबेरःपितामहात् ॥ कुबेरमोजसाजित्वालेभेतद्राक्षसेश्वरः ॥१२॥ ईहामृगसमायुक्तैः कार्तस्वरहिरण्मयैः ॥ सुकृतैराजितंस्तंभैःप्रदीप्तमिवचश्रिया ॥ १३ ॥ मेरुमंदरसंकाशैरुल्लिखद्भिरिवांबरम् ॥ कूटागारैःशुभागारैःसर्वतःसम लंकृतम् ॥१४॥ ज्वलनार्कप्रतीकाशैःसुकृतंविश्वकर्मणा ॥ हेमसोपानयुक्तंचचारुप्रवरवेदिकम् ॥ १५ ॥ जालवातायनैर्युक्तंकांचनैःस्फाटिकै रपि ॥ इंद्रनीलमहानीलमणिप्रवरवेदिकम् ॥ १६ ॥ विद्रुमेणविचित्रेणमणिभिश्चमहाधनैः ॥ निस्तुलाभिश्चमुक्ताभिस्तलेनाभिविराजितम् ॥ ॥ १७ ॥ चंदनेनचरक्तेनतपनीयनिभेनच ॥सुपुण्यगंधिनायुक्तमादित्यतरुणोपमम् ॥१८॥ विमानंपुष्पकंदिव्यमारुरोहमहाकपिः ॥ तत्रस्थः सर्वतोगंधंपानभक्ष्यान्नसंभवम् ॥१९॥ दिव्यंसंमूर्छितंजिघ्रन्रूपवंतमिवानिलम् ॥ सगंधस्तंमहासत्त्वंबंधुर्बन्धुमिवोत्तमम् ॥ २० ॥

कमय झरोखे और खिडकियोंके समूहसे विराजमान जिसमें इन्द्रनील महानील व दूसरी श्रेष्ठ मणियोंकी वेदियां शोभायमान होरहीं थी ॥१६॥ विचित्र मूंगे, बडे २ मोलकी मणियें गोल २ आकारवाले मोती जिसकी सहनमें लग रहे थे, इसकारण जो बहुतही शोभायमान था ॥१७॥ जो सुवर्ण समानसुगंधित और सूर्यभगवानकी नाईं लालचन्दन जिसमें लेप किया हुआ था । उस तरुण सूर्यके समान प्रकाशित ॥१८॥ पुष्पक नामदिव्य विमानमें महाकपि हनुमानजी चढ गये, और उस विमानमें टिक कर घूमघाम सब ओरसे खाने पीनेके पदार्थोंकी सुगंधको॥१९॥सूंघने लगे, यह सुगंध बडी दिव्यथी इससर्वत्र व्याप्त वायुने मानो साक्षात् गंध स्वरूप धारण किया था । बंधु जिस प्रकार अपने निष्कपट मित्रको जैसे उपदेश देता है ऐसेही वह गंधमय वायु महावीर्यवान् हनुमानजीसे

मानों यह वार्त्ता कहने लगा ॥ २० ॥ 'जिस स्थानमें रावण हैं हमारे साथ उसही स्थानमें चलो' इसलिये हनुमानजीने वहां चलकर रावणका बडा भारी शयनमंदिर देखा ॥२१॥ यह गृह रावणको उत्तम स्त्रीके समान प्यारा था; उसमें सुवर्णके झरोखे मणियोंकी सीढियां थीं ॥२२॥ स्फटिक मणियोंसे नीचेकी सहनई, और उसके बिचले भागमें हाथी दांत, मोती, हीरा, मूँगा सुवर्ण और चांदीकी बनी हुई विविध भाँतिकी मूँर्तियां शोभायमान होरही थीं ॥ २३ ॥ मणियों करके निर्मित हुए अनेक खंभोंसे विभूषित समस्त खंभ; सीधे, सरल और समान थे इन सबसे शोभित ॥ २४ ॥ उन पक्षसमान अति ऊँचे खंभोंसे मानो वह भवन आकाशको उडा जाता था, पृथ्वीके समान चौकोना विचित्रफर्श जिसमें हीरा आदि मणियें जड रही थीं बिछा हुआ था ॥२५॥ अधिक

इतएहीत्युवाचेवतत्रयत्रसरावणः ॥ ततस्तांप्रस्थितःशालांददर्शमहतीशिवाम् ॥२१॥रावणस्यमहाकांतांकांतामिववरस्त्रियम् ॥ मणिसोपानविकृतांहेमजालविराजिताम् ॥२२॥ स्फाटिकैरावृततलांदंतांतरितरूपिकाम् ॥ मुक्तावज्रप्रवालैश्चरूप्यचामीकरैरपि॥२३॥विभूषितांमणिस्तंभैः सुबहुस्तंभभूषिताम् ॥ समैर्ऋजुभिरत्युच्चैःसमंतात्सुविभूषितैः ॥२४॥ स्तभैःपक्षैरिवात्युच्चैर्दिवंसंप्रस्थितामिव ॥ महत्याकुथयास्तीर्णांपृथिवीलक्षणांकया ॥२५॥ पृथिवीमिवविस्तीर्णांसराष्ट्रगृहशालिनीम् ॥ नादितांमत्तविहगैर्दिव्यगंधाधिवासिताम् ॥२६॥ परार्ध्यास्तरणोपेतांरक्षोऽधिपनिषेविताम् ॥ धूम्रामगुरुधूपेनविमलांहंसपांडुराम् ॥२७॥पत्रपुष्पोपहारेणकल्माषीमिवसुप्रभाम्॥मनसोमोदजननींवर्णस्यापिप्रसाधिनीम् ॥२८॥ तांशोकनाशिनींदिव्यांश्रितःसंजननीमिव ॥ इंद्रियाणींद्रियार्थैस्तुपंचपंचभिरुत्तमैः ॥२९॥

करके यह शयनशाला गांव, पुर, राज्य, गृह शोभित दूसरी पृथ्वीहीके समान विस्तारित थी, यह मदमत्त विहंगमोंके शब्दसे शब्दायमान, मनोहर; गंधसे सुगंधित की हुई थी ॥ २६ ॥ यहांपर बडे मोलके बिछौनेपर लेटा हुआ रावण शयन कर रहा था, यह शाला अगरके धूपसे धौले वर्ण हंसके समान श्वेत वर्णवाली थी ॥ २७ ॥ पुष्प रचनाके निकट रहनेसे विचित्र वर्ण वसिष्ठजीके धेनुके समान सुंदर प्रभा युक्त हृदयके आनंदको बढानेवाली ॥ २८ ॥ देहकी कांतिको उसकानेवाली, समस्त शोकोंको विनाश करनेवाली और साक्षात् मानो दिव्य शोभाको उत्पन्न करनेवाली शालाने इंद्रियोंके पांच शब्द, स्पर्श, रूप रस व गंध इस पंच इंद्रियोंकी भोग्य वस्तु द्वारा हनुमानजीके चक्षुकर्णादि, पंच इंद्रियोंकी तृप्ति माताके समान देसतेही करदी ॥ २९ ॥

जब उस रावणपालित शालाने माताके समान उन्हें संतुष्ट कर दिया तब हनुमानजीने मनमें समझा कि, यह साक्षात् स्वर्ग देवलोक अथवा अमरावती या कोई श्रेष्ठ सिद्धि होगी ॥ ३० ॥ अथवा यह कोई उत्कृष्ट गन्धर्वी सिद्धि है यह विचार महावीरजी देखने लगे ॥ ३१ ॥ उसके कांचन मय खम्भोंमें जलते हुए समस्त दीपक रावणके तेजके प्रभावसेअ तिक्षीण हो जुआ खेलने में महाधूर्त्त करके हारे हुए जुवारी लोगोंके समान मानो बडीभारी चिंतामें लगे हुए थे॥ ३२॥दीपावलीकी प्रभा; रावणका तेज और गहनोंके समूहकी दीप्ति इन सबसे उस शालामें मानो अग्निकी शिखा बन रही है ऐसा हनुमानजीने माना ॥३३॥ फिर हनुमानजीने देखा कि, रात्रिके हो आनेसे सहस्र २ स्त्रियें अनेक प्रकारके शृङ्गार कर विभूषित हो विचित्र आसनोंपर कोई २ बैठी हैं और कोई २ लेटी हैं ॥३४॥ वह सब स्त्रियां अर्द्धरात्रि हो जानेसे मदिरा पान करनेके कारण नींदके वशहो विहार करनेसे विरत होगई हैं॥३५॥इस प्रकारसे सबके

तर्पयामाससमातेवतदारावणपालिता॥स्वर्गोऽयंदेवलोकोऽयमिंद्रस्यापिपुरीभवेत्॥३०॥सिद्धिर्वेयंपराहिस्यादित्यमन्यतमारुतिः ॥३१॥ प्रध्यायतइवापश्यत्प्रदीपांस्तत्रकांचनान्॥धूर्तानिवमहाधूतर्दवनेनपराजितान्॥३२॥दीपानांचप्रकाशेनतेजसारावणस्यच॥अर्चिर्भिर्भूषणानांचप्रदीप्तेत्यभ्यमन्यत ॥३३॥ ततोऽपश्यत्कुथासीनंनानावर्णांबरस्रजम् ॥ सहस्रंवरनारीणांनानावेषविभूषितम् ॥३४॥ परिवृत्तेऽर्धरात्रेतुपाननिद्रावशंगतम् ॥ क्रीडित्वोपरतंरात्रौप्रसुप्तबलवत्तदा ॥ ३५ ॥ तत्प्रसुप्तंविरुरुचेनिःशब्दांतरभूषितम् ॥ निःशब्दहंसभ्रमरंयथापद्मवनंमहत् ॥ ३६ ॥ तासांवृत्तदांतानिमीलिताक्षीणिमारुतिः ॥ अपश्यत्पद्मगंधीनिवदनानिसुयोषिताम् ॥३७॥ प्रबुद्धानीवपद्मानितासांभूत्वाक्षपाक्षये॥पुनःसंवृतपत्राणिरात्राविवबभुस्तदा॥३८॥इमानिमुखपद्मानिनियतंमत्तषट्पदाः ॥ अंबुजानीवफुल्लानिप्रार्थयंतिपुनःपुनः ॥ ३९ ॥ इतिवाऽमन्यत श्रीमानुपपत्त्यामहाकपिः ॥ मेनेहिगुणतस्तानिसमानिसलिलोद्भवैः ॥ ४० ॥

सोयेजाने और नूपुर इत्यादिकी झनकारका शब्द बंद होजानेसे रावणका यह गृह भ्रमर और हंसध्वनि रहित बडे भारी कमलवनके समान शोभा धारण कर रहा था ॥ ३६ ॥ उसके पीछे पवनकुमार हनुमानजीने परम सुन्दरी ललनाओंके नेत्र मुँदे और कमलकी सुगंधिसे युक्त वदनमंडल देखे ॥३७॥ निद्राके समागमसे उनके नेत्रयुगल मुँद गये और बत्तीसी बन्द हो गई थी उनके ऐसे मुखमण्डल रात्रिके अवसानमें कमलफूलोंके समान प्रफुल्लित होकर; फिर रात्रिके आगमनसे मुकुलित पत्र सरोज (कमल) की नाईं परम शोभा धारण कर रहे थे ॥३८॥ यह देखकर श्रीमान् महाकपि हनुमानजीने युक्तिके अनुसार इसप्रकारसे विचारा कि, मत्त भ्रमर कुलप्रफुल्लित कमलके समय इन समस्त मुखकमलोंका सदा अभिलाष करते हैं ॥ ३९ ॥ इस प्रकारका विचार करके

उन्होंने इन सब मुखपद्मोंकी गुणमें जलमें उत्पन्न हुए पद्मके सहित समानताकी ॥ ४० ॥ जो कुछ हो रावणका शयनगृह इन सब वरांगनाओंके झुण्डसे शरद कालके ताराओंसे भूषित निर्मल आकाशके समान शोभायमान हो रहा था ॥४१॥ और आपरूप रावण भी वैसेही स्त्रियोंके पास रहनेसे तारागणोंसे युक्त चन्द्रमाके समान उज्ज्वलतासे प्रकाश पाय रहाथा ॥ ४२ ॥ जो तारे कि, पुण्यक्षीण होनेके उपरान्त आकाशसे गिरते हैं, वही समस्त मानो स्त्रियोंके रूपसे यहांपर आ कर मिल गये हैं; ऐसा विचार हनुमानजीके मनमें उदय हुआ ॥ ४३ ॥ क्योंकि निर्मल तेजयुक्त बहुत श्रेष्ठ तारागणोंके समान वहां पर की स्त्रियोंकी चमकीली कान्ति और कमल वर्णकी प्रसन्नता इनमें शोभित हो रही है ॥ ४४ ॥ जो कि, वह स्त्रियें मदिरा पीकर अत्यन्तही श्रमके वश हो नींदमें अचेत होगई थीं; इसलिये उनके केश, कोमल मालायें, व श्रेष्ठ श्रेष्ठ गहनेइधर उधर चलायमान हो रहे थे ॥४५॥ किसी २ का तिलक विझन गया

सातस्यशुशुभेशालाताभिःस्त्रीभिर्विराजिता ॥ शरदीवप्रसन्नाद्यौस्ताराभिरभिशोभिता॥ ४१ ॥सचताभिःपरिवृतः शुशुभेराक्षसाधिपः ॥ यथा ह्युडुपतिःश्रीमांस्ताराभिरिवसंवृतः॥४२ ॥याश्च्यवंतेंबरात्तारा:पुण्यशेषसमावृताः॥ इमास्ताःसंगताःकृत्स्नाइतिमेनेहरिस्तदा ॥४३॥ तारा णामिवसुव्यक्तंमहतीनांशुभार्चिषाम् ॥ प्रभावर्णप्रसादाश्चविरेजुस्तत्रयोषिताम्॥४४ ॥व्यावृत्तकचपीनस्रक्प्रकीर्णवरभूषणाः॥पानव्यायामका लेषुनिद्रोपहतचेतसः ॥ ४५ ॥ व्यावृत्ततिलकाः काश्चित्काश्चिदुद्भ्रांतनूपुराः ॥ पार्श्वेंगलितहाराश्चकाश्चित्परमयोषितः ॥ ४६ ॥मुक्ताहारवृता श्चान्याः काश्चित्प्रस्रस्तवाससः ॥ व्याविद्धरशनादामाःकिशोर्यइववाहिताः॥४७॥अकुंडलधराश्चान्याविच्छिन्नमृदितस्रजः॥गजेन्द्रमृदिताःफु ल्लालताइवमहावने॥४८ ॥चंद्रांशुकिरणाभाश्चहाराः कासांचिदुद्गताः ॥ हंसाइवबभुः सुप्ताः स्तनमध्येषुयोषिताम् ॥४९॥ अपरासांचवैदूर्याःका दंबाइवपक्षिणः ॥ हेमसूत्राणिचान्यासांचक्रवाकाइवाभवन् ॥ ५० ॥

था; किसी २ की पायजेब पांयसे निकल गई थी; किसी २ के हार टूटकर उनकी बगलोंमें पडे थे; इस प्रकारसे वह स्त्रियें सो रही थीं ॥ ४६ ॥ किसीका मोतियोंका हार टूट गया था, किसीके कपडे उसके अंगोंसे खसक गये थे किसी २ की तगडियें नितम्बोंपरसे निकली पडती थीं स्त्रियें थक कर इस प्रकार सब गहनोंको इधर उधर डाल बोझ लादनेके पीछे बोझ उतारी हुई घोडियोंके समान शयन कर रही थीं॥४७॥किसीके कुण्डल निकल पडे थेकिसी २ की मालायें टूट गई थीं कोई २ स्त्रियें महाभवनमें गजेंद्रने मर्दित की हुई लताके समान घबडाई सी पडी थीं ॥ ४८ ॥ किसी २ स्त्रीका चन्द्रमाकी किरणोंके समान श्वेत वर्णका मुक्ताहार छाती पर सिमट जानेसे एकत्र हो, सोते हुए हंसके समान स्त्रियोंके स्तनोंमें विराजमानहो रहा था॥४९॥किसी २ की वैदूर्यमणिसे

बनी हुई मणिमाला कल हंसके समान किसीके स्तनोंमें बीच सोनेके हारकी श्रेणियां चक्रवाकोंके समान शोभा विस्तार कर रहीथीं ॥५०॥ इससे वे स्त्रियां हंस कारण्डव सहित और चक्रवाकोंसे शोभित नदियोंकी भांति किनारेरूपी जंघाओंसे शोभायमान होती थीं ॥५१॥ किंकिणीके जालको मुकुल बनाये स्वर्णके गहनोंको बडे २ सरोज समझे; भाव शृङ्गार और चेष्टाओंको ग्राह बनाये पतिके अनुकूल चलनेसे उत्पन्न हुए यशको किनारा किये सोई हुई वे स्त्रियें नदियोंके समान शोभितहोती थीं॥५२॥ किसी २ स्त्रीके सुकोमल अंगोंमें और किसी २ स्त्रीके कुचाग्रमें मर्दन करनेसे जो रेखायें पड गई हैं, वह समस्त रेखायें सुन्दर गहनोंका कार्य कर रही हैं।५३॥किसी २ स्त्रीके वस्त्रोंके अञ्चल उसके मुखके श्वांसकी लहरसे वारम्वार कंपित मुखमंडलके ऊपर वारम्वार फहरा रहे थे॥५४॥

हंसकारंडवोपेताश्चक्रवाकोपशोभिताः ॥ आपगाइवतारेजुर्जघनैः पुलिनैरिव ॥५१॥ किंकिणीजालसंकाशास्ताहेमविपुलांबुजाः ॥ भावग्राहाय शस्तीराःसुप्तानद्यइवाबभुः ॥ ५२ ॥ मृदुष्वंगेषुकासांचित्कुचाग्रेषुचसंस्थिताः ॥ बभूवुर्भूषणानीवशुभाभूषणराजयः ॥५३॥ अंशुकांताश्च कासांचिन्मुखमारुतकंपिताः ॥ उपर्युपरिवक्राणांव्याधूयतेपुनःपुनः ॥ ५४॥ ताःताकाइपवोद्धूताः पत्नीनांरुचिरप्रभाः ॥ नानावर्णसुवर्णानां वक्रमूलेषुरेजिरे ॥५५॥ववल्गुश्चात्रकासांचित्कुंडलानिशुभार्चिषाम् ॥ मुखमारुतसंकंपैर्मंदंमंदंचयोषिताम् ॥५६॥ शर्करासवगंधःसप्रकृत्या सुरभिःसुखः॥तासांवदननिःश्वासःसिषेवेरावणंतदा ॥ ५७॥ रावणाननशंकाश्चकाश्चिद्रावणयोषितः॥ मुखानिस्वसपत्नीनामुपाजिघ्रन्पुनः पुनः ॥५८ ॥ अत्यर्थं सक्तमनसोरावणेतावरस्त्रियः ॥ अस्वतंत्राः सपत्नीनांप्रियमेवाचरंस्तदा ॥५९ ॥ बाहूउपनिधायान्याःपारिहार्यविभू षिताः ॥ अंशुकानिचरम्याणिप्रमदास्तत्रशिश्यिरे॥ ६० ॥

उनसे ऐसी शोभा होरही थी; मानो अनेक वर्णके रँगीली सुवर्णके तारोंसे बनी हुई श्रेष्ठ पताकायें फहराय रही हैं ॥५५॥ किन्हीं २ कांतिवाही स्त्रियोंके दोनों कुण्डल उनके मुखकी पवनसे मन्द २ शब्द करके हिल रहेथे ॥ ५६ ॥ उन स्त्रियोंका स्वाभाविक सुगंधिवाला वदनसे निकला हुआ; छूनेसे सुख देनेवाला श्वापवन मदिराकी गंधसे अधिकतर सुगंधित हो रावणकी सुख उपजातयकन रहा था ॥ ५७ ॥ कोई २ रावणकी स्त्री मदके मारे विह्वल हो रावणके मुखके धोखेमें वारंवार अपनी सौतोंका मुख सूंघ रहीं थीं॥५८॥उन सब श्रेष्ठ स्त्रियोंका मन एक रावणमें ही बहुत लगनेसे राजपत्नियों करके चुम्बित होनेपर भी विरक्त नहीं होता था॥५९॥बाजु धारण किये कुछेक स्त्रियें सुन्दर २ वस्त्र धारण किये हुये दोनों बाहोंको तकिया बनाये उनपर मस्तक धर शयन कर रहीं हैं॥६०॥

कोई किसीकी छातीके ऊपर, कोई किसीकी भुजाके ऊपर कोई किसीकी गोदीमें, और कोई २ किसी२के कुचोंहीको पकडे शयन कर रही थीं ॥ ६१ ॥
इस प्रकारसे मादकता, और पतिके प्रेमके वशहो समस्त स्त्रियां परस्पर जांघ, कमर, बगल और पीठका आश्रयकर परस्पर अंग मिलाये शयन किये हुई थीं
॥ ६२ ॥ वह सुमध्यमा स्त्रियें परस्पर एक दूसरीका अंग स्पर्श करके सुख प्राप्त करती हुई परस्पर बाँहें मिलाये गाढी नींदके वश हो रहीथीं॥६३॥एक दूसरे
की भुजाके डोरेमें बँधी हुई वह स्त्रियोंकी माला एक डोरामें गुँथी हुई भ्रमरगणोंसे सेवित मनोहर पुष्पमालाके समान शोभायमान हो रही थी ॥ ६४ ॥
पवनके लगनेके कारण खिली हुई लताओंके परस्पर ग्रसित होने और स्त्रियोंके बालोंमें गुँथे फूलोंकेगुच्छोंसे॥६५॥व उसके परस्पर लिपट जानेसे स्कंध रूप शोभायमान होने,

अन्यावक्षसिचान्यस्यास्तस्याःकाचित्पुनर्भुजम्॥अपरात्वंकमन्यस्यास्तस्याश्चाप्यपराकुचौ॥६१॥ऊरुपार्श्वकटीपृष्ठमन्योन्यस्यसमाश्रिताः
॥परस्परनिविष्टांग्योमदस्नेहवशानुगाः॥६२॥ अन्योन्यस्यांगसंस्पर्शात्प्रीयमाणाःसुमध्यमाः॥एकीकृतभुजाःसर्वाःसुषुपुस्तत्रयोषितः॥६३॥
अन्योन्यभुजसूत्रेणस्त्रीमालाग्रथिताहिसा॥ मालेवग्रथितासूत्रेशुशुभेमत्तषट्पदा॥ ६४ ॥लतानांमाधवेमासिफुल्लानांवायुसेवनात् ॥ अन्योन्य
मालाग्रथितंसंसक्तकुसुमोच्चयम्॥६५॥प्रतिवेष्टितसुस्कंधमन्योन्यभ्रमराकुलम् ॥ आसीद्वनमिवोद्धूतंस्त्रीवनंरावणस्यतत् ॥६६॥उचितेष्वपिसु
व्यक्तंनतासांयोषितांतदा ॥ विवेकंशक्यमाधातुंभूषणांगांबरस्रजाम्॥ ६७ ॥रावणेसुखसंविष्टेताःस्त्रियोविविधप्रभाः ॥ ज्वलंतःकांचनादीपाः
प्रेक्षंतोनिमिषाइव ॥६८ ॥ राजर्षिविप्रदैत्यानांगंधर्वाणांचयोषितः ॥ रक्षसांचाभवन्कन्यास्तस्यकामवशंगताः ॥६९ ॥ युद्धकामेनताःसर्वारा
वणेनहृताःस्त्रियः ॥ समदामदनेनैवमोहिताःकाश्चिदागताः ॥ ७० ॥

और भ्रमररूपी बालोंके वर्त्तमान होनेसे रावणकी स्त्रियोंका मानो यह एकवन था ॥६६॥ स्त्रियोंके समस्त गहने उचित रीतिसे यथास्थानमें पहरे हुए हैं परन्तु
एक दूसरीसे इसप्रकार सटकरसोय रही थी कि जिससे यह स्थिर करना कठिन था कि कौन गहना है?कौन माला है और उनका कौनसा अंग है? ॥६७॥ राव-
णको इस समय सोताही हुआ देखकर मानो विविध प्रभावाले सुवर्णमय उज्ज्वल दीपकविना पलक मारे नेत्रोंसे रावणकी स्त्रियोंको देख रहे थे जब रावण जागता था
तब तो देवलोग भी उसकी स्त्रियोंको नहीं देख सकते थे ॥६८॥ राजर्षि, ब्राह्मण, दैत्य, गन्धर्व और राक्षसोंकी कन्या इन सबकोही रावणने अपनी प्रणयिनी
बनाया था; अर्थात् उनको व्याहा था ॥६९॥ उनमेंसे किसी २ को रावण युद्ध करके उनके पिताओंको जीत हरकर लाया था और कोई मदमाती युवती काम

बाणसे मोहितहो स्वयंही रावणके साथ आई थी॥ ७०॥ वीर्यवान् रावण बलपूर्वक किसी स्त्रीको उसकी इच्छाके विना लंकामें नहीं लाया था दूसरेकी इच्छा करनेवाली और ब्याही स्त्रीकोभी नहीं लाया था; पूजा करनेके योग्य जानकीके सिवाय सबही स्त्रियां रावणके सौन्दर्यादि गुणोंमें बंधकर स्वयंही चली आई थीं॥ ७१॥ उन स्त्रियोंमें रावणको छोड दूसरेके प्रति किसीका अभिलाष नहीं था और न कोई पहले किसीसे भोगी गई थीं; सबही सत्कुलमें उत्पन्न, सबही सुन्दरी; सबही चतुर और सबही श्रेष्ठवस्त्राभूषण धारण किये, सबही चिन्ताशील और सबही रावणको प्यारी थीं॥ ७२॥ उन सब स्त्रियोंको देखकर बुद्धिमान हनुमानजीने विचारा कि यह सब राक्षसराज रावणकी स्त्रियां हैं; और यह जिस प्रकार रावणका स्मरणादि करनेमें लगी हैं; जो इसी भांति श्रीरामचंद्रजीकी धर्मभार्या जानकीजी श्रीरामचंद्रजीका ध्यान करती हैं व रावणने उनमें कुछ विघ्न न डाला हो; तो बडे आनंदकी बात है ॥ ७३॥ फिर हनुमानजीने विचारा कि सीताजीमें पातिव्रत्यादि गुण अति

नतत्रकाश्चित्प्रमदाः प्रसह्यवीर्योपपन्नेनगुणेनलब्धाः ॥ नचान्यकामापिनचान्यपूर्वाविनावराहांजनकात्मजांतु॥ ७१ ॥ नचाकुलीनानचहीनरूपा नादक्षिणानानुपचारयुक्ता॥ भार्याऽभवत्तस्यनहीनसत्त्वानचापिकांतस्यनकामनीया॥ ७२ ॥ बभूवबुद्धिस्तुहरीश्वरस्ययदीदृशीराघवधर्मपत्नी ॥ इमामहाराक्षसराजभार्याः सुजातमस्येतिहिसाधुबुद्धेः ॥ ७३ ॥ पुनश्चसोचिंतयदात्तरूपोध्रुवंविशिष्टागुणतोहिसीता ॥ अथायमस्यांकृतवान्महा त्मालंकेश्वरः कष्टमनार्यकर्म ॥ ७४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे नवमः सर्गः ॥ ९ ॥ तत्रदिव्योप मंमुख्यंस्फाटिकंरत्नभूषितम् ॥ अवेक्षमाणोहनुमान्ददर्शशयनासनम् ॥ १ ॥ दांतकांचनचित्रांगैर्वैडूर्यैश्चवरासनः ॥ महार्हास्तरणोपेतैरुपपन्नंमहा धनैः ॥ २ ॥ तस्यचैकतमेदेशेदिव्यमालोपशोभितम् ॥ ददर्शपांडुरंछत्रंताराधिपतिसन्निभम् ॥ ३ ॥

प्रबल हैं; कारण कि; हमने देखा है कि जब महाबलवान् क्रूरकर्मकारी रावण अनार्य कर्म कर उनको हरे हुए लिये जाता था; तब वह बडे शब्दसे रोय २ अपना दुःख प्रगट करती हुई गई थीं ॥ ७४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां नवमः सर्गः ॥ ९ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

इसके पीछे हनुमानजीने इस स्थानके चारो ओर देखते २ विविध रत्न विभूषित; स्फटिक मणियोंसे बना हुआ दिव्य सर्वश्रेष्ठ पलंगके स्थापन करनेका आसन देखा ॥ १ ॥ यह आसन चित्रपादकादि युक्त, महामूल्यवान् रत्नखचित बडे २ बिछौनोंसे ढका हुआ था । इसपर महामूल्यवान् हाथीदांतके और सुवर्णके बने हुए पलंग रक्खे थे ॥ २ ॥ इन सब पर्यंकोंके एक स्थानमें चन्द्रमाके समान उज्ज्वलमालाओंसे शोभित एक २ श्वेत छत्र रक्खा था ॥ ३ ॥

और सुवर्णमंडित, सूर्यसम प्रभायुक्त अशोक फूलोंकी मालासे युक्त विचित्र एक पलंग अलग रक्खा हुआ देखा ॥४॥ इस पलंगके चारों ओर स्त्रियोंकी मूर्त्तियां चमर हाथमें लेकर पवन कर रही थीं ॥ अनेक प्रकारकी सुगंधि निकल रही थी और श्रेष्ठ धूपकी सुगंधि वहां आय रही थी ॥५॥ वह बडे कोमल पशमीनेसे मढा गया था, मनोहर बिछौना उसपर बिछा हुआ था, और मनोहर फूलोंके चारों ओर शोभा विस्तार कर रहेथे ॥६॥ उस आसनपर काले मेघके समान वर्ण वाला कानोंमें उज्ज्वल प्रकाशमान कुण्डल धारण किये लालनेत्रवाला आजानु लम्बित बाहु, सुवर्णके तारोंसे बने हुए वस्त्र पहरे ॥ ७ ॥ सर्वांगमें सुगंधियुक्त लाल चन्दन लगाये दामिनीयुक्त अरुण सन्ध्याकालीनबादरके समान शोभा धारण किये ॥ ८ ॥ अति मनोहर मूर्ति धारण किये; विविध भाँतिके श्रेष्ठ गहने

जातरूपपरिक्षिप्तंचित्रभानोःसमप्रभम्॥अशोकमालाविततंददर्शपरमासनम्॥४॥वालव्यजनहस्ताभिर्वीज्यमानंसमंततः ॥ गंधैश्चविविधैर्जुष्टं वरधूपेनधूपितम् ॥५॥परमास्तरणास्तीर्णमाविकाजिनसंवृतम् ॥ दामभिर्वरमाल्यानांसमंतादुपशोभितम् ॥ ६ ॥ तस्मिञ्जीमूतसंकाशंप्रदीप्तो ज्ज्वलकुंडलम्॥लोहिताक्षंमहाबाहुंमहाराजतवाससम्॥७॥लोहितेनानुलिप्तांगंचंदनेनसुगंधिना॥संध्यारक्तमिवाकाशेतोयदंसतडिद्गणम् ॥ ८॥ वृतमाभरणैर्दिव्यैःसुरूपंकामरूपिणम्॥सवृक्षवनगुल्माढ्यंप्रसुप्तमिवमंदरम् ॥९॥ क्रीडित्वोपरतंरात्रौवराभरणभूषितम् ॥ प्रियंराक्षसकन्यानां राक्षसानांसुखावहम् ॥१० ॥पीत्वाप्युपरतंचापिददर्शसमहाकपिः ॥ भास्वरेशयनेवीरंप्रसुप्तंराक्षसाधिपम् ॥ ११ ॥ निःश्वसंतंयथानागंरावणं वानरोत्तमः ॥ आसाद्यपरमोद्विग्नःसोपासर्पत्सुभीतवत् ॥ १२ ॥ अथारोहणमासाद्यवेदिकांतरमाश्रितः ॥ क्षीबंराक्षसशार्दूलंप्रेक्षतेस्ममहा कपिः ॥ १३ ॥ शुशुभेराक्षसेन्द्रस्यस्वपतःशयनंशुभम् ॥ गंधहस्तिनिसंविष्टंयथाप्रस्रवणंमहत् ॥१४॥

पहने ऐसा जानपडता था मानो अनेक लता झाडियों करिके परिपूर्ण मन्दराचलपर्वत शयन कररहाहै ॥ ९ ॥ रात्रिके विहार करनेसे निवृत्त श्रेष्ठ आभूषण धारणकिये राक्षस कुमारियोंकेऔर निशाचरोंके सुख पहुँचानेवाले ॥ १० ॥ मदिरा व स्त्रियोंका अधरामृत पीनेसेतृप्त सुवर्णसे बने हुये प्रकाशित पलंगपर शयनकिये हुए राक्षसोंके स्वामी रावणको हनुमानजीने देखा ॥ ११ ॥रावण उस पलंग पर लेटा हुआ हाथीके समान श्वास लेरहा था, हनुमानजीने ऐसे रावणको देखतेही कुछेक डरकर दूर २ अलग जायखडे होगये ॥ १२ ॥ फिर सीढियोंके बिचले भागमें खडे रहकर उसके आसनकाआश्रय करके मदमत्तराक्षसशार्दूल रावणको महाकपि हनुमानजी देखने लगे ॥ १३ ॥राक्षसराज रावणके शयन करने पर उसका यह मनोहर शयनस्थान मदचुआतेहाथियों करके सहित बडेभारी प्रस्रवण

पर्वतके समान शोभायमान हो रहा था ॥१४॥ हनुमानूजीने देखा कि; महात्मा राक्षसराज रावणके कांचन बाजुधारण कियेदोनोंहाथइन्द्रध्वजाके समान शय्या पर पडेहुये थे ॥१५॥ ऐरावत हाथीकेदांतोंके आघातसे दोनोंबाँहोंमें घाव होगयेहैं; कंधोंमें वज्रकी चोटके निशान होरहे हैंऔर विष्णुजीके चक्रने भीदोनों बाँहोंकी भली भांति परीक्षा ली थी ॥ १६ ॥ दोनों अति बडी बाँहें, बराबर गोल, सम कंधोंसे मिली, बलिष्ठ सुलक्षणयुक्त नख और उँगुली औरअँगूठोंसे भूषितथी ॥१७॥ सुगोलपरिघके समान लम्बी हाथीकी शुण्डके समान चढाव उतारवाली दोनों बाँहें दो पंचमुँहे सर्पोंके समान श्वेतवर्णकी शय्यापर पडी थीं ॥ १८ ॥ खरगोशके खूनके समान लाल, सुगंधितशीतल श्रेष्ठ चन्दन व और भी श्रेष्ठ २ सुगंधियोंसे युक्त शोभायमान गहनोंसे शोभित ॥ १९ ॥ उत्तमस्त्रियोंके आलिंग-

कांचनांगदसन्नद्धौददर्शसमहात्मनः ॥ विक्षिप्तौराक्षसेंद्रस्यभुजाविंद्रध्वजोपमौ ॥ १५ ॥ ऐरावतविषाणाग्रैरापीडनकृतव्रणौ ॥ वज्रोल्लिखितपीनांसोविष्णुचक्रपरिक्षतौ ॥१६॥ पीनौसमसुजातांसौसंगतौ बलसंयुतौ ॥ सुलक्षणनखांगुष्ठौस्वंगुलीयकलक्षितौ ॥१७॥ संवृतौपरिघाकारौ वृत्तौकरिकरोपमौ ॥ विक्षिप्तौशयनेशुभ्रेपंचशीर्षाविवोरगौ ॥ १८ ॥ शशक्षतजकल्पेनसुशीतेनसुगंधिना ॥ चन्दनेनपरार्घ्येनस्वनुलिप्तौस्वलंकृतौ ॥ १९ ॥ उत्तमस्त्रीविमृदितौगंधोत्तमनिषेवितौ ॥ यक्षपन्नगगंधर्वदेवदानवराविणौ ॥२०॥ददर्शसकपिस्तस्यबाहूशयनसंस्थितौ ॥ मंदरस्यांतरेसुप्तौमहाहीरुषिताविव॥ २१ ॥ताभ्यांसपरिपूर्णाभ्याभुभाभ्यांराक्षसेश्वरः ॥ शुशुभेऽचलसंकाशः शृंगाभ्यामिवमंदरः ॥२२॥ चूतपुन्नागसुरभिर्बकुलोत्तमसंयुतः ॥ मृष्टान्नरससंयुक्तःपानगंधपुरःस्सरः ॥२३ ॥ तस्यराक्षसराजस्यनिश्चक्राममहामुखात्॥शयानस्यविनिश्वासः पूरयन्निवतद्गृहम् ॥ २४॥ मुक्तामणिविचित्रेणकांचनेनविराजतामुकुटेनापवृत्तेनकुंडलोज्ज्वलिताननम् ॥ २५ ॥ रक्तचन्दनदिग्धेनतथाहारेणशोभिना ॥ पीनायतविशालेनवक्षसाभिविराजता ॥२६॥

नसे मर्दित अत्युत्तम गन्धपदार्थोंसे सेवित यक्ष, नाग, गन्धर्व देव दानवोंकेरुआनेवाली ॥२०॥ ऐसी उसकी दोनों बाँहें विस्तर पर पडी हुई महाकपि हनुमानजीने देखीं मानो मन्दराचलपर्वतकी तलेटीमें क्रोधित हुये दो भयंकर सर्प शयन कर रहे हैं ॥ २१ ॥ वह अचलके समान राक्षसगणरावण सर्व लक्षणयुक्त अपनी दोनों भुजाओंसे मानो दो शृङ्गधारी मन्दराचलपर्वतके समान शोभायमान हो रहा था ॥ २२ ॥ आम, पुन्नाग, बकुल, छःरस युक्त मिष्टान्न और मदकीसुगंधिसे सनी॥ २३॥ श्वासपवन जो रावणके महामुखसे निकलती थी, वह श्वासोंसे रावणके गृहको पूर्ण करतीहुई बाहरकोनिकलती थी ॥२४॥ मुक्तामणि विराजित कांचन मयमुकुट निद्राके वश होनेसे खसक रहाथा, तब उसका मुखमंडल दोनों कुण्डलोंसे उज्ज्वल होरहाथा॥ २५ ॥और उसकी पुष्ट लंबी चौडी छाती

रक्तचंदन लिप्तमनोहर हारसे शोभायमान हो रही थी ॥ २६ ॥ उसकेदोनों नेत्र लाल हो रहे थे, वह उजलें रेशमी वस्त्रपहर रहा था, और पीताम्बरीदुपट्टेमें वह लिपटा हुआ पडा था ॥ २७ ॥ पापके ढेरके समान वह दीप्तिमान् राक्षसपति रावण मानो भुजंगकी नाईं श्वासलेरहा था, वह गंगाजीके अगाध जलमें शयन कियेहुए मतवाले हाथीके समान बिछौने परसोय रहा था ॥२८ ॥चार सुवर्णमय दीपक चारों ओर जलरहेथे, उनदीपकोंसे बिजलीके द्वारा मेघोंकीनाईं उसके सब अंग प्रकाशमान होरहे थे ॥२९॥ पवनकुमार हनुमान्जीने देखा कि, गृहके मध्यमें उस पत्नीप्रिय दुरात्मा राक्षसनाथके चरणोंमें उसकी समस्तस्त्रियां शयन कर रही हैं ॥३०॥ हनुमान्जीनेदेखा कि, उन स्त्रियोंके वदन चंद्रमंडलकी नाईं प्रकाशमानहोरहेथे, कानोंमें श्रेष्ठ कुण्डल आभूषण और उनके कंठमें खिले हुए फूलोंकी माला पडी थी ॥ ३१ ॥सबही नाचने गानेमें चतुरथीं कोई २ रावणकी भुजाओंके मध्यमें और कोई२ उसकीगोदीमें लेटी हुईथीं इस प्रकारकी

पांडुरेणापविद्धेनक्षौमेणक्षतजेक्षणम् ॥ महार्हेणसुसंवीतंपीतेनोत्तरवाससा॥२७॥माषराशिप्रतीकाशंनिःश्वसंतंभुजंगवत्॥गांगेमहतितोयांतेप्रसुप्तमिवकुंजरम् ॥२८॥ चतुर्भिःकांचनैर्दीपैर्दीप्यमानंचतुर्दिशम् ॥ प्रकाशीकृतसर्वांगंमेघंविद्युद्गणैरिव ॥ २९ ॥ पादमूलगताश्चापिददर्शसुमहात्मनः ॥ पत्नीःसप्रियभार्यस्यतस्यरक्षःपतेर्गृहे ॥३०॥ शशिप्रकाशवदनावरकुंडलभूषणाः ॥ अम्लानमाल्याभरणाददर्शहरियूथपः॥३१॥ नृत्यवादित्रकुशलाराक्षसेंद्रभुजांकगाः॥ वराभरणधारिण्योनिषण्णाददृशेकपिः॥३२॥वज्रवैदूर्यगर्भाणिश्रवणांतेषुयोषिताम्॥ ददर्शतापनीयानिकुंडलान्यंगदानिच ॥३३॥ तासांचंद्रोपमैर्वक्रैःशुभैर्ललितकुण्डलैः॥ विराजतविमानंतन्नभस्तारागणैरिव ॥ ३४ ॥ मदव्यायामखिन्नास्ताराक्षसेंद्रस्ययोषितः ॥ तेषुतेष्ववकाशेषुप्रसुप्तास्तनुमध्यमाः ॥३५॥ अंगहारैस्तथैवान्याकोमलैर्नृत्यशालिनी ॥ विन्यस्तशुभसर्वांगीप्रसुप्तावरवर्णिनी ॥ ३६ ॥ काचिद्वीणांपरिष्वज्यप्रसुप्तासंप्रकाशते ॥ महानदीप्रकीर्णेवनलिनीपोतमाश्रिता ॥ ३७ ॥

श्रेष्ठ वस्त्राभूषण धारण करनेवाली कामिनियोंको वहां शयन करते हुए हनुमान्जीने देखा ॥ ३२ ॥ उन स्त्रियोंके कानोंमें हीरे औरवैडूर्य मणिके बने हुए सुवर्णमय कुण्डल शोभायमान हो रहे थे। बाँहोंका तकिया लगानेसे बाजूबंदभी कानके धोरे शोभित हुए हनुमान्जीने देखे ॥ ३३ ॥ उन स्त्रियोंके मनोहर कुण्डल भूषित सुंदर २ मुखोंसे विराजमान वह विमान तारागण विभूषित आकाशके समान शोभा धारण किये हुए था ॥ ३४ ॥ रति करानेके कारण उसके श्रमसे थककर राक्षसराज रावणकी सूक्ष्मकटिवाली स्त्रियां जो जहांपर जैसे थीं वह वैसेही सोय गई थीं ॥ ३५ ॥ कोई मनोहर अंगवाली कामिनी नींदकी अवस्थामेंही अपने कोमल अंगोंको चलायमानकरके मानो हावभावसहित नाच रही थीं ॥३६॥ कोईवाणीको पकडेही हुए सो जानेसे ऐसी शोभितहोती थी मानो महानदीके

प्रवाहमें डूबती हुई कमलिनी भाग्यसे किसी नौकामें लग गई हैं ॥ ३७॥ कमल के समान नेत्रवाली कोई स्त्री डमरूही बगलमें दबाये सो गई थी मानो कोई पुत्रको अतिप्यार करनेवाली कामिनी अपने छोटे बच्चेको गोदमें लिये शयन कर रही है ॥ ३८ ॥ और कोई सर्वांग सुन्दरी स्त्री सुस्तनी पटह बाजेकोही दबाये शयन किये हुई थी, मानो बहुत कालके पीछे अपने प्यारे पतिको पाय भली भांति लिपटा चिपटाकर कोई स्त्री सोती हो ॥ ३९॥ कोई कमल लोचनी वीणाकोही पकड कर सो गईथी मानो काममें आतुर हुई कोई कामिनी प्यारे पतिको चिपटाय सो रहीहै॥४०॥सदाही नृत्य करनेवाली कोई स्त्री विपञ्ची बाजेको गोदमें लिये मानो अपने स्वामीके साथ शयन कर रही है ॥४१॥ कोई २ मदमाते नयनवाली अपने सुवर्ण सदृश कोमल और अपने बडे २ अंगोंमें मृंदगको चिपटाय नयनबंदकिये शयन कररहीथीं॥४२॥और एक कृशोदरी रतिकरानेके श्रमसे थककर अपनी भुजाओंमें पणव शंखको

अन्याकक्षगतेनैवमड्डुकेनसितेक्षणा ॥ प्रसुप्ताभामिनीभातिबालपुत्रेववत्सला॥३८॥पटकहंचारुसर्वांगीन्यस्यस्यशेतेशुभस्तनी॥ चिरस्यरमणंलब्ध्वापरिष्वज्येवकामिनी ॥३९॥ काचिद्वीणांपरिष्वज्यसुप्ताकमललोचना॥ वरंप्रियतमंगृह्यसकामेवहिकामिनी ॥४०॥ विपंचींपरिगृह्यान्यानियतानृत्यशालिनी ॥ निद्रावशमनुप्राप्तासहकांतेवभामिनी ॥४१॥ अन्याकनकसंकाशैर्मृदुपीनैर्मनोरमैः॥मृदंगंपरिविध्यांगैःप्रसुप्तामत्तलोचना ॥४२॥ भुजपाशांतरस्थेनकक्षगेनकृशोदरी ॥ पणवेनसहानिंद्यासुप्तामदकृतश्रमा ॥४३॥ डिंडिमं परिगृह्यान्यातथैवासक्तडिंडिमा॥ प्रसुप्तातरुणंवत्समुपगुह्येवभामिनी ॥४४॥ काचिदाडंबरंनारीभुजसंभोगपीडितम् ॥ कृत्वाकमलपत्राक्षीप्रसुप्तमदमोहिता ॥ ४५ ॥ कलशीमपविध्यान्याप्रसुप्ताभातिभामिनी ॥ वसंतेपुष्पशबलामालेवपरिमार्जिता ॥ ४६ ॥ पाणिभ्यांचकुचौकाचित्सुवर्णकलशोपमौ ॥ उपगुह्याबलासुप्तानिद्राबलमुपागता ॥४७॥ अन्याकमलपत्राक्षीपूर्णेन्दुसदृशानना ॥ अन्यामालिंग्यसुश्रोणींनिद्रावशमुपागता ॥ ४८ ॥ आतोद्यानि विचित्राणि परिष्वज्यवरस्त्रियः ॥ निपीडयचकुचैःसुप्ताःकामिन्यःकामुकानिव ॥४९॥

दबाये हुए सोगईथी ॥४३॥डमरू प्रिया कोईस्त्री डमरूकोही चिपटाये बच्चेकोगोदमें लियेहुए बालवत्सा कामिनीके समान नींदके वश होगई थी ॥४४॥कोई कमलनयनी मदसे मोहितहो अपनी बाँहोंमें आडम्बर नामबाजा धारण करके शयनकर रहीथी ॥४५॥ और एक भामिनी जलकलशकोही लिपटायकर सो गईथी, कलशके जलसे इसका सब अंगगीला हो रहाथा, उससे ऐसी शोभा होतीथी मानो वसंत समयमें शीतल करनेके लिये फूल मालाओं पर जल छिड़का जाता है ॥ ४६ ॥ कोई अबला अपने हाथसे सुवर्णके समान आकारवाले दोनों कुचोंको ढककर सो गई थी ॥ ४७ ॥ एक पूर्ण चन्द्रमाकेसमान वदनवाली कमल नयनीसुन्दर नितम्बवाली और एकस्त्रीको चिपटाये हुएनींदके वशमें पडीथी ॥ ४८ ॥कोई २ सुन्दरी कंतोंके समान अपनी वीणाको लिपटाये उसको

अपने कुचोंसे मर्दनकर शयनकर रही थी मानो कामी पुरुषोंसे वहकुच मार्दित कराय सो रही थी ॥ ४९॥ देखते २ इन सबके पीछे हनुमानूजीनेदेखा कि, अगल और एक मनोहर सेजपर अपूर्व रूपयौवन वाली एक स्त्री शयन कर रहीथी ॥५०॥ उस मुक्तामणिसे युक्त विविध भाँतिके भूषणोंसे युक्तयह स्त्री अपने रूपसे मानो इस श्रेष्ठ भवनको शोभायमान कर रही थी ॥५१॥ उसका वर्ण गौर व सुवर्णके समान कान्तिवाली थी वह सब रनवासकी स्वामिनी रावणकी प्यारी स्त्री सुन्दर रूपवाली मन्दोदरी थी ॥५२॥ वानरयूथपति महाबाहु पवन नंदन हनुमानूजी उस सर्वाभरण भूषित मन्दोदरीकी रूप यौवन सम्पत्ति देख उसको ही सीता समझ अति आनंदित हुए ॥ ५३ ॥ और वानरोंका स्वभाव दिखलाते हुएएक ओर जाय अपनी बाँहें पटकनेलगे, पूंछको उठाय चूमनेलगे आनन्दसे नृत्य करने लगे और विविध भांतिकी भावभंगी दिखाते हुए छलांग मारकर खंभोंपर चढ २ कर फिर २ भूमिमें गिरने लगे ॥ ५४ ॥

तासामेकांतविन्यस्तेशयानांशयनेशुभे ॥ ददर्शरूपसंपन्नामथतांसकपिःस्त्रियम् ॥ ५० ॥ मुक्तामणिसमायुक्तैर्भूषणैःसुविभूषिताम् ॥ विभूषयंतीमिवचस्वश्रिया भवनोत्तमम् ॥५१॥गौरींकनकवर्णाभामिष्टामंतःपुरेश्वरीम्॥कपिर्मंदोदरींतत्रशयानांचारुरूपिणीम्॥५२॥सतांदृष्ट्वामहाबाहुर्भूषितांमारुतात्मजः॥तर्कयामाससीतेतिरूपयौवनसंपदा॥हर्षेणमहतायुक्तोननंदहरियूथपः॥५३॥आस्फोटयामासचुचुंबपुच्छंननंदचिक्रीडजगौजगाम॥स्तंभानरोहन्निपपातभूमौनिदर्शयन्स्वांप्रकृतिंकपीनाम्॥५४॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च०सा० सुन्दरकांडे दशमःसर्गः ॥१०॥अवधूयचतांबुद्धिंबभूवावस्थितस्तदा॥ जगामचापरांचिंतांसीतांप्रतिमहाकपिः॥१॥नरामेणवियुक्तासास्वप्तुमर्हतिभामिनी ॥ नभोक्तुंनाप्यलंकर्तुंनपानमुपसेवितुम्॥२॥नान्यंनरमुपस्थातुंसुराणामपिचेश्वरम्॥नहिरामसमःकश्चिद्विद्यतेत्रिदशेष्वपि॥३॥अन्येयमितिनिश्चित्यभूयस्तत्रचचारसः॥पानभूमौहरिश्रेष्ठःसीतासंदर्शनोत्सुकः॥४॥क्रीडितेनापराःक्लांतागीतेनचतथापराः॥नृत्येनचापराःक्लांताःपानविप्रहतास्तथा॥५॥

इत्यार्षे श्रीम० वा० आदिकाव्ये सुन्दरकांडे भाषायां दशमः सर्गः ॥ १० ॥ इसके पीछे महाकपि हनुमानूजी पहली चिंताको त्याग करके स्थिर भावसे बैठ गये, और सीताजीके विषयमें और एक प्रकारकी चिंताकरने लगे॥१॥हनुमानूजीने विचारा कि, सीतादेवी श्रीरामचन्द्रजीके विरहमें कभी शयन, भोजन,पान न करेंगी और न कभी वह कुछ अलंकारही धारण कर सकती हैं ॥२॥ चाहे कोई साक्षात् देवता भी हो परन्तु सीताजी कभी परपुरुषको सेवन न करेंगी, क्योंकि देवताओंके बीचमें भी श्रीरामचन्द्रजीके समान कोई वर्त्तमान नहींहै॥ ३ ॥बस इसलिये यहकोई कामिनीहै, इसप्रकारसे निश्चयकरके वानर श्रेष्ठ हनुमानजी सीताजीके दर्शनकी इच्छाकिये फिर रावणकी मदादिपीनेकी भूमिमें घूमनेलगे ॥४॥ वहांपर देखाकि, कुछ कामिनियें पाशे इत्यादि खेलकरके कुछ

संगीत करके और कुछेक नाचकरके थकगईहैं और कुछ मदपान करनेसे विह्वलहो वहींपर शयन कररही हैं॥ ५ ॥और कुछ स्त्रियें कोई मुरज, कोई मृदंग, कोई चेलिका बाजाही लियेहुए सोय रहीहैं, और कुछ स्त्रियें रमणीक गहनोंसे सजी धजीसेज पर सोय रहीहैं ॥ ६ ॥ वहांपर हजारों स्त्रियें सुन्दर भूषणोंसे भूषित, रूपवती वार्तालापकरनेमें शीलयुक्त, गतिके समान अर्थसहित बोलनेवाली ॥७॥ देशकालकी ज्ञाता; उचितवचन बोलने वाली अधिक रतिकरने वाली हनुमानूजी ने वहांपर देखीं॥८॥इन के अतिरिक्त और भी बहुत उत्तम रूप यौवन सम्पन्न हजारोंस्त्रियोंको सोती हुई हनुमानूजी ने देखा॥९॥यह सब कामिनियें रतिकरानेसे विरत और गाढी नींदमें मग्न होकर स्वप्नमेंदेश कालके योग्य वचन कह रही थीं ऐसा वानरयूथपति हनुमानजीने देखा॥१०॥उनस्त्रियोंके बीचमें

मुरजेषुमृदंगेषुचेलिकासुचसंस्थिताः ॥ तथास्तरणमुख्येषुसंविष्टाश्चापराःस्त्रियः॥६॥अंगनानांसहस्त्रेणभूषितेनविभूषणैः ॥ रूपसंलापशीलेन युक्तगीतार्थभाषिणा ॥ ७ ॥ देशकालाभियुक्तेनयुक्तवाक्याभिधायिना ॥रताधिकेनसंयुक्तांददर्शहरियूथपः ॥ ८ ॥ अन्यत्रापिवरस्त्रीणांरूपसंलापशायिनाम् ॥ सहस्त्रंयुवतीनांतुप्रसुप्तंसददर्शह ॥९॥ देशकालाभियुक्तंतुयुक्तवाक्याभिधायितत् ॥ रताविरतसंसुप्तंददर्शहरियूथपः ॥१०॥ तासांमध्येमहाबाहुःशुशुभेराक्षसेश्वरः ॥ गोष्ठेमहतिमुख्यानांगवांमध्येयथावृषः॥ ११ ॥सराक्षसेंद्रःशुशुभेताभिःपरिवृतःस्वयम् ॥ करेणुभिर्यथाऽरण्येपरिकीर्णोमहाद्विपः ॥ १२ ॥ सर्वकामैरुपेतांचपानभूमिंमहात्मनः॥ददर्शकपिशार्दूलस्तस्यरक्षःपतेर्गृहे ॥१३॥ मृगाणांचवराहाणांमहिषाणांचभागशः ॥ तत्रन्यस्तानिमांसानिपानभूमौददर्शसः ॥१४॥ रौक्मेषुचविशालेषुभाजनेष्वप्यभक्षितान् ॥ ददर्शकपिशार्दूलोमयूरान्कुक्कुटांस्तथा ॥१५॥ वराहवाध्रीणसकान्दधिसौवर्चलायुतान् ॥ शल्यान्मृगमयूरांश्चहनुमानन्ववैक्षत ॥१६॥

महाबाहु राक्षसराज रावण,बडे भारी गोंठमें गायोंके बीचमें महावृषभके समान शोभायमान होरहा था॥११॥स्वयं राक्षसपति रावण स्त्रियोंसे घिरा हुआ वनके मध्यमें हथिनियोंसे घेरे हुए महागजके समान शोभित होरहा था॥१२॥कपिशार्दूल हनुमानूजीने उस महात्मा राक्षसपति रावणके गृहमें अभिलषितभोग्यवस्तुओंके समूहसे सुशोभित सुरापानकी सभाको देखा॥१३॥हनुमानूजीने देखा कि,उस पानभूमिके स्थान २ में मृग,महिष; और शूकर गणोंका मांस अलग २ सजाहुआ धरा है ॥ १४ ॥ वानरश्रेष्ठ हनुमानूजीने विशाल सुवर्णमय पात्रोंमें खानेके लिये मुरगे और मोरोंका मांस धरा हुआ देखा ॥ १५ ॥ यह सब

वराह और ❀वाध्रीणस नामक पक्षी मृग छागलका मांस सौवर्च्चललवण मिला यथाविधिसे बनायाहुआ, साही और मयूरका मांसहनुमान्‌जीनेदेखा॥१६॥करांकुल, नानाविध छाग खरगोशमहिषएकशल्य और मछलीआदिका मांस अर्द्धभक्षणकियाहुआ हनुमान्‌जीने देखा॥१७॥और खट्टे व लवण रसके द्वारा जीभकीजडताके निवारण करनेवाले विविध शर्करा मिश्रित दाख और दाडिम के सहित अनेकप्रकारके छोटे बडे चाटने खाने पीनेके पदार्थ हनुमान्‌जीने देखे ॥ १८ ॥ इन सबको हनुमान्‌जीने देखा और बडे २ घुँघरू वाजे अन्न बहुत साधन खानेपीनेके पात्रोंसे विविध भांतिके फूल पुष्पोंसे भूमिको पूर्ण यह पान भूमि अधिक शोभाको विस्तारकर रहीथी॥१९॥ स्थान २पर खाने पीनेके सोनेकी वस्तुओंसेऔर पुष्पोपहारको प्राप्त होकर भूमिकी अधिक शोभा होरहीथी इसप्रकार

कृकलान्विविधांश्छागाञ्छशकानर्धभक्षितान् ॥ महिषानेकशल्यांश्चछेदांश्चकृतनिष्ठितान् ॥ १७ ॥ लेह्यानुच्चावचान्पेयान्भोज्यान्युच्चावचानिच ॥ तथाम्ललवणोत्तंसैर्विविधैरागखांडवैः ॥ १८ ॥ हारनूपुरकेयूरैरपविद्धैर्महाधनैः ॥ पानभाजनविक्षिप्तैःफलैश्चविविधैरपि ॥ १९ ॥ कृतपुष्पोपहाराभूरधिकांपुष्यतिश्रियम् ॥ तत्रतत्रचविन्यस्तैःसुश्लिष्टशयनासनैः ॥ २० ॥ पानभूमिर्विनावह्निंप्रदीप्तेवोपलक्ष्यते ॥ बहुप्रकारैर्विविधैर्वरसंस्कारसंस्कृतैः ॥ २१ ॥ मांसैःकुशलसंयुक्तैःपानभूमिगतैः पृथक् ॥ दिव्याः प्रसन्नाविविधाःसुराःकृतसुराअपि ॥ २२ ॥ शर्करासवमाध्वीकाःपुष्पासवफलासवाः ॥ वासचूर्णैश्चविविधैर्मृष्टास्तैस्तैःपृथक् पृथक् ॥ २३ ॥ संतताशुशुभेभूमिर्माल्यैश्चबहुसंस्थितैः ॥ हिरण्मयैश्चकलशैर्भाजनैःस्फाटिकैरपि ॥ २४ ॥ जांबूनदमयैश्चान्यैःकरकैरभिसंवृता ॥ राजतेषुचकुंभेषुजांबूनदमयेषुच ॥ २५ ॥ पानश्रेष्ठांतथाभूमिंकपिस्तत्रददर्शह ॥ सोऽपश्यच्छातकुंभानिसीधोर्मणिमयानिच ॥ २६ ॥

॥२०॥ वह पानभूमि विना अग्निकेही मानो अग्निसम प्रकाशित हो रही थीअनेक भांतिके विविध श्रेष्ठ संस्कारोंसे संस्कारित ॥२१॥ मांस निपुणलोगोंके बनाये हुए पान भूमिमें अलग२रक्खेथे बहुत श्रेष्ठ अनेक प्रकारकी मदिरायेंभीधरीथीं॥२२॥और अनेक प्रकारके सुगंधित द्रव्योंके चूर्णोंसे मिली हुई विविध२ ×शौण्डिक, शर्करासव और फलासव सबही पृथ्वीके मध्य स्थान २ पर अलगसजे धरेथे ॥२३॥बहुत फूल मालाओंसे होनेयुक्त और सुवर्ण व स्फटिक मणिके वर्तनों सहित होनेसे यह भूमि सर्वदा शोभायमान रहतीथी ॥२४॥ वहांपर चांदीसोनेके घडोंमें श्रेष्ठ २ पीनेकी चीजें भरी रक्खीथीं, और वहांपर तपाये हुए सुवर्णकेभी बहुत करुवे रक्खेथे ॥ २५ ॥ महाकपि हनुमान्‌जीने और भी देखाकि सुवर्णमय और मणिमय पात्रोंमेंस्थान२पर पानभूमिमें मदभराहुआ रक्खाथा।

❀काली गर्दन लालशिर श्वेत पंखवाले पक्षीका नाम वाध्रीणस है कोई खड्ग मृगका नाम कहतेहैं ।+ जो पुष्पोंसे स्वयं निकलतीहै वह दिव्य सुरा शौण्डिक आदि कृत सुरा कहलाती है ॥

॥२६॥कहीं२किसीबर्तनकी सुराआधीपी गई थी और वहआधा खाली था और कहीं २ केवल पीनेके बर्तनकी कुछ थोडीसी बची थी कोईभरेधरे थे॥२७॥ किसी स्थानका पीनेलायक मद कुछभी नहीं पिया गया है किसी स्थानमें अनेक प्रकारकी भोजनकरनेकी सामग्री और पानकरनेके योग्य मदपानभूमिकेस्थान२ में विभाग करके सजा सजायारक्खा था॥२८॥किसी २ स्थानमें पान भोजन करनेके पात्र पडे थे कि,जिनमेंकी सामग्री आधीही खाई पीगई थी हनुमान्जी एक२करके इन सब वस्तुओंको देखते हुए घूमने लगे,कुछेक सुंदरियें परस्पर एक दूसरेको चिपटाये हुए सोय रही थीं इसलिये बहुत सारे पलंग खाली पडेथे ॥२९॥ कोई अबला निद्राके वशमें हो दूसरी स्त्रीकी सेजपर जायकर उसके वस्त्र छीन अपनी देहको ढक उसके शयन स्थानपर शयन कर रही थी ॥ ३० ॥

तानितानिचपूर्णानिभाजनानिमहाकपिः ॥ क्वचिदर्धावशेषाणिक्वचित्पीतान्यशेषतः ॥ २७ ॥ क्वचिन्नैवप्रपीतानिपानानिसददर्शह ॥ क्वचिद्भ
क्ष्यांश्चविविधान्क्वचित्पानविभागतः ॥ २८ ॥ क्वचिदर्धावशेषाणिपश्यन्वैविचचारह ॥ शयनान्यत्रनारीणांशून्यानिबहुधापुनः ॥ परस्प
रंसमाश्लिष्यकाश्चित्सुप्तावरांगनाः ॥ २९ ॥ काचिच्चवस्त्रमन्यस्याअपहृत्योपगुह्यच ॥ उपगम्याबलासुप्तानिद्राबलपराजिता ॥ ३० ॥
तासामुच्छ्वासवातेनवस्त्रंमाल्यंचगात्रजम् ॥ नात्यर्थंस्पंदतेचित्रंप्राप्यमंदमिवानिलम् ॥ ३१ ॥ चंदनस्यचशीतस्यसीधोर्मधुरसस्यच ॥
विविधस्यचमाल्यस्यपुष्पस्यविविधस्यच ॥ ३२ ॥ बहुधामारुतस्तस्यगंधंविविधमुद्वहन् ॥ स्नानानांचंदनानांचधूपानांचैवमूर्च्छितः॥३३॥
प्रववौसुरभिर्गंधोविमानेपुष्पकेतदा ॥ श्यामावदातास्तत्रान्याःकाश्चित्कृष्णावरांगनाः ॥ ३४ ॥ काश्चित्कांचनवर्णांग्यःप्रमदाराक्षसालये
तासांनिद्रावशत्वाच्चमदनेनविमूर्च्छितम् ॥ ३५ ॥

श्वासकी पवनसे चलायमान होकर उनस्त्रियोंके शरीरमेंके विचित्र वसन और मालायें मंद२ वायुसे कुछेक हिलाने वर जैसी शोभा पाते उसी प्रकारकी शोभा पाय रहे हैं ॥ ३१ ॥ शीतल चन्दन, मद्य, मधुररस, विविध माल्य, विविध पुष्प ॥३२॥ चन्दनसे स्नान किये हुए कामिनीगण और धूप इत्यादि सुगंधित द्रव्योंकी नाना प्रकारकी सुगंधि बहन करके पवन चल रहा था॥३३॥उस समयउस सुगंधिसे रावणका पुष्पकविमान परिपूर्ण होगयाथा।हनुमानजी उसराक्षसके रनवासमें कुछेक उज्ज्वल श्याम वर्ण,और कुछेक श्यामवर्णकीस्त्रियें ॥३४॥ और कुछेक कांचन वर्णसदृश प्रमदायें राक्षसके स्थानमें हनुमानजीने देखीं । रतिके

खेदसे थकित होकर यह सब कामिनियें शयन कर रही थीं॥३५॥उस समयमें उन स्त्रियोंका रूप रात्रिकालमें मुरझाई हुई कमलिनीके समान हो रहाथा, इस प्रकारसे रावणके रनवासमें महाकपि हनुमानजीने सब कुछ देखा ॥३६॥ परन्तु उन महातेजवानको केवल एक जानकीही दृष्टि न आई ॥३७॥ उसके पीछे कपिश्रेष्ठ हनुमानजी इन सब स्त्रियोंको देखते२पीछेकर यह महाकपि धर्मके लोप होनेकी शंकासे महा भयभीत हुए ॥३८॥ और मनही मनमें विचार करने लगेकि, हमने जो इन निद्रामें पडी हुई, वसन रहित पराई स्त्रियोंको देखा है इससे निश्चयही हमारेधर्मकी बडी भारी हानि होगी॥३९॥परंतु हमारी दृष्टि कभी पराई स्त्रीकी ओर नहीं गिरती है; इससे चाहे पाप नहीं हो, परन्तु उसपर पराई स्त्रीके भोगनेवाले रावणको भी हमने यहां देखा है इससे अवश्य पाप होगा॥४०॥

पद्मिनीनांप्रसुप्तानांरूपमासीद्यथैवहि ॥ एवंसर्वमशेषेणरावणांतःपुरंकपिः ॥ ३६ ॥ ददर्शसमहातेजानददर्शचजानकीम् ॥३७॥ निरीक्षमाणश्चततस्ताःस्त्रियःसमहाकपिः ॥ जगाममहतींशंकांधर्मसाध्वसशंकितः॥३८॥परदारावरोधस्यप्रसुप्तस्यनिरीक्षणम् ॥ इदंखलुममात्यर्थंधर्मलोपंकरिष्यति ॥३९॥ नहिमेपरदाराणांदृष्टिर्विषयवर्तिनी ॥ अयंचात्रमयादृष्टःपरदारपरिग्रहः ॥४०॥ तस्यप्रादुरभूच्चिंतापुनरन्यामनस्विनः ॥ निश्चितैकांतचित्तस्यकार्यनिश्चयदर्शिनी॥४१॥कामंदृष्टामयासर्वाविश्वस्तारावणस्त्रियः॥नतुमेमनसाकिंचिद्वैकृत्यमुपपद्यते॥४२॥ मनोहिहेतुःसर्वेषामिंद्रियाणांप्रवर्तने॥शुभाशुभास्ववस्थासुतच्चमेसुव्यवस्थितम्॥४३॥नान्यत्रहिमयाशक्यावैदेहीपरिमार्गितुम्॥स्त्रियोहिस्त्रीषुदृश्यंतेसदासंपरिमार्गणे ॥ ४४ ॥ यस्यसत्त्वस्ययायोनिस्तस्यांतत्परिमार्ग्यते ॥ नशक्यंप्रमदानष्टामृगीषुपरिमार्गितुम् ॥४५॥ तदिदंमार्गितंतावच्छुद्धेनमनसामया॥रावणांतःपुरंसर्वंदृश्यतेनचजानकी॥४६॥देवगंधर्वकन्याश्चनागकन्याश्चवीर्यवान्॥अवेक्षमाणोहनुमान्नैवापश्यतजानकीम्॥४७॥

चिंताशील हनुमानजी प्रमाण सिद्ध सिद्धांतके विषयमें मन लगायकर इसप्रकारसे चिंताकरनेलगे कि, इतनेहीमें उनके मनमें कार्यअकार्यका विचारकरनेवालीदूसरी चिंताआई ॥ ४१ ॥ उन्होंने विचारा कि चल विचल होकर सोई हुई रावणकी स्त्रियोंको हमने भली भांति देखा, परन्तु हमारा मन तो कुछ भी चल विचल नहीं हुआ॥४२॥ क्योंकि एकमनही इंद्रियोंको भले बुरे कार्यमें लगा देता है; सो वह मनही जब हमारे वशमें है, तब किस प्रकारसे हमें पाप लगेगा ? ॥४३॥ उसपर हम और कहीं तो जानकीजीको ढूंढ भी नहीं सकते क्योंकि यह देखा जाता है कि, स्त्रियोंका खोज स्त्रियोंमेंही लग सकता है॥४४॥जिस प्राणीकी जो जाति है उसको उस जातिके मध्यमेंही खोजना चाहिये । स्त्री खोयजाने पर हरिणीके झुण्डके बीच ढूंढनेसे वह प्राप्त नहीं की जासकती ॥ ४५ ॥ इसलिये ही हमने शुद्ध अंतःकरणसे रावणके रनवासमें यह सब स्थान भली भाँति उलट पलट कर देखे, परंतु कहीं जानकीजीको न देख पाया ॥४६॥ जब कि, वीर्यवान्

हनुमानूजीने अनेकानेक देवकन्या, गंधर्वकन्या, नागकन्याओंमें ढूंढनेपरभीजानकीजीको न देखा ॥४७॥ केवल और दूसरी कामिनियोंको देखा तब वह कपिश्रेष्ठ वहांसे बाहर आये और कहीं चलनेका विचारकरते हुये ॥ ४८ ॥श्रीमान् पवनकुमार हनुमानूजी पान भूमिको छोडकर, फिर यत्नसहित. सब स्थानोंमें जानकीजीके खोज करनेमें लगे ॥ ४९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदिकाव्ये सुन्दरकांडे भाषायामेकादशः सर्गः ॥११॥ ॥ ॥ ॥

वह पवनकुमार हनुमानूजी रावणकी लंकापुरीके मध्यमें टिककर सीताजीके दर्शनकी लालसासे समस्त लतागृह चित्रगृह और रात्रिकालके शयनगृहोंमें गये परन्तु उन श्रेष्ठ दर्शनवाली सीताजीको इन्होंने कहीं भी न पाया ॥ १ ॥ तबवह महाकपि हनुमानूजी रघुनंदन श्रीरामचंद्रजीकी उन प्रियपत्नी सीताजीके दर्शन न पानेसे अत्यन्त चिंताकुल चित्तसे विचार करने लगे कि,निश्चय जानकीजीजीवित नहीं हैं, क्योंकि हमने उनको इतना ढूँढा भाला, तथापि वह हमको

तामपश्यन्कपिस्तत्रपश्यंश्चान्यावरस्त्रियः ॥ अपक्रम्यतदावीरःप्रस्थातुमुपचक्रमे॥४८॥ सभूयःसर्वतःश्रीमान्मारुतिर्यत्नमाश्रितः॥अपानभूमिमु त्सृज्यतांविचेतुंप्रचक्रमे ॥ ४९ ॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥ सतस्यम ध्येभवनस्यसंस्थितोलतागृहांश्चित्रगृहान्निशागृहान् ॥ जगामसीतांप्रतिदर्शनोत्सुकोनचैवतांपश्यतिचारुदर्शनाम् ॥ १ ॥ सचिंतयामा सततोमहाकपिःप्रियामपश्यन्रघुनंदनस्यताम् ॥ ध्रुवंनसीताम्रियतेयथानमेविचिन्वतोदर्शनमेतिमैथिली ॥ २ ॥ साराक्षसानांप्रवरेणजालास्वशी लसंरक्षणतत्परसती ॥ अनेननूनंप्रतिदुष्टकर्मणाहताभवेदार्यपथेपरेस्थिता ॥ ३ ॥ विरूपरूपाविकृताविवर्चसोमहाननादीर्घविरूपदर्शनाः ॥ समीक्ष्यताराक्षसराजयोषितोभयाद्विनष्टाजनकेश्वरात्मजा ॥ ४ ॥ सीतामदृष्ट्वाह्यनवाप्यपौरुषंविहृत्यकालंसहवानरैश्चिरम् ॥ नमेऽस्तिसुग्री वसमीपगागतिःसुतीक्ष्णदंडोबलवांश्चवानरः ॥ ५ ॥

दिखलाई नहीं देतीं॥२॥बाला जानकीजी पतिव्रता हैं;इसलिये पतिव्रताधर्मकीरक्षा करनेमें वह सदाही टिकी हुई होंगी;पतिव्रताके आचरण करनेके योग्य परम पवित्रमार्गमें टिकनेसे साधु लोगोंके अनिष्ट कर्म करनेवाले इस प्रसिद्ध दुष्कर्मकारी राक्षसराजने उनको अवश्य मारडाला होगा ॥ ३ ॥ अथवा रावणकी कदर्यरूपवाली, विकटाकार, विकृत वर्ण युक्त, बडे२मुखवाली, दीर्घ और भयंकर नयन युक्त चेटियोंको देखतेही जनकराजकुमारी सीताजीने भयके मारेही प्राण छोड दिये होंगी ॥४॥ हा ! हमने सीताजीको न देखा न समुद्र लांघनेकेपौरुषका फल हमको मिला;वानर लोगोंके साथ सुग्रीवजीका नियतकिया हुआ समयभी बिता दिया, इसलिये अब हम उन सुग्रीवजीके निकट भी नहीं जायसकते, क्योंकि वह बलवान् वानरपति सुग्रीवजी पहुँचतेही हमारे लिये बडा

भारी दंड नियत करेंगे॥५॥समस्त रनवासकी एक २ कक्षाकोभली भाँति देख भाल करके केवल राक्षसकी स्त्रियोंको देखा, परन्तु पतिव्रता सीताजी हमारी दृष्टि न आईं;इसलिये हमारा सबही परिश्रम वृथा गया ॥६॥ जब हम लौट जायंगे;और सब वानरगण इकट्ठे होकर जब हमसे पूछेंगे कि,हे वीर ! तुम वहां जा कर क्या २ कार्य कर आये हो सो हमको बताओ॥७॥तब हम बिना सीताजीको देखे हुए उन्हें क्या उत्तर देंगे ? इसलिये प्रायोपवेशन व्रतधारण करके हमें प्राण त्यागकरनाही अच्छा है;क्योंकि वानरनाथ सुग्रीवजीका नियतकियाहुवासमयभी बीत चुकाहै॥८॥जब हम समुद्रके उसपार जाँयगे तब वृद्धजाम्बवान् क्या कहेंगे ? और अंगदजी क्या कहेंगे ? और भी सबवानर इकट्ठे होकर क्या कहेंगे ? ॥९॥ अथवा उत्साहही उन्नति प्राप्त करनेका मूल है, उत्साह हीपरम मूल का दाता है,इस कारण हमको उत्साही होकर वहां भी ढूंढना चाहियेकि,जिस २ स्थानको अबतक हमने नहीं खोजा है; इसलिये उन स्थानोंको अब फिर

दृष्टमंतःपुरंसर्वंदृष्टाराक्षसयोषितः ॥ नसीतादृश्यतेसाध्वीवृथाजातोममश्रमः॥६॥किंनुमांवानराःसर्वेगतंवक्ष्यंतिसंगताः ॥ गत्वातत्रत्वयावीरकिंकृतंतद्वदस्वनः ॥ ७ ॥ अदृष्ट्वाकिंप्रवक्ष्यामितामहंजनकात्मजाम् ॥ ध्रुवंप्रायमुपासिष्येकालस्यव्यतिवर्तने ॥८॥ किंवावक्ष्यतिवृद्धश्चजांबवानंगदश्चसः ॥ गतंपारंसमुद्रस्यवानराश्चसमागताः ॥९॥ अनिर्वेदःश्रियोमूलमनिर्वेदःपरंसुखम् ॥ भूयस्तत्रविचेष्यामिनयत्रविचयःकृतः ॥ १० ॥ अनिर्वेदोहिसततंसर्वार्थेषुप्रवर्तकः ॥ करोतिसफलंजंतोःकर्मयच्चकरोतिसः ॥११॥ तस्मादनिर्वेदकरंयत्नंचेष्टेऽहमुत्तमम् ॥ अदृष्टांश्चविचेष्यामिदेशान्रावणपालितान् ॥ १२ ॥ आपानशालाविचितास्तथापुष्पगृहाणिच ॥ चित्रशालाश्चविचिताभूयःक्रीडागृहाणिच ॥१३॥ निष्कुटांतररथ्याश्चविमानानिचसर्वशः ॥ इतिसंचिन्त्यभूयोपिविचेतुमुपचक्रमे ॥१४॥ भूमीगृहांश्चैत्यगृहान्गृहातिगृहकानपि ॥ उत्पतन्निपतंश्चापितिष्ठन्गच्छन्पुनःक्वचित् ॥ १५ ॥ अपवृण्वंश्चद्वाराणिकपाटान्यवघट्टयन् ॥ प्रविशन्निष्पतंश्चापिप्रपतन्नुत्पतन्निव ॥१६॥

देखना चाहिये॥१०॥उत्साहही मनुष्यको सब समयमें सब कामोंमें लगाता है,जीव उत्साह युक्त होकर जो कर्म करता है,उसका वह कार्य अवश्य सिद्ध होता है ॥११॥इस लिये उत्साहके मूल दृढ बलका आश्रय ग्रहण करके रावण रक्षित जो जो देश हमने नहीं देखे हैं उन सबको अब हम खोजें॥१२॥समस्त पान गृह और अनूप गृह हमने पहले ही खोजडाले;जिनमें चित्रालय और क्रीडागृह हैं वह भी वारंवार ढूंढही लिये हैं॥१३॥गृह और आराम करनेकी कुंजें व विमान राजि समस्तकोही भलीभाँति अनुसन्धान कर चुके हैं,इस प्रकार एक मुहूर्त्त भरतकचिंता करके ॥१४॥ वानरोंमें मुख्य हनुमानजी समस्त तयखाने, देवालय और अठा अटारियोंके खोजनेको फिर तैयार व उसी स्थानमें नीचेको जाँय कहीं क्षणभर टिककर कहीं चल कर ॥१५॥ कहीं किवाड खोलकर कहीं किवाड

लगाकर, कहीं घरमें प्रवेश कर कहीं घरसे बाहर आयकर, कहीं लेटकर कहींबैठकर, कहीं करवटके बल होकर ॥१६॥ वह महाकपि हनुमानजी इस प्रका रसे सब स्थानोंमें घूमने लगे, और रावणका समस्त रनिवास हनुमानजीने इसप्रकारसे ढूँढा कि वहांका चार अंगुलका स्थानभी उनके खोजनेसे बाकी नहीं रहा ॥१७॥ चहार दिवारी और उसके भीतरकी गलियें,गृहों और देवालयोंकी वेदियाँ आले, दिवाले, झरोखे और छोटी २ तलैयें बार २ हनुमानजीने देखीं ॥१८॥ इन सब स्थानोंमें नाना भांतिकी, कुरूप, सुरूपवाली राक्षसियां हनुमान्‌जीने देखीं परन्तु कहीं जानकीजी दिखाई नहीं दीं ॥१९॥ फिर हनुमान जीने रूप लावण्य सम्पन्न बडी २ विद्याधरोंकी स्त्रियोंमें खोज किया,परन्तु वहांपरभी श्रीरामकी प्यारीका दर्शन न पाया ॥२०॥ और हनुमानजीने पूर्णचन्द्र

सर्वमप्यवकाशंसविचचारमहाकपिः ॥ चतुरंगुलमात्रोपिनावकाशःसविद्यते ॥ रावणांतःपुरेतस्मिन्यंकपिर्नजगामसः ॥ १७ ॥ प्राकारांतरवी थ्यश्चवेदिकाश्चैत्यसंश्रयाः ॥श्वभ्राश्चपुष्करिण्यश्चसर्वंतेनावलोकितम् ॥ १८ ॥ राक्षस्योविविधाकाराविरूपाविकृतास्तथा ॥ दृष्टाहनुमता तत्रनतुसाजनकात्मजा ॥ १९ ॥ रूपेणाप्रतिमालोकेपराविद्याधरस्त्रियः ॥ दृष्टाहनुमतातत्रनतुराघवनंदिनी ॥ २० ॥ नागकन्यावरारोहाः पूर्णचंद्रनिभाननाः ॥ दृष्टाहनुमताताततत्रनतुसाजनकात्मजा ॥ २१ ॥ प्रमथ्यराक्षसेंद्रेणनागकन्याबलाद्धृताः ॥ दृष्टाहनुमताततत्रनसाजनकनं दिनी ॥२२॥ सोऽपश्यंस्तांमहाबाहुःपश्यंश्चान्यावरस्त्रियः॥विषसादमहाबाहुर्हनूमान्मारुतात्मजः॥ २३ ॥ उद्योगंवानरेंद्राणांप्लवनंसागरस्यच ॥ व्यर्थंवीक्ष्यानिलसुतश्चिंतांपुनरुपागतः ॥ २४ ॥ अवतीर्यविमानाच्चहनूमान्मारुतात्मजः ॥ चिंतामुपजगामाथशोकोपहतचेतनः ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे द्वादशः सर्गः ॥१२॥

माके समान वदनवाली रावणकी विवाहिता सुन्दरियोंमें श्रेष्ठ सर्पोंकी कन्याओंकोदेखा परन्तु जनकलडैती जानकीजीको नहीं देख पाया ॥२१॥ और नागोंको जीतकर रावण बलपूर्वक नागोंकी कन्याओंको लायाथा,उनको भी श्रीहनुमानजीनेदेखा परन्तु मिथिलेशकुमारी दृष्टि न आई ॥२२॥ महाबलवान् पवनकुमार हनु मानजीने जब औरभी मुख्य २ स्त्रियोंमें खोजनेपरभी जानकीजीको न देखा,तब वह अति शोकाकुल हुए ॥ २३ ॥ हनुमानजी बडे २ वानरोंका उद्योग और अपनाभी समुद्रका लांघना व्यर्थ देखकर फिर बडी चिन्ताको प्राप्त हुए ॥२४॥तिसके पीछे विमानसे उतरकर पवननंदन हनुमानजी शोकसे व्याकुलचित्त होकर बडी चिन्ताको पहुँचे ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषाटीकायां द्वादशः सर्गः ॥१२॥

वानर यूथपति वेगवान् हनुमानजी विमानसे उतरकर प्राकारपर कूदगये और मेघके भीतर दामिनीके समान अधिक सुन्दरता प्राप्तकरते हुये ॥१॥ सीताजीको न पायकर रावणके भवनसे बाहर आय हनुमानजी दुःखितचित्त हो कहनेलगे॥२॥हाय ! श्रीरामचन्द्रजीका प्रिय कार्य सिद्ध करनेके लिये हम बराबर लंकापुरीमें घूमे तथापि उन शोभित अंगवाली विदेहकुमारी सीताजीको हमने न देखा॥ ३ ॥ छोटी २ तलैयां, तडाग, सरोवर, तरंगिणी, नदियें, काछा, समुद्रकी तलैटी, वन, दुर्ग,पहाड बरन् समस्त पृथ्वी हम लोगोंने खोजी परन्तु कहीं भीजानकीजी हमको न देख पडीं ॥ ४ ॥ गृध्रराज सम्पातिने हमको बताया कि सीताजी इस रावणकेही स्थानमें वास करतीहैं; फिर हमने इतना ढूँढनेपरभीउनको क्यों नहीं पाया ॥ ५ ॥ रावणके बलपूर्वक हरलानेसे जनकनंदिनी

विमानात्तुससंक्रम्यप्राकारंहरियूथपः ॥ हनुमान्वेगवानासीद्यथाविद्युद्घनांतरे ॥ १ ॥ संपरिक्रम्यहनुमान्रावणस्यनिवेशनात् ॥ अदृष्ट्वाजानकींसीतामब्रवीद्वचनंकपिः ॥ २ ॥ भूयिष्ठंलोलितालंकारामस्यचरताप्रियम् ॥ नहिपश्यामिवैदेहींसीतांसर्वांगशोभनाम् ॥ ३ ॥ पल्वलानितटाकानिसरांसिसरितस्तथा ॥ नद्योऽनूपवनांताश्चदुर्गाश्चधरणीधराः ॥ लोलितावसुधासर्वानचपश्यामिजानकीम् ॥४॥ इहसंपातिनासीतारावणस्यनिवेशने ॥ आख्यातागृध्रराजेननचसादृश्यतेतुकिम् ॥ ५ ॥ किंतुसीताथवैदेहीमैथिलीजनकात्मजा ॥ उपतिष्ठेतविवशारावणेनहृतावलात् ॥ ६ ॥ क्षिप्रमुत्पततोमन्येसीतामादायरक्षसः ॥ बिभ्यतोरामबाणानामंतरापतिताभवेत् ॥७॥अथवाह्रियमाणायाःपथिसिद्धनिषेवितेमन्येपतितमार्यायाहृदयंप्रेक्ष्यसागरम् ॥ ८ ॥ रावणस्योरुवेगेनभुजाभ्यांपीडितेनच ॥ तयामन्येविशालाक्ष्यात्यक्तंजीवितमार्यया ॥ ९ ॥ उपर्युपरिसानूनंसागरंक्रमतस्तदा ॥ विचेष्टमानापतितासमुद्रेजनकात्मजा ॥ १० ॥

सीताजीने डरकर विवश हो कहीं उसकी भजना तो नहीं की ? ॥६॥ ऐसा जानपडताहै कि राक्षसपति रावण सीताजीको हरण करके अतिवेगसे चला आता था और जब कि श्रीरामचन्द्रजीके बाणका प्रभाव स्मरण करके भीतहो वह आकाशमार्गमें उडा जाताथा उसी समय सीताजी मार्गमें उसके हाथसे कहीं छूटकर गिरपडी होंगी ॥७॥ या सिद्धगणोंसे सेवित शून्य मार्गमें जब रावण उनको हरण करकेलिये जाताथा तब भयंकर समुद्रको देखकर उन आर्याका प्राण निकल गया होगा ॥ ८ ॥ अथवा उन बडे २ नेत्रवाली जानकीजीने रावणके महावेगसे चलनेऔर उसकी भुजाओंके दबानेसे व्याकुल हो प्राण त्याग दिया होगा ॥ ९ ॥ अथवा समुद्र पार होनेके समय जब कि रावण महावेगसे ऊपरको उठा रहाथातब निश्चयही जनककुमारी सीताजी भयसे व्याकुल होकर समुद्रमें गिर पडी होंगी

॥ १० ॥ हा ! अपने पतिव्रता धर्मकी रक्षाका यत्न करतेहुये उन अनाथा तपस्विनी जानकीजीको यह ओछे स्वाभाववाला रावण भक्षण करगया होगा॥ ११॥ अथवा राक्षसराज रावणकी दुष्टस्त्रियोंने सब सवतियाँ डाहसेईर्षा करके उन कमलदल नेत्रवाली जानकीको मिलकर खाय लिया होगा ॥ १२ ॥ "अथवा श्रीरामचन्द्रजीका पौर्णमासीके चन्द्रमाके समान कमलदल नेत्रयुक्त मुखमण्डल याद करके शोकसे व्याकुल हो सीताजीने शरीर त्याग कर दिया होगा या "हा राम ? हा लक्ष्मण हा अयोध्या !" यह कह और बार २ विलाप करभामिनी विदेहकुमारी जानकीजीने शरीर त्याग कर दिया होगा ॥२॥ " या ऐसाभी होसकता है कि,रावणके घरमें किसी गुप्त स्थानमें रक्खी जाकर जानकीजी पिंजरमें बंदकी हुई सारिकाके समान अतिशय विलाप करती होंगी॥ १३॥

अहोक्षुद्रेणचानेनरक्षंतीशीलमात्मनः ॥ अबंधुर्भक्षितासीतारावणेनतपस्विनी ॥ ११ ॥ अथवाराक्षसेंद्रस्यपत्नीभिरसितेक्षणा ॥ अदुष्टादुष्टभावाभिर्भक्षितासाभविष्यति ॥ १२ ॥ संपूर्णचंद्रप्रतिमंपद्मपत्रनिभेक्षणम् ॥ रामस्यध्यायतीवक्रंपंचत्वंकृपणागता ॥ १ ॥ हारामलक्ष्मणेत्येवहाऽयोध्येतिचभामिनी ॥ विलप्यबहुवैदेहीन्यस्तदेहाभविष्यति ॥२॥" अथवानिहितामन्येरावणस्यनिवेशने ॥ भृशंलालप्यतेबालापंजरस्थैवसारिका ॥ १३ ॥ जनकस्यकुलेजातारामपत्नीसुमध्यमा ॥ कथमुत्पलपत्राक्षीरावणस्यवशंव्रजेत् ॥१४॥ विनष्टावाप्रनष्टावामृतावाजनकात्मजा ॥ रामस्यप्रियभार्यस्यननिवेदयितुंक्षमम् ॥ १५ ॥ निवेद्यमानेदोषःस्याद्दोषःस्यादनिवेदने ॥ कथंनुखलुकर्त्तव्यंविषमंप्रतिभातिमे ॥ १६ ॥ अस्मिन्नेवंगतेकार्येप्राप्तकालंक्षमंचकिम् ॥ भवेदितिमतिंभूयोहनुमान्प्रविचारयन् ॥ १७ ॥

कमलदलके समान नेत्रवाली सुमध्यमा श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्री सीताजीने जनकजीके वंशमें जन्म ग्रहण किया है, वह राक्षसराज रावणके वंशमें किसी प्रकारसे नहीं होगी॥ १४॥जो कुछभी हो;यदि जानकीजीको न देख पावें,या वह ऐसी जगह होंकि,जहां देखना बहुत ही असम्भव हो, अथवा यदि उन्होंने प्राणहीत्याग करदियाहो,तथापि इनतीनों बातोंमेंसे हम श्रीरामचन्द्रजीसे एकबात भी निवेदन नहीं कर सकते,क्योंकि श्रीरामचन्द्रजीको जानकीजी बहुत प्यारी है॥ १५॥ क्या कहें ऐसी वार्त्ताके निवेदन करनेसे भी दोष है,और जो न कहें तोभीदोषहै अब क्या करना उचित है?हमको तो इनदोनों बातोंमेंही बडी कठिनतामालूम होती है ॥ १६ ॥ कार्यकी तो इस समय ऐसी अवस्था वर्तमान है अब समयानुसार क्या करना कर्तव्य है ? इस प्रकारका विचार करते २ हनुमानजीको बडी

चिन्ता हुई॥१७॥वह विचारने लगे कि, यदि विना जानकीजीके देखे हम इस स्थानसे वानरराज सुग्रीवजीकी नगरी किष्किंधामें चले जाँय तो हमारा कौनसा पुरुषार्थ सिद्ध होगा ?॥१८॥हमारा यह समुद्रका लांघना, लंकामें प्रवेश करना और राक्षसोंका देखना भालना सबही वृथा हो जायगा ॥१९॥ जब हम किष्किंधामें चले जाँयगे तब वानरराज सुग्रीवजी क्या कहेंगे?और वानरगण निकट आयकरक्या कहेंगे?और जो है सोतो हैही परन्तु वह दशरथजीके पुत्र श्रीराम लक्ष्मणजी क्या कहेंगे ? ॥ २० ॥ हम जाकर यदि काकुत्स्थकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजीको यह दारुण संवाद दें कि, सीताजीका दर्शन हमको नहीं मिला, तो वह उसी समय प्राण त्याग करदेंगे॥२१॥यह संवाद तो अलग रहा यदि वह दारुणभयंकर सब इंद्रियोंको संतापदेनेवाला सीताजीके विषयका कोईभी अशुभसमाचारसुनेंगेकि

यदिसीतामदृष्ट्वाऽहंवानरेन्द्रपुरीमितः ॥ गमिष्यामततःकोमेपुरुषार्थोभविष्यति॥१८॥ममेदंलंघनव्यर्थंसागरस्यभविष्यति॥प्रवेशश्चैवलंकाया राक्षसानांचदर्शनम् ॥ १९ ॥ किंवावक्ष्यतिसुग्रीवोहरयोवापिसंगताः ॥ किष्किंधामनुसंप्राप्तंतौवादशरथात्मजौ ॥ २० ॥ गत्वातुयदिकाकुत्स्थंवक्ष्यामिपरुषंवचः ॥ नदृष्टेतिमयासीताततस्त्यक्ष्यतिजीवितम् ॥२१॥ परुषंदारुणंतीक्ष्णंक्रूरमिंद्रियतापनम् ॥ सीतानिमित्तंदुर्वाक्यं श्रुत्वासनभविष्यति ॥२२॥ तन्तुकृच्छ्रगतंदृष्ट्वापंचत्वगतमानसम् ॥ भृशानुरक्तोमेधावीनभविष्यतिलक्ष्मणः॥२३॥ विनिष्टौभ्रातरौश्रुत्वा भरतोऽपिमरिष्यति ॥ भरतंचमृतंदृष्ट्वाशत्रुघ्नोनभविष्यति॥२४॥पुत्रान्मृतान्समीक्ष्याथनभविष्यंतिमातरः॥कौशल्याचसुमित्राचकैकेयीचनसंशयः॥२५॥कृतज्ञःसत्यसंधश्चसुग्रीवःप्लवगाधिपः॥ रामंतथागतंदृष्ट्वाततस्त्यक्ष्यतिजीवितम्॥२६॥दुर्मनाव्यथितादीनानिरानंदातपस्विनी॥ पीडिताभर्तृशोकेनरुमात्यक्ष्यतिजीवितम् ॥२७॥ वालिजेनतुदुःखेनपीडिताशोककर्शिता ॥ पंचत्वमागताराज्ञीताराऽपिनभविष्यति॥२८॥

वैसेही प्राण खोदेंगे॥२२॥उनको शोकके मारे व्याकुल होकर प्राण त्यागते देखउनकेअतिशय अनुरागीलक्ष्मणजी जीवित न रहेंगे॥२३॥राम लक्ष्मण दोनों भाइयोंने प्राणत्याग दिये ऐसा सुनकर भरतजीभी प्राण छोड़ेंगे और भरतजीको मृतकसुनशत्रुघ्न पहले शरीर छोडेंगे॥२४॥फिर इसमें भी संदेह नहींहै कि, पुत्रोंकीमृत्युका समाचार सुनकर राजमाता कौसल्या, सुमित्रा और कैकेयी भीप्राणोंका त्याग करदेंगी॥२५॥वानरराज सत्यप्रतिज्ञ और कृतज्ञ सुग्रीवजी जैसेहीश्रीरामचन्द्रजीकी ऐसी दशा देखेंगे वह भी निश्चयही मरजायँगे ॥२६॥ जबसुग्रीवजी मरजायँगे तो स्वामीके शोकसे पीडित, मनमारे व्यथित, दीनभाव युक्तऔर आनंदरहित होकर तपस्विनी रुमा भी प्राण त्यागन करेगी ॥२७॥शोकसेपीडित हुई तारा अपने स्वामीके मरणसे उत्पन्न शोकसे दुःखित हो इसीसमयमरनेको तैयारहुईथी

परन्तु सुग्रीवजीको देखकर वह जीवित रहगईथी, परन्तु अब सुग्रीवजीको मराहुवा देख वहभी न जियेंगी ॥ २८ ॥ माता पिता और चचा सुग्रीवजीके मरनेका समाचार पाय कुमारअंगदजी भी शरीरको त्याग करेंगे ॥२९॥वनवासीवानरादि अपने पालनेवाले स्वामीके वियोगसे अतिशय व्याकुल हो लात मुक्कोंसे अपने शिरको धुन२ कर रोवेंगे ॥३०॥ वानरराज सुग्रीवजी मीठे वचन दानव मानद्वारा वानरोंका लालन पालन किये आते है सो इस समय ऐसे शुभका वंशनाश होते देखकर वह कृतज्ञवानरगण निश्चयही प्राण त्याग करेंगे ॥ ३१ ॥सुग्रीवजीके मरनेपर क्यावन क्या पर्वत क्या ढकेहुए गुहादि स्थान किसी स्थानमें वानरश्रेष्ठ गण इकट्ठे होकर सुखसे विहार न कर सकेंगे ॥३२॥ अपने स्वामीकेशोकसे तापित होकर स्त्री पुत्र और अपने२सेवकोंको साथ लेकर वानरगणपर्वतों परसे खडेही सम विषम भूमिमें गिर पडेंगे ॥ ३३॥ जो ऐसे न तो विष खाय,फांसीलगाय अग्निमें प्रवेशकर उपवासकर अपनी देहहीमें शस्त्रप्रहार करके प्राण

मातापित्रोर्विनाशेनसुग्रीवव्यसनेनच ॥ कुमारोऽप्यंगदस्तस्माद्विजहिष्यतिजीवितम् ॥ २९ ॥ भर्तृजेनतुदुःखेनअभिभूतावनौकसः ॥ शिरांस्यभिहनिष्यंतितलैर्मुष्टिभिरेवच ॥ ३० ॥ सांत्वेनानुप्रदानेनमानेनचयशस्विना ॥ लालिताःकपिनाथेनप्राणांस्त्यक्ष्यंतिवानराः ॥ ३१ ॥ नवनेषुनशैलेषुननिरोधेषुवापुनः ॥ क्रीडामनुभविष्यंतिसमेत्यकपिकुंजराः ॥ ३२ ॥ सपुत्रदाराःसामात्याभर्तृव्यसनपीडिताः ॥ शैलाग्रेभ्यःपतिष्यंतिसमेषुविषमेषुच ॥ ३३ ॥ विषमुद्बंधनंवापिप्रवेशंज्वलनस्यवा ॥ उपवासमथोशस्त्रंप्रचरिष्यंतिवानराः ॥ ३४ ॥ घोरमारोदनंमन्येगतेमयिभविष्यंति ॥ इक्ष्वाकुकुलनाशश्चनाशश्चैववनौकसाम् ॥ ३५ ॥ सोऽहंनैवगमिष्यामिकिष्किन्धांनगरीमितः ॥ नहिशक्ष्याम्यहंद्रष्टुंसुग्रीवंमैथिलींविना ॥ ३६ ॥ मय्यगच्छतिचेहस्थेधर्मात्मानौमहारथौ॥आशयातौधरिष्येतेवानराश्चतरस्विनः ॥३७॥ हस्तादानोमुखादानोनियतोवृक्षमूलिकः ॥ वानप्रस्थोभविष्यामिअदृष्ट्वाजनकात्मजाम् ॥ ३८ ॥सागरानूपजेदेशेबहुमूलफलोदके॥ चितिंकृत्वाप्रवेक्ष्यामिसमिद्धमरणीसुतम् ॥ ३९ ॥ उपविष्टस्यवासम्यङ्लिंगिनंसाधयिष्यतः ॥ शरीरंभक्षयिष्यंतिवायसाःश्वापदानिच ॥ ४० ॥

त्याग करेंगे ॥३४॥हम जानते हैं कि, हमारे लौट जानेसे रोनेका घोरशोर मचैगाइक्ष्वाकुवंशका और समस्त वनवासीवानरोंका विनाश होजायगा ॥३५॥ इसलिये हम यहांसेही किष्किन्धानगरीको न जांयगे विना श्रीजानकीजीकी सुध पायेहम सुग्रीवजीके दर्शन न करेंगे ॥३६॥ हम वहां न जायकर यदि यहांहीटिके रहैं तो वह धर्मात्मा दोनोंमहारथी और बलवान् वानरगण आशासेजीवनकोतो धारण कियेरहेंगे ॥ ३७ ॥ वारंवार ढूँढनेपर भी यदि हम जानकीजीको न देखपावैंगे तौ हम वानप्रस्थ होकर हाथसे व मुखके बलसे अपने तोड़े हुए फलखायकर सदा पेडकी मूलमें वास करेंगे ॥ ३८ ॥ अथवा हम समुद्रके अनेक प्रकार फल मूल और जलसे पूर्ण किनारेपर चिता बनाय प्रज्वलित अग्निमेंप्रवेशकर जायँगे॥३९॥प्राणनिकलजानेपर जो शरीर न भी जलैगा तो कौवा और कुत्ते

आदि उसेखाय लेगें बस इससे भी हम निश्चयही स्वर्ग को चले जायँगे ॥४०॥ ऋषि लोगोंने और भी एक मुक्तिका उपाय उपदेश कियाहै; यदि हम जानकीजीको न देख पावेंगे तो निश्चयही जलमें डूबकर मर जाँयगे ॥४१॥ विशेष करकेहमने सीताजीके देखनेके लिये समुद्रके लांघनेका श्रेष्ठ कार्य करके जो कीर्तिपाई है; अब सीताजीके दर्शन न पानेसे हमारी वह विख्यात कीर्ति सदाके लिये लोप होतीहै ॥४२॥ जनक कुमारीको न देख पाकरहम नियमधारी यती होकर वृक्षकीमूलमें वास करेंगे तथापि इस स्थानसे हमविना जानकीजीके देखे न जायँगे ॥४३॥ सीताजीकी सुधि विनापाये यदि हम इस स्थानसे चलेजाँयगे तो अंगदजी सब वानरोंके सहित उसी समय मर जायँगे ॥ ४४ ॥ अथवा हम क्यों मरें ? मरनेमें अनेक दोषहैं, बरन जीवित रहनेसे अनेक शुभ काम निकलते हैं; इसलिये प्राण धारण करजीवित रहनेसे कभी न कभी भला अवसर अवश्यही आजायगा ॥ ४५ ॥ वानरोंमेंमुख्य हनुमान्‌जी मनही मन इस प्रका

इदमप्यृषिभिर्दृष्टंनिर्याणमितिमेमतिः ॥ सम्यगापःप्रवेक्ष्यामिनचेत्पश्यामिजानकीम् ॥ ४१ ॥ सुजातमूलासुभगाकीर्तिमालायशस्विनी ॥
प्रभग्नाचिररात्रायममसीतामपश्यतः ॥ ४२ ॥ तापसोवाभविष्यामिनियतोवृक्षमूलिकः ॥ नेतःप्रतिगमिष्यामितामदृष्ट्वासितेक्षणाम् ॥४३॥
यदितुप्रतिगच्छामिसीतामनधिगम्यताम् ॥ अंगदःसहितःसर्वैर्वानरैर्नभविष्यति ॥ ४४ ॥ विनाशेबहवोदोषाजीवन्प्राप्नोतिभद्रकम् ॥ तस्मा
त्प्राणान्धरिष्यामिध्रुवोजीवतिसंगमः ॥ ४५ ॥ एवंबहुविधंदुःखंमनसाधारयन्बहु ॥ नाध्यगच्छत्तदापारंशोकस्यकपिकुंजरः ॥ ४६ ॥
ततोविक्रममासाद्यधैर्यवान्कपिकुंजरः ॥ रावणंवावधिष्यामिदशग्रीवंमहाबलम् ॥ ४७ ॥ काममस्तुहृतासीताप्रत्याचीर्णंभविष्यति ॥४८॥
अथवैनंसमुत्क्षिप्यउपर्युपरिसागरम् ॥ रामायोपहरिष्यामिपशुंपशुपतेरिव ॥४९॥ इतिचिंतांसमापन्नःसीतामनधिगम्यताम् ॥ ध्यानशोकप
रीतात्माचिंतयामासवानरः ॥ ५० ॥ यावत्सीतांनपश्यामिरामपत्नींयशस्विनीम् ॥ तावदेतांपुरींलंकांविचिनोमिपुनःपुनः ॥ ५१ ॥ संपाति
वचनाच्चापिरामंयद्यानयाम्यहम् ॥ अपश्यन्राघवोभार्यांनिर्दहेत्सर्ववानरान् ॥ ५२ ॥

रकी अनेक चिन्ता करते, उस कालमें दुःखकेपार न पहुँचे ॥४६॥ इसके उपरांत महाधीरजवान् कपियोंमें कुंजररूप हनुमान्‌जीअपने विक्रमका अवलंबन कर चिंता करने लगेकि लाओ महाबली दशग्रीव रावणकाही संहार करतेचलें ॥४७॥ क्योंकि इसका संहार करनेसे; सीताजीके हरणकरनेके वैरका बदला तो हो जायगा ॥ ४८ ॥ अथवा इस रावणको बारंबार समुद्रके ऊपर उछालते हुए श्रीरामचन्द्रजीको जायकर समर्पण करदें; जैसे पशुपतिके पशु सौंपा जाता है ॥ ४९ ॥ सीताको प्राप्त न होकर इस प्रकारकी चिन्तासेव्याकुलऔर शोकसे चित्तको दुखायेहुए हनुमान्‌जीफिर चिंताकरनेलगे॥५०॥ हनुमान्‌जीनेविचाराकि; जबतक यशस्विनी जानकीजी न मिलें; तबतकइस लंकापुरीको हमें बारंबार खोजनाचाहिये ॥५१॥ अथवा सम्पातिके वचनोंकाविश्वास करश्रीरामचन्द्रजी कोही

यहांपर ले आवें,परन्तु श्रीरामचन्द्रजी जो यहांपर आयकर जानकीजीको नदेखेंगेतौ वह समस्त वानरोंकोही भस्म कर देंगे ॥ ५२ ॥ अथवा नियताहारी; और जितेन्द्रिय होकर हम इसी स्थानपर बसते रहेंगे क्योंकि एक हमारेलिये सब नरवानरोंका मरना नहीं होवे ॥ ५३ ॥ और यह जो बडे २ वृक्षोंसे परिपूर्ण बडाभारी अशोक वन दृष्टि आताहै; इसको तौ अभी खोजाही नहीं;इसलिये अबहम इसी वनमें जायँगे ॥ ५४ ॥ आठ वसु; ग्यारह रुद्र बारह आदित्य; दोनों अश्विनीकुमार व उनचास पवनोंको नमस्कार करके राक्षसलोगोंके शोक बढानेवाले होकर हम सब वनमें जाँयगे ॥५५॥ राक्षसोंको जीतकर तपस्वीको सिद्धि प्राप्त होनेके समान हम देवी इक्ष्वाकुकुलनंदिनी सीताजीको श्रीरामचन्द्रजीकेसमर्पण कर देंगे ॥ ५६ ॥ चिन्तासे व्याकुलेन्द्रिय होकर महाबाहु पवनकुमार

इहैवनियताहारोवत्स्यामिनियतेंद्रियः ॥ नमत्कृतेविनश्येयुःसर्वेतेनरवानराः॥ ५३ ॥ अशोकवनिकाचापिमहतीयंमहाद्रुमा ॥इमामधिगमिष्या
मिनहीयंविचितामया ॥५४॥ वसून्रुद्रांस्तथादित्यानश्विनौमरुतोऽपिच ॥ नमस्कृत्वागमिष्यामिरक्षसां शोकवर्धनः ॥५५॥जित्वातुराक्षसान्देवी
मिक्ष्वाकुकुलनंदिनीम् ॥ संप्रदास्यमिरामायसिद्धीमिवतपस्विने ॥ ५६ ॥ समुहूर्तमिवध्यात्वाचिंताविग्रथितेंद्रियः ॥ उदतिष्ठन्महाबाहुर्हनू
मान्मारुतात्मजः ॥ ५७ ॥नमोऽस्तुरामायसलक्ष्मणायदेव्यैचतस्यैजनकात्मजायै ॥ नमोऽस्तुरुद्रेंद्रयमानिलेभ्योनमोऽस्तुचंद्राग्निमरुद्गणेभ्यः
॥ ५८ ॥ सतेभ्य स्तुनमस्कृत्वासुग्रीवायचमारुतिः ॥ दिशःसर्वाःसमालोक्यसोऽशोकवनिकांप्रति ॥ ५९ ॥ सगत्वामनसापूर्वमशोकवनिकां
शुभाम् ॥उत्तरंचिंतयामासवानरोमारुतात्मजः ॥६०॥ ध्रुवंतुरक्षोबहुलाभविष्यतिवनाकुला ॥ अशोकवनिकापुण्यासर्वसंस्कारसंस्कृता ॥६१॥

हनुमान्‌जी एक मुहूर्त भरतक इस प्रकारका विचार करके उठ खडे हुए ॥५७॥और मनहीमनमें बोले कि, श्रीराम, लक्ष्मणको नमस्कार। उन देवी जनककुमारी जानकीजीको नमस्कार। रुद्र, इंद्र, यम, वायु, चन्द्र अग्नि और मरुद्गणकोनमस्कार है ॥५८॥ इन सबको और सुग्रीवजीको नमस्कार करके पवनकुमार हनुमान्‌जी दशों दिशाओंको भलीभाँति निहारकर अशोक वनकी ओर यात्राकरते हुए ॥५९॥ पवनकुमार हनुमान्‌जी मनसे तो इससे पहलेही शोभायमान अशोक वनमें पहुँच गयेथे, इस समय शरीरसहित वहां पहुँच कर विचारनेलगेकि अब क्या करना चाहिये?॥६०॥हनुमान्‌जीने विचारा कि बहुत बड़े वनसे युक्त और खाई चहारदिवारी आदि अनेक प्रकारके संस्कारोंसे संस्कारित इसपुण्यवान अशोक वनकी निश्चयही बहुत सारे राक्षस रखवाली करते होंगे॥६१॥

अवश्यही बहुत सारेरखवाले इस वनमें रक्खे जाकर इन सब वृक्षोंकी रक्षाकरते हैं; इससे भगवान् विश्वात्मा पवनदेवजी यहां प्रबल वेगसेही नहीं चलते ॥६२॥ इस कारण श्रीरामचंद्रजीका कार्य सिद्ध करनेके लिये और रावण देख न पावे इसलिये हमने अपने शरीरको सकोड़ लिया; ऋषिगण और देवता गण हमकोइस कार्यमें सिद्धि दान करें॥ ६३ ॥ स्वयं भगवान् स्वयंभु ब्रह्माजी; देवतागण, तपस्वीगण, भगवान् अग्नि; वायुभगवान् विष्णुजी और वज्रधारी इन्द्रजी यह सब हमको सिद्धि दें ॥ ६४ ॥ पाशहाथमें लिये वरुणजी; और सूर्य; चन्द्र, महात्मा दोनों अश्विनीकुमार और उनचासों पवन ॥ ६५ ॥ प्राणिगण और प्राणियोंकेपति श्रीनारायण; और जो देवतालोगकि अदृश्य भावसे रहकरघूमतेहैं; वह सबही हमको सिद्धि दें ॥६६॥ हा! नजानेहमकब उनआर्या सीताजीका वह ऊंची नासिकासे युक्त श्वेत दन्त शोभित; मंद मुसकान युक्त; व्रणरहित, पद्मपलाश नयन, प्रसन्न चन्द्रवदन दर्शन करेंगे? ॥६७॥ ओछे स्वभाववाले नीच जाति

रक्षिणश्चात्रविहितानूनंरक्षंतिपादपान् ॥ भगवानपिविश्वात्मानातिक्षोभंप्रवायति ॥ ६२ संक्षिप्तोऽयंमयात्माचरामार्थेरावणस्यच ॥ सिद्धिंदिशंतुमेसर्वेदेवाःसर्षिगणास्त्विह ॥६३॥ ब्रह्मास्वयंभूर्भगवान्देवाश्चैवतपस्विनः ॥ सिद्धिमग्निश्चवायुश्चपुरुहूतश्चवज्रभृत् ॥६४॥ वरुणःपाशहस्तश्च सोमादित्यौतथैवच ॥ अश्विनौचमहात्मानौमरुतःसर्वएवच ॥६५॥ सिद्धिंसर्वाणिभूतानिभूतानांचैवयःप्रभुः ॥ दास्यंतिममयेचान्येप्यदृष्टाःपथिगोचराः ॥६६॥ तदुन्नसंपांडुरदंतमव्रणंसुचिस्मितंपद्मपलाशलोचनम् ॥ द्रक्ष्येतदार्यावदनंकदान्वहंप्रसन्नताराधिपतुल्यवर्चसम् ॥६७॥ क्षुद्रेणहीनेननृशंसमूर्तिनासुदारुणालंकृतवेषधारिणा ॥ बलाभिभूताह्यबलातपस्विनीकथंनुमेदृष्टिपथेऽद्यसाभवेत् ६८ इत्यार्षेश्रीमद्रा.वा.आ०च०सा०सुंदरकाण्डे त्रयोदशःसर्गः १३ सुमुहूर्तमिवध्यात्वामनसाचाधिगम्यताम् ॥ अवप्लुतोमहातेजाःप्राकारंतस्यवेश्मनः १ ॥ सतुसंहृष्टसर्वांगःप्राकारस्थोमहाकपिः ॥ पुष्पिताग्रान्वसंतादौददर्शविविधान्द्रुमान् ॥२॥ सालानशोकान्भव्यांश्चचंपकांश्चसुपुष्पितान् ॥ उद्दालकान्नागवृक्षांश्चूतान्कपिमुखानपि ॥३॥

निर्लज्जमूर्ती रावणने दारुण कपट वेष धारण करके प्रबल बल चलाय उनअबला तपस्विनीको बँधुआकर रक्खा है । हाय ! आज क्या कार्य हम करें जो उनपतिव्रता सीता देवीजीके हमको दर्शन मिलजाँय ॥ ६८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥ महातेजवान हनुमान्‌जी मुहूर्त्तभरतक चिंता करते हुए मनमें सीताजीका ध्यानकररावणके गृहसे छलांगभर नीचेकी प्राचीरपर उतर आये ॥१॥ उस चहारदिवारीकीभीतपर बैठकरवसन्त इत्यादि समस्त ऋतुओंमें जिन२वृक्षोंके फूलखिलाकरते हैं,उनप्रसूनयुक्त अनेकजातिके वृक्षोंके समूहोंकोदेखकर महाकपि हनुमानजीके सब अंगमारे आनंदके पुलकायमान होनेलगे ॥२॥ उनवृक्षोंमें पुष्पित शाल, अशोक, गज, पीपल, चम्पक, उद्दालक; नागवृक्ष, आम औरकपि मुखाकृतिआम ॥३॥

सफरी, और साधारण आमोंके वनोंसे घिरी वृक्षोंकी सैकडों वाडी देख हनुमान्जी धनुषसे छूटे बाणके समान यहांसे सीधे उछलकर चले ॥ ४ ॥ प्रवेशकरके महाबलवान् हनुमान्जीने देखा कि, यह वाटिका अति विचित्र है, अनेक जातिके पक्षी उसमें बोल रहे हैं, चांदी और सुवर्णमय वृक्ष उसको छाये हुए हैं॥५॥ नाना प्रकारके मृग औरपक्षिगणोंसे सेवित होनेके कारण वाटिकाने अनेक रूपकी शोभा धारणकी है, वह विचित्र वृक्षोंसे चित्रित होरही थी, वहांके वृक्ष सूर्यके समान ज्योतिविस्तार कर रहे थे ऐसा महावीरजीने देखा ॥६॥ वह वाटिका अनेक प्रकारके फल फूलवाले वृक्षोंसे छाय रही है मतवाली कोकिला और भौरोंके शब्द समूहसे वह शब्दायमान होरही है ॥७॥ वहांपर पुरुष सबही समय हर्षित चित्त और मृगपक्षी मतवाले होकर फिरा करते मोरभी मतवाले होकर अपनी झंकार

तथाम्रवर्णसंपन्नाँल्लताशतसमन्वितान् ॥ ज्यामुक्तइवनाराचःपुप्लुवेवृक्षवाटिकाम् ॥ ४ ॥ सप्रविश्यविचित्रांतांविहगैरभिनादिताम् ॥ राजतैः कांचनैश्चैवपादपैःसर्वतोवृताम् ॥५॥ विहंगैर्मृगसंघैश्चविचित्रांचित्रकाननाम् ॥ उदितादित्यसंकाशांददर्शहनुमान्बली ॥ ६ ॥ वृतैर्नानाविधै र्वृक्षैःपुष्पोपगफलोपगैः ॥ कोकिलैर्भृंगराजैश्चमत्तैर्नित्यनिषेविताम् ॥ ७ ॥ प्रहृष्टमनुजांकालेमृगपक्षिमदाकुलाम् ॥ मत्तबर्हिणसंघुष्टांनाना द्विजगणायुताम् ॥ ८ ॥ मार्गमाणोवरारोहांराजपुत्रीमनिंदिताम् ॥ सुखप्रसुप्तान्विहगान्बोधयामासवानरः ॥ ९ ॥ उत्पतद्भिर्द्विजगणैः पक्षैर्वातैः समाहताः ॥ अनेकवर्णाविविधामुमुचुःपुष्पवृष्टयः ॥ १० ॥ पुष्पावकीर्णःशुशुभेहनूमान्मारुतात्मजः ॥ अशोकवनिकामध्येयथापुष्पमयो गिरिः ॥ ११ ॥ दिशःसर्वाभिधावंतंवृक्षखंडगतंकपिम् ॥ दृष्ट्वासर्वाणिभूतानिवसंतइतिमेनिरे ॥१२॥ वृक्षेभ्यःपतितैःपुष्पैरवकीर्णापृथग्विधैः ॥ रराजवसुधातत्रप्रमदेवविभूषिता ॥ १३ ॥ तरस्विनातेतरवस्तरसाबहुकंपिताः ॥ कुसुमानिविचित्राणिससृजुःकपिनातदा ॥ १४ ॥

करते और अनेक भाँतिके पक्षी वास करते हैं ॥८॥ हनुमान्जीने वरारोहा अनिन्दिता राजकुमारी जानकीजीको खोजते हुए सुखसे सोये हुए पक्षियोंको जगा दिया ॥९॥ जब सब पक्षी पंखोंको फैलाय कर उडे तब उनके पंखोंकी पवन चलनेकेकारण विविध भाँतिके वृक्ष अनेकवर्णके फूलोंकी वर्षा करने लगे॥१०॥ वायुनंदन हनुमानजी फूलोंकी राशिसे ढककर अशोकवनमें फूलोंके पहाडके समान शोभायमान होने लगे ॥ ११ ॥ जब हनुमान्जी वृक्षोंपरचढकर सब दिशाओंमें घूमतेथे, तब उनको देखकर सबही प्राणियोंने जाना कि, यह वसंत रूप धारण किये घूमता है ॥१२॥ वृक्षोंके गिरे हुए फूलोंसे ढककर वहांकी पृथ्वी सोलहो शृंगार किये स्त्रीके समान शोभायमान होने लगी ॥१३॥ बलवान् हनुमानजीके बडे वेगसे कंपित करनेपर वृक्षकंपायमान होकर फूलोंके ढेरोंकी वर्षा

करने लगे॥१४॥और हनुमानजीके वेगसे हिलनेके कारण वृक्षोंके पत्ते, फल, फूल और फुलचिंयें टूटकर गिरानेसे जुआ खेलनेवाले जिस प्रकार जुएमें हारमन मार वस्त्राभूषण भी गँवाय जैसे कोरेहो बैठते हैं, वैसेही वह वृक्ष ठूंठसे होगये॥१५॥वेगवान् हनुमानजीके कंपित करनेसे फलवाले सबश्रेष्ठ वृक्ष झर २ करके बहुतसारे फल और पत्ते गिराने लगे॥१६॥ पवनकुमार हनुमानजीके चलायमान करनेसे उनसबवृक्षोंके केवल गुद्दे बचे ऐसी अवस्थामें वह सब वृक्ष और किसी प्राणीके सेवन योग्य नहीं रहे और पक्षियोंसे हीन होगये॥१७॥हनुमानजी पूँछ, हस्त, और दोनों चरण मर्दित होनेके कारण अशोक वनके सब वृक्ष छिन्न भिन्न होगये इससे ऐसी शोभा हुई मानो स्त्रीके बाल बिखरे, अंगराग छुटा, श्वेत दांत व अधर चुम्बित और अंग नख दांतोंसे क्षतविक्षत होगये ॥१८॥१९ ॥ वर्षाकालमें

निर्धूतपत्रशिखराः शीर्णपुष्पफलद्रुमाः ॥ निक्षिप्तवस्त्राभरणा धूर्ता इव पराजिताः ॥ १५ ॥ हनूमता वेगवता कंपितास्तेन गोत्तमाः ॥ पुष्पपत्रफलान्याशु मुमुचुः फलशालिनः ॥ १६ ॥ विहंगसंघैर्हीनास्ते स्कंधमात्राश्रया द्रुमाः ॥ बभूवुरगमाः सर्वे मारुतेन विनिर्धुताः ॥१७॥ विधूतकेशी युवतिर्यथा मृदितवर्णका ॥ निपीतशुभदंतोष्ठी नखैर्दंतैश्च विक्षता ॥ १८ ॥ तथा लांगूलहस्तैस्तु चरणाभ्यां च मर्दिता ॥ तथैवाशोकवनिका प्रभग्नवनपादपा ॥ १९ ॥ महालतानां दामानि व्यधमत्तरसा कपिः ॥ यथा प्रावृषि वेगेन मेघजालानि मारुतः ॥ २० ॥ स तत्र मणिभूमीश्च राजतीश्च मनोरमाः ॥ तथा कांचनभूमीश्च विचरन्ददृशे कपिः ॥ २१ ॥ वापीश्च विविधाकाराः पूर्णाः परमवारिणा ॥ महार्हैर्मणिसोपानैरुपपन्नास्ततस्ततः ॥२२॥ मुक्ताप्रवालसिकताः स्फाटिकांतरकुट्टिमाः ॥ कांचनैस्तरुभिश्चित्रैस्तीरजैरुपशोभिताः ॥२३॥ बुद्धपद्मोत्पलवनाश्चक्रवाकोपशोभिताः ॥ नत्यूहरुतसंघुष्टा हंससारसनादिताः ॥ २४ ॥

प्रचंड पवन जिसप्रकार मेघ जालके टुकडे २ कर देता है; वैसेही महाकपि हनुमानजीने बडे वेगसे बडी २ लताओंको तोड डाला ॥ २० ॥ वहांपर विचरण करते २ हनुमानजीने मणिमय, रजतमय और सुवर्णमय मनोहर पृथ्वी देखी ॥ २१ ॥ और श्रेष्ठजलसे पूर्ण विविधाकार बावलियां भी वहां देखीं, इन सब वापियोंके स्थान २ में बडे मोलकी विविध मणियोंसे बनी हुई सीढियें शोभायमान होरही थीं ॥ २२ ॥ उन वापियोंमें मोती मूगोंकी सिटकियां, जलके भीतरकी भीत स्फटिकमणिकी बनी थीं। उनके किनारे २ विचित्र सुवर्णमय वृक्षोंके झुण्ड शोभित होरहे थे॥२३॥इनसमस्तवापियोंमें कमलफूलोंका कमलवन खिल

रहाथा, चक्रवाक अलगहीशोभा बढा रहे थे और कालकंठ हंससारस इत्यादि पक्षी नादकर रहेथे॥ २४॥ उनके ओरे धोरे बडी २ नदियां,उन नदियोंके किनारे वृक्षोंकीलंगार विराजमान उन नदियोंका जल अमृतके समानस्वादयुक्त और स्वच्छ था ॥ २५॥ सैकडों बेलें उनके जलमें आकर गिरी थीं,उनके तीरवाले वनोंमें सन्तान (कल्पवृक्षके फूल) विराजमान, और बीच २ में करवीरके फूल और गुल्मादि शोभायमान थीं ॥२६॥ फिर मेघके समान ऊंचे शिखरयुक्त विचित्रशृंग विचित्रकंगूरोंसे चारोंओरसे शोभित ॥ २७॥ शिलागृह सुसज्जित अनेक प्रकारकेवृक्षोंसे घिरा सब जगत्में रमणीक एक पर्वत वानरोंमें श्रेष्ठ हनुमान्‌जीने देखा ॥२८॥ इस पर्वतपरसे एक नदी बहरही थी, वह ऐसी शोभायमान होरही थी, मानों प्यारी क्रोधमें भरकर अपने प्रीतमकी गोदको त्यागकर पृथ्वीपर शयन कर रही है ॥२९॥ मानिनी कामिनी क्रोधयुक्त होकर अपने स्वामीके निकटसे दूसरे स्थानपर जानेकी इच्छा प्रकाश करनेपर जैसे प्रियसखियें उसको रोकती

दीर्घाभिर्द्रुमयुक्ताभिःसरिद्भिश्चसमंततः ॥ अमृतोपमतोयाभिःशिवाभिरुपसंस्कृताः॥२५॥लताशतैरवतताःसंतानकुसुमावृताः ॥ नानागुल्मावृतवनाःकरवीरकृतान्तराः ॥२६॥ ततोऽम्बुधरसंकाशंप्रवृद्धशिखरंगिरिम् ॥ विचित्रकूटंकूटैश्चसर्वतःपरिवारितम्॥२७॥ शिलागृहैरवततंनानावृक्षसमावृतम् ॥ ददर्शकपिशार्दूलोरम्यंजगतिपर्वतम् ॥ २८ ॥ ददर्शचनगात्तस्मान्नदींनिपतितांकपिः ॥ अंकादिवसमुत्पत्यप्रियस्यपतितांप्रियाम्॥२९॥जलेनपतिताग्रैश्चपादपैरुपशोभिताम् ॥ वार्यमाणामिवक्रुद्धांप्रमदांप्रियबंधुभिः ॥३०॥ पुनरावृत्ततोयांचददर्शसमहाकपिः ॥ प्रसन्नामिवकांतस्यकांतांपुनरुपस्थिताम् ॥ ३१ ॥ तस्यादूरात्सपद्मिन्योनानाद्विजगणायुताः ॥ ददर्शकपिशार्दूलोहनूमान्मारुतात्मजः॥३२॥ कृत्रिमांदीर्घिकांचापिपूर्णांशीतेनवारिणा ॥ मणिप्रवरसोपानांमुक्तासिकतशोभिताम् ॥ ३३ ॥ विविधैर्मृगसंघैश्चविचित्रांचित्रकाननाम् ॥ प्रासादैःसुमहद्भिश्चनिर्मितैर्विश्वकर्मणा ॥ ३४ ॥

हैं वैसेही उस नदीके तीरवाली वृक्षोंकी शाखा तलमें गिरनेसे उसही भावको प्रकाश कररहीं थीं ॥ ३० ॥ महाकपि हनुमान्‌जीने देखा कि, कुछ दूर गमन करके जलफिर किसी स्थानसे लौटकर आ रहा है, मानो कामिनी प्रसन्न होकर फिर लौटकर प्रियपतिके पास आय रही है ॥३१॥ कपिशार्दूल पवनकुमार हनुमान्‌जीने देखा कि, इस नदीके कुछेक दूर अनेक प्रकारके पक्षियोंसे युक्त कमल खिले हुए सरोवर विराजमान हैं ॥ ३२ ॥ हनुमान्‌जीने शीतलजलसे परिपूर्ण एक कृत्रिम बावडीभी देखी । उस बावडीकी सीढियें मणिमय बनी हुई थीं, और मुक्तामय किनारा बना हुआ उसकी शोभाको बढा रहा था॥३३॥ विविध भांतिके विविध मृगगणभी उसकी अनेकशोभा कर रहे थे और विचित्र वृक्षोंने उसको चित्रित किया था॥ चारोंओर विश्वकर्माकी बनाई अति बडी २

अटा अटारियें ॥ ३४ ॥ वनकली वनोंसे सब ओरसे उसकी अति मनोहर शोभा होरही थी उसके किनारेवाले सब वृक्ष फल फूलसे युक्त थे ॥ ३५ ॥ और सब वृक्षोंका आकार छत्रके समान मनोहर व सबहीकी जडमें सुवर्णके थांवले बने थे, और नीचेकी भूमि चांदीसे मढी थी, उनके आसपासवाली बहुतसी लताओंके पत्तोंसे वह घिरी हुई थी ॥३६॥ फिर महाकपि हनुमानूजीने सुवर्णके वर्ण समान एक बडा भारी शिंशपाका वृक्ष देखा, उसका थांवला सुवर्णमय बना हुआ था॥३७॥इन सबके अतिरिक्त महाकपि हनुमानूजीने विविध भूमिभाग पर्वतोंके झरने व और दूसरे अग्निके समान कान्तिमान् सुवर्ण वृक्षभी देखे॥३८॥ सुमेरु पर्वतके स्पर्शसे सूर्य भगवान् जिस प्रकार उज्ज्वल होजाते हैं, वैसेही इन समस्त वृक्षोंकी प्रभासे व्याप्त होकर वीर हनुमानूजीभी सुवर्णरूप होगये थे इससे

काननैःकृत्रिमैश्चापिसर्वतःसमलंकृताम् ॥ येकेचित्पादपास्तत्रपुष्पोपगफैलोपगाः ॥ ३५ ॥ सच्छत्राःसवितर्दीकाःसर्वेसौवर्णवेदिकाः ॥ लताप्रतानैर्बहुभिःपर्णैश्चबहुभिर्वृताम् ॥ ३६ ॥ कांचनींशिंशपामेकांददर्शसमहाकपिः ॥ वृतांहेममयीभिस्तुवेदिकाभिःसमंततः ॥३७॥ सोऽपश्यद्भूमिभागांश्चनगप्रस्रवणानिच ॥ सुवर्णवृक्षानपरान्ददर्शशिखिसन्निभान् ॥ ३८ ॥ तेषांद्रुमाणांप्रभयामेरोरिवमहाकपिः ॥ अमन्यततदावीरःकांचनोऽस्मीतिसर्वतः ॥ ३९ ॥ तान्कांचनान्वृक्षगणान्मारुतेनप्रकंपितान् ॥ किंकिणीशतनिर्घोषान्दृष्ट्वाविस्मयमागमत् ॥ ४० ॥ सुपुष्पिताग्रान्रुचिरांस्तरुणांकुरपल्लवान् ॥ तामारुह्यमहावेगः शिंशपांपर्णसंवृताम् ॥ ४१ ॥ इतोद्रक्ष्यामिवैदेहींरामदर्शनलालसाम् ॥ इतश्चेतश्चदुःखार्तांसंतपंतींयदृच्छया ॥ ४२ ॥ अशोकवनिकाचेयंदृढंरम्यादुरात्मनः ॥ चंदनैश्चंपकैश्चापिबकुलैश्चविभूषिता ॥ ४३ ॥ इयंचनलिनीरम्याद्विजसंघनिषेविता ॥ इमांसाराजमहिषीनूनमेष्यतिजानकी ॥ ४४ ॥

अपनेको सोनेका मानने लगे ॥३९॥ हनुमानूजी, शत २ किंकिणियोंके शब्दसे निनादित समस्त रमणीक स्वर्णवृक्षोंको वायुसे कंपित देख अतिविस्मयको प्राप्त हुए ॥ ४० ॥ सुन्दर पुष्पवाले नवीन अंकुर, व नये पत्रोंसे युक्त दीप्तिमान् उन सब वृक्षोंमेंसे उस शिंशपापर चढकर पत्तोंमें बैठे विचारने लगे ॥४१॥ वैदेही जानकीजी गाढे दुःखसे व्याकुल होकर श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनकी लालसा लगाये इधर उधर घूमती घामती अपनी इच्छाके अनुसार यहांपर आवेगी तबही हम उनके दर्शन पावेंगे ॥ ४२ ॥ चन्दन चम्पा और बकुलके वृक्षोंसे सुशोभित दुरात्मा रावणका यही अशोक बन होगा ॥४३॥ पक्षीकुल विराजित, यह पद्मसरोवर भी

यहांपरविराजता है, राजरानी जानकीजीभी निश्चयही इस सरोवरपर आवेंगी ॥४४॥ जानकीजी श्रीरामचन्द्रजी की प्यारी भार्या हैं, इसलिये वह सदाही वन विचरण करनेमें कुशल हैं; इस कारणसे वह अवश्यही यहां पर आवेंगी।॥४५॥अथवा वनविचरणप्रिया मृगशावकनयनी जानकीजी अशोकवनके आशयको भली भाँति जानती हैं वह श्रीरामचन्द्रजीकी चिन्तासे व्याकुलहोकर अवश्यही इस समय उद्यानमें आवेंगी।॥४६॥या वामलोचना सीताजी सदाही वनमें घूमनेको प्रिय समझती हैं, इसलिये ज्ञातहोता है कि, श्रीरामचन्द्रजीके शोकसे सन्तापित होनेपर भीवह अभी इस वनमें आवेंगी।॥४७॥श्रीरामचन्द्रजीकी प्यारी भार्या पतिव्रता जनककुमारी सीताजी पहले वनचर मृग पक्षियोंको बहुत प्रिय समझती थीं ॥ ४८ ॥ इस समय सबेरा होनाही चाहता है श्यामांगी जानकीजीकी निष्ठा

सारामाराजमहिषीराघवस्यप्रियासदा ॥ वनसंचारकुशलाध्रुवमेष्यतिजानकी ॥४५॥ अथवामृगशावक्षीवनस्यास्यविचक्षणा।।वनमेष्यतिसाऽद्येहरामचिंतासुकर्शिता ॥४६॥ रामशोकाभिसंतप्तासादेवीवामलोचना ॥ वनवासरतानित्यमेष्यतेवनचारिणी॥४७॥वनेचराणांसततंनूनंस्पृहयतेपुरा॥रामस्यदयिताचार्याजनकस्यसुतासती ॥४८॥ संध्याकालमनाःश्यामाध्रुवमेष्यतिजानकी ॥ नदींचेमांशुभजलांसंध्यार्थेवरवर्णिनी ॥४९॥ तस्याश्चाप्यनुरूपेयमशोकवनिकाशुभा ॥ शुभायाःपार्थिवेंद्रस्यपत्नीरामस्यसंमता ॥५०॥ यदिजीवतिसादेवीताराधिपनिभानना ॥ आगमिष्यतिसाऽवश्यमिमांशीतजलांनदीम् ॥५१॥ एवंतुगत्वाहनुमान्महात्माप्रतीक्षमाणोमनुजेंद्रपत्नीम् ॥ अवेक्षमाणश्चददर्शसर्वंसुपुष्पिते पर्णघनेनिलीनः ॥५२॥ इ० श्रीमद्वा० वा० आदि० सा० सुन्दरकांडेचतुर्दशःसर्गः ॥१४॥ सवीक्षमाणस्तत्रस्थोमार्गमाणश्चमैथिलीम् ॥ अवेक्षमाणश्चमहींसर्वांतामन्ववैक्षत ॥ १ ॥

प्रातःकालके कर्त्तव्य स्नानादिमें है, इसलिये वह वरवर्णिनी प्रातःकालकी सन्ध्या (भजनस्मरण) करनेके लिये इस निर्मल नीरवाली नदीपर आवेंगी ॥४९॥वह राजकन्या हैं औरराजेन्द्र श्रीरामचन्द्रजीकी अनुरूप भार्याहैं, इसलिये यह पवित्र अशोकवन भी सब प्रकारसे उनकेअनुरूप है॥५०॥चन्द्रमुखी वह देवी जानकीजी यदि जीवित हैं, तो वह शीतल जलवाली इस नदीपर अवश्यही आगमन करेंगी ॥५१॥ महात्मा हनुमान्जी इस अशोकवनमें गमन करके इस प्रकार सीताजीकी बाट जोहते हुए उस सघन पत्तेवाले सुन्दर पुष्पसम्पन्न शिंशपाके वृक्षमें छिपे रहकर सब कुछ देखने भालने लगे ॥ ५२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥ हनुमान्जीने इस वृक्षपर टिके हुए चारों ओर निहार, सीताजीका खोज करनेके लिये

वहांकी सब पृथ्वी और समस्त अशोक वन देखा ॥ १ ॥ वह वन कल्पवृक्षकी लताओं और वृक्षोंसे शोभायमान; सुगन्धित दिव्य रसोंसे सम्पन्न, सब ओरसे सुभूषित ॥ २ ॥ वह वन नन्दनवनके समान प्रकाशमान मृगपक्षियोंसे परिपूर्ण अटा अटारी राजमंदिरोंसे सघन कोकिलाओंके शब्दसे शब्दायमान था ॥३॥ वापियें सुवर्णमय उत्पल और कमलफूलोंको धारण कियेशोभा विस्तार कररही हैं बहुत सारे किनारे पर मंदिर बनें हैं वे ऊनी वस्त्रोंके आसनोंसे शोभित हैं ॥ ४ ॥ वन्य भूमि गृह और ऋतुओंके फूल व फलयुक्त वृक्ष वहां शोभायमान हो रहे थे, फूले हुए अशोक वृक्षोंकी कान्तिसे मानो सूर्योदयकी प्रभा फैल रही है॥५॥हनुमान्‌जीने वहां टिककर देखा कि, वारबार कूदते हुए पक्षी गिर २ करऔर पुष्पोके गहनोंसे भूषित होकर वृक्षोंके पत्ते ढकरहे हैं इससे ऐसा ज्ञात

संतानकलताभिश्चपादपैरुपशोभिताम् ॥ दिव्यगंधरसोपेतांसर्वतःसमलंकृताम् ॥ २ ॥ तांसनंदनसंकाशांमृगपक्षिभिरावृताम् ॥ हर्म्यप्रासादसंबाधांकोकिलाकुलनिःस्वनाम् ॥३॥ कांचनोत्पलपद्माभिर्वापीभिरुपशोभिताम् ॥ बह्वासनकुथोपेतांबहुभूमिगृहायुताम् ॥ ४ ॥ सर्वर्तुकुसुमैरम्यैःफलवद्भिश्चपादपैः ॥ पुष्पितानामशोकानांश्रियासूर्योदयप्रभाम्॥५॥प्रदीप्तामिवतत्रस्थोमारुतिःसमुदैक्षत॥ निष्पत्रशाखांविहगैःक्रियमाणामिवासकृत् ॥६॥ विनिष्पतद्भिःशतशश्चित्रैःपुष्पावतंसकैः ॥ समूलपुष्परचितैरशोकैःशोकनाशनैः ॥७॥ पुष्पभारातिभारैश्चस्पृशद्भिरिवमेदिनीम्॥ कर्णिकारैःकुसुमितैःकिंशुकैश्चसुपुष्पितैः ॥८॥ सदेशप्रभयातेषांप्रदीप्तइवसर्वतः॥पुन्नागाःसप्तपर्णाश्चचंपकोद्दालकास्तथा॥९॥ विवृद्धमूलाबहवःशोभंतेस्मसुपुष्पिताः ॥ शातकुंभनिभाःकेचित्केचिदग्निशिखाप्रभाः॥१०॥नीलांजननिभाःकेचित्तत्राशोकाःसहस्रशः॥नंदनंविबुधोद्यानंचित्रंचैत्ररथंयथा ॥ ११ ॥ अतिवृत्तमिवाचिंत्यंदिव्यंरम्यश्रियायुतम् ॥ द्वितीयमिवचाकाशंपुष्पज्योतिर्गणायुतम् ॥ १२ ॥

होता था कि, मानो वृक्ष पत्तोंसे रहित होगये हैं ॥६॥ चित्र विचित्र पुष्पोंको कर्णभूषण बनाये शोक नाशकारी सैकडों अशोकोंके वृक्षोंसे शोभित॥७॥ जो अशोक कि, फूलोंके भारसे झुककर मानो पृथ्वीको छुएही लेते थे, ऐसे अशोक, व फले हुए कर्णिकार औरटेटूके वृक्षोंकी॥८॥कान्तिसे वह स्थान मानो सब ओरसे प्रदीप्त हो रहाथा, शत २ पुन्नाग, शतवारी, चम्पा, उद्दालक आदि वृक्ष ॥९॥ और बहुत फूले फले बडे २ वृक्षोंके समूह वहां शोभायमान हो रहेथे इनमें कोई वृक्ष सुवर्णके रंगके कोई अग्नि सम वर्णके॥१०॥कोई नील अंजनकी नाईं वर्णवाले इन वृक्षोंमें अशोकके वृक्ष तो वहां हजारोंही थे बहुत सारे अशोकवृक्षोंके रहनेके कारणसेही इस वाटिकाका नाम अशोकवाटिका या अशोकवन पडाथा यह वन नन्दनवनके समान आनंदजनक और कुबेरजीके चैत्ररथवनकेसमान विचित्र था॥११॥और नन्दन कानन और चैत्ररथ वन दोनों वनको नांघ गया था । अचिन्त्य रमणीय श्रीमान् यह दिव्य अशोक वन पुष्परूप तारागणोंसे

व्याप्त होकर दूसरे आकाशके समान शोभायमान हो रहा था ॥१२॥ सैकडों सैकडों हजारों पुष्प रत्नोंके रहनेसे जान पडता मानो यह पंचम सागर है सर्वऋतु ओंके कुसुम युक्त वृक्ष इस वाटिकाकी शोभाको बढा रहे थे॥१३॥ और विविध भाँतिके मृगपक्षियोंने अपने शब्दसे उसको परम रमणीय कर रक्खा था अनेक प्रकारकी सुगंधि इस वाटिकामें आय रही थी इसलिये पुण्य गन्धिवाला यह वन मनोहर हो रहा था॥१४॥ इस अशोकवाटिकामें वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जीने बहुत दूरपर दूसरे गन्धमादनके समान गन्ध सम्पन्न ॥ १५ ॥ हिमाचलके समान ऊंचा गोल आकारवाला एक मंदिर देखा । जो कैलासके समान श्वेत और इस मंदिरमें सहस्रों खंभे लगे हुए थे॥१६॥ उसकी सब सीढियाँ मूँगोंकी बनी हुई थीं और वेदियां यहांपर तपाये हुए सुवर्णकी बनी थीं यह मंदिर ऐसा प्रकाशमान

पुष्परत्नशतैश्चित्रंपंचमंसागरंयथा ॥ सर्वर्तुपुष्पैर्निचितंपादपैर्मधुगंधिभिः ॥ १३ ॥ नानानिनदैरुद्यानंरम्यंमृगगणद्विजैः ॥ अनेकगंधप्रवहंपुष्पगंधंमनोहरम् ॥१४॥ शैलेंद्रमिवगंधाढ्यंद्वितीयंगंधमादनम् ॥ अशोकवनिकायांतुतस्यांवानरपुंगवः ॥१५॥ सददर्शाविदूरस्थंचैत्यप्रासादमूर्जितम् ॥ मध्येस्तंभसहस्रेणस्थितंकैलासपांडुरम् ॥ १६ ॥ प्रवालकृतसोपानंतप्तकांचनवेदिकम् ॥ मुष्णंतमिवचक्षूंषिद्योतमानमिवश्रिया ॥ १७ ॥ निर्मलंप्रांशुभावत्वादुल्लिखंतमिवांबरम् ॥ ततोमलिनसंवीतांराक्षसीभिःसमावृताम्॥१८॥ उपवासकृशांदीनांनिःश्वसंतींपुनःपुनः ॥ ददर्शशुक्लपक्षादौचंद्ररेखामिवामलाम्॥१९॥मंदप्रख्यायमानेनरूपेणरुचिरप्रभाम् ॥ पिनद्धांधूमजालेनशिखामिवविभावसोः ॥ २०॥ पीतेनैकेनसंवीतांक्लिष्टेनोत्तमवाससा ॥ सपकामनलंकारांविपद्मामिवपद्मिनीम् ॥ २१ ॥ पीडितांदुःखसंतप्तांपरिक्षीणांतपस्विनीम् ॥ ग्रहेणांगारकेणवपीडितामिवरोहिणीम् ॥ २२ ॥ अश्रुपूर्णमुखींदीनांकृशामनशनेनच ॥ शोकध्यानपरांदीनांनित्यदुःखपरायणाम् ॥ २३ ॥

हो रहाथा मानों नेत्रोंकी ज्योतिको हरण किये लेता था॥१७॥श्वेतवस्त्रोंकी अधिकाईसे यह मानों आकाशको छुये लेता था ऐसे उस मंदिरमें बैठी हुई मलिनवस्त्रधारणकिये राक्षसियोंसे घिरी हुई ॥१८॥ उपवास करनेसे दुर्बलवदन, दीनवदन, बारबारश्वासोंलेती शुक्लपक्षवाली प्रतिपदाकी चन्द्ररेखाके समान सूक्ष्ममूर्ति सीताजीको पवनतनय हनुमान्‌जीने देखा ॥१९॥ रुचिर कान्तियुक्त सीताजीका रूप देखकर जो धुवेंसे ढकी हुई अग्निकी शिखाके समान अति कष्टसे अनुमान करनेकेयोग्य था॥ २०॥ वहएक पुराना पीले वर्णका उत्तमवस्त्र पहरनेऔर गहने रहित होनेसे कमलके विनामलीन हुईकमलिनीके समान श्रीहीनहोगईथी॥२१॥ वहपतिव्रता जानकीजी दुःखसे संतापित पीडित और अतिशयदुर्बल होकर केतुग्रहसे सताई हुई रोहिणीके समानमन्द प्रकाशित होरही थी॥२२॥ शोक और

चिंताकेवशहोनेसे सदादुःखभोगव उपवासकरनेके कारण अतिव्याकुल होनेसे नेत्रोंसे आंसुओंकी धारा बहरहीथी औरवहबहुत दुबली होगई थीं॥२३॥उनकी दृष्टिकेवल राक्षसियोंपर पडती थी परन्तु वह अपने प्रियजन श्रीरामलक्ष्मणको न देखकर,अपने झुंडसे बिछुड कुत्तोंके झुंडसेघिरी हरिणीके समान त्रासितऔर व्याकुल होरहीथीं ॥२४॥ कालेसर्पकेसमान लंबीचोटी पीठपरपडीऐसीशोभितहोरही थींमानो वर्षाकेबीतजानेपर पृथ्वीनीलवर्णकी वनराजिसेपूरितहोकरशोभाय मानहोरहीथी ॥ २५ ॥ वह केवल सुखहीभोग करनेके योग्य, जो कभी किसी दुःखकानामतक न जानतीथी; वहइससमय दुःखसे बहुतही सताई गई हैं।हनुमा नूजीनेउन दुर्बल अंगवालीमलिन सीताजीको देख ॥ २६ ॥ विचार करके अनेककारण स्थिर कियेकि, यही सीताहैं, क्योंकी कामरूपी राक्षसराज सीता जीकोहरण किये आताथा ॥२७॥ उससमय जैसाहमने सीताजीका रूपदेखा थाउनकेही समान इसस्त्रीकारूप हम देखतेहैं क्योंकि पूर्णचन्द्रवदनी गोलपयोधर

प्रियंजनमपश्यंतींपश्यंतींराक्षसीगणम् ॥ स्वगणेनमृगींहीनांश्वगणेनावृतामिव ॥२४॥ नीलनागाभयावेण्याजघनंगतयैकया॥ नीलयानीरदा पायेवनराज्यामहीमिव ॥२५॥ सुखार्हांदुःखसंतप्तांव्यसनानामकोविदाम् ॥ तांविलोक्यविशालाक्षीमधिकंमलिनांकृशाम् ॥२६॥ तर्कयामा ससीतेतिकरणैरुपपादिभिः ॥ ह्रियमाणातदातेनरक्षसाकामरूपिणा ॥२७॥ यथारूपाहिदृष्टासातथारूपेयमंगना॥ पूर्णचन्द्राननांसुभ्रूंचारुवृ त्तपयोधराम् ॥२८॥ कुर्वंतींप्रभयादेवींसर्वावितिमिरादिशः ॥ तांनीलकंठींबिंबोष्ठींसुमध्यांप्रतिष्ठिताम् ॥ २९ ॥ सीतांपद्मपलाशाक्षींमन्मथ स्यरतिंयथा ॥ इष्टांसर्वस्यजगतःपूर्णचंद्रप्रभामिव ॥ ३० ॥ भूमौसुतनुमासीनांनियतामिवतापसीम् ॥ निःश्वासबहुलांभीरुंभुजगेंद्रवधूमिव ॥३१॥ शोकजालेनमहताविततेननराजतीम् ॥ संसक्तांधूमजालेनशिखामिवविभावसोः ॥३२॥ तांस्मृतीमिवसंदिग्धामृद्धिंनिपतितामिव ॥ विहतामिवचश्रद्धामाशांप्रतिहतामिव ॥ ३३ ॥

युक्त सुंदर भ्रुकुटिवाली यह अबलाहै ॥२८॥ अपनी देहकी कान्तिसेमानो इसनेसब दिशाओंका अंधकार नाशकर दिया है । इसकाकण्ठ इन्द्रनील मणिकी प्रभाकेसमान नील वर्ण है, अधर बिंबाफलके समान लाल हैं; मध्य देश सुशोभित और सबही अंग सुडौल हैं ॥२९॥ कमलदललोचनी सीतामानो साक्षात् मदनकी रतिऔर पूर्णचन्द्रकी चांदनीके समान मानों सब जगतकी इष्ट हैं ॥ ३० ॥ वह श्रेष्ठस्तनवाली नियमवाली तपस्विनीके समान पृथ्वीपर बैठी हुई हैं, और डरी हुईसर्पराज वधूके समान बहुत सांसें लेरहीहैं ॥३१॥ बडेभारी शोककेजालमें पडनेसेअब इनकीवह शोभानहींहै, मानों अग्निकीशिखा धुयेंके समूहमें छिपरही है॥३२॥ इनकीअवस्था स्पष्टार्थ स्मृतिकी नांई, अन्यायसे हरणकीहुई सम्पत्तिकीनांई. नास्तिकबुद्धिसे हरी हुईश्रद्धाकी नांई, टूटगई हुई आशाकी

नाईं ॥ ३३ ॥विघ्नोंके समूहसे पूरी सिद्धिकी नांई, कलंकित बुद्धिके समान, और मिथ्या कलंकसेग्रसी कीर्तिकी नांई अतिशय प्रभाहीन और शोचनीय है ॥ ३४ ॥श्रीरामचन्द्रजीकी सेवामें बाधा पडनेसे यह अबला दुःखित हुई हैं, उसके ऊपरफिर राक्षसियोंकेपीडन करनेसेमृगशावक नयनी चंचलतासे इधरउधर देख रही हैं ॥ ३५ ॥ सीताजीके काले और सुकडे आखोंके बालसे शोभित आँसुओंके जलसे परिपूर्ण अप्रसन्नवदनसे क्षण २ में लम्बे २ श्वास निकल रहे हैं ॥ ३६ ॥ यह गहने पहरनेके योग्यहैं, परन्तु इस समय कोई भूषण नहीं पहर रही हैं, इस समय इन्होंने मैलकी कीचड शरीरमें लपटाय दीनभाव धारण किया है, मानों तारानाथ चन्द्रमाकी प्रभा कालेमेघमें छिप रही हैं ॥ ३७ ॥ अभ्यासके न करनेसे शिथिल हुई विद्याके समानसीताजीकी अवस्था

सोपसर्गांयथासिद्धिंबुद्धिंसकलुषामिव ॥ अभूतेनापवादेनकीर्तिंनिपतितामिव ॥३४॥ रामोपरोधव्यथितांरक्षोगणनिपीडिताम् ॥ अबलांमृगशावाक्षींवीक्षमाणांततस्ततः॥३५॥बाष्पांबुपरिपूर्णेनकृष्णवक्राक्षिपक्ष्मणा॥ वदनेनाप्रसन्नेननिःश्वसंतींपुनःपुनः॥३६॥मलपंकधरादीनांमंडनार्हाममंडिताम् ॥ प्रभांनक्षत्रराजस्यकालमेघैरिवावृताम् ॥३७॥ तस्यसंदिदिहेबुद्धिस्तथासीतांनिरीक्ष्यच॥ आम्नायानामयोगेनविद्यांप्रशिथिलामिव ॥ ३८ ॥ दुःखेनबुबुधेसीतांहनुमाननलंकृताम् ॥ संस्कारेणयथाहीनांवाचमर्थांतरंगताम् ॥ ३९ ॥ तांसमीक्ष्यविशालाक्षींराजपुत्रीमनिंदिताम् ॥ तर्कयामाससीतेतिकारणैरुपपादयन् ॥४०॥ वैदेह्यायानिचांगेषुतदारामोन्वकीर्तयत् ॥ तान्याभरणजालानिगात्रशोभीन्यलक्षयत् ॥ ४१ ॥ सुकृतौकर्णवेष्टौचश्वदंष्ट्रौचसुसंस्थितौ ॥ मणिविद्रुमचित्राणिहस्तेष्वाभरणानिच ॥ ४२ ॥ श्यामानिचिरयुक्तत्वात्तथासंस्थानवंतिच ॥ तान्येवैतानिमन्येऽहंयानिरामोऽन्वकीर्तयत् ॥ ४३ ॥

देखकर हनुमानजीके मनमें संदेह उत्पन्न हुआ ॥३८॥हनुमानजीने सीताजीको अलंकारहीन देखकर व्याकरण संस्कारहीन अर्थान्तर प्रतिपादकवाक्यके समान बडी कठिनाईसे जाना ॥३९ ॥ अनिन्दित रूपवाली विशालनयनराजकुमारी सीताजीको देखकर हनुमानजी अनेक हेतु निश्चय करके तर्क वितर्क करने लगे उन्होंने विचाराकि, क्यायही सीताजी हैं ॥४०॥ हनुमानजीके आनेकेसमय श्रीरामचन्द्रजीने वैदेहीजीके गात्रमें शोभित जिस२गहनेका वर्णन कियाथा,सीताजीके अंगमें उन सब गहनोंको हनुमानजी देखने लगे कि, वह गहने इनके अंगोंमेंहैं अथवा नहीं ? ॥ ४१ ॥ उन्होंने मनमें विचारा कि, श्रेष्ठ बने हुए यह कुण्डलसुन्दर रूपसे टिकी हुई यह दोनों चिकर्णिकार और मूँगे मणियोंसे बने यह हाथकेगहने॥४२॥ यद्यपि बहुत दिनोंके धारणकरने और न मांजनेसे और

न धोनेसेमलीन होगयेहैं; परन्तुजैसे श्रीरामचन्द्रजीने बतायेहैं, वैसेही हैं, इससे अवश्यजानकीजी यही हैं॥४३॥ इन गहनोंमें हम केवल उन्हीं गहनोंको नहीं देख पातेकि जो ऋष्यमूक पर्वतपर गिरेथे, परन्तु जोनहीं गिरेवह समस्त निःसन्देह यही हैं॥४४॥ इनमेंका जोसुवर्णमय तारोंसे बनाहुआ पीत वर्णकादुपट्टा खसक करपर्वत पर गिराथा, उस कालमें सबही वानरोंने उसको देखाथा ॥ ४५ ॥ उन सबवानरोंने यहभी देखा था कि, बडे २ मोलके श्रेष्ठ गहने शब्द करते हुये पृथ्वीपरगिरे थे ॥४६॥ बहुत दिनोंसे धारणकिये रहनेके कारण इनके पहरनेका वस्त्रपुराना होगया है तथापि वह डुपट्टाजो गिराथा उससे अधिक इसके वर्णमें अभीकसरनहीं आई है ॥४७॥ जोसन्मुख न होनेपर भीश्रीरामचन्द्रजीके मनसेकहीं औरनहीं जाती, यह सुवर्णकी कान्तिवाली श्रीरामचन्द्रजीके वही प्यारी रानी हैं॥४८॥स्नेह, दया, शोकऔर मदन जिनकेलिये श्रीरामचन्द्रजी इन चारोंसेबहुतही सन्तापित होरहे हैं, निश्चय यहवही हैं ॥४९ ॥ स्त्री

तत्रयान्यवहीनानितान्यहंनोपलक्षये॥यान्यस्यानावहीनानितानीमानिनसंशयः॥४४॥पीतंकनकपट्टाभंस्रस्तंतद्वसनंशुभम्॥उत्तरीयंनगासक्तं दादृष्टंप्लवंगमैः॥४५॥भूषणानिचमुख्यानिदृष्टानिधरणीतले॥अनयैवापविद्धानिस्वनवंतिमहांतिच॥४६॥इदंचिरगृहीतत्वाद्वसनंक्लिष्टवत्तरम्॥ तथाप्यनूनंतद्वर्णंतथाश्रीमद्यथेतरत्॥४७॥इयंकनकवर्णांगीरामस्यमहिषीप्रिया॥प्रनष्टापिसतीयस्यमनसोनप्रणश्यति॥४८॥इयंसायत्कृतेराम श्चतुर्भिरिहतप्यते॥कारुण्येनानृशंस्येनशोकेनमदनेनच॥४९॥स्त्रीप्रनष्टेतिकारुण्यादाश्रितेत्यानृशंस्यतः॥पत्नीनष्टेतिशोकेनप्रियेतिमदनेनच ॥ ॥५०॥ तस्यादेव्यायथारूपमंगप्रत्यंगसौष्ठवम्॥ रामस्यचयथारूपंतस्येयमसितेक्षणा॥५१॥अस्यादेव्यामनस्तस्मिंस्तस्यचास्यांप्रतिष्ठितम्॥ तेनेयंसचधर्मात्मामुहूर्तमपिजीवति॥५२॥दुष्करंकृतवान्रामोहीनोयदनयाप्रभुः॥धारयत्यात्मनोदेहंनशोकेनावसीदति॥५३॥एवंसीतांतथादृष्ट्वा हृष्टःपवनसंभवः॥जगाममनसारामंप्रशशंसचतंप्रभुम्॥५४॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आ०च०सा०सुन्दरकांडे पंचदशःसर्गः॥१५॥

हरण होगई इसकारणस्नेह, आश्रित जनकीरक्षा न करपाई, इसलिये दया, भार्याका पतानहीं लगता, इसलिये शोक, और प्रियाके अलग होनेसे कामदेवका सताना यहचार उनको जलाये डालते हैं ॥५०॥ इन देवीका जिस प्रकारका रूप लावण्य और अंग प्रत्यंगकी सुन्दरता है, औरा श्रीरामचन्द्रजीके रूपसे जिस प्रकार इनकी कान्तिमिलतीहै; इससे तौयह राजकुमारी श्रीरामचन्द्रजीकी ही रानी जान पडती हैं ॥५१ ॥इन देवीका मन उनमें औरउनका मन इन देवीमें टिका हुआहै इसीलिये यह और वेधर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी अबतक जीवित हैं ॥५२॥इनकेविरहमें प्रभु श्रीरामचन्द्रजीजो शोकसे व्याकुल न होकर प्राणोंको धारण कर रहे हैं; यह बडा कठिनकार्य है इसमें कोई सन्देह नहीं ॥५३॥ गुणवती सीताजीको हनुमानजी वहाँ देखकर हर्षित चित्त हो मनहीसे श्रीरामचंद्र जीके निकट पहुँच गये और इनप्रभुकीस्तुति करने लगे ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥

वानर श्रेष्ठ हनुमानूजी प्रशंसाभाजन सीताजीके और गुणाभिराम श्रीरामचन्द्रजीकेगुण कीर्तन करके फिर चिंता करने लगे ॥ १ ॥ एक क्षण भर चिंता कर तेजस्वी हनुमानूजी नेत्रोंमें जल भरकर सीताजीके आश्रित हो विलाप करने लगे ॥२॥हनुमानूजी बोले कि; माननीया सुशिक्षित और विनीत लक्ष्मणकी गुरु पत्नी होकर भी जब सीताजीको दुःखसेव्याकुल होनापडा है, तब अवश्यही कहाजा सकताहै कि, कालको उल्लंघन करना दुःसाध्य है॥३॥ यह देवी श्रीराम चन्द्रजी व लक्ष्मणके पराक्रमको भलीभांति जानतीहैं; इसी कारण वर्षाकालीन गंगाजीकेसमान यहवहुत अधीर नहीं होतीं ॥४॥ स्वभाव, यश, चरित्र, कुल और अच्छे लक्षणोंसे जानकीजी श्रीरामचन्द्रजीहीके योग्यहैं, और वे इनके, इसलिये परस्पर एक दूसरे का मन भलीभांति लगाहुआ है॥५॥फिरसुवर्णके समान

प्रशस्यतुप्रशस्तव्यांसीतांतांहरिपुंगवः ॥ गुणाभिरामंरामंचपुनश्चितापरोऽभवत् ॥१॥ सम्मुहूर्तमिवध्यात्वाबाष्पपर्याकुलेक्षणः ॥ सीतामाश्रि
त्यतेजस्वीहनूमान्विललापह ॥ २ ॥ मान्यागुरुविनीतस्यलक्ष्मणस्यगुरुप्रिया ॥ यदिसीताहिदुःखार्ताकालोहिदुरतिक्रमः ॥ ३ ॥ रामस्य
व्यवसायज्ञालक्ष्मणस्यचधीमतः ॥ नात्यर्थंक्षुभ्यतेदेवीगंगेवजलदागमे ॥४॥ तुल्यशीलवयोवृत्तांतुल्याभिजनलक्षणाम् ॥ राघवोऽर्हतिवैदेहीं
तंचेयमसितेक्षणा ॥ ५ ॥ तांदृष्ट्वानवहेमाभांलोककांतामिवश्रियम् ॥ जगाममनसारामंवचनंचेदमब्रवीत् ॥६॥ अस्याहेतोर्विशालाक्ष्याहतो
वालीमहाबलः ॥ रावणप्रतिमोवीर्यैकबंधश्चनिपातितः ॥ ७ ॥ विराधश्चहतःसंख्येराक्षसोभीमविक्रमः ॥ वनेरामेणविक्रम्यमहेंद्रेणेवशंबरः
॥ ८ ॥ चतुर्दशसहस्राणिरक्षसांभीमकर्मणाम् ॥ निहतानिजनस्थानेशरैरग्निशिखोपमैः ॥ ९ ॥ खरश्चनिहतःसंख्येत्रिशिराश्चनिपातितः ॥
दूषणश्चमहातेजारामेणविदितात्मना ॥ १० ॥ ऐश्वर्यंवानराणांचदुर्लभंवालिपालितम् ॥ अस्यानिमित्तेसुग्रीवःप्राप्तवाँल्लोकविश्रुतः ॥ ११ ॥
सागरश्चमयाक्रांतःश्रीमान्नदनदीपतिः ॥ अस्याहेतोर्विशालाक्ष्याःपुरीचेयंनिरीक्षिता ॥ १२ ॥

वर्णवाली लक्ष्मीके समान लोकानन्ददायिनी, उन सीताजीका दर्शन करके हनुमानूजी मनही मनमें श्रीरामचन्द्रजी को स्मरण करते हुए बोले ॥६॥ इन विशा लाक्षी सीताजीके लिये ही महाबलवान् वाली और रावण के समान वीर्यवान् कबंध मारा गया ॥ ७ ॥जिस प्रकार इन्द्रजीने शम्बर असुर का नाश कियाथा, वैसेही वनमें विक्रम प्रकाश करके श्रीरामचन्द्रजी इन जानकीजीके लिये भयंकर विक्रमवान् विराध राक्षसको मारडाला ॥ ८ ॥ जनस्थान में भयंकर कर्मकारी चौदह हजार राक्षस अग्निकी शिखाके तुल्य बाणोंके समूहसे इनके निमित्तही मार डाले गये ॥९॥ महात्मा श्रीरामचन्द्रजी ने इनकेही लिये रणमें खर, त्रिशिरा और महातेजस्वी दूषणका संहारकिया ॥१०॥लोकविख्यात सुग्रीवजीने इन्हींके लिये वानर गणोंके ऊपर वालिपालित दुर्लभ प्रभुतापाई है ॥११॥हमने भी इन

विशालाक्षी जानकीजीके ही लिये ढूँढनेके, अर्थ,नदनदीपति श्रीमान् समुद्रको उल्लंघन किया, और लंकापुरी देखी ॥ १२ ॥ औरइनके लिये श्रीरामचन्द्रजी सागर सहितयह पृथ्वीऔर समस्तजगत् भी ढूँढडाले, तो मेरेविचारमें यहभी ठीकही होगा ॥१३॥ त्रिलोकीका राज्य, और जनकनन्दिनी सीताजी इन दोनोंकीयदि समानताकी जाय, तो त्रिलोकी का राज्यसीताजीके शत अंशकाभी तोएकभाग न हो ॥१४॥ क्योंकि मिथिलेश्वर, धर्मशील,महात्माजनकजीकी पुत्री यहदृढ पतिव्रता सीताजी ॥१५॥ पद्मरेणुके समान खेतकी धूरिसे ढकी हुईहलकी अनीद्वारा जुतेहुए खेतसे पृथ्वीको भेदकर निकलआईथीं ॥१६॥ फिर यह श्रेष्ठ स्वभाववाली महा विक्रम शाली जो कभी संग्राममेंसे नहीं निवृत्त होते उन राजा दशरथजीकी यशस्विनी बडी पुत्रवधू हुई ॥१७॥ यहवही धर्मज्ञ,

यदिरामःसमुद्रांतांमेदिनींपरिवर्तयेत्॥अस्याःकृतेजगच्चापियुक्तमित्येवमेमतिः। १३॥राज्यंवात्रिषुलोकेषुसीतावाजनकात्मजा॥त्रैलोक्यराज्यंसकलंसीतायानाप्नुयात्कलाम् ॥ १४ ॥ इयंसाधर्मशीलस्यजनकस्यमहात्मनः ॥ सुतामैथिलराजस्यसीताभर्तृदृढव्रता ॥ १५ ॥ उत्थितामेदिनींभित्त्वाक्षेत्रे हलमुखक्षते ॥ पद्मरेणुनिभैःकीर्णाशुभैःकेदारपांसुभिः ॥ १६ ॥ विक्रांतस्यार्यशीलस्यसंयुगेष्वनिवर्तिनः ॥ स्नुषादशरथस्यैषाज्येष्ठाराज्ञोयशस्विनी ॥ १७ ॥ धर्मज्ञस्यकृतज्ञस्यरामस्यविदितात्मनः ॥ इयंसादयिताभार्याराक्षसीवशमागता ॥ १८ ॥ सर्वान्भोगान्परित्यज्यभर्तृस्नेहबलात्कृता ॥ अचिंतयित्वाकष्टानिप्रविष्टानिर्जनंवनम् ॥१९॥ संतुष्टाफलमूलेनभर्तृशुश्रूषणापरा ॥ यापरांभजतेप्रीतिंवनेऽपिभवनेयथा ॥ २० ॥ सेयंकनकवर्णांगीनित्यंसुस्मितभाषिणी ॥ सहतेयातनामेतामनर्थानामभागिनी ॥ २१ ॥ इमांतुशीलसंपन्नांद्रष्टुमिच्छतिराघवः॥रावणेनप्रमथितांप्रपामिवपिपासितः॥२२॥अस्यानूनंपुनर्लाभाद्राघवःप्रीतिमेष्यति॥राजाराज्यपरिभ्रष्टःपुनःप्राप्येवमेदिनीम् २३॥

कृतज्ञ,आत्मज्ञ, श्रीरामचन्द्रजीकी प्यारीभार्या अब राक्षसियोंके वशमें पडीहैं ॥१८॥ यह अपनेस्वामीके स्नेहमें बँधकर सर्व भोगोंको त्याग, किसीकष्टकेऊपर दृष्टि न देकर निर्जनवनमें चली आई ॥ १९ ॥ औरअपने स्वामीकी सेवाकरती हुईकंद मूल फलकेही भोजनसे सन्तुष्ट रहगृहके समान वनमेंभी अतुल प्रीति प्राप्त करती हैं ॥२१॥ यद्यपि सुशीला सीताजी रावणकरके अतिशय पीडितहो, प्यासेआदमि योंसेमर्दितकी हुई पौशालाके समान श्रीहीन होगईहैंतथापि श्रीरामचन्द्रजी इनको देखनेके लिये बहुतहीं अभिलाषा किये हुए हैं॥२२॥ नष्ट राज्यको प्राप्त करकेराजाजिस प्रकारसेआनंदित होताहै, उसहीप्रकार इनको फिरपाय करके

श्रीरामचन्द्रजी निश्चय अतिशय प्रसन्नहोंगे ॥२३॥ यह भी सब प्रकारके भोगोंसेऔर बन्धुबान्धवोंसे रहित होकर, श्रीरामचन्द्रजीके मिलनेकी वासनासे अपनी देहको धारण किये हुए हैं ॥२४॥ इन राक्षसियोंको औरइनसमस्त फलवृक्षों कोनिश्चयही जानकी कुछ भी नहीं देखती, यहतो एकमनसे केवल श्रीरामचन्द्रजी काहीध्यान करती है॥२५॥स्त्रियोंके लिये स्वामीही गहनेसे बढ़करसुन्दरताका उपजानेवालाहै, इसीकारणसे श्रीरामचन्द्रजीके विरहमें सीताजी रूपवती होकरभी शोभायमाननहीं होती ॥२६॥ प्रभुश्रीरामचन्द्रजी जोइनके विरह में शोकसे व्याकुल न होकर प्राण धारण करते हैं, इससे तो वह निश्चयही अति कठिनकार्य कररहे हैं॥२७॥ यह वही कृष्णकेशवाली कमल दल नेत्रा सुख भोगनेकेयोग्य होकर भी जो भोग कर रही हैं, इससे हमारे मनको भी बहुत दुःख हो रहाहै

कामभोगैः परित्यक्ताहीनाबंधुजनेनच ॥ धारयत्यात्मनोदेहंतत्समागमकांक्षिणी ॥२४॥ नैषापश्यतिराक्षस्योनेमान्पुष्पफलद्रुमान्॥ एकस्थहृदयानूनंराममेवानुपश्यति ॥ २५ ॥ भर्तानामपरंनार्याःशोभनंभूषणादपि ॥ एषाहिरहितातेनशोभनार्हानशोभते ॥२६॥ दुष्करंकुरुतेरामोहिनोयदनयाप्रभुः ॥ धारयत्यात्मनोदेहंनदुःखेनावसीदति ॥ २७ ॥ इमामसितकेशांतांशतपत्रनिभेक्षणाम् ॥ सुखार्हांदुःखितांज्ञात्वाममापिव्यथितंमनः ॥२८॥ क्षितिक्षमापुष्करसन्निभेक्षणायारक्षिताराघवलक्ष्मणाभ्याम् ॥ साराक्षसीभिर्विकृतेक्षणाभिःसंरक्ष्यतेसंप्रतिवृक्षमूले ॥२९॥ हिमहतनलिनीवनष्टशोभाव्यसनपरंपरयानिपीड्यमाना ॥ सहचररहितेवचक्रवाकीजनकसुताकृपणांदशांप्रपन्ना॥३०॥अस्याहिपुष्पावनताग्रशाखाःशोकंदृढंवैजनयंत्यशोकाः ॥ हिमव्यपायेनचशीतरश्मिरभ्युत्थितोनैकसहस्ररश्मिः ॥ ३१ ॥ इत्येवमर्थंकपिरन्ववेक्ष्यसीतेयमित्येवतुजातबुद्धिः ॥ संश्रित्यतस्मिन्निषसादवृक्षेबलीहरीणामृषभस्तरस्वी ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥ ततःकुमुदखंडाभोनिर्मलंनिर्मलोदयः ॥ प्रजगामनभश्चंद्रोहंसोनीलमिवोदकम् ॥ १ ॥

॥ २८ ॥ पृथ्वी के समान धीरज युक्त सीताजीकी रक्षा जो रामलक्ष्मण करतेथे आजउनकी रक्षा विकटाकारवाली राक्षसियें वृक्षके नीचे बैठी हुई कररहीहैं ॥२९॥ बार २ दुःखोंसे पीडित होनेपर पालेकीमारी हुईकमलिनीकेसमान सीताजीकी सुन्दरताई नष्टहोगईहै । जनककुमारी सीताजी प्यारे चक्रवाकसे अलग हुई चक्रवाकीके समान शोचनीय दशाकोप्राप्त हुईहैं ॥३०॥ फूलोंके भारसेझुकीहुई अशोकके आगेकी शाखायें जानकीजीका शोक और भी बढा रही हैं; यह वसन्तकालके समान हजारों किरणोंको फैलायेपाला न पडनेसे अति प्रकाशितही चन्द्रमाभी इनके शोकको बढायही रहाहै॥ ३१॥ बलशालीवानर श्रेष्ठवेगवान् हनुमान्जी इन सब बातोंका शोच विचार करते हुए, यह सीताजी हैं ऐसा निश्चय कर इसी वृक्षके ऊपर संभल सँभलाय कर बैठ गये ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० सुन्दरकांडे भाषायां षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥ इसके पीछे प्रकाशित; कुमुदशोभित; शशांक (चन्द्रमा) हंस जिस प्रकार जलके

ऊपर प्रकाशित होताहै. वैसेही निर्मलआकाशमें और ऊंचे चढकर प्रकाशित हुआ॥१॥ विशदप्रभाशाला निशापति (चन्द्रमा) सीताजीके दर्शनमेंमानों सहायताका कार्यकरतेही हुएसे हनुमानजीके ऊपर शीतल किरणें छोडने लगा॥२॥ उस समय हनुमानजीने देखाकिबडे बोझसे लदीहुई नाव जैसे जलमें डूबजातीहै; पूर्णचन्द्रवदना सीताजी भी; वैसेही शोकभारसे पीडित हो मानो जलमें डूब रही हैं ॥३॥ जानकीजीको देखते२पवनकुमार हनुमानजीने दूरबैठी हुई घोर दर्शनवाली राक्षसियोंको देखा ॥ ४ ॥ उनमें किसी२के एकही कान था किसीके एकही आँख थी; किसीके कान बहुतही बडेथे; किसीके कान बिलकुल थेहीनहीं; किसीके कान खडेथे; किसीकी नाक माथेमें लगी हुईथी ॥५॥ किसीकी देहमेंऊपरका भागअति बडा और मोटाथा किसीकी गर्दनअति पतली और लंबीथी किसीके केश मुंडे हुए थे; किसीके केशथे हीनहीं; और किसीके शरीरमें इतने रुवेंथेकि देखनेसे कम्बलसा लिपटा हुआ जान पडताथा ॥६॥ किसीके कान

साचिव्यमिवकुर्वन्सप्रभयानिर्मलप्रभः ॥ चन्द्रमारश्मिभिःशीतैःसिषेवेपवनात्मजम्॥२॥सददर्शततःसीतांपूर्णचंद्रनिभाननाम्॥शोकभारैरिव न्यस्तांभारैर्नावमिवांभसि ॥ ३ ॥ दिदृक्षमाणोवैदेहींहनूमान्मारुतात्मजः ॥ सददर्शाविदूरस्थाराक्षसीर्घोरदर्शनाः ॥ ४ ॥ एकाक्षीमेककर्णां चकर्णप्रावरणांतथा ॥ अकर्णांशंकुकर्णांचमस्तकोच्छ्वासनासिकाम् ॥५॥ अतिकायोत्तमांगींचतनुदीर्घशिरोधराम् ॥ ध्वस्तकेशींतथाकेशींकेशकंबालधारिणीं ॥ ६ ॥ लंबकर्णललाटांचलंबोदरपयोधराम् ॥ लंबोष्ठींचिबुकोष्ठींचलंबास्यांलंबजानुकाम् ॥ ७ ॥ ह्रस्वांदीर्घांचकुब्जां चविकटांवामनांतथा ॥ करालांभग्नवक्त्रांच पिंगाक्षींविकृताननाम् ॥ ८ ॥ विकृताः पिंगलाः कालीःक्रोधनाःकलहप्रियाः ॥ कालायसमहाशूलकूटमुद्गरधारिणीः ॥ ९ ॥वराहमृगशार्दूलमहिषाजशिवामुखीः ॥ गजोष्ट्रहयपादाश्चनिखातशिरसोऽपराः ॥ १० ॥

लम्बेथे; किसीकामाथा लम्बाथा, किसीका उदरलंबाथा, किसीकी छातियें लंबी थीं;किसीके अधर लम्बेथेऔर किसीकी ठोडीलम्बीथी किसी२का मुखलम्बा और किसी२की जांघें अति बडी थीं ॥७॥ कोई बहुत छोटी, कोई बहुत बडी कोईकुबडी; और कोईविकट; कोई बौनी; किसीकारंग अति भयंकर काला, किसीका मुख टूटा; किसीकीपीली आंखें; किसीका मुख बिकराल ॥८॥ कोई विरूपाकारवाली, कोई पीले वर्णवाली; कोई काले वर्णवाली; क्रोधितस्वभाव; कोई क्लेशप्रिया;व कोई लोहके महशूल;कूट और मुद्गरधारण किये हुए थीं॥९॥किसीका मुखसुअर, किसीका मृग; किसीका शार्दूल; किसीका महिष(भैंसा) किसीका अजगर और किसीका स्यारके समान मुख था।किसीके पांव ऊंटके समान किसीके गजके और किसी२के घोडेके समानथे औरकिसी२का शिर माथेमें

घुसा हुआ था॥१०॥ कोईएक हाथवाली और कोई एकही चरणवालीथी; किसीकेकान गधेके; किसीके घोडेके, किसीकेगायके किसीके हाथीकेऔर किसीके कानसिंहके कानके समानथे ॥११॥ किसीकी नाक बहुतबडी; किसीकी नाक टेढीऔर किसी २कीनाकथीही नहीं किसीकी नाक हाथीके शुण्डकेसमान और किसीके माथेमें दो दो नाकें थीं ॥१२॥ किसी२के पैर हाथीके पैरके समानथे; किसीके पाँव बहुतही बडेथे; किसीके गोपदकेतुल्यथे; किसीके चरणोंमें चूडेके समान बालोंके गुच्छेथे, किसीकी गर्दनबडी; और किसीका मस्तक बहुतहीबडा था; किसीके कुचकिसीकाउदर॥१३॥किसीका वदन और किसीके नेत्र स्व भावसे अलग बहुतहीबडेथे; किसीकी जीभऔर किसीका वदन बहुतही बडाथा कोई अजामुखी, कोईगजमुखी; कोई गोमुखी; कोई शूकरमुखी;॥१४॥ कोई घुडमुखी और कोई खरमुखी, थी. कोई राक्षसीका आकार देखनेमें अतिभयंकरथाकोई क्रोधित स्वभाव वाली और कलहप्रिया थी किसी राक्षसीके हाथमें शूलथाऔर

एकहस्तैकपादाश्चखरकर्ण्यश्वकर्णिकाः ॥ गोकर्णीर्हस्तिकर्णीश्चहरिकर्णीस्तथापराः॥११॥अतिनासाश्चकाश्चिच्चतिर्यक्च्छ्वासाअनासिकाः
गजसन्निभनासाश्चललाटोच्छ्वासनासिकाः ॥ १२ ॥ हस्तिपादामहापादागोपादाःपादचूलिकाः ॥ अतिमात्रशिरोग्रीवाअतिमात्रकुचोदरीः
॥१३॥ अतिमात्रास्यनेत्राश्चदीर्घजिह्वाननास्तथा ॥ अजामुखीर्हस्तिमुखीर्गोमुखीःसूकरीमुखीः ॥१४॥ हयोष्ट्रखरवक्त्राश्चराक्षसीर्घोरदर्शनाः ॥
शूलमुद्गरहस्ताश्चक्रोधनाःकलहप्रिया ः॥ १५ ॥ करालाधूम्रकेशिन्योराक्षसीर्विकृताननाः ॥ पिबंतिसततंपानंसुरामांससदाप्रियाः ॥ १६ ॥
मांसशोणितदिग्धांगीर्मांसशोणितभोजनाः ॥ तादद्दर्शकपिश्रेष्ठोरोमहर्षणदर्शनाः ॥ १७ ॥ स्कंधवंतमुपासीनाःपरिवार्यवनस्पतिम् ॥ तस्या
धस्ताच्चतांदेवींराजपुत्रीमनिंदिताम् ॥ १८ ॥ लक्षयामासलक्ष्मीवान्हनूमाञ्जनकात्मजाम् ॥ निष्प्रभांशोकसंतप्तांमलसंकुलमूर्धजाम्॥१९॥
क्षीणपुण्यांच्युतांभूमौतारांनिपतितामिव ॥ चारित्र्यव्यपदेशाढ्यांभर्तृदर्शनदुर्गताम् ॥ २० ॥

कोई मुद्गर धारण कियेहुए थी ॥१५॥ किसी विकट मुखवाली और भयंकर राक्षसीके बालधूमिलवर्णकेथे । वहसबही बराबर मदिरा पिया करती, औरसुरा व मांसको सदाही बहुत अच्छा समझती थीं॥१६॥ सबकेहीशरीरोंमें मांस और रुधिरलगा हुआथा क्योंकिवह बराबरमांस और रुधिरकाही आहारकरतीथीं। वानरश्रेष्ठ हनुमानजीनेइस प्रकारकी घोरदर्शनवाली राक्षसियें देखीं जिनके दर्शनसे रुयेंखडे होजातेथे ॥१७॥ यह सबउस वृक्षको सब ओरसे घेरेखडीं थींकि, जिसके ऊपर हनुमानजीविराज रहेथे, और उसी वृक्षके नीचे आनिंदिता जानकी जी बैठीथीं कि जिनकी रखवाली यहसब राक्षसियें करतीथीं॥१८॥ श्रीमानहनु मानजीने यहां पर सर्वांगसुन्दरी देवी जानकीजीको देखलिया, वह प्रभाहीनशोकसे दुर्बल थीं और उनके केशोंमें मैल छाय रहा था ॥ १९॥ मानों पुण्यक्षय

होनेसे तारा भूमिपर गिरा है वहपतिव्रता कहकर विख्यात हैं, परन्तुइस समय इनको स्वामीका दर्शन दुर्लभ हुआ है॥२०॥वह श्रेष्ठगहने कुछभीनहीं पहररही थीं, इस समयतोकेवल पतिका प्रेमही इनका इकला गहना था, राक्षसपतिरावणने उनकोरोक रक्खाथा बंधुजनभी कोई पास नहीं॥२१॥मानों अपने झुण्डसे बँधी हुई हथिनीके ऊपर सिंहने झपाटा मारा है। अथवा मानोवर्षाके अन्तमें चन्द्रमाकी रेखा शरदृऋतुके बादरसे ढक रही है॥२२॥स्वामीके विना स्पर्श किये उनकी सुन्दरताई बहुतदिनोंसे जिसमें बजानेवालेका हाथ न लगे उस विना बजाई हुई वीणाके समानहीन होगई हैं। वहसदाही स्वामीकाहित चाहनेवाली राक्षसियोंके वशमें पडनेके अयोग्य परन्तु उन्हींके वशमें पडीहैं ॥२३॥ अशोकवनमें वह जानकीजी शोकके समुद्रमें डूबकर मंगल ग्रहसे ग्रसी हुई रोहिणीके समान इनराक्षसियोंसे घेरी हुई हैं ॥ २४ ॥ हनुमानजी इस अशोकवनमें उनको पुष्पहीन वेलके समान देखते हुए; सब अंगोंमें मैल लगा हुआ, और अंगोंमेंभूषण न पहरनेसे

भूषणैरुत्तमैर्हीनांभर्तृवात्सल्यभूषिताम् ॥ राक्षसाधिपसंरुद्धांबंधुभिश्चविनाकृताम् ॥ २१ ॥ वियूथांसिंहसंरुद्धांबद्धांगजवधूमिव ॥ चंद्ररेखांपयोदांतेशारदाभ्रैरिवावृताम् ॥२२॥ क्लिष्टरूपामसंस्पर्शादयुक्तामिववल्लकीम् ॥ सतांभर्तृहितेयुक्तामयुक्तांरक्षसांवशे ॥ २३ ॥ अशोकवनिकामध्येशोकसागरमाप्लुताम् ॥ ताभिःपरिवृतांतत्रसग्रहामिवरोहिणीम् ॥ २४ ॥ ददर्शहनुमांस्तत्रलतामकुसुमामिव ॥ सामलेनचदिग्धांगीवपुषाचाप्यलंकृता ॥ मृणालीपंकदिग्धेवविभातिचनभातिच ॥ २५ ॥ मलिनेनतुवस्त्रेणपरिक्लिष्टेनभामिनीम् ॥ संवृतांमृगसावाक्षींददर्शहनुमान्कपिः ॥२६॥ तांदेवींदीनवदनामदीनाभर्तृतेजसा ॥ रक्षितांस्वेनशालेनसीतामसितलोचनाम् ॥ २७ ॥ तांदृष्ट्वाहनुमान्सीतांमृगशावनिभेक्षणाम् ॥ मृगकन्यामिवत्रस्तांवीक्षमाणांसमंततः ॥२८॥ दहंतीमिवनिःश्वासैर्वृक्षान्पल्लवधारिणः ॥ संघातमिवशोकानांदुःखस्योर्मिमिवोत्थिताम् ॥ २९ ॥ तांक्षामांसुविभक्तांगींविनाभरणशोभिनीम् ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेमारुतःप्रेक्ष्यमैथिलीम् ॥ ३० ॥

वह कीचडमें सनी हुई नलिनीके समान प्रकाशित होकर भी नहीं प्रकाशती ॥२५॥ हनुमानजीने देखाकि, वह मृगनयनी जानकीजी एक जीर्ण और मलिन वस्त्रसेही अपने सब अंगोंको ढांपे हुएहैं ॥२६ ॥ इनदेवीजीका वदन तेजसे हीन होगया। परन्तु अपने पतिके पराक्रमको विचारकर उनकेहृदयका तेज नष्टनहीं हुआ मृगके बच्चेके समान नेत्रोंवालीजानकीजीकेवल अपनेभलेस्वभावकेगुणसे अपनी रक्षाकर रहीहैं ॥२७॥ तिन जानकीजीको हनुमानजीने मृगछौनाकेनेत्रोंके समान नेत्रोंवाली देखा, जोकि त्रासित हुई हरिणीके समान चारोंओरको देख रही थीं ॥ २८ ॥ वह मानो अपने गरम श्वासोंसे फले फूले वृक्षोंको भस्मही किये देती थी, मानो वह साक्षात् शोककी राशियों, मानों वह दुःखकी तरंगोंसे शोकके समुद्रमें बहरहीं थीं ॥ २९ ॥ उन क्षीण अंगवाली जानकीजीके

सब अंग ठीक प्रमाणके अनुसार गठनवालेथे; वह विना अलंकारोंके भी शोभायमान होरही हैं, हनुमानजी ऐसी जानकीजीको देखकर अतुलानंद प्राप्त करते हुए ॥ ३० ॥ उन श्रेष्ठ नेत्रवाली जानकीजीको देखकर हनुमान्जीके दोनों नेत्रोंसे टपटप आनंदके आँसू गिरनेलगे, वह उसीस्थानसे श्रीरामचन्द्रजीकेलिये उनके चरणोंमें नमस्कार करते हुए ॥ ३१ ॥ श्रीरामचन्द्रजीको औरलक्ष्मणजीको भीनमस्कारकरके वीर्यवान हनुमानजी सीताजीके दर्शनसे उत्पन्न आनंद में मग्न होकर उसी वृक्षके पत्तोंमें छिपकर बैठे रहे ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥ उसके पीछे फूले हुए वृक्षोंकी श्रेणीसे शोभायमान वह वन देख सीताजीका भलीभाँति दर्शन करनेकी अभिलाषासे अवसर खोजते २ हनुमान्जीने लगभग वह रात्रि बिताही दी ॥ १ ॥ तब हनुमानजी दो मुहूर्त रात्रि रहे; षडंगसहितवेदके जाननेवालेश्रेष्ठ अग्निहोत्र करनेवाले ब्रह्मराक्षसोंकी वेदध्वनि श्रवण करने लगे

हर्षजानिचसोश्रूणितांदृष्ट्वामदिरेक्षणाम् ॥ मुमोचहनुमांस्तत्रनमश्चक्रचराघवम् ॥३१॥ नमस्कृत्वाथरामायलक्ष्मणायचवीर्यवान् ॥सीतादर्शनसंहृष्टोहनुमान्संवृतोऽभवत्॥३२॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०सुंदरकांडेसप्तदशः सर्गः॥१७॥तथाविप्रेक्षमाणस्य वनंपुष्पितपादपम् ॥ विचिन्वतश्चवैदेहींकिंचिच्छेषानिशाभवत् ॥ १ ॥ षडंगवेदविदुषांक्रतुप्रवरयाजिनाम् ॥ शुश्रावब्रह्मघोषान्सविरात्रेब्रह्मरक्षसाम् ॥२॥ अथमंगलवादित्रैःशब्दैःश्रोत्रमनोहरैः ॥ प्राबोध्यतमहाबाहुर्दशग्रीवोमहाबलः ॥३॥ विबुध्यतुमहाभागोराक्षसेंद्रःप्रतापवान् ॥ स्रस्तमाल्यांबरधरोवैदेहीमन्वचिंतयत् ॥ ४ ॥ भृशंनियुक्तस्तस्यांचमदनेनमदोत्कटः ॥ नतुतंराक्षसःकामंशशाकात्मनिगूहितुम् ॥ ५ ॥ ससर्वाभरणैर्युक्तोबिभ्रच्छ्रियमनुत्तमाम् ॥ तांनगैर्विविधैर्जुष्टांसर्वपुष्पफलोपगैः ॥६॥ वृतांपुष्करिणीभिश्चनानापुष्पोपशोभिताम् ॥ सदामत्तैश्चविहगैर्विचित्रांपरमाद्भुतैः ॥ ७ ॥ ईहामृगैश्चविविधैर्वृतांदृष्टिमनोहरैः ॥ वीथीःसंप्रेक्षमाणश्चमणिकांचनतोरणाम् ॥ ८ ॥

॥ २ ॥ मंगलके बाजे बजने लगे । कानोंको सुख देनेवाले इन बाजोंके मनोहर शब्दसे महाबलवान् महाबाहु दशानन रावण जागा ॥ ३ ॥ वह महाप्रतापवान् महाभाग रावण जागतेहीनई माला व नये वस्त्र धारणकर जानकीजीका ध्यानकरने लगा ॥ ४ ॥ इस मतवाले राक्षसराज रावणने कामवेगके वश हो अपना चित्त सीताजीमें ही लगाय रक्खा था । इस लिये इस समयवह कामकेवेग रोकनेकोसमर्थ नहीं हुआ ॥५॥ इससेवह रावण सबवस्त्र भूषणपहर अपूर्णश्री धारणकरके सब ऋतुओंके पुष्प, फलसमन्वित॥६॥अनेक जातिकी शाखाओंसे शोभायमान और छोटी२पुष्करणियोंसेशोभित अनेक भाँतिके पुष्पोंसे शोभायुक्त सदा मदवाले पक्षिगणोंसे विचित्र॥७॥ देखनेमेंअति मनोहर सुवर्ण चांदीआदिके खेलवाले मृगोंसे शोभायमान अशोक वाटिकाकीवीथियें(गलियें)देखकर दशा

नन, मणि और सुवर्णके तोरणोंसे शोभित ॥ ८ ॥ अनेक प्रकारके मृगोंसे युक्त, गिले हुए फलोंसे व्याप्त घने वृक्षोंसे पूर्ण, उस अशोक काननमें प्रवेश करता हुआ ॥ ९ ॥ जैसे देवता गन्धर्वोंकी स्त्री इन्द्रके पीछे चलती हैं इस प्रकार सैकडों स्त्रीरावणके साथ२पीछे २ चलीं ॥१०॥ किसी२कामिनीके हाथमें सुवर्ण मय दीपक, किसी२के हाथमें चामर व्यजनऔर किसी २ के हाथमें ताल आदिके पंखे थे ॥११॥ कोई २ जलसेभरी हुई सुवर्णकी पिचकारियेंग्रहण कर आगे २ छिडकाव करती चलीं, कोई २ उत्तम बिछौने बिछा हुआ सोनेकसिंहासन ले पीछे चलीं ॥१२॥ कोई २ चतुर स्त्री दहने हाथमें मदिरासे पूर्ण उज्ज्वल रत्नमय कलशी लिये जाती थीं ॥१३॥ कोई राज हंसकेसमान पूर्णचन्द्रमाके तुल्य प्रभाववाला श्वेतवर्ण सुवर्ण दण्डयुक्त क्षत्रग्रहण करके पीछे २

नानामृगगणाकीर्णांफलैःप्रपतितैर्वृताम्॥अशोकवनिकामेवप्राविशत्संततद्रुमाम्॥९॥अंगनाःशतमात्रंतुतंव्रजंतमनुव्रजन्॥ महेंद्रमिवपौलस्त्यं देवगंधर्वयोषितः ॥ १० ॥ दीपिकाःकांचनीःकाश्चिज्जगृहुस्तत्रयोषितः ॥ वालव्यजनहस्ताश्चतालवृंतानिचापराः ॥ ११ ॥ कांचनैश्चैवभृंगारैर्जह्रुःसलिलमग्रतः॥मंडलाग्राबृसीश्चैवगृह्यान्याःपृष्ठतोययुः ॥१२॥ काचिद्रत्नमयींपात्रींपूर्णांपानस्यभ्राजतीम्॥ दक्षिणादक्षिणेनैवतदांजग्राह पाणिना ॥१३॥ राजहंसप्रतीकाशंछत्रंपूर्णशशिप्रभम् ॥ सौवर्णदंडमपरागृहीत्वापृष्ठतोययौ॥१४॥निद्रामदपरीताक्ष्योरावणस्योत्तमस्त्रियः ॥ अनुजग्मुःपतिंवीरंघनंविद्युल्लताइव ॥१५॥ व्याविद्धहारकेयूराःसमामृदितवर्णकाः ॥ समागलितकेशांताःसस्वेदवदनास्तथा ॥ १६ ॥ घूर्णत्योमदशेषेणनिद्रयाचशुभाननाः ॥ स्वेदक्लिष्टांगकुसुमाःसमाल्याकुलमूर्धजाः॥१७॥प्रयांतंनैर्ऋतपतिंनार्योमदिरलोचनाः॥बहुमानाच्चकामाच्च प्रियभार्यास्तमन्वयुः ॥ १८ ॥ सचकामपराधीनः पतिस्तासांमहाबलः ॥ सीतासक्तमनामंदोमदांचितगतिर्बभौ ॥ १९ ॥

गमन करने लगीं॥ १४ ॥ इस प्रकार रावण की उत्तम२स्त्रियें निद्रासे औरमादकतासे अलसाते नेत्रवालीहो, अपने पति वीरवर रावणके पीछे २ चलीं; जैसे मेघोंके पीछे बिजली की श्रेणी चमकती जाती है ॥ १५ ॥ उन स्त्रियोंके हारऔर बाजू अपने २ स्थानसे कुछ२खसकसे गये थे, और शरीरके लेपनसे भीजेथे,इन स्त्रियोंकेबाल छूटेऔर मुखोंपर पसीनोंकी बूँदेंझलक रहीथीं ॥१६॥नसेकेउतरनेऔर निद्राके हेतुइनसब सुन्दरमुखवालीस्त्रियोंके शरीर घूमते, और फूलमालाओंके साथउनके बालकुछ गुथेसे गयेथे, शरीरमें पसीनाथा ॥१७॥ इसप्रकारसे मदमाते नैनवाली सुवदनी सबरावणकी प्रियपत्नियें मानकेमारे तथा अपने२ कामके मारे गमन करते हुए अपने राक्षसपतिके पीछे २ चलीं आई थीं ॥१८॥ उनसब स्त्रियोंका वह स्वामी महाबलवान् पापमति निशाचर रावण

कामपराधीनहुआ सीताजीके प्रति आसक्त चित्तहो मन्द२डगमगी चालसे गमन करने लगा॥१९॥ इसके पीछेपवनकुमार हनुमानजीनेउन मनोरमा स्त्रियोंकी क्षुद्रघंटिकाऔर नूपुरोंकाशब्द सुना॥२०॥महाकपि हनुमान्‌जीने यहभी देखाकिवह अपूर्व अचिन्तनीय असाधारण कर्मकारी रावणद्वारपर आया॥२१॥सामने राक्षसियोंके गन्धतैलपूर्ण दीपक धारण करकेआगे २ चलनेसे रावणका सब शरीसाफ२ दिखलाई देता था ॥ २२ ॥ काम, गर्व और मत्तता रावणमें विराज रहीथी, उसके बडे२विशाल नेत्र आलसी और लालहोरहेथे; इससमय रावण ऐसाज्ञातहोता थामानो साक्षात् कामदेव धनुषका त्याग किये हुए सामनेको चला आताहै ॥२३॥ रावण मनोहर मुक्तासमूह समन्वित; मथे हुयेदूधके झागोंके समानअति उजले निर्मल धुएहुए श्रेष्ठ वसन और पुष्पोंकी माला अंगोंसे खैंचकर यथास्थानमें पहर रहाथा ॥२४॥ रावण जितना २ निकट आने लगा उतनाही हनुमान्‌जी उसविटपके मध्यमें शत२पुष्प और पत्तोंके बीचमें छिपकर इस बा

ततःकांचीनिनादंचनूपुराणांचनिःस्वनम् ॥ शुश्रावपरमस्त्रीणांकपिर्मारुतनंदनः ॥२०॥ तंचाप्रतिमकर्माणंचिंत्यबलपौरुषम्॥ द्वारदेशमनुप्राप्तंददर्शहनुमान्कपिः ॥ २१ ॥ दीपिकाभिरनेकाभिःसमंतादवभासितम् ॥ गंधतैलावसिक्ताभिर्ध्रियमाणाभिरग्रतः ॥२२॥ कामदर्पमदैर्युक्तं जिह्मताम्रायतेक्षणम्॥समक्षमिवकंदर्पमपविद्धशरासनम् ॥२३॥ मथितामृतफेनाभमरजोवस्त्रमुत्तमम्॥सपुष्पमवकर्षंतंविमुक्तंसक्तमंगदं॥२४॥ तंपत्रविटपेलीनःपत्रपुष्पशतावृतः ॥ समीपमुपसंक्रांतंविज्ञातुमुपचक्रमे ॥ २५॥ अवेक्षमाणस्तुतदाददर्शकपिकुंजरः ॥ रूपयौवनसंपन्नारावणस्यवरस्त्रियः ॥ २६ ॥ ताभिःपरिवृतोराजासुरूपाभिर्महायशाः ॥ तान्मृगद्विजसंघुष्टंप्रविष्टःप्रमदावनम् ॥२७॥ क्षीबोविचित्राभरणःशंकुकर्णोमहाबलः॥ तेनविश्रवसःपुत्रःसदृष्टोराक्षसाधिपः॥२८॥ वृतःपरमनारीभिस्ताराभिरिवचंद्रमाः॥ तंददर्शमहातेजास्तेजोवंतमहाकपिः॥२९॥ रावणोऽयंमहाबाहुरितिसंचिंत्यवानरः ॥ सोऽयमेवपुराशेतेपुरमध्येगृहोत्तमे ॥ अवप्लुतोमहातेजाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ ३० ॥

तकोभलीभाँति जाननेकी इच्छा करने लगे कि, यह निकट आयाहुआ कौनहै ?॥ २५ ॥ देखते २ वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जीने देखाकिराजा रावणकीजोमुख्य २ रूपयौवनसम्पन्न पटरानियें थीं ॥ २६॥ महायशस्वी राक्षसराज उन रूपवाली स्त्रियोंके घेरमें घिरकर मृगपक्षियोंके शब्दसे शब्दायमान उस अशोक वनमें पैठा ॥ २७ ॥मदमाता विचित्र वस्त्राभूषणधारी, महाबलवान् शंकुकर्ण नाम जो एक राक्षस वनकारखवाला था, केवल उसनेही प्रवेश करते हुए उस विश्वश्रवाके पुत्र राक्षसराज रावणकोदेखा, और किसी पुरुषने नहीं ॥ २८ ॥ परमरूपवती स्त्रियोंसे घेरे हुए उस महातेजस्वी राक्षसराज रावणको तारागणोंसे युक्त चन्द्रमाके समान शोभित देखकर महाकपि हनुमान्‌जी ॥ २९ ॥ विचार करने लगे कि, हमने पहले श्रेष्ठ गृहकेमध्यमेंजिसको शयन करतेदेखाहै; यहवहीहै बस रावण

यही है । ऐसा स्थिर करकेमहातेजवान् पवनकुमार हनुमानूजी छलांग मारकर उस पेडकी अतिऊंची शखापरचढगये ॥ ३० ॥ यद्यपि बुद्धिमान् और सामर्थ्य युक्त हनुमानूजी अतितेजस्वी थेतथापि वह उस रावणकी तेजप्रभाको न सहनकर बहुत पत्तोंवाली पेडकी शाखामेंटिक कर छिप रहे ॥३१॥ रावण, श्यामके शवाली चारुनितम्बिनी, श्रेष्ठस्तनवाली, मृगनयनी जानकीका दर्शन करनेकी अभिलाषासे उनके सामनेको चला ❀ ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामष्टादशः सर्गः ॥१८ ॥ इसके पोछे निन्दारहित रूपवाली सर्वाङ्गसुन्दरी, राजकुमारी जानकीजी रूप यौवनसम्पन्न उत्तम भूषणोंसे विभूषित॥१॥राक्षसनाथ रावणको देखतेही वहसुन्दर मुखवाली कम्पायमानहोनेलगी, जैसे पवनके लगनेसे केला कांपताहै ॥ २॥

सतथाऽप्युग्रतेजास्सनिर्धूतस्तस्यतेजसा ॥ पत्रेगुह्यांतरेसक्तोमतिमान्संवृतोऽभवत् ॥३१॥ सतामसितकेशांतांसुश्रोणींसंहतस्तनीम्॥ दिदृक्षुर सितापांगीमुपावर्ततरावणः ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे अष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥ तस्मिन्नेवततःकालेराजपुत्रीत्वनिंदिता ॥ रूपयौवनसंपन्नंभूषणोत्तमभूषितम् ॥ १ ॥ ततोदृष्ट्वैववैदेहीरावणंराक्षसाधिपम्॥ प्रावेपतवरारोहाप्र वातेकदलीयथा ॥ २ ॥ ऊरुभ्यामुदरंछाद्यबाहुभ्यांचपयोधरौ॥ उपविष्टाविशालाक्षीरुदतीवरवर्णिनी ॥ ३ ॥ दशग्रीवस्तुवैदेहींरक्षितांराक्ष सीगणैः ॥ ददर्शदीनांदुःखार्तानावंसन्नामिवर्णवे ॥ ४ ॥ असंवृतायामासीनांधरण्यांसंशितव्रताम् ॥ छिन्नाप्रपतितांभूमौशाखामिववनस्पतेः ॥ ५ ॥ मलमंडनदिग्धांगींमंडनार्हाममंडनाम् ॥ मृणालीपंकदिग्धेवविभातिनविभातिच ॥ ६ ॥

वडे २ नेत्रवाली जानकीजी दोनों जांघोंसे पेट ढक, और करकमलसे पयोधरोंकोछिपाय बैठकर रोदन करने लगीं ॥ ३ ॥ रावणने वहां पहुँच कर देखा कि, राक्षसियोंसेरक्षित वैदेहीजी दुःखसे व्याकुल होकर समुद्रमें नौकाके समान दुःखसागरमें डूब रही हैं॥ ४ ॥ कठिन नियमोंको धारण करनेवाली जानकीजी बिना बिछी भूमिपर बैठी रहनेसे ऐसी लगती थीं मानों वृक्षकी शाखा टूटकर पृथिवीपर गिर पडी है ॥ ५ ॥ जानकीजीके अंगोंमें जो गहना पहरनेके स्थान थे वहसब मैलसे छाय रहे थे,वह सजनेके योग्य थीं;परन्तु इस समय कोई भी सजाव उनपर नहींथा इसलिये पंकमें सनीहुई मृणालके समान वह भली भाँति प्रकाशित नहीं

❀ अध्यात्मरामायणमेंयहांपर ऐसा लिखा है कि-जबरावण सोया था तब उसनेरामचन्द्रके पाससे सीताजीको खोजनेके लियेकोई वानर आया है, यह स्वप्नदेखाऔर वह जाग उठा और विचारनेलगा कि; यदि अब सीताजीकोछेडेंगे तो वह वानरजायकेरामचन्द्रको यहां लानेकी शीघ्रताकरेगा और रामचन्द्र यहां आयकर मुझकूं सपरिवार मारके राक्षसतासे मुक्त करेंगे, यह इच्छाकरके सीताके पास जायकर सताने लगा ॥

होती थीं॥ ६ ॥मानो मनोरथके संकल्परूप अश्वोंको जोडकर विदितात्मा राजसिंह श्रीरामचन्द्रजीके समीप उन जानकीजीने यात्रा कीहै ॥ ७॥ श्रीरामचन्द्रजीमें प्राण लगायेहुए बहुत सूख गईहैं, अत्यंतरोदन करतीहैं, अपने प्रियजनोंके बिछुडनेसेएक मात्र ध्यानऔर शोकको आश्रय कियेहुएहैं शोकका पार नहीं देखती हैं ॥८॥ मंत्रादिकोंसे गतिछेके सर्पराज वधूके समानव्याकुल होरहीहैं मानो रोहिणी धूमकेतुके तापके संतापिता हुईहैं ॥९॥ श्रेष्ठ आचारऔर सत्स्वभाव सम्पन्न धर्मकुलमेंउत्पन्न होउस कुलके योग्यही विवाहके संस्कारसे संस्कारित हुईहैं परन्तु इस समय ऐसाबोध होताहैकि, मानो राक्षसादि दुष्टकुलमें उत्पन्न होउसके अनुरूप ही विवाहे जानेसेमलिन हो रही हैं ॥ १० ॥ जानकीजीके देखनेसेऐसा जानपडता मानो कोई बडीकीर्ति दुर्जनोंसे दूषित हुई, श्रद्धा अपमानित हुई,

समीपंराजसिंहस्यरामस्यविदितात्मनः ॥ संकल्पहयसंयुक्तैर्यांतीमिवमनोरथैः ॥७॥ शुष्यंतींरुदतीमेकांध्यानशोकपरायणाम् ॥ दुःखस्यांतमपश्यंतींरामांराममनुव्रताम् ॥ ८ ॥ चेष्टमानांयथाविष्टांपन्नगेंद्रवधूमिव ॥ धूप्यमानांग्रहेणेवरोहिणींधूमकेतुना ॥ ९ ॥ वृत्तशीलेकुलेजातामाचारवतिधार्मिके ॥ पुनःसंस्कारमापन्नांजातामिवचदुष्कुले ॥१०॥ (अभूतेनापवादेनकीर्तिंनिपतितामिव ॥ आम्नायानामयोगेनविद्यांप्रशिथिलामिव ॥ १ ॥) सन्नामिवमहाकीर्तिंश्रद्धामिवविमानिताम् ॥ प्रज्ञामिवपरिक्षीणामाशांप्रतिहतामिव ॥ ११ ॥ आयतीमिवविध्वस्तामाज्ञांप्रतिहतामिव ॥ दीप्तामिवदिशंकालेपूजामपहतामिव ॥१२॥ पौर्णमासीमिवनिशांतमोग्रस्तेंदुमंडलाम् ॥ पद्मिनीमिवविध्वस्तांहतशूरांचमूमिव॥१३॥प्रभामिवतमोध्वस्तामुपक्षीणामिवापगाम्॥वेदीमिवपरामृष्टांशांतामग्निशिखामिव॥१४॥उत्कृष्टपर्णकमलांवित्रासितविहंगमाम्॥ हस्तिहस्तपरामृष्टमाकुलामिवपद्मिनीम् ॥१५॥ पतिशोकातुरांशुष्कांनदींविस्रावितामिव ॥ परयामृजयाहीनांकृष्णपक्षेनिशामिव ॥१६॥

बुद्धि क्षीणहुई, और आशामानो हत होगई है ॥११॥मानोदेवताका स्थानविध्वंस होगया, मानोराजाकी आज्ञाहतहोगई, मानो उल्कादि उत्पातकालमें दिशायें प्रज्वलितहो गयींऔर पूजा मानो नष्ट हो गईहै॥१२॥मानोपूर्णमासीकाचंद्रमा राहुसेग्रसा गया, कमलिनी मलडालीगई, मानोसेनाका सरदारमारा गयाहै॥१३॥ मानो सूर्यभगवान्की प्रभा राहुसे अंधकार की गई, मानो नदीकी धाराकम हुई, मानो यज्ञवेदी चंडालादि नीचोंसे छुई गई, मानो अग्निकी शिखा बुझने पर हुई है ॥ १४ ॥ मानो हाथीने शुण्डके आघातसे पुष्करिणीको व्याकुल करकेजल पक्षियोंको त्रासित और कमल फूलोंकी पँखुडियोंको तोड डाला है ॥ १५ ॥जानकीजी पतिके शोकसे आतुर हो सूख गयी हैं । जैसे स्रोत बंद होनेपर नदी सूखजातीहै अंगोंके न धुलनेसे कृष्णपक्षकी रात्रिके समान मलिन

हो रही हैं ॥ १६ ॥ सुन्दरांगी सुकुमारी और रत्नमय गृहमें बैठनेके योग्य सीताजी इस समय शोकसेसंतापित हो रही हैं मानो ताजी उखाडी हुई कमलकी डंडी धूपसे सूख रही है ॥ १७ ॥ मानो गजराजवधू पकडी और थंभमें बँधी हुई अपने यूथपतिके विरहसे शोकमेंव्याकुल होकर लंबे २ श्वासले रही है ॥ १८ ॥ अयत्नसे एक बडीवेणी पीठपरपडी हुईहै, वर्षाके आगममें नीलवर्णकी वनराजिसे जिसप्रकार पृथ्वीकीशोभा होतीहै; वैसेही जानकीजीकी शोभा इस वेणीसे हो रही है ॥ १९ ॥ उपवास, शोक, संताप, चिंता और भयकेमारे महाक्षीण और दीन होरही हैं, जलमात्र आहार अर्थात्खानापीना छोड दिया है, तपही जिनके केवल एक अवलंबन है ॥ २० ॥ दुःखसेव्याकुल हो इष्ट देवताके समान हाथ जोडकर मानो रघुकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजीके निकट रावणके हार जानेकी प्रार्थना कर रही हैं ॥ २१ ॥ निद्रारहित सीताजीरोते२श्रेष्ठ पलकोंसे शोभित, अरुण प्रान्तयुक्त बडे श्वेत नेत्रोंसे इधर उधर दृष्टि डाल

सुकुमारींसुजातांगींरत्नगर्भगृहोचिताम् ॥ तप्यमानामिवोष्णेनमृणालीमचिरोद्धृताम् ॥ १७ ॥ गृहीतांलाडितांस्तंभेयूथपेनविनाकृताम् ॥ निःश्वसंतींसुदुःखार्तांगजराजवधूमिव ॥ १८ ॥ एकयादीर्घयावेण्याशोभमानामयत्नतः ॥ नीलयानीरदापायेवनराज्यामहीमिव ॥ १९ ॥ उपवासेन शोकेनध्यानेनचभयेनच ॥ परिक्षीणांकृशांदीनामल्पहारांतपोधनाम् ॥ २० ॥ आयाचमानांदुःखार्तांप्रांजलिंदेवतामिव ॥ भावेनरघुमुख्य स्यदशग्रीवपराभवम् ॥ २१ ॥ समीक्षमाणांरुदतीमनिंदितांसुपक्ष्मताम्रायतशुक्ललोचनाम् ॥ अनुव्रतांराममतीवमैथिलींप्रलोभयामासवधाय रावणः ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडेएकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥ सतांपरिवृतांदीनांनिरानंदांतपस्विनीम् ॥ साकारैर्मधुरैर्वाक्यैन्यदर्शयतरावणः ॥ १ ॥ मांदृष्ट्वानागनासोरुगूहमानास्तनोदरम् ॥ अदर्शनमिवात्मानंभयान्नेतुंत्वमिच्छसि ॥ २ ॥ कामयेत्वांविशालाक्षिबहुमन्यस्वमांप्रिये ॥ सर्वांगगुणसंपन्नेसर्वलोकमनोहरे ॥ ३ ॥

रही हैं, रावण ऐसी श्रीरामचन्द्रजीकी अनुव्रता जानकीजीको देखकर अपना वधकरानेके निमित्तही उनको लालच दिखाने लगा ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि सुन्दरकांडे भाषायामेकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥ रावण इशारोंसे और मधुर वचनोंसे राक्षसियोंसे घेरी हुरी दीनभावापन्ना निरानंदा तपस्विनी सीताजीको अपना अर्थ समझाने लगा ॥ १ ॥ हे हाथीकी शुण्डकेसमान चढाव उतार जांघवाली ! जबकि, तुमने हमको देखते ही पयोधर और उदर दोनोंअंग छिपा लिये, तब इससे जाना जाता है कि, तुम डरके मारेही अपनेकोदिखानेकी चेष्टा नहीं करती हो ॥ २ ॥ हे विशालाक्षि! हम तुम्हारी कामनाकरते हैं हे सर्वाङ्गगुणसम्पन्ने ! हे सर्वलोकमनोहरे ! हे प्रिये ! तुम हमको बहुत मानसेमानो ॥ ३ ॥

हे सीते ! इस स्थानमें कोई मनुष्य या कामरूपी राक्षस नहीं है, इसलिये हमसे जो तुमको भय हुआ है वह त्याग करो ॥४॥ हे भीरु ! निश्चय जान लेना राक्षसोंका धर्म ही यहहै कि, वहसदा परस्त्री गमनया बलसे मथकरपराई स्त्रीका हरण कियाकरते हैं ॥५॥ तथापि हे मैथिलि ! तुम्हारेअकाम होनेसे हम तुमको स्पर्श नहीं करसकते परन्तु काम यथाकाम हमारेशरीरमें फैलरहा है अर्थात् हमारी इच्छाभली भाँतितुम्हें देखनेकी है ॥६॥हे देवि !तुमहमसे भय मत करो।हे प्रिये ! हमारा विश्वास करो और यथार्थप्रेम हमसे करोइस प्रकारके शोकाकुल न होवो ॥७॥ एक वेणी धारणकिये बिना बिछायेपृथ्वीपर सोना, चिन्ता करना, मलिन वस्त्र पहरना, वृथा उपवास करनायह सबबातें तुमको उचित नहीं हैं ॥८॥ यह विचित्र माल्य, चन्दन और अगर विविधभाँतिके वसन

नेहकिंचन्मनुष्यावाराक्षसाः कामरूपिणः॥ व्यपसर्पतुतेसीतेभयंमत्तःसमुत्थितम् ॥४॥ स्वधर्मोरक्षसांभीरुसर्वदैवनसंशयः ॥ गमनंवापरस्त्रीणांहरणंसंप्रमथ्यवा ॥ ५ ॥ एवंचैवमकामांत्वांनचस्प्रक्ष्यामिमैथिलि॥कामंकामःशरीरेमेयथाकामंप्रवर्तताम् ॥ ६ ॥ देविनेहभयंकार्यंमयिविश्वसिहिप्रिये ॥ प्रणयस्वचतत्त्वेनमैवंभूःशोकलालसा ॥७॥ एकवेणीअधःशय्याध्यानमलिनमम्बरम् ॥ अस्थानेप्युपवासश्चनैतान्यौपयिकानिते ॥८॥ विचित्राणिचमाल्यानिचंदनान्यगुरूणिच ॥ विविधानिचवासांसिदिव्यान्याभरणानिच ॥९॥ महार्हाणिचपानानिशयनान्यासनानिच ॥गीतंनृत्यंचवाद्यंचलभमांप्राप्यमैथिलि॥१०॥स्त्रीरत्नमसिमैवंभूःकुरुगात्रेषुभूषणम् ॥ मांप्राप्यहिकथंवास्यास्त्वमनर्हासुविग्रहे॥११॥ इदंतेचारुसंजातयौवनंह्यतिवर्तते ॥ यदतीतंपुनर्नैतिस्रोतःस्रोतस्विनामिव ॥१२॥ त्वांकृत्वोपरतोमन्येरूपकर्तासविश्वकृत् ॥ नहिरूपोपमाह्यन्यातवास्तिशुभदर्शने ॥१३॥ त्वांसमासाद्यवैदेहिरूपयौवनशालिनीम् ॥ कःपुनर्नातिवर्ततसाक्षादपिपितामहः ॥ १४ ॥

अनेक प्रकारके दिव्य आभरण बडे२मोलकी अनेक सवारियें ॥९॥पान करनेके योग्य बडे मोलकी चीजें, बहुतप्रकारके सोने उठने बैठनेके लिये आसनगाना नाच, बाजा यहांपर सब विद्यमान हैं हमको प्राप्त हो सबको तुम ग्रहणकरो ॥१०॥ तुम स्त्रियोंमें रत्न हो; इस लिये ऐसी अवस्थामें तुम मत रहो; अंगोंमें गहने पहनो, क्योंकि हमकोप्राप्त करकेतुम किस प्रकार बिना गहने पहनेहुए रहोगी ?॥११॥ तुम्हारी यह सुन्दर उमँगी हुई युवा अवस्था बीती जाती है, यह तरुणाई नदीके सोतेकेजलके समान है, कि जोएक बारजल बहगया वह फिर लौटकर नहीं आता॥१२॥ हेशुभदर्शने ! ऐसासमझ पडता है कि रूप रचनेवाले विधाताने तुमको बनायकर फिर अपने कार्यको छोड दिया है. क्योंकि और किसी स्त्रीमें भी तुम्हारे रूपकी उपमानहीं देखी जाती ॥ १३ ॥ हे वैदेही ! इस प्रकारकाकौन

मनुष्य है जोरूपयौवन शालिनी तुम्हें प्राप्त करे औरफिर उसकामन कुमार्ग मेंनजाय?औरकी क्या चलाई;ब्रह्माजी भी विपथगामी होजायँ॥१४॥हे चन्द्रानने ! निविड नितम्बे!हम तुम्हारे जो जो अंग देखतेहैं वह हमारीआंखें उसी२ अंगमें बंध जाती हैं ॥१५॥हे मैथिली ! तुम हमारी भार्याबनो; हमारे अनेक२उत्तम स्त्रियें है; तुम उन सबमें मुख्य पटरानी बनो इस मोहको त्यागो ॥ १६ ॥हेभीरु ! हमने तीनों लोकोंको मथन करके जो रत्न हरण किये हैं, वह सब भी तुम्हारे और समस्त राज्यभी हम तुमको दान करतेहैं ॥ १७॥हे विलासिनी ! हम तुम्हारी प्रसन्नताके लिये अनेक नगर मालासे विभूषित यह समस्त भूमंडल जीतकर तुम्हारे पिता जनकजी को दे देंगे ॥१८॥ इस लोकमेंऐसा हमकिसीको नहींदेखते जो संग्राममें हमारेसन्मुख लडे. देखो!हमारा बल वीर्य युद्धसे उपमा

यद्यत्पश्यामितेगात्रंशीतांशुसदृशानने॥तस्मिंस्तस्मिन्पृथुश्रोणिचक्षुर्ममनिबध्यते॥१५॥भवमैथिलिभार्यामेंमोहमेतंविसर्जय ॥ बह्वीनामुत्तम
स्त्रीणामाहृतानामितस्ततः ॥ सर्वासामेवभद्रंतेममाग्रमहिषीभव ॥१६॥ लोकेभ्योयानिरत्नानिसंप्रमथ्याहृतानिमे ॥ तानितेभीरुसर्वाणिरा
ज्यंचैवददामिते ॥ १७ ॥ विजित्यपृथिवींसर्वांनानानगरमालिनीम् ॥ जनकायप्रदास्यामितवहेतोर्विलासिनि ॥ १८ ॥ नेहपश्यामिलोके
ऽन्यंयोमेप्रतिबलोभवेत् ॥ पश्यमेसुमहद्वीर्यमप्रतिद्वंद्वमाहवे॥१९॥असकृत्संयुगेभग्नामयाविमृदितध्वजाः॥अशक्ताःप्रत्यनीकेषुस्थातुंममसुरा
सुराः ॥२०॥ इच्छमांक्रियतामद्यप्रतिकर्मतवोत्तमम् ॥ सुप्रभाण्यवसज्जंतांतवांगेभूषणानिहि ॥२१॥ साधुपश्यामितेरूपंसुयुक्तंप्रतिकर्मणा ॥
प्रतिकर्माभिसंयुक्तादाक्षिण्येनवरानने॥२२॥भुंक्ष्वभोगान्यथाकामंपिबभीरुरमस्वच ॥ यथेष्टंचप्रयच्छत्वंपृथिवींवाधनानिच ॥ २३ ॥ ललस्व
मयिविस्रब्धाधृष्टमाज्ञापयस्वच ॥ मत्प्रसादाल्ललंत्याश्चललतांबांधवास्तव ॥ २४ ॥

रहितहो गयाहै ॥१९॥ रणमेंहमनेसुर असुरोंको वारम्वार पराजय कियाऔर उनकीध्वजायें तोड डालीहैं; ऐसी अवस्थाको प्राप्त होकर उन लोगोंमें हमारेसामने युद्धमेंखडे रहनेकी सामर्थ्य नहींहै ॥ २० ॥ तुम हमारी अभिलाषा पूर्ण करो जिससेतुम्हारा शृङ्गार कराया जाय और सुन्दर चमकीले गहनोंसे तुम्हारे अंग सजाये जांय॥२१॥शृङ्गार करनेसे जो तुम्हारा रूपहोगा उसको हम प्रत्यक्षदेख रहे हैं हेसुन्दर वदने!हमारे ऊपर कृपा करके तुम शृङ्गार करके सजो ॥ २२॥ हे भीरु !इच्छानुसार विविध भांतिकीभोग करनेकी वस्तुयें तुम भोग करती रहकर बिहार करोपानकरो जितनी इच्छाहो उतनाधनयाभूमि किसीको दानकर दो ॥ २३॥हमारा विश्वास करके जो जोवस्तु चाहिये उनको हमसे माँगो, और ढिठाईके साथहमें आज्ञा करतीरहो । जो तुम अनुग्रह करकेहमसे अपनी वांछित

वस्तुयें चाहतीरहोगी तो तुम्हारे बन्धु बान्धवोंकी वांछाभी पूर्ण होगी ॥२४॥ हे भद्रे ! यशस्विनी !तुम हमारी ऋद्धि और सम्पदाका दर्शन करो. हे सुभगे ! अब तुम चीर वल्कलधारी श्रीरामचन्द्रजीको लेकर क्या करोगी?॥२५॥ और इस प्रकार तो कोई उपाय नहीं कि,रामचन्द्रहमको जीतलें वह श्रीभ्रष्ट वनवासी व्रताचारी और पृथ्वीपर शयनकरताहै और इसमेंभी सन्देह है कि, वह अबतक जीवितहै वा नहीं ॥२६॥हे जानकी ! बगलों की पांतिको आगे किये नील मेघसे ढकी चन्द्रमाकी प्रभाकेसमान रामअब तुमको नहीं देख पावेगा॥२७॥ हिरण्यकशिपु जिस प्रकार इन्द्रके हाथमें गई हुई कीर्त्तिकोफिर प्राप्तकरनेमें समर्थ नहीं हुआ, रामचन्द्र वैसेही हमारे हाथसे तुम्हारे उद्धार करनेमें समर्थ नहीं होगा ॥ २८ ॥ हे सुन्दरदांतवाली ! हेचारुहासिनी ! (सुन्दर हँसनेवाली) हे

ऋद्धिंममानुपश्यत्वंश्रियंभद्रेयशस्विनि ॥ किंकरिष्यसिरामेणसुभगेचीरवासिना॥२५॥निक्षिप्तविजयोरामोगतश्रीर्वनगोचरः॥व्रतीस्थंडिलशायीचशंकेजीवतिवानवा ॥२६॥ नहिवैदेहिरामस्त्वांद्रष्टुंवाप्युपलभ्यते॥ पुरोबलाकैरसितैर्मेघैर्ज्योत्स्नामिवावृताम्॥२७॥नचापिममहस्तात्त्वांप्राप्तुमर्हतिराघवः॥हिरण्यकशिपुःकीर्तिमिंद्रहस्तगतामिव ॥ २८ ॥ चारुस्मितेचारुदतिचारुनेत्रेविलासिनि॥मनोहरसिमेभीरुसुपर्णःपन्नगंयथा ॥२९॥क्लिष्टकौशेयवसनांतन्वीमप्यनलंकृताम् ॥ त्वांदृष्ट्वास्वेषुदारेषुरतिंनोपलभाम्यहम्॥३०॥अन्तःपुरनिवासिन्यःस्त्रियःसर्वगुणान्विताः॥ यावत्योममसर्वासामैश्वर्यंकुरुजानकि ॥ ३१ ॥ ममह्यसितकेशांतेत्रैलोक्यप्रवराःस्त्रियः ॥ तास्त्वांपरिचरिष्यंतिश्रियमप्सरसोयथा ॥३२॥ यानिवैश्रवणेसुभ्रुरत्नानिचधनानिच ॥ तानिलोकांश्चसुश्रोणिमयाभुंक्ष्वयथासुखम्॥ ३३ ॥

चारुलोचने ! (सुन्दर नेत्रवाली) हे विलासिनी!विनताके पुत्र गरुडजीजिस प्रकार सर्पोंके समूहको हरण कर लेते हैं,वैसेही तुम भी हमारेमनको हरण करतीहो ॥ २९ ॥ तुम केवल एक पुराना रेशमीन वस्त्रपहर रही हो दुर्वलभी होऔर तुम्हारे अंगोंमेंकोई गहनाभी नहींहै तथापि तुमको देखकर अपनी सुन्दर स्त्रियोंमें प्रीति करनेको अब हमारी इच्छा नहींहोतीहै॥ ३० ॥ हमारे रनवासमें सर्व गुणकी खान जो स्त्रियेंहैं हे जानकी ! तुम उन सबके ऊपर अपनी प्रभुताई करो ॥ ३१ ॥ हे कृष्णकेशवाली!त्रिलोकी की सब सुन्दरस्त्रियां हमारे यहांहैं अप्सरायें जिसप्रकार लक्ष्मीजीकी सेवाकरती हैं वैसेही वहसबहमारी स्त्रियां तुम्हारी सेवा करेंगी॥ ३२ ॥ हे सुभगे ! हे सुश्रोणि ! कुवेरका जोकुछधनरत्न है तुम हमारे साथमिलकर उन सबको औरसमस्त लोकोंका सुखसेभोग करो॥ ३३॥

हे देवि ! तपस्या, बल, विक्रम, धन, तेज और यशरामचन्द्रइन किसीमेंभी हमारीबराबर नहींहै ॥३४॥तुम पान, विहार और विविधभोगोंको भोगो, ढेरके ढेर धन चाहे जिसको दानकरो, जितनीचाहो उतनी पृथ्वीचाहे जिसको देडालो हे ललने ! हम तुम्हारी सब मनोकामना पूर्णकरेंगे और जितनेतुम्हारे बंधुबान्धव और कुटुम्बी हैं; तुम उन सबकी वांछा पूर्ण करो ॥३५॥ हेविमल सुवर्ण हार भूषिताङ्गी ! उज्ज्वल सुवर्ण के हारसेशोभित शरीरवालीहे भीरु !तुमहमारे साथ फूलखिले हुएवृक्षोंसे व्याप्त भौंरोंसेपूर्ण समुद्रकेतीर उत्पन्नहुएवनोंमें विहारकरो ॥३६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां विंशः सर्गः॥२०॥ व्याकुल और करुणावती हुई वैदेही जानकीजी उस भयानक राक्षस रावणके यहवचन सुनकर धीरे २ दुःखित होकर उससे कहने लगीं ॥ १ ॥ तपस्विनी

नरामस्तपसादेविनबलेननविक्रमैः ॥ नधनेनमयातुल्यस्तेजसायशसापिवा ॥ ३४ ॥ पिबविहररमस्वभुंक्ष्वभोगान्धननिचयंप्रदिशामिमेदिनीच॥मयिलललललनेयथासुखंत्वंत्वयिचसमेत्यललंतुबांधवास्ते॥३५॥कुसुमिततरुजालसंततानिभ्रमरयुतानिसमुद्रतीरजानि॥कनकविमलहारभूषितांगीविहरमयासहभीरुकाननानि॥३६॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि० च० सा० सुं० विंशः सर्गः ॥ २० ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वासीतारौद्रस्यरक्षसः ॥ आर्तादीनस्वरादीनंप्रत्युवाचततःशनैः ॥१॥ दुःखार्तारुदतीसीतावेपमानातपस्विनी ॥ चिंतयंतीवरारोहापतिमेवपतिव्रता ॥ २ ॥ तृणमंतरतःकृत्वाप्रत्युवाचशुचिस्मिता ॥ निवर्तयमनोमत्तःस्वजनेप्रीयतांमनः ॥ ३ ॥ नमांप्रार्थयितुंयुक्तस्त्वंसिद्धिमिवपापकृत् ॥ अकार्यंनमयाकार्यमेकपत्न्याविगर्हितम् ॥ ४ ॥ कुलंसंप्राप्तयापुण्यंकुलेमहतिजातया ॥ एवमुक्त्वातुवैदेहीरावणंतंयशस्विनी॥५॥ रावणंपृष्ठतःकृत्वाभूयोवचनमब्रवीत् ॥ नाहमौपयिकीभार्यापरभार्यासतीतव ॥ ६ ॥

जानकीजीदुःखसे पीडितहो रुदनकरने लगीं । वह पतिव्रताअपने मनमें अपने पतिकीही चिन्ताकरने लगीं, उनका शरीर मारे घबडाहटसे काँपने लगा॥ २॥ सामनेहीएक तृणकी ओटकर शोकाकुल सीताजीउस रावणसे बोलींकिहे रावण ! हममेंसेअपने मनको फिराओ;और अपनी स्त्रियोंमेंमनको लगाओ ॥ ३ ॥ पापकाकरनेवाला जिस प्रकार अणिमा लघिमा आदि सिद्धियोंको नहींपाय सकता, वैसेही तुमभी हमको प्रार्थना करनेके योग्य नहींहो हम एक पतिव्रता हैं, किसी प्रकारसेयह निन्दित अकार्य न करसकेंगी ॥४॥ हमऊंचे कुलमें जन्मग्रहण करके फिर पवित्रकुलमेंही ब्याहीगईहैं, सो कुलीनस्त्रियोंसेयह कार्यकैसेहो ? यशस्विनी वैदेहीजी रावणसे इस प्रकार कह ॥५॥ उसकी ओरको पीठ करके फिर बोलीं हमतुम्हारे भोग करनेकेयोग्य नहीं हैं, क्योंकि हम पराई स्त्री और

साध्वी हैं ॥६ ॥तुम साधुधर्मकी ओर दृष्टि रक्खो, साधु व्रतका आचरण करो, तुम्हारा मंगल होवे, निशाचर ! जिस प्रकारतुम अपनी स्त्रियोंकीरक्षा करते हो वैसेही पराई भार्या भीतुम्हें रखनी कर्त्तव्य है ॥७॥ तुमअपनेको उपमाकरके अपनी स्त्रियोंमें रमणकरो, जोअपनी स्त्रीको भोगकर उससेअसंतुष्ट रहता है, उस चंचलमति औरचपल इंद्रिय मन्दबुद्धिवाले पुरुषकोपराई स्त्रीउमरक्षय करनेवाले बहुत सारे रोगलगा देती हैं; और उसका बडाभारी अनादर होताहै औरवह नरकमें पहुँचताहै॥ ८॥तुम्हारी आचाररहित जिस प्रकारकी विपरीत बुद्धि देखतीहैं, तो इससेयही जानपडताहै कि, लंकामें कोई साधुपुरुष नहीं हैं और जो हैं भीतो तुमउनका चलन नहीं चलते ॥९॥अथवा परिणामके देखनेवाले साधु पुरुष तुमसेहितकारी वचन कहते होंगे परन्तु तुम राक्षसोंका कुल नाश कर नेके लिये उनकोमिथ्या समझअश्रद्धाकर वहवचन ग्रहणनहीं करतेहो ॥१०॥ खोटी नीतिकेवशहुये और अविवेकी राजाको पायकरअति धनसंपदायुक्त राज्य

साधुधर्ममवेक्षस्वसाधुसाधुव्रतंचर ॥ यथातवतथान्येषांरक्ष्यादारानिशाचर ॥७॥ आत्मानमुपमांकृत्वास्वेषुदारेषुरम्यताम् ॥ अतुष्टंस्वेषुदारेषु चपलंचपलेंद्रियम् ॥ नयंतिनिकृतिप्रज्ञंपरदाराःपराभवम् ॥८॥ इहसंतोनवासंतिसतोवानानुवर्तसे॥यथाहिविपरीतातेबुद्धिराचारवर्जिता ॥९॥ वचोमिथ्याप्रणीतात्मापथ्यमुक्तंविचक्षणैः ॥ राक्षसानामभावायत्वंवानप्रतिपद्यसे ॥१०॥ अकृतात्मानमासाद्यराजानमनयेरतम् ॥ समृद्धानि विनश्यंतिराष्ट्राणिनगराणिच ॥ ११ ॥ तथैवत्वांसमासाद्यलंकारत्नौघसंकुला ॥ अपराधात्तवैकस्यनचिराद्विनशिष्यति ॥ १२ ॥ स्वकृतैर्हन्य मानस्यरावणादीर्घदर्शिनः ॥ अभिनंदंतिभूतानिविनाशेपापकर्मणः ॥ १३ ॥ एवंत्वांपापकर्माणंवक्ष्यंतिनिकृताजनाः ॥ दिष्टचैतद्व्यसनंप्राप्तोरौ द्रइत्येवहर्षिताः ॥ १४ ॥ शक्यालोभयितुंनाहमैश्वर्येणधनेनवा ॥ अनन्याराघवेणाहंभास्करेणयथाप्रभा ॥ १५ ॥ उपधायभुजंतस्यलोकनाथ स्यसत्कृतम् ॥ कथंनामोपधास्यामिभुजमन्यस्यकस्यचित् ॥ १६ ॥

और नगर नष्टहो जाते हैं ॥११॥ इसी प्रकारसे तुमको पायकर रत्नोंसे पूर्ण लंका एक तुम्हारेही अपराधसेही शीघ्रही नष्ट होगी ॥ १२ ॥ जो अज्ञानी अप ने कर्मोंके दोषसे मृत्युकेनिकट पहुँचता है, उस पापकर्म करनेवालेका विनाश होनेसे सब प्राणी आनंदितहोते हैं ॥ १३ ॥इसी प्रकारसे जिसको तुमने क्लेश दिया है, सो वह तुमपापकर्मकारीके मरनेपर, सब हर्षित हो कहेंगे कि, हमारा परमभाग्यहै, जो यह दुरात्मारावण मृत्युको प्राप्त हुवा ॥१४॥ ऐश्वर्य दिखा कर याअपने धनसे तुमहमकोलुभाय नहीं सकोगे, सूर्यकी किरणजिस प्रकार सूर्यको छोड और किसीके पीछे नहीं जायसकतीं वैसेही हमभी एक श्रीरामचन्द्र जीके शिवाय और किसीकी नहीं होसकतीं ॥ १५ ॥ उन लोकनाथ श्रीरामचन्द्रजीके शोभन बाहु सिरके नीचेधर अबहम कैसे किसी दूसरेके भुज अपने

शिरके नीचे धरशयन करेंगी ॥ १६ ॥ ब्राह्मणकीब्रह्मविद्याके समान हम उन ब्रह्मज्ञानी व्रत करनेवाले महीपाल श्रीरामचन्द्रजीकेही योग्यभार्या हैं ॥ १७॥ हे रावण ! तुम्हारा मंगलहो वनमें अपनेयूथसे बिछुडीहुई हथिनीकोजिस प्रकार हाथी लेजाताहै, वैसेही श्रीरामचन्द्रजीकेसाथ दुःखसे कातर हुईहमकोतुममिलादो ॥ १८ ॥ यदि तुम अपने अधिकारको रक्षा करनेकी इच्छाकरतेहो और अपनाविनाश होनानहीं चाहतेहो, तो पुरुषश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीसे मित्रता करना तुम को कर्तव्य है ॥१९॥ सबही जानतेहैं कि, श्रीरामचन्द्रजी सर्वधर्मोंके पालनेवाले औरशरण आयेकी रक्षाकरनेवालेहैं, यदि तुम अपने जीवित रहनेकी इच्छा करतेहो तो उन श्रीरामचन्द्रजीसे मित्रता करो ॥ २० ॥ तुमउन शरणागतवत्सल श्रीरामचन्द्रजीको प्रसन्न करो भक्तिभावसे हमकोवहां लेजाकर रामचन्द्रजी

अहमौपयिकीभार्यातस्यैवचधरापतेः ॥ व्रतस्नातस्यविद्येवविप्रस्यविदितात्मनः ॥ १७ ॥ साधुरावणरामेणमांसमानयदुःखिताम् ॥ वनेवासितयासार्धंकरेण्वेवगजाधिपम् ॥ १८ ॥ मित्रमौपयिकंकर्तुरामःस्थानंपरीप्सता ॥ वधंचानिच्छताघोरंत्वयासौपुरुषर्षभः ॥ १९ ॥ विदितःसर्वधर्मज्ञःशरणागतवत्सलः ॥ तेनमैत्रीभवतुतेयदिजीवितुमिच्छसि ॥ २० ॥ प्रसादयस्वत्वंचैनंशरणागतवत्सलम् ॥ मांचास्मैप्रयतोभूत्वानिर्यातयितुमर्हसि ॥ २१ ॥ एवंहितेभवेत्स्वस्तिसंप्रदायरघूत्तमे ॥ अन्यथात्वंहिकुर्वाणःपरांप्राप्स्यसिचापदम् ॥ २२ ॥ वर्जयेद्वज्रमुत्सृष्टंवर्जयेदंतकश्चिरम् ॥ त्वद्विधंनतुसंक्रुद्धोलोकनाथःसराघवः ॥ २३ ॥ रामस्यधनुषःशब्दंदश्रोष्यसित्वंमहास्वनम् ॥ शतक्रतुविसृष्टस्यनिर्घोषमशनेरिव ॥ २४ ॥ इहशीघ्रंसुपर्वाणोज्वलितास्याइवोरगाः ॥ इषवोनिपतिष्यंतिरामलक्ष्मणलक्षिताः ॥ २५ ॥ रक्षांसिनिहनिष्यंतःपुर्यांमस्यांनसंशयः ॥ असंपातंकरिष्यंतिपतन्तःकंकवाससः ॥२६॥ राक्षसेंद्रमहासर्पान्सरामगरुडोमहान् उद्धरिष्यतिवेगेनवैनतेयइवोरगान् ॥२७॥

को सौंपदेना तुम्हारा परम कर्तव्यहै ॥२१॥ जोइस प्रकारसेहमें लेजाकर श्रीरामचन्द्रजीको सौंपदोगे तभीतुम्हारा कल्याणहै, और जो इससे विरुद्धकरोगे तो महाविपद्में पडोगे॥ २२ ॥ इन्द्रजीका श्रेष्ठवज्रचाहे तुम्हेछोडदे और यमभी चाहैंबहुत दिनोंतक जीवित रक्खें, परन्तु लोकोंके नाथ श्रीरामचन्द्रजी जब क्रोधितहोंगेतब तुमसेदुष्टकाकिसीप्रकार निस्तारनहीं ॥२३॥ इन्द्रकेछोडेहुएवज्रकेशब्दके समान श्रीरामचन्द्रजी धनुषसे छुटेहुएबडे२बाणोंका महाशब्दतुम सुनोगे२४ श्रीरामलक्ष्मणजीकेनामसे अंकितबडी फोंकलगे हुएप्रकशितबाण ज्वलितमुख सर्पगणोंके समान शीघ्रही इस लंकामें गिर कर॥२५॥इस नगरीके राक्षसोंका संहार करेंगे कंकपत्र लगे,तीखेअनीवालेइतने बाणयहांपर गिरेंगेकि, लंकामेंतिल धरनेकीभी जगहन मिलेगी,इसमेंकुछभी संशयनहींहै॥२६॥जिसप्रकार गरुडजी वेगसे महा

सर्पोंकोउडाकर लेजातेहैं, रामरूपी गरुडजीभी वैसेही राक्षसरूपी सर्पोंको उडाकरलेजायँगे ॥२७॥ विष्णुजीनेतीनवार चरण उठाकर जिस प्रकार असुरलोगोंके हाथसे उज्ज्वल लक्ष्मीका उद्धार किया था, शत्रुओंके मारनेवाले हमारे स्वामी भीवैसेही तुम्हारे हाथसेहमारा उद्धार करेंगे और लेजाँयगे ॥ २८ ॥ हतस्थान जनस्थानमें जब चौदह हजार राक्षस मारे गयेतब हे राक्षस ! तुम शक्तिरहित युद्ध न करके श्रीरामचन्द्रजीके न रहनेपर आश्रमसे चोरीकरके हमको लाये ॥२९ ॥ हे अधम ! वह मनुष्योंमें सिंहरूप दोनों भ्राता जब माया मृगके पीछे गये उससमयतुमने सूने आश्रममेंप्रवेश करहमारा हरण कियाहै॥ ३०॥ कुत्ता जिसप्रकार सिंहकी गन्ध पाकर उसके सन्मुखखडा नहीं हो सकता, वैसेहीतुम श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजीके दर्शन पायकर उनके सामने नहीं टिक सकोगे ॥ ३१ ॥ तुम ऐसे दुर्बलहो कि, यदि उन श्रीरामचन्द्रजीके साथ तुम्हारा समर होवेतो हम तुम्हारीसहाय और सम्पत्तिकीभीथिरता नहीं देखती; इस कारण वृत्रासुरकी एक बाहु

अपनेष्यतिगांभर्तात्वत्तःशीघ्रमरिंदमः॥ असुरेभ्यःश्रियंदीप्तांविष्णुस्त्रिभिरिवक्रमैः॥२८॥ जनस्थानेहतस्थानेनिहतेरक्षसांबले॥अशक्तेनत्वयार क्षःकृतमेतदसाधुवै ॥ २९ ॥ आश्रमंतत्तयोःशून्यंप्रविश्यनरसिंहयोः ॥ गोचरंगतयोर्भ्रात्रोरपनीतात्वयाऽधम ॥ ३० ॥ नहिगंधमुपाघ्रायरा मलक्ष्मणयोस्त्वया ॥ शक्यंसंदर्शनेस्थातुंशुनाशार्दूलयोरिव ॥३१॥ तस्यतेविग्रहेताभ्यांयुगग्रहणमस्थिरम् ॥ वृत्रस्येवेंद्रबाहुभ्यांबाहोरेकस्य विग्रहे ॥ ३२ ॥ क्षिप्रंतवसनाथोमेरामःसौमित्रिणासह ॥ तोयमल्पमिवादित्यःप्राणानादास्यतेशरैः ॥ ३३ ॥ गिरिंकुबेरस्यगतोथवाल यंसभांगतोवावरुणस्यराज्ञः॥ असंशयदाशरथेर्विमोक्ष्यसेमहाद्रुमःकालहतोऽशनेरिव ॥३४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी॰आदि॰ च॰ सा॰ सुन्दरकांडे एकविंशः सर्गः ॥२१॥ सीतायावचनं श्रुत्वापरुषंराक्षसेश्वरः ॥ प्रत्युवाचततःसीतांविप्रियंप्रियदर्शनाम् ॥१॥ यथायथासांत्वयि तावश्यःस्त्रीणांतथातथा ॥ यथायथाप्रियंवक्तापरिभूतस्तथातथा ॥२॥

जैसे इन्द्रजीके दोनों बाहोंसेपराजित हुईथीं. वैसेही तुमको श्रीराम लक्ष्मणजीसे पराजित होना पडेगा ॥३२॥ सूर्य जिसप्रकार थोडेसे जलको सुखाय लेते हैं, वैसेही हमारे प्राणनाथ श्रीरामचन्द्रजीलक्ष्मणजीकी सहायतासे तुम्हारे प्राणोंको तुम्हारे शरीरसे खैंच लेंगे ॥ ३३ ॥ तुमकुबेरके स्थान कैलास पर्वत पर चले जाओ, अथवा भयके मारे राजा वरुणकी सभामेंजाओ; परंतु कालसे हत हुआबडा भारी वृक्ष जिस प्रकार इंद्रजीके वज्र लगनेसे गिरजाता है, वैसेही निश्चय तुमभी, दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजीके हाथसे अपने प्राण गँवाओगे ॥ ३४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा॰ वा॰ आदि सुंदरकांडे भाषायामेकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥ वैदेहीजीके यह कठोर वचन सुनकर राक्षसनाथ रावण उन प्रिय दर्शनवाली सीताजीसे कुप्यारे वचन कहने लगा ॥ १ ॥ लोकमें देखा जाताहै कि, पुरुषस्त्रीको

जितना समझाता है, स्त्री उतनाही उस पुरुषकेवशमें होजातीहै; परंतु हमने जितनेप्रिय वचनतुमसेकहे तुमने उतनाही हमारा अनादर किया॥ २॥ तुम्हारे ऊपर हमको क्रोधहोताहै, परन्तुअच्छा सारथी कुमार्गमेंजाते हुएघोडोंको जिस प्रकारसेअपने वशमेंरखता है,वैसेही तुम्हारेप्रति उत्पन्न हुएकामने इस क्रोधको रोक रक्खा है ॥ ३ ॥ मनुष्योंके लिये कामही बडा दारुण है, क्योंकि जो कामके वश हुआ, वह चाहे क्रोधका भी पात्र हो परन्तु कामके मारे उसमें दया, स्नेह, उत्पन्न होही जायगा ॥ ४ ॥ हे सुंदरवदनवाली ! इस कारणसेही हमतुमको नहीं मार डालते हैं,परंतु तुममारडालने और निरादर करनेके योग्यही हो; तुमने वृथाहीयह तापसव्रत धारण किया है और मिथ्या तपस्वीमेंतुम प्रीति करनेवाली हो ॥५॥ हे मैथिली ! तुमने जोयह कठोर वचन हमको कहे,उन एक २ वच

सन्नियच्छतिमेक्रोधंत्वयिकामःसमुत्थितः॥द्रवतोमार्गमासाद्यहयानिवसुसारथिः॥३॥वामःकामोमनुष्याणांयस्मिन्किलनिबध्यते॥जनेतस्मि
स्त्वनुक्रोशःस्नेहश्चकिलजायते ॥ ४ ॥ एतस्मात्कारणान्नत्वांघातयामिवरानने ॥ वधार्हामवमानार्हांमिथ्याप्रव्रजनेरताम् ॥ ५ ॥ परुषाणि
हिवाक्यानियानियानिब्रवीषिमाम् ॥ तेषुतेषुवधोयुक्तस्तवमैथिलिदारुणः ॥ ६ ॥ एवमुक्त्वातुवैदेहींरावणोराक्षसाधिपः ॥ क्रोधसंरंभसंयुक्तः
सीतामुत्तरमब्रवीत् ॥ ७ ॥ द्वौमासौरक्षितव्यौमेयोऽवधिस्तेमयाकृतः ॥ ततःशयनमारोहममत्वंवरवर्णिनि ॥ ८ ॥ द्वाभ्यामूर्ध्वंतुमासाभ्यांभ
र्तारंमामनिच्छतीम् ॥ ममत्वांप्रातराशार्थेसूदाश्छेत्स्यंतिखंडशः ॥ ९ ॥ तांभर्त्स्यमानांसंप्रेक्ष्यराक्षसेंद्रेणजानकीम् ॥ देवगंधर्वकन्यास्ताविषेदु
र्विकृतेक्षणाः ॥ १० ॥ ओष्ठप्रकारैरपरानेत्रैर्वक्रैस्तथापराः ॥ सीतामाश्वसयामासुस्तर्जितांतेनरक्षसा ॥ ११ ॥

नके लियेबडे निष्ठुरपनसे तुमको मारना उचितहै ॥६॥ राक्षस रावण विदेहकुमारी सीताजीको क्रोधसे भरे हुये यह वचन कह फिर उनके बचनोंका उत्तर देने लगा ॥७॥ हमनेजो अवधि दी है, उस बारह मासमेंदो मास शेष हैं सो दो महीनेतक और देखेंगे।सुन्दरी ! उस अवधिके पीछे फिर तुमको हमारी सेजपर आना पडेगा ॥८॥दो मासके वीतजानेपरयदि तुमहमें स्वामीभावसे भजनेकीइच्छा न करोगी तोरसोइयेलोग हमारेप्रातःकालके भोजनके लिये तुम्हें टुकडे २ करके काट डालेंगे ॥ ९ ॥ जब इस प्रकार राक्षस रावणने जानकीजीको धमकाया, तब उसके संगजो देवता और गन्धर्वोंकी कन्या आई थीं वह सब कातरनेत्र और शोकित हुई ॥१०॥ और कोई अधर, कोई नेत्र, और कोइ मुखचलाय २ शोक करके राक्षसराजसे पीड़ित जानकीजीको समझाने बुझाने

लगी ❀ ॥ ११ ॥ उनके समझानेसे धीरज बांध, सीताजी सदाचार और श्रीरामचन्द्रजी अपनेस्वामीके वीर्यका विश्वास करके गर्वित वचन राक्षसमति रावणसे बोलीं ॥ १२ ॥ हमजानतीहैं कि, इस लंकानगरीमें ऐसा कोई जन नहींहै; कि जो तुम्हारे हितकी कामनाकरताहो. कारणकि, जो कोई होता तो वह अवश्यही तुमको इस निन्दनीय कर्मसे रोकता ॥ १३ ॥ जिसप्रकार इंद्रजीकी शची वैसेही धर्मात्मा श्रीरामचंद्रजीकीहम धर्मपत्नी है, त्रिलोकमें तुम्हारे सिवाय ऐसा कौन दुरात्मा है ? जो मनसे भी हमारी प्रार्थना करता हो ॥१४॥ हे राक्षसोंमेंनीच ! तुमने अमिततेजस्वी श्रीरामचंद्रजीकी भार्यासे जो पाप कथाकही, इससे कहीं जानेपर भी तुम्हारा निस्तार नहीं ॥ १५ ॥ रे नीच ! वनमें दर्पित हाथी खरगोश भी एक साथ हो रहते हैं, उनमें हाथीके समान श्रीरामचंद्रजी और

ताभिराश्वासितासीतारावणंराक्षसाधिपम् ॥उवाचात्महितंवाक्यंवृत्तशौंडीर्यगर्वितम् ॥१२॥ नूनंनतेजनःकश्चिदस्मिन्निःश्रेयसिस्थितः॥निवारयतियोनत्वांकर्मणोऽस्माद्विगर्हितात् ॥१३॥मांहिधर्मात्मनःपत्नींशचीमिवशचीपतेः॥ त्वदन्यस्त्रिषुलोकेषुप्रार्थयेन्मनसापिकः ॥१४॥ राक्षसाधमरामस्यभार्याममिततेजसः ॥ उक्तवानसियत्पापंक्वगतस्तस्यमोक्ष्यसे ॥१५॥ यथादृप्तश्चमातंगःशशश्चसहितौवने ॥ तथाद्विरदवद्रामस्त्वंनीचशशवत्स्मृतः॥१६॥सत्वमिक्ष्वाकुनाथंवैक्षिपन्निहनलज्जसे॥ चक्षुषोविषयेतस्यनयावदुपगच्छसि ॥१७॥ इमेतेनयनेक्रूरेविकृतेकृष्णपिंगले॥क्षितौनपतितेकस्मान्मामनार्यनिरीक्षतः ॥ १८ ॥ तस्यधर्मात्मनःपत्नींस्नुषांदशरथस्यच ॥ कथंव्याहरतोमांतेनजिह्वापापशीर्यति ॥ १९ ॥ असंदेशात्तुरामस्यतपसश्चानुपालनात् ॥ नत्वांकुर्मिदशग्रीवभस्मभस्मार्हतेजसा ॥ २० ॥ नापहर्तुमहंशक्यातस्यरामस्यधीमतः ॥विधिस्तववधार्थायविहितोनात्रसंशयः ॥२१॥

खरगोशके तुल्य तुम हो ॥ १६ ॥ सो खरगोशके समान तुमजबतक इक्ष्वाकुनाथ श्रीरामचन्द्रजीकी दृष्टि नहीं पडते, तबतकही तुम रघुनाथ रामचंद्रजीकी निन्दा करकेनहीं लजाते हो ॥ १७ ॥ जो तुम बुरीदृष्टिसे हमारी ओर नेत्र डालते हो तो तुम्हारे कृष्णपिंगल वर्णवाले क्रूर और विकराल दोनों नेत्र क्यों नहीं निकलकर पृथ्वीपरगिर पडते ॥१८॥ पापात्मन् हम उन धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्रीऔर राजादशरथजीकी पुत्रवधूहैं, सोहमारे लियेखोटे वचन कहते हुए तुम्हारी जीभ कटकर क्यों नहीं गिर पडती ? ॥ १९ ॥ हे दशग्रीव ! हमारा ऐसा तेज है कि, हम तुमकोभस्म कर सकती हैं; परन्तु एक तो श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा नहीं, और दूसरे हमतापसव्रत पालन करती हैं इससे तुमको भस्म नहीं किया ॥ २० ॥ तुम किसी प्रकारसे भी उन

❀ समझाना बुझाना सतानसेही हुआ था कि यह रावणबलसे कुछ नहीं कर सक्ता क्योंकि शापित है ।

बुद्धिमान् श्रीरामचन्द्रके निकटसे हमको हरण नहीं कर सकते, निश्चय जान रक्खो कि, हमारे हरण होनेका संयोग विधाताने तुम्हारे संहार करनेके लिये बनाया है ॥ २१ ॥ तुम वीर हो, कुवेरके भ्राता हो, उसपर तुममें बलभी बहुत है, फिर तुमने किस प्रकार लज्जा छोड श्रीरामचंद्रजीको माया द्वारा आश्रमसे दूरकर चोरीसे हमाराहरण किया ? ॥२२॥ सीताजीके यह कठोर वचनसुनकर राक्षसपति रावण अपने दोनों क्रूर नेत्र घुमाय जानकीजीकी ओर निहारने लगा ॥२३॥ रावण देखनेमें नील वर्णवाले मेघके समान, उसकी भुजायें और गर्दन बडी थी, गमनसिंहके समान वेगवान् जीभ औरदीप्त नेत्र उसके बडे तेजयुक्त थे ॥ २४ ॥ मुकुटके आगेका भाग शिरसे कुछेक खसक रहा था उसका आकार अतिबडा कण्ठमें विचित्र माला और अंगोंमें भाँति २ के उबटनेलगे वहश्रीमान् लालहीमाला, लालही वस्त्र और उजले बाजू हाथमें पहरे था ॥२५॥ बडी भारी तगडी नितम्बोंमें पहरनेसे वहऐसा

शूरेणधनदभ्रात्राबलैःसमुदितेनच॥ अपोह्यरामंकस्माद्धिदार चौर्यंत्वयाकृतम् ॥२२॥ सीतायावचनंश्रुत्वारावणोराक्षसाधिपः ॥ विवृत्यनयने क्रूरेजानकीमन्ववैक्षत ॥ २३ ॥ नीलजीमूतसंकाशोमहाभुजशिरोधरः ॥ सिंहसत्त्वगतिःश्रीमान्दीप्तजिह्वोग्रलोचनः ॥२४॥ चलाग्रमुकुटप्रांशुश्चित्रमाल्यानुलेपनः॥रक्तमाल्यांबरधरस्तप्तांगदविभूषणः॥२५॥श्रोणीसूत्रेणमहतामेचकेनसुसंवृतः॥अमृतोत्पादनेनद्धोभुजंगेनेवमंदरः॥२६॥ ताभ्यांसपरिपूर्णाभ्यांभुजाभ्यांराक्षसेश्वरः॥ शुशुभेऽचलसंकाशःशृंगाभ्यामिवमंदरः ॥ २७ ॥ तरुणादित्यवर्णाभ्यांकुंडलाभ्यांविभूषितः ॥ रक्तपल्लवपुष्पाभ्यामशोकाभ्यामिवाचलः॥ २८ ॥ सकल्पवृक्षप्रतिमोवसंतइवमूर्तिमान् ॥ श्मशानचैत्यप्रतिमोभूषितोऽपिभयंकरः ॥ २९ ॥ अवेक्षमाणोवैदेहींकोपसंरक्तलोचनः ॥ उवाचरावणःसीतांभुजंगइवनिःश्वसन् ॥ ३० ॥ अनयेनाभिसंपन्नमर्थहीनमनुव्रत ॥ नाशयाम्यहमद्य त्वांसूर्यःसंध्यामिवौजसा ॥ ३१ ॥

शोभित होरहा था मानो अमृतको मथन करनेकेसमय मन्दराचल पर्वत सर्पसेबँध रहा है ॥२६॥ वहरावण अपनी परिपूर्ण भुजाओंसे श्रृंगोंसे शोभित मन्दराचल पर्वतके समान शोभा पाय रहा था ॥२७॥ तरुण सूर्यके समान प्रभाववाले कुण्डल उसके कानोंमें पडे हुए शोभित होते थे, मानो कोई पर्वत लाल पत्ते और लाल पुष्पधारी अशोक वृक्षोंसे शोभायमान होरहा है ॥२८॥ रावण कल्पवृक्षकेसमान और मूर्ति धारण किये हुए वसंत के समान भूषित हो रहा था, परन्तु इसभाँतिसे भूषित होनेपर भी श्मशान भूमिमें बने मन्दारके वृक्षोंके समान उसको देखकरडरही लगता था ॥ २९ ॥ ऐसा रावण क्रोधकेमारे लाल २ नेत्रकर सीताजीकीओर निहार सर्पके समान श्वासछोडतासीताजीसे बोला ॥३०॥ तुमनेजो यह व्रतपालन किया है, यह अर्थहीन और नीतिके बाहर है, इसलिये सूर्य

जिस प्रकारप्रातःकालके अन्धकारका नाश करते हैं, वैसेही आज हमतुमको मार डालेंगे ॥३१॥ शत्रुओंको रुलानेहारा रावण जानकीजीसे इस प्रकार कह फिर घोरदर्शनवाली राक्षसियोंकी ओरदेखताहुआ ॥३२॥ इनसब राक्षसियोंमें किसी२के कानबडे थे,किसीके कानगाय बैलकेकानके समानथे, और किसी२ के लम्बे कान; और किसी २ के कान बिलकुल थेही नहीं ॥३३॥ कोई हस्तिपदी, कोई अश्वपदी, कोईगोपदी, वा किसी २ के चरणोंमें अत्यंत बालथे, कोई एकाक्षी;कोई एकचरणी, किसीकेदोनों चरण बहुतबडे बडेथे, किसीकेथे ही नहीं ॥३४॥ किसीका मस्तक और गर्दन बहुत बडी थी,किसीके स्तन और उदरका प्रमाण एक अपूर्वही ढंगका था, किसीकी जीभ बडी किसीके नख विशाल थे ॥ ३५ ॥ किसीके नाक नहीं किसीका मुख सिंहके मुहके समान किसीका मुख गोमुखके समानऔर किसी२ का मुख सूकरके मुखके समानथा, उनसे रावणबोलाकि, जिससे यह जानकीजी शीघ्र हमारे वशमें आजायँ ॥ ३६ ॥

इत्युक्त्वामैथिलींराजारावणःशत्रुरावणः ॥ संदिदेशततःसर्वाराक्षसीर्घोरदर्शनाः ॥ ३२ ॥ एकाक्षीमेककर्णांचकर्णप्रावरणांतथा ॥ गोकर्णींहस्तिकर्णींचलंबकर्णीमकर्णिकाम् ॥ ३३ ॥ हस्तिपद्यश्वपद्यौचगोपदींपादचूलिकाम् ॥ एकाक्षीमेकपादींचपृथुपादीमपादिकाम् ॥ ३४ ॥ अतिमात्रशिरोग्रीवामतिमात्रकुचोदरीम् ॥ अतिमात्रास्यनेत्रांचदीर्घजिह्वानखामपि ॥३५॥ अनासिकांसिंहमुखींगोमुखींसूकरीमुखीम् ॥ यथामद्वशगासीताक्षिप्रंभवतिजानकी ॥३६॥ तथाकुरुतराक्षस्यःसर्वाःक्षिप्रंसमेत्यवा ॥ प्रतिलोमानुलोमैश्चसामदानादिभेदनैः ॥३७॥ आवर्जयतवैदेहींदंडस्योद्यमनेनच ॥इतिप्रतिसमादिश्यराक्षसेंद्रःपुनःपुनः ॥३८॥ काममन्युपरीतात्माजानकींप्रतिगर्जति ॥ उपगम्यततःक्षिप्रंराक्षसीधान्यमालिनी ॥३९॥ परिष्वज्यदशग्रीवमिदंवचनमब्रवीत् ॥ मयाक्रीडमहाराजसीतयाकिंतवानया ॥४०॥ विवर्णयाकृपणयामानुष्याराक्षसेश्वर॥ नूनमस्यांमहाराजनदेवाभोगसत्तमान् ॥४१॥

सोहे राक्षसियो ! मिलकर शीघ्रतासेऐसा करना चाहिये; प्रतिकूल व्यवहारहोया अनुकूलव्यवहारहो, समझाने बुझानेसेकामचले, याभेदसे कार्य होता हो॥३७॥ अथवा दण्डका उद्योग करके हो,तुम लोग सीताको उसका मद छुडाय हमारे वशमेंकरो, राक्षसराज रावण बार२इस प्रकारकी आज्ञा दे ॥ ३८ ॥ काम और क्रोधके वश होकर जानकीजीके प्रति गर्जनकरने लगा, उसी समय जानकीजीके ऊपर दया करके धान्यमालिनी नामक राक्षसी शीघ्रतासे रावणके निकट आ ॥ ३९ ॥ उससे लिपट कर बोली कि, हे महाराज ! आप हमारे साथ विहार करें, इस सीतासे आपका क्या प्रयोजन है ? ॥ ४० ॥हे राक्षसेश्वर ! सीता विवर्ण; दीना, मानुषी, कृपणरूप और आपका अप्रिय करने वाली है इसके माथेमें विधाताने दुर्लभ सुखका भोग करना लिखाही नहीं ॥ ४१ ॥

कारण कि, आपके बाहुबलसे एकत्र की हुई संपदाकाभोग करनाअतिदुर्लभहै इसके अतिरिक्त कामरहित स्त्रीकोजो पुरुष भोगताहै उसका शरीर संतापसे दग्ध होता रहता है ॥४२॥ कामकी अभिलाषा करनेवाली स्त्रीको जोपुरुष चाहताहैतो उसके संगरति करनेसे अत्यन्त प्रसन्नताहोतीहै। यह कहकरवह राक्षसी बलवान् रावणको और स्थानपर लेगई; मेघके समान वर्णवाला राक्षस रावण भी हँसते २ वहां सीताजीके मारनेसे निवृत्त हुआ ॥४३॥ दशानन रावण पृथ्वीको कम्पायमानकरता; प्रदीप्तमान मध्याह्नकालके सूर्यकेसमान अपने मंदिरमें प्रवेश करता हुआ ॥४४॥ उसके संगवाली देवगन्धर्व कन्यावनाग कन्या गण सब रावणको घेरे हुएउसके श्रेष्ठभवनमें चली गईं ॥४५॥ रावण धर्मपरायण स्थिरतायुक्त कम्पायमानशरीर, सीताजीको डराता हुआ और फिर उनको छोड़ कामदेवसे मोहित हो

विधत्यमर श्रेष्ठास्तवबाहुबलार्जितान् ॥ अकामांकामयानस्यशरीरमुपतप्यते ॥४२॥ इच्छन्तींकामयानस्यप्रीतिर्भवतिशोभना ॥एवमुक्तस्तु राक्षस्यासमुत्क्षिप्तस्ततोबली ॥ प्रहसन्मेघसंकाशोराक्षसःसन्यवर्तत ॥ ४३ ॥ प्रस्थितःसदशग्रीवःकंपयन्निवमेदिनीम् ॥ ज्वलद्भास्करसंकाशंप्रविवेशनिवेशनम्॥४४॥देवगंधर्वकन्याश्चनागकन्याश्चतास्ततः ॥ परिवार्यदशग्रीवंप्रविशुस्ताग्रहोत्तमम् ॥४५॥समैथिलींधर्मपरामवस्थितांप्रवेपमानांपरिभर्त्स्यरावणः॥ विहायसीतांमदनेनमोहितःस्वमेववेश्मप्रविवेशरावणः ॥४६॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥ इत्युक्त्वामैथिलींराजारावणःशत्रुरावणः ॥ संदिश्यचततःसर्वाराक्षसीर्निर्जगामह ॥ १ ॥ निष्क्रांतेराक्षसेंद्रेतुपुनरंतःपुरंगते ॥ राक्षस्योभीमरूपास्ताःसीतांसमभिदुद्रुवुः ॥२॥ ततःसीतामुपागम्यराक्षस्यःक्रोधमूर्च्छिताः ॥ परंपरुषयावाचावैदेहीमिदमब्रुवन् ॥३॥पौलस्त्यस्यवरिष्ठस्यरावणस्यमहात्मनः ॥दशग्रीवस्यभार्यात्वंसीतेनबहुमन्यसे॥४॥ततस्त्वेकजटानामराक्षसीवाक्यमब्रवीत्॥ आमंत्र्यक्रोधताम्राक्षीसीतांकरतलोदरीम् ॥५॥

अपने मन्दिरकोही चला गया ॥ ४६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुंदरकांडे भाषायां द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥ शत्रुओंको भय उपजानेवाला राजा रावण सीताजीसे ऐसा कह और सब राक्ष सियोंको यह आज्ञा देकर चला गया ॥ १ ॥ जब राक्षस चलकर अपने रनवासमें पहुँचा, तब वे अशोक वनमें सीताजीकी रक्षा करती हुई भयंकर रूपवाली राक्षसियें सीताजीके ओरको दौडीं ॥२॥ फिर वह राक्षसियें क्रोधसे मूर्च्छित हो सीताजीकेनिकट पहुँच कर उन जनककुमारीसे बडे कठोर वचन बोलीं ॥३॥ हे सीते !पुलस्त्यनंदन लोकोंमें श्रेष्ठ महात्मा रावणकी स्त्री होना तुम क्यों नहीं अपना बडा भाग्य समझती हो ? ॥४॥ इसकेपीछे एक जटा नामराक्षसी क्रोधसे लाल २ नेत्रकरती हुई सूक्ष्म उदरवाली सीताजीसेजो कि हाथनीचे कियेबैठी

हुई थी पुकारकर बोली ॥५॥ ब्रह्माजीके मानसपुत्र छैःप्रजापतियोंके मध्यमेंजो चतुर्थ प्रजापति लोकोंके विख्यात हैं उनका पुलस्त्य नाम है ॥ ६ ॥ पुलस्त्यके मानस पुत्र जो तेजस्वी महर्षिहुए उनका नामविश्रवा हुआ; उनकी प्रभाभी प्रजापति लोगोंके तुल्य हुई ॥७॥ हे बडे २ नेत्रोंवाली ! यह शत्रु लोगोंको भय उपजानेवाला रावण विश्रवा काही पुत्रहै । उन राक्षसनाथकी भार्या होना तुमको अवश्य उचितहै ॥८॥ हे सर्वश्रेष्ठाङ्गि ! हमारे कहे वचनोंको क्योंनहीं मानतीहो जब यह कह चुकी तबहरिजटा नामक राक्षसीबोली ॥९॥ यह बिलावकेसे नेत्रवाली अपने नेत्रोंको घुमातीहुई बोलीकि,जिसने तेतीस कोटी देवता और देवराजइन्द्रको सबभाँति जीतलिया है ॥१०॥ उस राक्षसेन्द्रकी भार्या होना तुमको उचितहै; क्योंकिवह बडाभारी वीर्यवान् है; वहशूर सग्राममें शत्रुओंको विनाजीते

प्रजापतीनांषण्णांतुचतुर्थोऽयंप्रजापतिः ॥ मानसोब्रह्मणःपुत्रःपुलस्त्यइतिविश्रुतः ॥ ६ ॥ पुलस्त्यस्यतुतेजस्वीमहर्षिर्मानसःसुतः ॥नाम्नासविश्रवानामप्रजापतिसमप्रभः ॥ ७ ॥ तस्यपुत्रोविशालाक्षिरावणःशत्रुरावणः ॥ तस्यत्वंराक्षसेंद्रस्यभार्याभवितुमर्हसि ॥८॥ मयोक्तंचारुसर्वांगिवाक्यंकिंनानुमन्यसे॥ततोहरिजटानामराक्षसीवाक्यमब्रवीत्॥९॥विवृत्यनयनेकोपान्मार्जारसदृशेक्षणा ॥ येनदेवास्त्रयस्त्रिंशद्देवराजश्चनिर्जितः ॥ १० ॥ तस्यत्वंराक्षसेंद्रस्यभार्याभवितुमर्हसि ॥ वीर्योत्सिक्तस्यशूरस्यसंग्रामेष्वनिवर्तिनः ॥ बलिनोवीर्ययुक्तस्यभार्यात्वंकिंनलिप्ससे॥ ॥११॥ प्रियांबहुमतांभार्यांत्यक्त्वाराजामहाबलः॥ सर्वासांचमहाभागांत्वामुपैष्यतिरावणः ॥१२॥ समृद्धंस्त्रीसहस्रेणनानारत्नोपशोभितम् ॥ अंतःपुरंतदुत्सृज्यत्वामुपैष्यतिरावणः ॥ १३ ॥ अन्यातुविकटानामराक्षसीवाक्यमब्रवीत् ॥ असकृद्भीमवीर्येण नागागंधर्वदानवाः॥ निर्जिताःसमरेयेनसतेपार्श्वमुपागतः ॥ १४ ॥ तस्यसर्वसमृद्धस्यरावणस्यमहात्मनः ॥ किमर्थंराक्षसेंद्रस्यभार्यात्वंनेच्छसेऽधमे ॥ १५ ॥

नहीं लौटताउस बलवान् वीर्य शालीकी स्त्री होनातुम क्योंनहीं अंगीकार करती हो ? ॥११॥ महाबलवान् राजा रावण सब स्त्रियोंसे अधिक भाग्यवती और परमआदर पाईहुई मंदोदरीकोभी छोड कर तुम्हारेही निकट रहाकरेंगे ॥१२॥ रावणके रनवासमें हजारोंस्त्रियेंअति ऋद्धियुक्त व अपने रत्नोंसे सुशोभितहैं, वह उन ऐसी स्त्रियोंको रनवासमेंही छोडकर तुम्हारेही वशहोंगे ॥१३॥ विकटा नामऔर एकराक्षसी बोलीकि जिनसे भयंकर विक्रम करके समरमें बार २ अनेक देव गन्धर्वऔर दानवोंको अमित वार पराजय किया हैं,वह राक्षसराज रावण अपने आप तुम्हारे निकट आया ॥ १४ ॥ तथापिहे अधमे!उन सर्वधन सम्पन्न

राक्षसोंके नाथ रावणकी भार्या होजानेमें तुम्हारी वासना क्यों नहीं होती ॥१५॥ फिर दुर्मुखीनामक राक्षसी सीताजीसे बोलीकि, जिससे भयसे भीतहोकर सूर्य अधिकाईसे नहींतपते और वायु जोरसे नहीं चलती हे आकर्णलोचने (बडे २ नेत्रवाली !)तुम उसरावणके समीप क्यों नहीं जातीहो ? ॥ १६ ॥ जिसकी इच्छा होतेही वृक्षगण भयकेमारे फूलोंकी वर्षा, और पर्वत व मेघगण जलदिया करतेहैं ॥ १७॥हे भामिनि!उन राजराजेश्वर रावणकीभार्या होनेका तुम्हारा मन क्यों नहीं चाहता ? ॥१८॥हे भामिनि!देखो हमतो तुमसे तुम्हारे हितकीहीबात कहतीहैंहेशुचिस्मिते ! (मंदमुसकानवाली) तुमहमारी बातकोमानो नहीं तो तुम अपने जीवनकी रक्षान कर सकोगी ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥

ततस्तांदुर्मुखीनामराक्षसीवाक्यमब्रवीत् ॥ यस्यसूर्योनतपतिभीतोयस्यसमारुतः ॥ नवातिस्मायतापांगिकिंत्वंतस्यनतिष्ठसे ॥ १६ ॥ पुष्पवृष्टिंचतरवोमुमुचुर्यस्यवैभयात् ॥ पानीयं सुस्रुवुःशैलाजलदाश्चयदेच्छति॥१७॥तस्यनैर्ऋतराजस्यराजराजस्य भामिनि॥किंत्वंनकुरुषेबुद्धिंभार्यार्थेरावणस्यहि॥१८॥साधुतेतत्त्वतोदेविकथितंसाधुभामिनि॥गृहाणसुस्मितेवाक्यमन्यथानभविष्यसि॥१९॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०सुन्दरकांडे त्रयोविंशः सर्गः॥२३॥ततःसीतांसमस्तास्ताराक्षस्योविकृताननाः॥परुषंपरुषानर्हामूचुस्तद्वाक्यमप्रियम्॥१॥ किंत्वमंतःपुरेसीतेसर्वभूतमनोरमम्॥महार्हशयनोपेतेनवासमनुमन्यसे॥२॥ मानुषेमानुषस्यैवभार्यात्वंबहुमन्यसे ॥ प्रत्याहरमनोरामान्नत्वंजातुभविष्यति ॥३॥ त्रैलोक्यवसुभोक्तारंरावणंराक्षसेश्वरम्॥भर्तारमुपसंगम्यविहरस्वयथासुखम् ॥ ४ ॥ मानुषीमानुषंतंतुराममिच्छसिशोभने ॥ राज्याद्भ्रष्टमसिद्धार्थंविप्लवंतमनिंदिते ॥ ५॥ राक्षसीनांवचःश्रुत्वासीतापद्मनिभेक्षणा ॥ नेत्राभ्यामश्रुपूर्णाभ्यामिदंवचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥

इसके पीछेयह समस्त विकरालमुखी राक्षसियां सब एक साथ मिलकर कठोरवचन कहनेके अयोग्य जानकीजीसे कठोर व अप्रियवचन कहने लगीं ॥ १ ॥ हे सीते ! सर्व प्राणियोंका मन हरणकारी बडे २ मोलकी सेजोंसे युक्त अन्तःपुरमेंवास करनेकी तुम्हारी इच्छा क्योंनहीं होती ? ॥२॥ हे मानुषी ! मनुष्यकी भार्या होनेको तुम बहुत बडा समझतीहो, परन्तु अब तुम रामसे अपने मनको हटाओ, जोतुमने मनमें विचाराहै; वह कभी सिद्ध नहीं होगा हम तुमको मार डालेंगी ॥ ३ ॥ राक्षसोंके नाथ रावण त्रिलोकीका सुख भोग करतेहैं, सो तुम उसऐसे स्वामीके साथ यथासुखसे विहार करो ॥ ४ ॥ हे अनिन्दिते ! (निन्दारहित) तुम जोमानुषीहो, इसलियेही राज्यभ्रष्ट, लक्ष्मीरहितऔर विह्वल मनुष्य रामचन्द्रजीकीही कामना करतीहो ॥५॥ कमलदलसमान नेत्रवालीसीताजी

राक्षसियोंके यह वचन सुनकर नेत्रोंमें जलभरकर बोलीं ॥६॥ तुम लोग सब मिलकर जो यहवचन कहती हो यह लोकोंको विरुद्ध और पापहोनेके कारण हमारे मनमें स्थान नहीं पाते ॥७॥ मानुषी कभी राक्षसकी स्त्री नहीं होसकती चाहे सब मिलकरहमें खाडालो, परंतु तुम जो कहतीहो वह हम कभीन करेंगी ॥८॥ दीनहो चाहे राज्यहीन होंजो हमारे स्वामीहैं, वही हमारेगुरु हैं;सूर्यकीस्त्री सुवर्च्चलाजैसे सूर्यकी,वैसेही हमनित्यअपने स्वामीकी अनुरागनीहैं ॥९॥जिस प्रकार यशस्विनी शचीइंद्रजीमें प्रीतिरखतीं,जैसे अरुंधती वसिष्ठजीमें, रोहिणी जिसप्रकार चन्द्रमाजीमें ॥१०॥ लोपामुद्रा जैसे अगस्त्यजीमें, सुकन्या जिसप्रकार च्यवनजीमें सावित्रीजिस प्रकार सत्यवानमें, श्रीमती जैसे कपिलदेवजीमें ॥११॥ दमयंती जिसप्रकार सौदासमें,केशिनी जैसे सगरमें,और भी मकुमारी दमयंती

यदिदंलोकविद्विष्टमुदाहरतसंगताः ॥ नैतन्मनसिवाक्यंमेकिल्बिषंप्रतितिष्ठति ॥७॥ नमानुषीराक्षसस्यभार्याभवितुमर्हति ॥ कामंखादतमां सर्वानकरिष्यामिवोवचः ॥ ८ ॥ दीनोवाराज्यहीनोवायोमेभर्तासमेगुरुः ॥ तंनित्यमनुरक्तास्मियथासूर्यंसुवर्चला ॥ ९ ॥ यथाशचीमहाभागा शक्रंसमुपतिष्ठति ॥ अरुंधतीवसिष्ठंचरोहिणीशशिनंयथा ॥ १० ॥ लोपामुद्रायथागस्त्यंसुकन्याच्यवनंयथा ॥ सावित्रीसत्यवंतंचकपिलंश्री मतीयथा ॥ ११ ॥ सौदासंमदयंतीवकेशिनीसगरंयथा ॥ नैषधंदमयंतीवभैमीपतिमनुव्रता ॥१२॥ तथाहमिक्ष्वाकुवरंरामंपतिमनुव्रता ॥ सीता यावचनंश्रुत्वाराक्षस्यःक्रोधमूर्च्छिताः ॥ भर्त्सयंतिस्मपरुषैर्वाक्यैरावणचोदिताः ॥१३॥ अवलीनः सनिर्वाक्योहनूमाञ्छिंशपाद्रुमे ॥ सीतां संतर्जयंतीस्ताराक्षसीरशृणोत्कपिः ॥ १४ ॥ तामभिक्रम्यसंरब्धांवेपमानांसमंततः ॥ भृशंसंलिलिहुर्दीप्तान्प्रलंबान्दशनच्छदान् ॥ १५ ॥ ऊचुश्चपरमक्रुद्धाःप्रगृह्याशुपरश्वधान् ॥ नेयमर्हतिभर्तारंरावणंराक्षसाधिपम् ॥१६॥ सामर्त्स्यमानाभीमाभीराक्षसीभिर्वरांगना ॥ सावाष्पमपमा र्जंतीशिंशपांतामुपागमत् ॥ १७ ॥

जिसप्रकार अपने स्वामी नलमें प्रीति रखतीथी ॥१२॥ वैसेहीहम इक्ष्वाकुनाथ अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीकी अनुव्रता हैं, सीताजीके ऐसे वचन सुनकर राक्षसियां क्रोधसे मूर्च्छित हो गई और रावणकी आज्ञासे कठोर वचन कह २ कर जानकीजीका अपकार करने लगीं॥१३॥ हनुमानजी चुपचाप रह कर शिंशपावृक्षके पत्रोंमेंछिपे हुए बैठे थे, सीता जीको जो राक्षसियोंने डराया धमकाया वानरश्रेष्ठ हनुमानजीने वहसबसुना ॥१४॥वह सब क्रोधसे भरी हुई राससियें, कम्पित शरीरवाली जानकीजीके निकटआय उनकोचारों ओरसे घेरअपने लंबे२अधर वारंवार जीभसे चाटनेलगीं ॥ १५ ॥औरमहाक्रोधकर अपने २ हाथोंमें फरशा ग्रहण कर बोलीं, कि, यह सीता राक्षस राज रावणको अपना स्वामी बनानेके योग्य नहीं है ॥ १६ ॥ जब भयंकररूप वाली राक्ष

सियें इस प्रकारसे अपमान करने लगीं; तब सीताजी आँसू पोंछती २ उसशिंशपा वृक्षके निकट आने लगीं, जहाँ महावीरजीथे ॥१७॥ इसके पीछे राक्षसियोंके वशमें पड़ी विशाल नेत्रवाली सीताजी इसी शिंशपावृक्षके निकट आयकरशोकमें मग्न हो बैठ गईं ॥१८॥ और वह सब राक्षसियें चारों ओरसे उन दुर्बल,मलीन वदन; वा मलीनही वस्त्र धारण किये जानकीजी की भर्त्सना करने लगीं ॥१९॥ जब जानकीजी बैठ गईं तब भयंकर दांत युक्त क्रोधाय मान मूर्ति अतिगम्भीर पेटवाली विनता नाम राक्षसी क्रोधसे बोली ॥२०॥ हे सीता! तुमनेअबतक जोइतना स्नेह अपने स्वामीपरदिखाया, सो बहुत हो चुका परन्तु हेभद्रे! सबकार्योंमें ही अति मात्र अचरण करना केवलदुखःकेही निमित्त होता है॥ २१ ॥ हे भद्रेहम तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हुईहैं तुम्हारा मंगल होवे मनुष्यको जिस प्रकारका आचरण करना कर्त्तव्य है वह तो किया परन्तु हे मैथिलि ! अब जो हम तुमको हितकारी वचन कहतीहैं, उनको तुम पालन

ततस्तांशिंशपांसीताराक्षसीभिःसमावृता ॥ अभिगम्यविशालाक्षीतस्थौशोकपरिप्लुता ॥ १८ ॥ तांकृशांदीनवदनांमलिनांबरवासिनीम् ॥ भर्त्सयांचक्रिरेभीमाराक्षस्यस्ताःसमंततः ॥ १९ ॥ ततस्तुविनतानामराक्षसीभीमदर्शना ॥ अब्रवीत्कुपिताकाराकरालानिर्णतोदरी ॥ २० ॥ सीतेपर्याप्तमेतावद्भर्तुःस्नेहःप्रदर्शितः ॥ सर्वत्रातिकृतंभद्रेव्यसनायोपकल्पते ॥२१॥ परितुष्टास्मिभद्रंतेमानुषस्तेकृतोविधिः ॥ ममापितुवचः पथ्यंब्रुवंत्याःकुरुमैथिलि ॥२२॥ रावणंभजभर्तारंभर्तारंसर्वरक्षसाम् ॥ विक्रांतमापतंतंचसुरेशमिववासवम् ॥२३॥ दक्षिणंत्यागशीलंचसर्वस्य प्रियवादिनम् ॥ मानुषंकृपणंरामंत्यक्त्वारावणमाश्रय॥ २४ ॥ दिव्यांगरागावैदेहिदिव्याभरणभूषिता ॥ अद्यप्रभृतिलोकानांसर्वेषामीश्वरीभव ॥ २५ ॥ अग्नेःस्वाहायथादेवीशचीवेंद्रस्यशोभने॥ किंतेरामेणवैदेहिकृपणेनगतायुषा ॥२६॥ एतदुक्तंचमेवाक्यंयदित्वंनकरिष्यसि॥अस्मिन्मुहूर्तेसर्वास्त्वांभक्षयिष्यामहेवयम् ॥२७॥

करो ॥ २२॥ वह यह वचनहैं, कि तुमसब राक्षसोंके पति रावणको पतिभावसे भजो।वह सुरेश्वर इंद्रजीकी नाईं महापराक्रमके सहित रणमें शत्रुओंके सामने हुआ करते हैं ॥ २३ ॥ वह रावण सबके प्रति अनुकूल दाता, और सबसे प्रिय बोलने वाले हैं राम तो मनुष्य हैं तिसपर महाबुरी अवस्थासे वह घिर रहे हैं, सो तुम उनको त्याग करके रावणका आश्रय करो ॥ २४ ॥ हे विदेह नन्दिनि ! तुम अपने शरीरमें दिव्य अंगराग लगाओ,और दिव्य वस्त्राभूषणोंसे भूषित होकर, सब लोकोंकी ईश्वरी (स्वामिनी) होवो॥ २५ ॥ जैसे कि अग्निकी स्त्री स्वाहा, और इन्द्रजीकी स्त्री शची उसके साथसेशोभित होती हैं ऐसे तुम रावणके साथ शोभित होगी । हे वैदेही!रामथोडी आयुवाले और बडीबुरी अवस्थामें पडेहैं, इसलिये रामसे तुम्हारा क्या प्रयोजन है?॥२६॥ हमारे

कहे हुए इन वचनोंका जो तुम प्रतिपालन न करोगी, तो इसी समय हम सब मिलकर तुमको भक्षणकर जाँयगी ॥ २७ ॥ इसके पीछे विकटा नामक बडेलम्बे स्तनवाली और एकराक्षसी क्रोधितहोय मुक्का उठाय तर्जनाकरतीहुई जानकीजीसे बोली ॥ २८॥ मूढे मैथिलि! तुमने अनेक अयोग्य अनर्थके वचन कहे, परन्तु तुमको अतिक्षुद्र समझ और केवल दयाकरके वह सब वचन सहनकर लिये गयेहैं॥ २९॥ परन्तु हम लोगोंके समयानुसारकहे हुये वचन अनसुने करतीहो, यह तुम्हारे लिये अच्छानहीं होताहै, हे मैथिलि ! तुम समुद्रके पार लाई गईहोयहांपर और कोई नहीं आ सकता ॥ ३०॥ और तिसपर तुम रावणकेघोर रनवासमें प्रवेश किये हुई हो, यहां पर तुम रावणके गृहमें बन्दीहो और हम सब तुमको रखाती हैं॥ ३१॥ और की तो क्या चलाई साक्षात् इन्द्रजीभी तुमको यहांसे नहीं छुटाय सकते।

अन्यातुविकटानामलंबमानपयोधरा॥ अब्रवीत्कुपितासीतांमुष्टिमुद्यम्यतर्जती॥ २८॥ बहून्यप्रतिरूपाणिवचनानिसुदुर्मते॥ अनुक्रोशान्मृदुत्वाच्च सोढानितवमैथिलि ॥ २९ ॥ नचनःकुरुषेवाक्यंहितंकालपुरस्कृतम् ॥ आनीतासिसमुद्रस्यपारमन्यैर्दुरासदम् ॥ ३० ॥ रावणांतःपुरेघोरेप्रविष्टाचासिमैथिलि ॥ रावणस्यगृहेरुद्धाअस्माभिस्त्वभिरक्षिता ॥ ३१॥ नत्वांशक्तःपरित्रातुमपिसाक्षात्पुरंदरः ॥ कुरुष्वहितवादिन्यावचनंममम थिलिः ॥ ३२ ॥ अलमश्रुनिपातेनत्यजशोकमनर्थकम् ॥ भजप्रीतिंप्रहर्षंचत्यजंतीनित्यदैन्यताम् ॥ ३३ ॥ सीतेराक्षसराजेनपरिक्रीडयथा सुखम् ॥ जानीमहेयथाभीरुस्त्रीणांयौवनमध्रुवम् ॥ ३४ ॥ यावन्नतेव्यतिक्रामेत्तावत्सुखमवाप्नुहि ॥ उद्यानानिचरम्याणिपर्वतोपवनानिच ॥ ३५॥ सहराक्षसराजेनचरत्वंमदिरेक्षणे ॥ स्त्रीसहस्राणितेदेविवशेस्थास्यंतिसुंदरि ॥ ३६॥ रावणंभजभर्तारंभर्तारंसर्वरक्षसाम्॥ उत्पाटचवातेहृदयंभक्ष यिष्यामिमैथिलि ॥ ३७ ॥ यदिमेव्याहृतंवाक्यंनयथावत्करिष्यसि ॥ ततश्चंडोदरीनामराक्षसीक्रूरदर्शना ॥ ३८ ॥

हे मैथिली! हम जोतुमको हितके उपदेशदेतीहैं उन उपदेशोंको तुममानो ॥ ३२॥ आंसू गिरानेसेक्या काम चलेगा? वृथा शोकको छोडदो, प्रसन्न होकर आनंदमनाओ और इस नित्यके दीनभावका त्याग कर दो ॥ ३३ ॥ हे सीते! तुम राक्षसराजकेसाथ सुख व आनंदसे विहार करो। हे भीरु ! हम जानती हैं कि, स्त्रियोंका यौवन बहुत जल्दी बीत जाताहै॥ ३४॥ इस लिये ही कहती हैं कि, यौवनके न बीतते२ तुम सुखकोप्राप्त करो। तुम रमणीक उद्यान, उपवन और पर्वतोंमें ॥ ॥ ३५ ॥ मतवाले नयनवालीहो राक्षसराज रावणकेसाथविहार करो। हेजानकी! हेदेवि! तब सहस्रों स्त्रियाँ तुम्हारे वशमेंरहा करेंगी ॥ ३६ ॥ इसलिये तुम सर्व राक्षसोंकेमालिक रावणको अपना स्वामी बनाओ। नहीं तोहे मैथिली! हम तुम्हारा कलेजानिकालकर भक्षण कर जायँगी ॥ ३७ ॥ यह तब करेंगी कि, जब

तुम हमारा कहान मानोगी । फिर उसके पीछेक्रूर दर्शनवाली चण्डोदरी नामक राक्षसी ॥३८॥ बडेभारी शूलको घुमातीहुई सीताजीसे यह बोली कि, इन मृग शावकनयनी और भयसे कम्पायमान स्तनवाली सीताजीको ॥ ३९ ॥ रावणसे डरी हुई देख हमारे मनमें अतिबुरी इच्छा हुईहै कि, इनके उदरके दहने बायें दोनों भाग छाती, गला हृदयकंधे नसे ॥ ४० ॥ दूसरेअंग और मस्तकभी हम भक्षणकर जांय ऐसी मति हमारी हुईहै । और प्रघसा नाम राक्षसी बोली॥४१॥ कि,हम इस नृशंसाका गला दबालें सो तुमअब बैठी हुई क्या करतीहो ? फिर तुम जायकर राजा रावणको खबर करोकि; वह मानुषी मरगई इसमें संदेह नहीं कि, फिर राजायही कहेंगेकि, तुमसब मिलकर उसको खाडालोफिर अजामुखी नामक राक्षसी बोलीकि, तुम्हारा यह झगडातो मुझे अच्छा नहीं लगता तुम इसको कतरकर बराबर २ मांसके पिंड बनाओ, फिर हमसब बराबर हिस्सेकर लेंगी ॥४२॥ इसलिये पहले मदिरा पीनेको और बहुतसारे हार पहर

भ्रामयंतीमहच्छूलमिदंवचनमब्रवीत ॥ इमांहरिणशावाक्षींत्रासोत्कंपपयोधराम् ॥३९॥ रावणेनहृतांदृष्ट्वादौर्हृदोमेमहानयम् ॥यकृत्प्लीहंमह त्क्रोडंहृदयंचसबंधनम्॥४०॥ गात्राण्यपितथाशीर्षंखादेयमितिमेमतिः॥ततस्तुप्रघसानामराक्षसीवाक्यमब्रवीत् ॥४१॥"कंठमस्यानृशंसायाः पीडयामःकिमास्यते ॥ निवेद्यतांततोराज्ञेमानुषीसामृतेतिच॥१॥नात्रकश्चिच्चसंदेहःखादतेतिसवक्ष्यति॥ ततस्त्वजामुखीनामराक्षसीवाक्यमब्र वीत् ॥२॥" विशस्येमांततःसर्वान्समान्कुरुतपिंडकान् ॥ विभजामततःसर्वाविवादोमेनरोचते॥४२॥पेयमानीयतांक्षिप्रंमाल्यंचविविधंबहु ॥ ततःशूर्पणखानामराक्षसी वाक्यमब्रवीत् ॥४३॥ अजामुख्यायदुक्तंवैतदेवममरोचते ॥ सुराचानीयतांक्षिप्रंसर्वशोकविनाशिनी॥४४॥मानुषमां समासाद्यनृत्यामोऽथनिकुंभिलाम्॥एवंनिर्भत्स्यमानासासीतासुरसुतोपमा ॥ राक्षसीभिर्विरूपाभिर्धैर्यमुत्सृज्यरोदिति ॥४५॥ इत्यार्षे श्रीम द्रामायणे वाल्मीकिये आदिकाव्ये च० सा०सुन्दरकांडे चतुर्विंशः सर्गः ॥२४॥ अथतासांवदंतीनांपरुषंदारुणंबहु ॥ राक्षसीनामसौम्यानां रुरोदजनकात्मजा ॥ १ ॥ एवमुक्तातुवैदेहीराक्षसीभिर्मनस्विनी ॥ उवाचपरमत्रस्ताबाष्पगद्गदयागिरा ॥ २ ॥

नेको लाओ । फिर इसके पीछे शूर्पणखा नाम राक्षसी बोली ॥ ४३ ॥ कि, आजा मुखीकी यह बात तो हमको भी अच्छी लगतीहै, इस लिये सर्व शोक नाश करनेवाली सुरा शीघ्रही तुम लेआवो ॥ ४४ ॥ हम मनुष्यके मांसकोचख उसका स्वादले देवी निकुंभिलाके मंदिरमें जाय नाचेंगी । जबकुरूपवाली राक्ष सियोंने इस प्रकार के वचन कह २ कर जानकीजी को धमकाया तब देवताओंके समान सुन्दरी सीताजी धीरज छोडकर रोने लगीं ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० सुन्दरकांडे भाषायां चतुर्विंशः सर्गः ॥ २४ ॥ जब यह सब भयंकर रूपवाली राक्षसियें विविध भाँतिके कठोर वचन कहने लगीं तब श्रीजानकीजी रोदन करने लगीं ॥ १ ॥ उन राक्षसियोंके इस प्रकार कहने पर मनस्विनी जानकीजी त्रासित होकर गद्गद वाणीसे बोलीं ॥ २ ॥

कि मानुषी कभी राक्षसकी स्त्री नहीं हो सकती । चाहो तुम सबमिलकर हमकोखाजाओ परंतु हम म्हारे वचनोंका पालन किसी प्रकारसे न कर सकेगी॥३॥ रावण करकेतिरस्कार पायऔर राक्षसियोंके बीचमेंबैठनेसेदेव कन्याओंके समानसीताजी शोकसे कातरहोकर किसीप्रकार शांतिप्राप्त करनेको समर्थ न हुई॥४॥ वनमें भेडियोंसे घिरीहुई अपने झुण्डसे बिछुडी हरिणीके समान मानो आप अपने शरीरमें सिकुडकर पैठीजातीहुई जानकी अधिक कंपायमानहोने लगीं॥५॥ जानकीजी अशोक वृक्षकी बडीभारी फूली हुई डालका आश्रय करके शोकमें मनको डुबाये अपने स्वामीकी चिंता करने लगीं ॥ ६ ॥ आंसुओंकी धारसे बडे २ दोनों पयोधर गीले हो गये थे, तथापिइतनी चिंता करके भी जानकीजी किसी प्रकार शोकके पार न जाय सकीं ॥ ७ ॥जानकीजी प्रबल पवनके

नमानुषीराक्षसस्यभार्याभवितुमर्हति ॥ कामंखादातमांसर्वानकरिष्यामिवोवचः ॥३॥ साराक्षसीमध्यगतासीतासुरसुतोपमा ॥ नशर्मलेभेशोकार्तारावणेनचभर्त्सिता ॥ ४ ॥ वेपतेस्माधिकंसीताविशंतीवांगमात्मनः ॥ वनेयूथपरिभ्रष्टामृगीकोकैरिवार्दिता ॥५॥ सात्वशोकस्यविपुलांशाखामालंब्यपुष्पिताम् ॥ चिंतयामासशोकेनभर्तारंभग्नमानसा ॥६॥ सास्नापयंतीविपुलौस्तनौनेत्रजलस्रवैः ॥ चिंतयंतीनशोकस्यतदन्तमधिगच्छति॥७॥सावेपमानापतिताप्रवातेकदलीयथा ॥राक्षसीनांभयत्रस्ताविवर्णवदनाऽभवत्॥ ८ ॥तस्याःसादीर्घबहुलावेपंत्याःसीतयातदा॥ ददृशेकंपितावेणीव्यालीवपरिसर्पती ॥ ९ ॥ सानिःश्वसतीशोकार्ताशोकोपहतचेतना ॥ आर्तान्यसृजदश्रूणिमैथिलीविललापच ॥ १० ॥ हारामेतिचदुःखार्ताहापुनर्लक्ष्मणेतिच ॥ हाश्वश्रुर्ममकौसल्येहासुमित्रेतिभामिनी ॥ ११ ॥ लोकप्रवादःसत्योयंपंडितैःसमुदाहृतः ॥ अकालेदुर्लभोमृत्युःस्त्रियावापुरुषस्यवा ॥ १२ ॥ यत्राहमाभिःक्रूराभीराक्षसीभिरिहार्दिता ॥ जीवामिहीनारामेणमुहूर्तमपिदुःखिता ॥ १३ ॥

वेगसे गिरे हुए केलेके सामान गिर कर काँपने लगीं,राक्षसियोंके भयसे भीत होनेके कारण उनका चन्द्रमासा मुख मलिन हो गया ॥ ८ ॥ शरीरके काँपनेसे जानकीजीकी बडी लंबीवेणीभी कम्पायमानहोने लगी,उस समयऐसाबोध हुवा मानो सर्पिणी इधर उधरघूम रहीहै ॥९॥ मिथिलेशराजकुमारी जानकीजी शोकसे चेतनारहित और दुःखमें भरनेके कारण कातरहो फूट२कर आंसू गिराय रुदनकर विलाप करने लगीं ॥१०॥ वहबोलीं हा राम हा!लक्ष्मण! हा हमारी प्यारी सासु कौसल्याजी!हा सुमित्रे ! तुम कहां हो॥११॥पंडितोंकी नियतकी हुईयह कहावत सत्यहैकि,स्त्रीहो या पुरुषहो,अकालमें सबकोही मृत्यु दुर्लभ है ॥१२॥ जो ऐसा न होता तो क्या हम श्रीरामचन्द्रजी के विना इन सब राक्षसियोंसे सताई जाकर एक निमेष जीवन धारण कर सकतीं ॥ १३ ॥

हमारा पुण्यब हुत थोडा है, समुद्रके मध्य वायुके वेगसेटकराकर बोझसेभरी नावजिस प्रकारडूब जाती वैसेही है हमको दीनाहीना और अनाथाकी समानअपना जीवन गँवानापडामध्यमें ॥ १४॥ एकतो हमअपने प्राणकेप्यारे पतिकोनहीं देखती और दूसरेराक्षसियोंकेवशमें पडी हैं।इस लियेहमको जलकेवेगसे टूटतेहुए नदीके किनारेकी समान शोक सन्तापसे टकराना पडा है ॥ १५ ॥ वह हमारे कमलदलनेत्र सत्यवादीकृतज्ञ प्राणनाथ;सिंहके समान विक्रमसे गमन करते हैंजो उनकेदर्शनकरते होंगे वही धन्य हैं ॥ १६ ॥तेज विष खायकर जीवित रहनाजिस प्रकार असंभवहै, वैसेहीउन यशस्वी आत्माके जाननेवाले श्रीरामचन्द्रजीके बिहरमें हमारा जानाभी नहीं हो सकता ॥ १७ ॥ नजाने पहले जन्ममें हमने कौन महापाप किये थे किजिनका घोर महादुःख अब हम भोग रही हैं ॥ १८ ॥ इस लिये

एषाल्पपुण्याकृपणाविनशिष्याम्यनाथवत् ॥ समुद्रमध्येनौःपूर्णावायुवेगैरिवाहता॥१४॥भर्तारंतमपश्यंतीराक्षसीवशमागता॥सीदामिखलुशोकेनकूलंतोयहितंयथा ॥१५॥ तंपद्मदलपत्राक्षंसिंहविक्रांतगामिनम् ॥ धन्याःपश्यंतिमेनाथंकृतज्ञंप्रियवादिनम् ॥१६॥ सर्वथातेनहीनायारामेणविदितात्मना ॥ तीक्ष्णंविषमिवास्वाद्यदुर्लभंममजीवनम् ॥ १७ ॥ कीदृशंतुमहापापंमयादेहांतरेकृतम् ॥ येनेदंप्राप्यतेघोरंमहादुःखंसुदारुणम्॥ १८॥जीवितंत्यक्तुमिच्छामिशोकेनमहतावृता॥राक्षसीभिश्चरक्षंत्यारामोनासाद्यतेमया॥ १९॥धिगस्तुखलुमानुष्यंधिगस्तुपरवश्यताम्॥नशक्यंयत्परित्यक्तुमात्मच्छंदनजीवितम् ॥२०॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे पंचविंशःसर्गः॥२५॥ प्रसक्ताश्रुमुखीत्वेवंब्रुवतीजनकात्मजा॥अधोगतमुखीबालाविलप्तुमुपचक्रमे ॥१॥ उन्मत्तेवप्रमत्तेवभ्रांतचित्तेवशोचती ॥ उपावृत्ताकिशोरीवविचेष्टंतीमहीतले ॥ २ ॥

बडे भारीशोकमेंपड हम अपने जीवनकोत्याग करना चाहतीहैं परंतु किस तरह शरीर छोडें ?क्योंकियह राक्षसियें चारों ओरसे हमको रखाती हैं जीवनभी नहीं छूटता, और प्राणप्यारे रामचन्द्रजी भीनहीं मिलते ॥१९॥ पराये वशमेंपडेहुए मनुष्यजन्मको धिक्कारहै, क्योंकि अपनी इच्छा होनेपरभी पराधीनताके वशहो मनुष्य अपने जीवनको त्याग नहीं कर सकता ❀ ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां पंचविंशः सर्गः ॥ २५ ॥ यह वचन कहते २ जानकीजीका वदनमण्डल आंसुओंके जलसे गीला हो गया वह बाला नीचेको मुखकर फिर विलाप करने लगीं ॥१॥ जानकीजी बोझ उतारनेसे पृथ्वीपर लोटतीहुई घोडीके समान, भूमिमें गिर और लोट२कर विलापकरनेलगी; उस समय भूत लगेकी समान,उन्मत्तके समान, औरपित्तके उभड

* श्री रघुनन्दन लेहु उबारी ॥ महा विपत संकटमें रोवै यहवासी मनवचन तुम्हारी ॥१॥ प्राणाधार न क्यों सुधलेते पतितउधारन बिरद बिचारी ॥ २ ॥ जिमि खर दूषणको संहारो जैसेगौतम नारि उधारी ॥ ३ ॥ जैसे कठिन महा धनु तोरयो सकलजगत कीरति विस्तारी ॥ ४ ॥ मिथ ताहि विधि आन छुडाओ कृपासिंधु गुणधाम खरारी ॥ ५ ॥

आनेसेप्रमत्त और भ्रान्त चित्तकेसमान, जानकीजी जान पडने लगीं ॥ २ ॥ जानकीजी विलाप करती हुई बोलीं कि, हम श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्रीहैं कामरूपी राक्षस मारीचश्रीरामचन्द्रजीको मायासे मोहितकरजब आश्रमसे दूरले गयाथा; तब उसअव सरमें रावणसूने आश्रममें प्रवेश कर बलसहित हरण करके हमको यहां ले आयाहै, उस समय हमबडे शब्दसे कितनी रोई ॥३॥ इस समयहम राक्षसियोंके वशमें पडी हैं यहसब हमारा महाकठोर अपमान करतीहैं । हम बडेही दुःखको पाय व्याकुलहो शोकमें डूब गई हैं; इस कारण अब जीवित रहनेकी हमारी कामना नहीं ॥ ४ ॥ जब कि हम महारथी श्रीरामचन्द्रजीके बिना राक्षसियोंके बीचमेंबसतीहैं; तब धन, भूषण और जीवनसे हमको क्या प्रयोजन है ? ॥ ५ ॥ निश्चय जान पडता है कि हमारा हृदय पत्थरके समान कठिन या अजर अमर है इसी कारणसे इतनादुःख पायकरभीनहीं फटजाता ॥६॥ जबकि, हमउन श्रीरामचन्द्रजीके बिना एकमूहूर्त्तभी जीवनधारण करनेको समर्थ हुईहैं तब हमाराजीवन पापसे पूर्णहै व अनार्या और सत्यरहित हमको धिक्कारहै ॥७॥ निशाचररावणकी कामना करनीतो एक ओररही हमतो उसको अपने

राघवस्यप्रमत्तस्यरक्षसाकामरूपिणा ॥ रावणेनप्रमथ्याहमानीताक्रोशतीबलात्॥ ३ ॥ राक्षसीवशमापन्नाभर्त्स्यमानाचदारुणम् ॥ चिंतयंती सुदुःखार्तानाहंजीवितुमुत्सहे ॥४॥ नहिमेजीवितेनार्थोनैवार्थैर्नचभूषणैः ॥ वसंत्याराक्षसीमध्येविनारामंमहारथम्॥५॥ अश्मसारमिदंनूनम थवाप्यजरामरम्॥हृदयंममयेनेदंनदुःखेनविशीर्यते॥६॥धिङ्मामनार्यामसतींयाहंतेनविनाकृता॥मुहूर्तमपिजीवामिजीवितंपापजीविका ॥७॥ (काचमेजीवितेश्रद्धासुखेवातंप्रियंविना ॥ भर्तारंसागरान्तायावसुधायाःप्रियंवदम् ॥१॥ भिद्यतांभक्ष्यतांवापिशरीरंविसृजाम्यहम्॥ नचाप्य हंचिरंदुःखंसहेयंप्रियवर्जिता ॥ २ ॥) चरणेनापिसव्येनननस्पृशेयंनिशाचरम् ॥ रावणंकिंपुनरहंकामयेयंनिशाचरम् ॥ ८ ॥ प्रत्याख्यानंन जानातिनात्मानंनात्मनःकुलम् ॥ योनृशंस्वभावेनमांप्रार्थयितुमिच्छति ॥ ९ ॥ छिन्नाभिन्नाप्रभिन्नावादीप्तावाग्नौप्रदीपिता ॥ रावणंनोपतिष्ठेयं किंप्रलापेनवश्चिरम् ॥१०॥ ख्यातःप्राज्ञःकृतज्ञश्चसानुक्रोशश्चराघवः ॥ सद्वृत्तोनिरनुक्रोशःशंकेमद्भाग्यसंक्षयात् ॥ ११ ॥

बांयेचरणसे भी न छुयेंगी ॥८॥वह दुरात्मा निशाचर काममोहसे मोहितहोनेके कारण नहीं जानता कि,हमने बारम्बार उसका निरादरकियाहै। जोअपने कुल और अपने स्वरूपको नहीं जानता वह अपने कुटिलस्वभावके वशहो हमारे प्राप्त होनेकी इच्छा करताहै॥९॥ तुम लोगोंके निकटअधिक वृथा कहनेका प्रयोजन नहीं है, तुमसब हमको टुकडे२कर डालो, विदीर्ण कर डालो अथवा अग्निके तापसे तपाओ, या अग्निमें भस्मकरदो, तथापि हम रावणका भजन नहीं करेंगी ॥ १० ॥ श्रीरामचन्द्रजीविज्ञ, कृतज्ञ,दयालु और सत्स्वभावीविख्यात हैं तथापि वहजो निर्दयी हुयेहैंसो यहकेवल हमारेही भाग्यका दोषजान पडता है॥११॥

जिन्होंने अकेलेही जनस्थानमें चौदह हजार राक्षसोंका विनाश कर दिया है वह क्या यहांसे हमारा उद्धार नहीं करेंगे ? ॥ १२ ॥ "अल्पवीर्य रावणने हमको रोक तो रक्खाहै परन्तु हमारे स्वामी निश्चयही उस रावणको संग्राममें संहार करडालेंगे, जिन्होंने दंडकारण्यमें राक्षस प्रधान विराधको मारडाला है, वह श्रीरामचन्द्रजी क्या हमको प्राप्त करनेमें समर्थ नहोंगे" यद्यपि लंका समुद्रके मध्यमेंहोनेसे और लोगों करके जीतनेके अयोग्य है परंतु इस स्थानमें श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंकी गति नहीं रुक सकेगी ॥ १३ ॥ श्रीरामचन्द्रजी दृढ पराक्रमवान्हैं और हम भी उनके अनुकूल भार्याहैं, तथापि वहश्रीरामचन्द्रजी अबतक हमारा उद्धार नहींकरते, इसका कारण क्याहै ? ॥१४॥ हम जानतीहैंकि, हमाराइस स्थानमें रहना अभीतक लक्ष्मणजीकेबडे भाईने नहीं जानाहै, जो उन्होंने जान लिया होता तो क्या वह तेजस्वी हमारी दुर्दशा और अपमान क्यों सहते कभी नहीं ॥ १५ ॥ उसगृध्रराज जटायुको भी रावणने संग्राममें मार डाला, कि

राक्षसानांजनस्थानेसहस्राणिचतुर्दश ॥ एकेनैवनिरस्तानिसमांकिंनाभिपद्यते ॥१२॥ " निरुद्धारावणेनाहमल्पवीर्येणरक्षसा ॥ समर्थःखलुमे भर्तारावणंहंतुमाहवे ॥ विराधोदंडकारण्येयेनराक्षसपुंगवः ॥ रणेरामेणनिहतःसमांनाभ्यवपद्यते ॥"॥ काममंमध्येसमुद्रस्यलंकेयंदुष्प्रधर्षणा ॥ नतुराघवबाणानांगतिरोधोभविष्यति ॥१३॥ किंनुतत्कारणंयेनरामोदृढपराक्रमः ॥ रक्षसापहृतांभार्यामिष्टांयोनाभिपद्यते ॥१४॥ इहस्थांमां नजानीतेशंकेलक्ष्मणपूर्वजः॥जानन्नपिसतेजस्वीधर्षणांमर्षयिष्यति॥१५॥हृतेतिमांयोऽधिगत्यराघवायनिवेदयेत् ॥गृध्रराजोऽपिसरणेरावणेन निपातितः ॥ १६ ॥ कृतंकर्ममहत्तेनमांतदाभ्यवपद्यता ॥ तिष्ठतारावणवधेवृद्धेनापिजटायुषा ॥ १७ ॥ यदिमामिहजानीयाद्वर्तमानांहिराघवः ॥ अद्यबाणैरभिक्रुद्धःकुर्यांल्लोकमराक्षसम् ॥१८॥निर्दहेच्चपुरींलंकांनिर्दहेच्चमहोदधिम् ॥ रावणस्यचनीचस्यकीर्तिं नामचनाशयेत ॥१९॥ ततोनिहतनाथानांराक्षसीनांगृहेगृहे ॥ यथाहमेवंरुदतीतथाभूयोनसंशयः ॥ २० ॥ अन्विष्यरक्षसांलंकांकुर्याद्रामःसलक्ष्मणः ॥ नहिताभ्यां रिपुर्दृष्टोमुहूर्तमपिजीवति ॥२१॥

जो हमारे हरण करनेका समाचार श्रीरामचन्द्रजीको दे सकते ॥ १६ ॥ जटायुनेवडा भारी कार्य कियाथा, वह वृद्ध होनेपरभी हमारे प्रति अनुग्रह करकेरावणका वध करनेके लिये तैयार हुएथे ॥ १७ ॥ यदि श्रीरामचन्द्रजी यह जान लें कि हम इस स्थानमें रोकीहुई हैं, तो वह उसी समय बाणसे पृथ्वीको राक्षसरहित करदेते ॥ १८ ॥ लंकापुरीको भस्म कर डालते, महा समुद्रकोभी सुखायदेते, वरन् नीचाशय रावणकानाम उसकी कीर्तिके साथ नाश करते ॥ १९ ॥ इसमें कुछ सन्देहनहीं कि, जब श्रीरामचंद्रजी ऐसा करते तो नाथहीन राक्षसियोंके घर २ में रोनेका ऐसा शब्द होता कि जिस प्रकार हम रोया करती हैं ॥२०॥ श्रीरामचन्द्रजी ढूँढतेभालते लक्ष्मणजीके साथ लंकाको अवश्यइस प्रकारका करेंगेजब वहदोनोंजनदेख लेंगेतब उनकाशत्रु एक मुहूर्त्तकभी जीता न बचेगा२१

बहुत जल्दी श्मशानभूमिके समान लंका श्मशान हो जायगी; लंकाके सब मार्गोंमें चिता धूम उडेगा, औरगृध्रोंके झुण्डके झुण्ड लंकापर गिरेंगे ॥ २२ ॥ हमारा यह मनोरथ बहुत शीघ्र सफल होगा, हमारे यह वचन इस समय तुम लोगोंको विपरीतसे लगतेही होंगे;परंन्तु याद रक्खो कि यही तुम्हारे अशुभ चिह्न हैं ॥ २३ ॥ विशेष करकेदेखा जाताहै कि लंकामें जिस प्रकारके अशुभ चिह्न दृष्टि आतेहैं, इससे स्पष्ट जान पडताहै कि लंका शीघ्रही श्रीहीन होगी ॥ २४ ॥निश्चयही पापपरायण राक्षसराज राव णके मरनेपर आक्रमण करनेके अयोग्ययह लंका विधवा स्त्रीके समान शुष्क और श्रीहीनहो जायगी॥ २५ ॥ आज जो लंकानगरी विविध भाँतिके पुण्योत्सवोंसे परिपूर्णहो रहीहै, यही लंका रावण और राक्षसोंके मरनेपर पतिहीन स्त्रीके समान नष्ट हो जायगी ॥२६ ॥ निश्चयही हम बहुत जल्दी राक्षस कन्यागणोंके दुःखसे आर्त होकर रोदन करना घर घरमें सुनेंगी ॥ २७ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके सायकोंसेराक्षस श्रेष्ठोंके मारेजाने

चिताधूमाकुलपथागृध्रमंडलमंडिता ॥अचिरेणैवकालेनश्मशानसदृशीभवेत् ॥२२॥ अचिरेणैवकालेनप्राप्स्याम्येनंमनोरथम् ॥ दुष्प्रस्थानोयं माभातिसर्वेषांवोविपर्ययः ॥२३॥ यादृशानितुदृश्यंतेलंकायामशुभानितु ॥ अचिरेणैवकालेनभविष्यतिहतप्रभा॥२४॥नूनंलंकाहतेपापेरावणे राक्षसाधिपे॥शोषमेष्यतिदुर्धर्षाप्रमदाविधवायथा ॥२५॥पुण्योत्सवसमृद्धाचनष्टभर्त्रीसराक्षसा॥भविष्यतिपुरीलंकानष्टभर्त्रीयथांगना॥२६॥ नूनंराक्षसकन्यानांरुदतीनांगृहेगृहे ॥ श्रोष्यामिनचिरादेवदुःखार्तानामिहांध्वनिम्॥२७॥सांधकाराहतद्योताहतराक्षसपुंगवा ॥ भविष्यतिपुरी लंकानिर्दग्धारामसायकैः ॥२८॥ यदिनामसशूरोमांरामोरक्तांतलोचनः ॥ जानीयाद्वर्तमानांमांराक्षसस्यनिवेशने ॥ २९ ॥ अनेनतुनृशंसेन रावणेनाधमेनमे॥समयोयस्तुनिर्दिष्टस्तस्यकालोऽयमागतः ॥३०॥सचमेविहितोमृत्युरस्मिन्दुष्टेनवर्तते॥अकार्यंयेनजानंतिनैर्ऋताःपापकारिणः ॥ ३१ ॥ अधर्मात्तुमहोत्पातोभविष्यतिहिसांप्रतम् ॥ नैतेधर्मंविजानंतिराक्षसाःपिशिताशनाः॥ ३२ ॥ ध्रुवंमांप्रातराशार्थंराक्षसःकल्पयिष्यति ॥ साहंकथंकरिष्यामितंविनाप्रियदर्शनम् ॥ ३३ ॥

पर यह लंका प्रकाशरहित व अन्धकारमय होकर भस्महो जायगी ॥ २८ ॥ अरुणलोचन भक्तभयमोचन श्रीरामचन्द्रजी जिस दिन जानेंगे कि हम राक्षसके गृहमें पडीहैं, उसी दिन लंकानगरीकी यह दशा होजायगी ॥२९॥ निर्लज्ज निशाचर रावणने जो द्वादशमासका समय नियत कियाथा, वह नियतसमय अब आ पहुँचा है; हम जानती हैं कि इस समयमें हमारी दुर्दशा नही वरन् लंकाकी दुर्दशा होगी ॥३०॥ दुष्टमति रावणनेहमारे संहार करनेका यह समय स्थिर कियाहै, पापचारी राक्षसोंका अकार्यका कुछ ज्ञान नहीं ॥ ३१ ॥ अधर्मके हेतु इस समय महाउत्पात उपस्थितहोगा, मांस खानेवाले राक्षस नहीं जानते कि, धर्म किसको कहतेहैं ॥३२॥राक्षस रावण निश्चयही हमको खण्ड२करायकर अपने प्रातःकालीन भोजनकेलिये पाक करावेगा हाय ! प्रियदर्शन श्रीरामचन्द्र

जी हमारे निकट नहीं हैं अब हम कौन उपाय करें ? ॥ ३३ ॥ आज यदि इस स्थानमें कोईविष देसके तो हम अपने अरुण नयन पतिके अदर्शनसे उसको खाय यमराजके निकट चलीजायँ ॥ ३४ ॥ बिना श्रीरामचन्द्रजीके देखेहुए हम बहुतही दुःखितहो रहीहैं, इस अवस्थाको भोगती हुई हम जी रही हैं, यह बात भरतजीके बडेभाई श्रीरामन्द्रजीकी जानीहुई नहीं है जो वह जानते किहम अभीतक जीती हैं तो रामलक्ष्मण अवश्वही पृथ्वीपर हमाराखोज करते॥३५॥ अथवा वह लक्ष्मणजीके बडे भ्राता श्रीरामचन्द्रजी हमारेही शोकसे व्याकुल हो पृथ्वीपर देह छोड इस लोकसेदेवलोकमें चले गये होंगे ॥ ३६ ॥ देव गन्धर्व सिद्ध और महर्षिगणही-धन्य हैं कि,जो हमारे प्यारे वीर राजीवलोचन श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन देवलोकमें करते होंगे ॥ ३७ ॥ अथवा श्रीरामचन्द्रजी ब्रह्म

रामंरक्तांतनयनमपश्यंतीसुदुःखिता ॥ (यदिकश्चित्प्रदातामेविषस्याद्यभवेदिह ॥) क्षिप्रंवैवस्वतंदेवंपश्येयंपतिनाविना ॥ ३४ ॥ नाजाना ज्जीवतींरामःसमांभरतपूर्वजः ॥ जानंतौतुनकुर्यातांनोर्व्यांहिपरिमार्गणम् ॥३५॥ नूनंममैवशोकेनसवीरोलक्ष्मणाग्रजः ॥ देवलोकमितोयात स्त्यक्त्वादेहंमहीतले ॥ ३६ ॥ धन्यादेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ ममपश्यंतियेवीरंरामंराजीवलोचनम् ॥ ३७ ॥ अथवानहितस्यार्थोधर्मकामस्यधीमतः॥मयारामस्यराजर्षेर्भार्ययापरमात्मनः ॥३८॥ दृश्यमानेनभवेत्प्रीतिःसौहृदंनास्त्यदृश्यतः ॥ नाशयंतिकृतघ्नास्तुनरामोनाशयिष्यति ॥ ३९ ॥ किंवामय्यगुणाःकेचित्किंवाभाग्यक्षयोहिमे ॥ याहिसीतावरार्हेणहीनारामेणभामिनी ॥ ४० ॥ श्रेयोमेजीवितान्मर्तुंविहीनायामहात्मना॥रामादक्लिष्टचारित्राच्छूराच्छत्रुनिबर्हणात् ॥४१॥ अथवान्यस्तशस्त्रौतौवनेमूलफलाशनौ ॥भ्रातरौहिनरश्रेष्ठौचरंतौवनगोचरौ ॥ ४२ ॥

ज्ञानी और जीवन्मुक्त हैं, राजर्षि व निवृत्ति धर्ममें निरत हैं इस लिये भार्यासे उनका क्या प्रयोजन है ? कुछ भी नहीं ॥३८॥क्योंकि जो कोई आँखोंके सामने रहता है उसमेंही प्रीति उत्पन्न होती है, और फिरजब वह पदार्थ दृष्टिसे बाहरहो जाता है फिर प्रीति और सुहृदता कहां ? नहीं नहीं ? कृतघ्न लोगही प्रेमको छोड सकते हैं, हमारे प्राणनाथतो प्रेमको कभी नहीं भुलाय सकेंगे ॥ ३९ ॥ अथवा हममेंही कोई दोष होगा, या हमारे सौभाग्यका अंत होगा, बस इसी लिये नारी सीतासे श्रेष्ठपदार्थोंके ग्रहण करने वाले श्रीरामचन्द्र जीका वियोग हुआ ॥ ४० ॥ श्रेष्ठचरित्र वरनू, महावीर शत्रुओंके मारनेवाले महात्मा श्रीरामचन्द्रजीसे जब कि हमारा वियोग हुआ तब तो इस जीवनसे हमारा मरनाही अच्छा है ॥ ४१ ॥ अथवा कौनजाने कि पुरुष श्रेष्ठ राम लक्ष्मण दोनों भ्राता

अस्त्र शस्त्र त्याग फूलमूलाहारी हो; मुनियोंकी सी वृत्ति ले वनोंमें घूमतेहों ॥ ४२ ॥ अथवा दुरात्मा राक्षसराज रावणने छल करके शूरवीर श्रीराम लक्ष्मणदोनों भाइयों को मार डाला हो ॥ ४३ ॥ इस कष्टके समयमें हम अपने पूरे अंतः करणसे मरनेकी इच्छा करती हैं परन्तु इस न सहने योग्य दुःखके समय विधाता भी हमारे लिये मृत्यु नहीं देते ॥४४॥ परन्तु वहब्रह्म ध्यानपरायण सत्य सम्मत मुनिलोगभी धन्य हैं! किजो लोग आत्माको जीत लेतेहैं,वेमहाभाग्य हैं, और न जिनका कोई प्यारा न कुप्याराहै ॥ ४५ ॥ जिनको अपने प्यारेका दुःख कभी होताहीनहीं, और न कुप्यारेसे उत्पन्न हुए महादुःखका संताप होता है वरन्जो प्रिय अप्रियसे एक बारही छुटे हुयेहैं, उन महात्मा लोगोंकोहम नमस्कार करतीहैं ॥ ४६ ॥ जो कुछभी हो आत्मज्ञ और प्यारे श्रीरामचन्द्रजीनेही जब हमको

अथवाराक्षसेंद्रेणरावणेनदुरात्मना ॥ छद्मनाघातितौशूरौभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥४३॥ साहमेवंविधेकालेमर्तुमिच्छामिसर्वतः ॥नचमेविहितोमृत्युरस्मिन्दुःखेतिवर्तति ॥४४॥ धन्याःखलुमहात्मानोमुनयःसत्यसंमताः ॥ जितात्मानोमहाभागायेषांनस्तःप्रियाप्रिये ॥४५॥ प्रियान्नसंभवेद्दुःखमप्रियादधिकंभवेत्॥ताभ्यांहितेवियुज्यंतेनमस्तेषांमहात्मनाम्॥४६॥साहंत्यक्ताप्रियेणैवरामेणविदितात्मना ॥प्राणांस्त्यक्ष्यामिपापस्य रावणस्यगतावशम् ॥ ४७ ॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आ० सा० सुं० षड्विंशः सर्गः ॥२६॥ इत्युक्ताःसीतयाघोरंराक्षस्यःक्रोधमूर्च्छिताः ॥ काश्चिज्जग्मुस्तदाख्यातुंरावणस्यदुरात्मनः ॥१॥ ततःसीतामुपागम्यराक्षस्योभीमदर्शनाः ॥ पुनःपुरुषमेकार्थमनर्थार्थमथाब्रुवन् ॥२॥अद्येदानीं तवानार्येसीतेपापविनिश्चये ॥ राक्षस्योभक्षयिष्यंतिमांसमेतद्यथासुखम् ॥ ३ ॥ सीतांताभिरनार्याभिर्दृष्ट्वासंतर्जितांतदा ॥ राक्षसीत्रिजटावृद्धाप्रबुद्धावाक्यमब्रवीत् ॥४॥ आत्मानंखादतानार्यानसीतांभक्षयिष्यथ ॥ जनकस्यसुतामिष्टांस्नुषांदशरथस्यच ॥ ५ ॥

त्यागकर दिया तबपापी रावणके वशमें पडी हुईहम संतोष करके मरही जाँयगी ॥४७॥इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षड्विंशः सर्गः॥२६॥ जब क्रोधमें भरी हुई सीताजीने इस प्रकारके भयंकर वचन कहे तब कईएकभयंकर राक्षसियां क्रोधसे मूर्च्छितहो दुरात्मा रावणकोयह समाचार सुनानेके लिये गईं ॥ १ ॥औरबहुत सारी भयंकर रूपवाली राक्षसियें सीताजीके निकट आकर फिर अनर्थकारी कठोर वचन उनसे कहने लगीं ॥ २ ॥ उन्होंने कहा रे अनार्ये पापनिश्चये सीते ! आज इसी समय यह सब राक्षसियें तुम्हारा मांस सुखसे खाय कर तृप्त होंगी ॥ ३ ॥ इन सब दयारहित राक्षसियोंको सीताजीके प्रति तर्जन गर्जन करते देख कर त्रिजटानामक एकवृद्ध निशाचरी सोतेसे जागी और उन निशाचरियोंसे बोली ॥४॥ हे दुष्टो ! तुमअपने आप अपनेकोखाओ। तुम लोग

जनकजीकी कन्या और दशरथजीकी प्यारी पुत्रवधू सीताजीको नहीं खाने पाओगी॥५॥ आजहमने अतिदारुण रोमहर्षणकारी बडा बुरा स्वप्न देखा है कि, जिसमें राक्षसकुलके नाश और उनके स्वामीकी वीजय सूचना होती है ॥ ६ ॥ मारे क्रोधकेमूर्च्छित हो सब राक्षसियें त्रिजटाकी यह बात सुन डरके मारे थरथ राय सबकी सब त्रिजटासे बोलीं कि तुमने क्या स्वप्ना देखा है? ॥ ७॥ इन सब राक्षसियोंके मुखसे निकले हुए यह वचन सुनकर त्रिजटा इस प्रभातकालीन स्व प्नका वृत्तान्त कहने लगी ॥ ८ ॥ त्रिजटाने स्वप्नमें जो वृत्तान्त देखाथा वह कहने लगी कि, मानो हाथीदांतसे बनी आकाशमण्डलमें उडती दिव्य शिबिका ॥ ९ ॥ जिसमें हजार घोडे जुतरहे उसपर श्वेतपुष्पोंकी माला और श्वेतही वस्त्र धारण किये श्रीरामचंद्रजी आरोहणकर अपनेभाई लक्ष्मणजीकेसाथ वहां आये हैं ॥१०॥ और हमने स्वप्नमें यहभी देखा कि, श्वेत वस्त्र धारण किये क्षीरसागरसे घेरेहुए श्वेत पर्वत पै श्रीजानकीजी बैठी हुई हैं॥११॥ श्रीरामचन्द्रजीके संग

स्वप्नोह्यद्यमयादृष्टोदारुणोरोमहर्षणः ॥ राक्षसानामभावायभर्तुरस्याभवायच॥६॥ एवमुक्तास्त्रिजटयाराक्षस्यःक्रोधमूर्च्छिताः॥ सर्वाएवाब्रुवन्भी तास्त्रिजटांतामिदंवचः ॥७॥ कथयस्वत्वयादृष्टःस्वप्नोऽयंकीदृशोनिशि॥ तासांश्रुत्वातुवचनंराक्षसीनांमुखोद्गतम् ॥८॥ उवाचवचनंकालेत्रिजटा स्वप्नसंश्रितम् ॥ गजदंतमयींदिव्यांशिबिकामंतरिक्षगाम् ॥९॥ युक्तांवाजिसहस्रेणस्वयमास्थायराघवः ॥ शुक्लमाल्यांबरधरोलक्ष्मणेनसमाग तः ॥१०॥ स्वप्नेचाद्यमयादृष्टासीताशुक्लांबरावृता ॥ सागरेणपरिक्षिप्तंश्वेतपर्वतमास्थिता॥११॥ रामेणसंगतासीताभास्करेणप्रभायथा॥ राघ वश्चपुनर्दृष्टश्चतुर्दंतंमहागजम् ॥ १२ ॥ आरूढःशैलसंकाशंचकासस्सहलक्ष्मणः ॥ ततस्तुसूर्यसंकाशौदीप्यमानौस्वतेजसा ॥१३॥ शुक्लमाल्यां बरधरौजानकींपर्युपस्थितौ ॥ ततस्तस्यनगस्याग्रेह्याकाशस्थस्यदंतिनः ॥ १४ ॥ भर्त्रापरिगृहीतस्यजानकीस्कंधमाश्रिता ॥ भर्तुरंकात्समु त्पत्यततःकमललोचना ॥ १५ ॥ चंद्रसूर्यौमयादृष्टौपाणिभ्यांपरिमार्जती ॥ १६ ॥

मिलकर सीता सूर्यकी प्रभाके समान शोभित हुई । फिर श्रीरामचंद्रजीको मानो चौदंते बडे भारी हाथीपर चढे हुये देखा है ॥१२॥ उस पर्वताकार हाथीपर चढेश्रीरामचंद्रजी लक्ष्मणजीके सहित शोभायमानहो रहेहैं फिर सूर्यके समान प्रकाशित और अपने तेजसे दीप्ति मान ॥ १३ ॥ श्वेतमाला और श्वेतही वस्त्र धारण कियेहुए श्रीरामलक्ष्मण दोनों जने मानों सीताके निकट आये फिर उस आकाशमें अवस्थित कियेपर्वताकार हाथीके ॥ १४ ॥ कन्धे पर श्रीसीताजीने आरोहण किया है और उस गजको इनकेपति श्रीरामचंद्रजी पकडेहुएहैं तदनन्तर अपने स्वामी श्रीरामचंद्रजीकी गोदीसे उछलीहुई कमलदल नेत्रवाली जानकी जीको हमने निहारा तो ॥ १५ ॥ सूर्य और चन्द्रमाको अपने दोनों हाथोंसे परिष्कार (स्वच्छ) कर रही हैं ॥ १६ ॥

उसके पीछेउन दोनों कुमारोंको यह श्रेष्ठ गज विशाल नेत्रवाली सीताजीके साथ अपनी पीठपर चढाकर लंकाके ऊपर भागमें आय पहुँचा। फिर श्रेष्ठ आठ बैल जुडे हुएरथपर सवार हो ॥१७॥ शुक्ल माला और श्वेत वस्त्र पहरे लक्ष्मणजीके साथ सत्यपराक्रमी श्रीरामचंद्रजीको हमने स्थानपर आये हुए देखा ॥ १८ ॥ वीर्यवान् श्रीरामचंद्रजी भ्राता लक्ष्मण और जानकीजीके सहित सूर्यसमान दिव्य पुष्पक विमान पर चढे हुए॥ १९ ॥ वह पुरुषोत्तम उत्तर दिशाकी ओर चले गये औरस्वप्नमें हमने रावणको भी देखाकि, वह केश मुडाये, तेल शरीरमें लगाये ॥ २० ॥ लाल कपडे पहरे, मदिरा पान करके मतवालाहो गया है॥ और करवीरके पुष्पोंकी माला पहरे हुए पुष्पकविमानसे मानोनीचे गिरपडा है॥२१॥ फिर हमने देखाहै कि, मानो मुण्डित

ततस्ताभ्यांकुमाराभ्यामास्थितःसगजोत्तमः ॥ सीतयाचविशालाक्ष्यालंकायाउपरिस्थितः ॥ पांडुरर्षभयुक्तेनरथेनाष्टयुजास्वयम् ॥ १७ ॥ (इहोपयातःकाकुत्स्थःसीतयासहभार्यया ॥) शुक्लमाल्यांबरधरोलक्ष्मणेनसहागतः ॥ ततोन्यत्रमयादृष्टोरामःसत्यपराक्रमः ॥ १८ ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्रासीतयासहवीर्यवान् ॥ आरुह्यपुष्पकंदिव्यंविमानंसूर्यसन्निभम् ॥ १९ ॥ उत्तरांदिशमालोच्यप्रस्थितःपुरुषोत्तमः ॥ (एवंस्वप्नेमयादृष्टोरामोविष्णुपराक्रमः ॥नहिरामोमहातेजाःशक्योजेतुंसुरासुरैः ॥राक्षसैर्वापिचान्यैर्वास्वर्गःपापजनैरिव ॥१॥) रावणश्चमयादृष्टोमुंडस्तैलसमुक्षितः ॥२०॥ रक्तवासाःपिबन्मत्तःकरवीरकृतस्रजः ॥ विमानात्पुष्पकादद्यरावणःपतितःक्षितौ ॥२१॥कृष्यमाणःस्त्रियामुंडोदृष्टःकृष्णांबरःपुनः॥ रथेनखरयुक्तेनरक्तमाल्यानुलेपनः ॥२२॥ पिबंस्तैलंहसन्नृत्यन्भ्रांतचित्ताकुलेंद्रियः ॥ गर्दभेनययौशीघ्रंदक्षिणांदिशमाश्रितः॥२३॥ पुनरेवमयादृष्टोरावणोराक्षसेश्वरः ॥ पतितोविशिराभूमौगर्दभाद्भयमोहितः॥२४॥सहसोत्थायसंभ्रांतोभयार्तोमदविह्वलः ॥ उन्मत्तरूपोदिग्वासादुर्वाक्यंप्रलपन्बहु ॥ २५ ॥ दुर्गंधंदुःसहंघोरंतिमिरंनरकोपमम् ॥ मलपंकंप्रविश्याशुमग्नस्तत्रसरावणः ॥ २६ ॥प्रस्थितोदक्षिणामाशांप्रविष्टोऽकर्दमंह्रदम् ॥ कंठेबद्धादशग्रीवंप्रमदारक्तवासिनी ॥ २७ ॥

केश रावण अतिकाले वस्त्र धारण किये गधे जुतेहुए रथपर चढा लाल चंदन लगाये स्त्रीसे खैंचा जाताहै ॥२२॥ इस प्रकार हमारेराजा तेलपान करतेहँसते २ भ्रान्त चित्त होनेसे व्याकुलेन्द्रियहो गधोंपर चढे दक्षिण दिशाको जातेहैं ॥ २३ ॥ फिर हमने राक्षसोंके स्वामी रावणको देखा कि, मानो वह उन गधोंसे नीचे मुखकर भयके मारे मूर्च्छितहो भूमिपर गिर पडेहैं॥२४॥इसके पीछे मानोंवह रावणबडी शीघ्रतासे उठकर चलायमान, भयसे चकित और नंगे होकर मत वालेके समान मुखसे अनेक दुर्वचन निकालते ॥ २५ ॥ अतिशीघ्र दुर्गन्धमय सहनेके अयोग्य घोर अन्धकारसे ढके नरकके समान विष्ठाके कीचडमें गिर कर डूब गये ॥ २६ ॥ और फिर दक्षिणदिशाकी ओर गमन करके जल कीचडसे रहित एक कुंडमें रावण गिर पडे, लाल कपडेपहरे हुए एक स्त्रीने उस

कुंडमें गर्दन पकड कर रावणको गिराया है ॥ २७ ॥ फिर उसमेंसे भी कीचड अंगोंमें लगायेएक काली स्त्रीको दक्षिणदिशाकी ओर रावणको खैंचतेहुए देखा; और यही दशा हमने महा बलवान् कुंभकर्णकी भी देखी॥२८॥और हमने रावणके पुत्रोंको शिर मुँडाये,सब शरीरमेंतेल लगायेहुए देखा है । रावण सुअरपर, इंद्रजीत शिशुमारपर ॥ २९ ॥ और कुंभकर्ण ऊँटपर चढा यह सब दक्षिण दिशाको चले जाते हैं । केवल इकले बिभीषणको श्वेत छत्र शोभित होकर चार मंत्रियोंके साथ आकाशमार्गमें घूमते हुएदेखा ॥३०॥ और उनकी बडी भारी सभामें गीत और बाजेका शब्दहोरहाहै, सबही राक्षसमानो लंकामें लाल माला धारण किये और लालही वस्त्रपहरे, लालमदको पीरहेथे ॥३१॥ इसीसमयमें लंकाकी चहार दिवारियें और फाटक ध्वजाआदि टूटकर भहरायपडे. मनोहारिणी

कालीकर्दमलिप्तांगीदिशंयाम्यांप्रकर्षति ॥ एवंतत्रमयादृष्टःकुंभकर्णोमहाबलः ॥ २८ ॥ रावणस्यसुताःसर्वेमुंडास्तैलसमुक्षिताः ॥ वराहेणदशग्रीवः शिशुमारेणचेंद्रजित् ॥२९॥ उष्ट्रेणकुंभकर्णश्चप्रयातोदक्षिणांदिशम् ॥ एकस्तत्रमयादृष्टःश्वेतच्छत्रोविभीषणः ॥ चतुर्भिःसचिवैःसार्धंवैहायसमुपस्थितः ॥ ३० ॥ समाजश्चमहान्वृत्तोगीतवादित्रनिःस्वनः ॥ पिबतांरक्तमाल्यानांरक्षसांरक्तवाससाम् ॥३१॥ लंकाचेयंपुरीरम्यासवाजिरथकुंजरा ॥ सागरेपतितादृष्टाभग्नगोपुरतोरणा ॥ ३२ ॥ पीत्वातैलंप्रमत्ताश्चप्रहसंत्योमहास्वनाः ॥ लंकायांभस्मरूक्षायांसर्वाराक्षसयोषितः ॥ ३३ ॥ कुंभकर्णादयश्चेमेसर्वेराक्षसपुंगवाः ॥ रक्तंनिवसनंगृह्यप्रविष्टागोमयह्रदम् ॥३४॥ अपगच्छतपश्यध्वंसीतामाप्नोतिराघवः ॥ घातयेत्परमामर्षीयुष्मान्सार्धंहिराक्षसैः ॥ ३५ ॥ प्रियांबहुमतांभार्यांवनवासमनुव्रताम् ॥ भर्त्सितांतर्जितांवापिनानुमंस्यतिराघवः ॥ ३६ ॥ तदलंक्रूरवाक्यैश्चसांत्वमेवाभिधीयताम् ॥ अभियाचामवैदेहीमेतद्धिममरोचते ॥ ३७ ॥

लंकानगरी अश्व,रथ और गजगणोंके सहित मानो समुद्रमें डूब गई ॥३२॥ औरभी देखाहै कि, लंकानगरी धूल उडनेकेकारण रूखी होगई है,और राक्षसोंकी सब स्त्रियें तेलपी प्रमत्तहो,महा चिल्लाहट और हँसी कर रहीहैं ॥३३॥ कुम्भकर्णादि वीरराक्षसोंकी सब स्त्रियें लालवर्णके निन्दनीय कपडे पहरे गोबरके कुंडमें प्रवेश करती हैं ॥३४॥ इसलिये दूर भाग जाओ देखोगीकि, अब श्रीरामचन्द्रजी शीघ्रही सीताजीको प्राप्तकरेंगे वह महाक्रोधितहो राक्षसगणोंके साथ तुम सब को भी मार डालेंगे ॥ ३५ ॥ भवनवासकी सहेली सीताजी उनकी परमप्यारी और आदरमानकी रानीहैं, उनको पीडा देना,या तुम्हारा सतानाश्रीरामचन्द्रजी कभी नहीं सहेंगे ॥३६॥ इसलिये निष्ठुर वचन कहनेसे कुछ प्रयोजन नहीं, प्रेम सहित समझाओ, आओ सब मिलविदेहकुमारी श्रीजानकीजीसे अनुग्रहकी प्रार्थना

करें, हमारी तो यही इच्छाहै ॥३७॥ जिन जानकीजीकी ऐसी अवस्था है और हमने दुःखिताइनके विषयमें ऐसा स्वप्न देखाहै, तब यह शीघ्रहीसर्व दुःखसे छूटकर अपने स्वामी श्रेष्ठको प्राप्त करेंगी॥३८॥हे राक्षसीगण ! तुमने जानकीजीको वचनोंसे बहुत पीडा दीहैसो अबभी तुमइनके अनुग्रहकी प्रार्थना करो, अब कठोर वचन कहनेका कुछ प्रयोजन नहीं है,निश्चयही श्रीरामचन्द्रजीसे राक्षसगणोंको महाभयआय पहुँचा है ॥३९॥ जनककुमारी सीताजीयदि प्रणाम करनेसे प्रसन्न होजायँ तो अवश्यही तुमसबको यह महाभयसे उद्धार करेंगी ॥४०॥ इस विशालनयनी जानकीजीके शरीरमें हम जराभी कोई अलक्षण तथा अंगोंमें विरूपतानहीं देखतीं ॥४१॥ केवल इनकी कांति मलीन होनेसेभी जानाजाता हैकि, यह दुःखमें पतितहुई हैं।यहदेवीजी दुःखपानेके अयोग्य हैं,हमने स्वप्नमें भी

यस्याह्येवंविधःस्वप्नोदुःखितायाःप्रदृश्यते ॥ सादुःखैर्बहुभिर्मुक्ताप्रियंप्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥३८॥ भर्त्सितामपियाचध्वंराक्षस्यःकिंविवक्षया ॥
राघवाद्धिभयंघोरंराक्षसानामुपस्थितम् ॥ ३९ ॥ प्रणिपातप्रसन्नाहिमैथिलीजनकात्मजा ॥ अलमेषापरित्रातुंराक्षस्योमहतोभयात् ॥ ४० ॥
अपिचास्याविशालाक्ष्यानकिंचिदुपलक्षये ॥ विरूपमपिचांगेषुसूक्ष्ममपिलक्षणम् ॥ ४१ ॥ छायावैगुण्यमात्रंतुशंकेदुःखमुपस्थितम् ॥
अदुःखार्हामिमांदेवींवैहायसमुपस्थिताम् ॥ ४२ ॥ अर्थसिद्धिंतुवैदेह्याःपश्याम्यहमुपस्थिताम् ॥ राक्षसेंद्रविनाशंचविजयंराघवस्यच ॥ ४३ ॥
निमित्तभूतमेतत्तुश्रोतुमस्यामहत्प्रियम् ॥ दृश्यतेचस्फुरच्चक्षुःपद्मपत्रमिवायतम् ॥ ४४ ॥ ईषच्चहृषितोवास्यादक्षिणायाह्यदक्षिणः ॥ अक
स्मादेववैदेह्याबाहुरेकःप्रकंपते ॥ ४५ ॥ करेणुहस्तप्रतिमःसव्यश्चोरुरनुत्तमः ॥ वेपन्कथयतीवास्याराघवंपुरतःस्थितम् ॥ ४६ ॥ पक्षीचशा
खानिलयंप्रविष्टःपुनःपुनश्चोत्तमसांत्ववादी ॥ सुस्वागतांवाचमुदीरयाणःपुनःपुनश्चोदयतीवहृष्टः ॥ ४७ ॥

देखा है कि, यहआकाशमें टिकी हुईहैं ॥४२॥हम विदेह कुमारी सीताजीके कार्यकी सिद्धि, राक्षसराज रावणका विनाश और श्रीरामचन्द्रजीकी विजयसामनेही आई देखती हैं ॥४३॥ यह देखोबडे भारी कार्य सिद्धिकी सूचना करनेके लिये जानकीजीके कमलदलके समान बडे२नेत्र फडकते हैं ॥४४॥ इन परम चतुर श्रीजानकीजीकी पुलकायमान वामभुजा भी अकस्मात् हर्षित होकर कम्पायमान हो रही है ॥ ४५ ॥ और हाथीकी शुण्डके समान अतिश्रेष्ठ बायजांघभी इनकी कंपायमान होकर मानोयह कह रहीहैकि, श्रीरामचन्द्रजी इनके सामने आय गये ॥४६॥ और काकादि पक्षीगण शाखामें बनेहुएघोसलोंके मध्यमें बार२प्रवेशित होकर हर्षितभावसे सुन्दर मधुर शोर करके बार२सुख प्राप्तिकी सूचना करते हैं ॥ ४७ ॥

इसके पीछे वह लज्जाशीला बाला जानकीजी अपने स्वामीकी विजय जान हर्षित होकर बोलीं कि, यदि यह वचन सत्य हुआ तो हम तुम लोगोंकीरक्षाकरेंगी ॥ ४८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥ त्रिजटाके ऐसे वचन सुनकरभी जभीशोकसे संतापित सीताजीको रावणके अप्रिय वचनोंकी याद आईकि, वह वनमें सिंहसे घिरीहुई गजराजकन्याके समान डरीं ॥ १ ॥ एकतो रावणके कहेहुए दुर्वचनोंसे अपमानित तिसपर राक्षसियोंके मध्यमें गिर कर भीरु जानकीजी; विजन वनमें छोडी हुई कन्याके समान विलाप करनेलगीं ॥ २ ॥ पंडितलोग जो कहा करते हैं कि संसारमें अकालमृत्यु नहीं होती यहबात सत्यहै यदि ऐसा न होतातो इसप्रकारसे महाधिक्कारी जाकरभी क्याहम पापिनी एकक्षणभी जीवित रहसकतीं ? ॥ ३ ॥ निश्चयजान पडता है कि,

ततःसाह्रीमतीबालाभर्तुर्विजयहर्षिता ॥ अवोचद्यदितत्तथ्यंभवेयंशरणंहिवः ॥ ४८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० सुंदरकांडे सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥ साराक्षसेंद्रस्यवचोनिशम्यतद्रावणस्याप्रियमप्रियार्ता ॥ सीतावितत्रासयथावनांतेसिंहाद्भिपन्नागजराजकन्या ॥ १ ॥ साराक्षसीमध्यगताचभीरुर्वाग्भिर्भृशंरावणतर्जिताच ॥ कांतारमध्येविजनेविसृष्टाबालेवकन्याविललापसीता ॥ २ ॥ सत्यं बतेदंप्रवदंतिलोकेनाकालमृत्युर्भवतीतिसंतः ॥ यत्राहमेवंपरिभर्त्स्यमानाजीवामियस्मात्क्षणमप्यपुण्या ॥ ३ ॥ सुखाद्विहीनंबहुदुःखपूर्णमिदंतुनूनंहृदयंस्थिरंमे ॥ विदीर्यतेयत्रसहस्रधाद्यवज्राहतंशृंगमिवाचलस्य ॥ ४ ॥ नैवास्तिनूनंममदोषमत्रवध्याहमस्याप्रियदर्शनस्य ॥ भावंनचास्याहमनुप्रदातुमलंद्विजोमंत्रमिवाद्विजाय ॥ ५ ॥ तस्मिन्ननागच्छतिलोकनाथेगर्भस्यजंतोरिवशल्यकृंतः ॥ नूनंममांगान्यचिरादनार्यःशरैःशितैश्छेत्स्यतिराक्षसेंद्रः ॥ ६ ॥ दुःखंबतेदंननुदुःखितायामासौचिरायाभिगमिष्यतोद्वौ ॥ बद्धस्यवध्यस्ययथानिशांतेराजोपरोधादिवतस्करस्य ॥ ७ ॥

सुख विहीन और बहुदुःखपूर्ण हमारा हृदय अजर अमर है जो ऐसा न होता तोवज्रसे चोट खाये हुए पर्वतके शृङ्गके समान यह हजार टुकडे क्यों नहींहोजाता ॥ ४ ॥ प्राण त्याग करनेके विषयमेंतो हमारा कोई दोष नहींहै, क्योंकि हमइस अप्रियदर्शन रावणकरके रोकी हुईहैं, ब्राह्मणजिस प्रकार शूद्रको वेदमंत्रका दान नहीं कर सकता वैसेही हमभी रावणकोमन प्राणदान करनेमें असमर्थहैं ॥ ५ ॥ वह जगन्नाथ श्रीरामचन्द्रजी यदि रावणके नियतकिये हुए समयके मध्य अर्थात् दो महीनेसे न आजायँगे तोजैसे शस्त्रचिकित्सक गर्भकेबालकको गर्भकी दशामेंही काटडालताहै, अनार्यरावण वैसेही थोडेही दिनोंमें तीक्ष्णबाणोंसेहमारे समस्त अंगोंको काट डालेगा ॥ ६ ॥ एक तो हम स्वामीके बिना दुःखसे व्याकुलहैं, उसपर वधकी पीडा निश्चयही हमको भोगनी पडेगी, क्योंकि दो महीनेतोबडी

जलदीबीत जांयगे, दो महीने बीतनेके पीछे, जिसप्रकार राजाकी आज्ञासे कारागारमेंपडे तस्करको रात्रि बीतनेपर प्राणदंड मिलताहै, वैसेहीहमें प्राणदंड होगा ॥ ७ ॥ हा राम ! हा लक्ष्मण ! हा सुमित्रे ! हा रामजननीगण ! हा हमारीजननी गण देखो, हम मंदभाग्यवाली, महासमुद्रके मध्यमें पवनवेगसे भारी नौकाके समान इस विपदमें पडी हैं ॥ ८ ॥ निश्चयही वज्रसदृश तेजवाले राक्षसने मृगरूप धारण करके हमारे लिये सिंहसम पराक्रमी दो बलवान् राजपुत्रोंको मार डाला ॥९॥ मृगरूपधारी उसकालने तत्काल अवश्यही हमारेज्ञानको लोपकर दिया था; इसी लियेहम मूढबुद्धिवालीने आर्यपुत्र श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी दोनों को मृगके पीछे भेज दिया ॥१०॥ हा राम ! सत्यव्रत ! हा दीर्घबाहो ! हा पूर्णचन्द्रकेसमान मुखवाले ! हा जीवलोकके हित और प्रिय साधनकारी ! तुमनहीं जानते कि, हम राक्षसोंकेवध योग्य हुईहैं ॥११॥ हमजो पतिके सिवाय और देवताको नहीं जानती, शापदान करनेमें समर्थहोने परभीहमेंजोक्षमा है; भूमिमें

हारामहालक्ष्मणहासुमित्रेहाराममातःसहमेजनन्यः ॥ एषाविपद्याम्यहमल्पभाग्यामहार्णवेनौरिवमूढवाता॥८॥तरस्विनौधारयतामृगस्यसत्त्वे नरूपंमनुजेंद्रपुत्रौ ॥ नूनंविशस्तौममकारणात्तौसिंहर्षभौद्वाविववैद्युतेन ॥९॥ नूनंसकालोमृगरूपधारीमामल्पभाग्यांलुलुभेतदानीम् ॥ यत्रार्य पुत्रंविससर्जमूढारामानुजंलक्ष्मणपूर्वजंच ॥१०॥ हारामसत्यव्रतदीर्घबाहोहापूर्णचंद्रप्रतिमानवक्त्र ॥ हाजीवलोकस्यहितःप्रियश्चवध्यांनमांवे त्सिहिराक्षसानाम् ॥११॥ अनन्यदेवत्वमियंक्षमाचभूमौचशय्यानियमश्चधर्मे ॥ पतिव्रतात्वंविफलंममेदंकृतंकृतघ्नेष्विवमानुषाणाम् ॥१२॥ मोघंहिधर्मश्चरितोममायंतथैकपत्नीत्वमिदंनिरर्थकम् ॥ यात्वांनपश्यामिकृशाविवर्णाहीनात्वयासंगमनेनिराशा ॥ १३ ॥ पितुर्निदेशंनियमे नकृत्वावनान्निवृत्तश्चरितव्रतश्च ॥ स्त्रीभिस्तुमन्येविपुलेक्षणाभिःसंरंस्यसेवीतभयःकृतार्थः ॥ १४ ॥ अहंतुरामत्वयिजातकामाचिरंविनाशाय निबद्धभावा ॥ मोघंचरित्वाथतपोव्रतंचत्यक्ष्यामिधिग्जीवितमल्पभाग्याम् ॥ १५ ॥

जो हम शयन करतीहैं; धर्म नियमका प्रतिपालन करती हैं और हमारा पातिव्रत्य धर्म इत्यादि, क्या सबहीकृतघ्न पुरुषका उपकार करनेके समान निष्फल होगये ॥१२॥ हम तुम्हारे वियोगके वश मिलनेसे हताश हो अतिकृशतनु और विवर्ण होगईहैं; तथापि अबतकभी जो हमने तुम्हारे दर्शननहीं पाये, तब हमारे यह धर्मके आचरण और पातिव्रत्य सबहीधर्म वृथा होगये ॥१३॥ प्यारे ! हमको जान पडताहै कि; तुम नियमानुसार पिताजीकी आज्ञाके पालनेका व्रत समाप्तकर वनसे लौट, निर्भय और कृतकार्य होकर बडी२नेत्रवाली स्त्रियोंकेसाथ आनंदसे विहार करते होंगे॥ १४॥ परन्तु श्रीरामचन्द्रजी! हमने अपना विनाश करनेहीके लिये तुम्हारा अभिलाष किया, और तुमसे प्रेम लगाया, हमारा व्रत तप दोनों विफल होगये इस लिये हम अल्प भाग्यवालीके जीवनको धिक्कार है; इस

जीवनसे अब क्या प्रयोजन है ? ॥१५॥ विष या तीखे शस्त्रकी सहायतासे हमशीघ्रही प्राणत्याग करनेकी इच्छाकरतीहैं, परन्तु राक्षसके गृहमेंऐसा कोई नहीं है जो हमको विष या शस्त्र दानकरे॥१६॥इस प्रकार अपनेपूर्ण अंतःकरणसे श्रीरामचन्द्रकाही स्मरण करतीं सीता देवीजी अनेकप्रकारके विलाप करके शुष्क वदनसे कंपित होती फूलेहुए वृक्षश्रेष्ठके निकट पहुंची । शोकसे तापित हुई सीताजीनेअनेक प्रकारकी चिंता करके अपनी बँधीहुई वेणी हाथमें ली और यह विचार कियाकि इस वेणीकेगुथे हुएडोरोंको गलेमें बांध फांसी लगाय यमराजजीके घरको चली जायंगी ॥१७॥ यह विचार कर कोमलांगी सीताजी उस वृक्षकी जडकेनिकट उपस्थित होकर, व इसपेडकीएक डालको फांसी लगानेके लियेपकड वह सुन्दर अंगवाली अपनेऔर श्रीराम चन्द्रजीके वंशकी मर्यादाका

संजीवितंक्षिप्रमहंत्यजेयंविषेणशस्त्रेणशितेनवापि॥विषस्यदातानतुमेऽस्तिकश्चिच्छस्त्रस्यवावेश्मनिराक्षसस्य ॥१६॥"इतीवदेवीबहुधाविलप्य सर्वात्मनाराममनुस्मरंती ॥ प्रवेपमानापरिशुष्कवक्त्रानगोत्तमंपुष्पितमाससाद ॥" शोकाभितप्ताबहुधाविचिंत्यसीताथवेणीग्रथनंगृहीत्वा ॥ उद्बद्ध्यवेण्युद्ग्रथनेनशीघ्रमहंगमिष्यामियमस्यमूलम् ॥ १७ ॥ उपस्थितासामृदुसर्वगात्रीशाखांगृहीत्वाचनगस्यतस्य ॥ तस्यास्तुरामंपरिचिंतयंत्यारामानुजंस्वंचकुलं शुभांग्याः ॥ १८ ॥ तस्यापिशोकानिसदाबहूनिधैर्यार्जितानिप्रवराणिलोके ॥ प्रादुर्निमित्तानितदाबभूवुःपुरापि सिद्धान्युपलक्षितानि ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० च० सा० सुन्दरकांडे अष्टाविंशः सर्गः ॥२८॥ तथागतांतांव्यथिताम निन्दितांव्यतीतहर्षांपरिदीनमानसाम् ॥ शुभांनिमित्तानिशुभानिभेजिरेनरंश्रियाजुष्टमिवोपसेविनः ॥ १ ॥ तस्याःशुभंवाममरालपक्ष्म राज्यावृतंकृष्णविशालशुक्लम् ॥ प्रास्पंदतैकंनयनंसुकेश्यामीनाहतंपद्ममिवाभिताम्रम् ॥ २ ॥

विचार करने लगी ॥ १८ ॥ उस समय लावण्यतायुक्त सीताजीके अङ्गोंमें, शोक नाशकारी धीरज धारण करानेवाले होनहार समाचारकीसूचना देनेवाले विविध भांतिके लोकप्रसिद्ध शुभ चिह्न उत्पन्न होने लगे ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामष्टाविंशः सर्गः ॥ २८ ॥ दुःखित अंतःकरणवाली, हर्षहीन; संतापसे पीडित निंदारहित सीताजी मरनेको तैयारहो रही थीं, कि इतनेमेंसब शुभ लक्षणोंने आय सीताजी की सेवा की जैसे सेवक लोग धनवान् पुरुषकीसेवा किया करते हैं॥१॥ उन अच्छे केशवाली सीताजीका चंचल पलकोंके सहितकाले तारेसे शोभित विशालशुक्लवर्ण, लाल कोयेवाला बायां नेत्र मीनसे हिलाये हुए कमलके समान फडकने लगा ॥ २ ॥

उनकी जो मनोहर गोल, सुडौल, मांसल, बांईभुजा बडे मोलके अगर चन्दनसे चर्चित होकर बहुतकालसे अपने श्रेष्ठ प्रीतमकासहारा होती थी, वह बांई भुजा आज अनेक दिनके पीछे जलदी२फडकने लगी ॥३॥ एक दूसरेमें मिली हुईसी दोनो जांघोंमें गजराजकी शुण्डकेसमान चढाव उतार और गोल सुडौल, बांई जांघने फडक कर सूचनादी कि मानो श्रीरामचंद्रजी सन्मुख आहीगये ॥४॥ उपमारहित नयनवाली दाडिमके दानेके समान दांतवाली, सुंदरांगी जानकीजीका कुछेक मलीन वर्णका वस्त्र शिरसे खसक कर नीचे गिर पडा ॥५॥ पवन और तापके लगनेसे नष्ट हुआ बीज जिस प्रकार वर्षाका जल गिरनेसे फिर जीजाता है, वैसेही सीताजी पहले कहे हुए निमित्त व और दूसरे होनहार लक्षणोंको जानकर हर्ष प्राप्त करती हुई ॥६॥ बिंबाफलके समान लाल अधरोंसे युक्त सुंदर नेत्र

भुजश्चचार्वंचितवृत्तपीनःपरार्ध्यकालागुरुचंदनार्हः॥अनुत्तमेनाध्युषितःप्रियेणचिरेणवामःसमवेपताशु ॥३॥ गजेंद्रहस्तप्रतिमश्चपीनस्तयोर्द्वयोः संहतयोस्तुजातः ॥ प्रस्पंदमानःपुनरूरुरस्याःरामंपुरस्तात्स्थितमाचचक्षे ॥४॥ शुभंपुनर्हेमसमानवर्णमीषद्रजोध्वस्तमिवातुलाक्ष्याः ॥ वासः स्थितायाः शिखराग्रदंत्याःकिंचित्परिस्रंसतचारुगात्र्याः ॥५॥ एतैर्निमित्तैरपरैश्चसुभ्रूःसंचोदिताप्रागपिसाधुसिद्धैः ॥ वातातपक्लांतमिवप्रनष्टंवर्षेणबीजंप्रतिसंजहर्ष ॥६॥ तस्याः पुनर्बिंबफलोपमोष्ठंस्वक्षिभ्रुकेशांतमरालपक्ष्म ॥ वक्त्रंबभासेसितशुक्लदंष्ट्रंराहोर्मुखाच्चंद्रइवप्रमुक्तः ॥७॥ सावीतशोकाव्यपनीततंद्राशांतज्वराहर्षविबुद्धसत्त्वा॥अशोभताऽऽर्यावदनेनशुक्लेशीतांशुनारात्रिरिवोदितेन ॥ ८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकव्ये च० सा० सुन्दरकांडे एकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥ हनुमानपिविक्रांतःसर्वंशुश्रावतत्त्वतः ॥ सीतायास्त्रिजटायाश्चराक्षसीनांचगर्जितम् ॥ १ ॥ अवेक्षमाणस्तांदेवींदेवतामिवनंदने ॥ ततोबहुविधांचिंतांचिंतयामासवानरः ॥ २ ॥

सुन्दर भ्रुकुटि व केशोंके अन्तसहित, चंचल, शोभित, श्वेत मोतीके समान चमकीले दाँतोंसे विराजमान सीताजीका वदनमंडल फिर राहुके ग्राससे छूटे हुए पूर्णचंद्रमाकेसमान शोभायमान होने लगा ॥७॥ सीताजीका शोक दूर हुआ, आलस्य जाता रहा, संतापकी शान्ति होगई और चित्त मारे हर्षके खिल गया । उससमय उनके मुखकी शोभा ऐसी हुई कि, जैसे शुक्लपक्षवाले चंद्रमाके उदय होनेसे रात्रि शोभायमान होती है ॥८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामेकोनत्रिंशः सर्गः ॥२९॥सीताजीका विलाप और त्रिजटाके स्वप्नका वृत्तान्त और राक्षस राक्षसियोंका गर्जना; धमकाना, डराना विक्रमशाली हनुमानूजीने समस्तही आदिसे अंततक सुन॥१॥ नन्दनकाननवासिनी सुरसुन्दरीके समान अशोकवनमें बसती हुईइन देवी श्रीजानकीजीको देखकर वानरश्रेष्ठ हनुमानूजी अनेक चिंता करने लगे॥२॥

हजार२लाख२करोड२वानर चारों ओर जिनकी खोजमें फिरते हैं,सो यहां उनको हमने पाया है ॥३॥ अबतक तो दूतका कार्य हमने भली भाँतिसेही पूरा किया है । शत्रुकी शक्ति जाननेकेलिये गुप्तभावसे घूमघाम कर समस्तवृत्तान्त हमने जाना है॥४॥ मनुष्यकी अपेक्षा राक्षसोंकी धनसम्पत्तिकी लघुताई व बढोतरी देखी औरइस लंकापुरीको भी भली भाँतिसे उलट पुलट कर देख डाला और राक्षसरावणका प्रभाव भी देखा ॥५॥इस समय हमें उन अप्रमेय सर्व प्राणियोंके प्रति दयालु; रामचंद्रजीकेदर्शनकी अभिलाषाकिये उनकी भार्या सीताजीको समझाना बुझाना उचित है ॥६॥ जिन्होंनेइससे पहले कभी दुःख नहीं देखा; और उसकी भी कोई आशा नहीं है कि,शीघ्रही इसके दुःखके पार होजायँ,इसलिये प्रथम हम इन पूर्णचंद्रमाके समान मुखवाली जानकीजीको समझावें बुझावेंगे॥७॥शोकके मारे इन

यांकपीनांसहस्राणिसुबहून्ययुतानिच ॥ दिक्षुसर्वासुमार्गंतेसेयमासादितामया ॥३॥ चारेणतुसुयुक्तेनशत्रोःशक्तिमवेक्षता ॥ गूढेनचरताताव दवेक्षितमिदंमया ॥ ४ ॥ राक्षसानांविशेषश्चपुरीचेयंनिरीक्षिता ॥ राक्षसाधिपतेरस्यप्रभावोरावणस्यच ॥ ५ ॥ यथातस्यप्रमेयस्यसर्वसत्त्व दयावतः ॥ समाश्वासयितुंभार्यांपतिदर्शनकांक्षिणीम्॥६॥अहमाश्वासयाम्येनांपूर्णचंद्रनिभाननाम् ॥ अदृष्टदुःखांदुःखस्यनह्यंतमधिगच्छतीम् ॥ ७ ॥ यदिह्यहंसतीमेनांशोकोपहतचेतनाम् ॥ अनाश्वास्यगमिष्यामिदोषवद्गमनंभवेत् ॥ ८ ॥ गतेहिमयितत्रेयंराजपुत्रीयशश्विनी ॥ परित्राणमपश्यंतीजानकीजीवितंत्यजेत् ॥ ९ ॥ यथाचसमहाबाहुःपूर्णचन्द्रनिभाननः ॥ समाश्वासयितुंन्याय्यःसीतादर्शनलालसः ॥१०॥ निशाचरीणांप्रत्यक्षमक्षमंचाभिभाषितुम् ॥कथंनुखलुकर्तव्यमिदंकृच्छ्रगतोह्यहम्॥११॥ अनेनरात्रिशेषेणयदिनाश्वास्यतेमया॥सर्वथानास्ति संदेहः परित्यक्ष्यतिजीवितम् ॥ १२ ॥ रामस्तुयदिपृच्छेन्मांकिंमांसीताब्रवीद्वचः ॥ किमहंतंप्रतिब्रूयामसंभाष्यसुमध्यमाम् ॥ १३ ॥

सती सीताजीकी चैतन्यता जाती रही है जो हमइनको बिनासमझाये बुझाये चले जांयगे, तो हमारे जानेमें दोष हो जायगा ॥ ८ ॥ जो हमयहांसे इनको बिना समझाये बुझाये चले जायँगे, तो यशस्विनी राजकुमारी जानकीजी अपने उद्धारका उपाय न देखकर निश्चयही प्राण त्यागकरेंगी ॥ ९ ॥ सीताजीके दर्शनकी लालसा लगाये चन्द्रानन, इन महाबाहु श्रीरामचन्द्रजीने जिस प्रकार इन्हें समझानेको कह दिया है,उसी प्रकारसे हमें उचित है कि, जानकीजीको समझावें ॥१०॥ परन्तु क्या इनराक्षसियोंके सामनेही बातें करें सो तो हो नहीं सकता अब हम इस बडे भारी संकटमें पडे हैं; कि अब क्या करनाचाहिये ? ॥११॥ जो रात्रि बीतनेके पहलेही हम इनको नहीं समझावेंगे तो यह निःसंदेह अपने जीवनको फांसी लगाकर त्याग कर देंगी॥१२॥ जब कि श्रीरामचंद्रजी हमसे

पूछेंगे कि, जानकीजीने हमको क्या कहा है; तब सुमध्यमा सीताजीसे संभाषण न किये हुये हम उनको क्या उत्तर देंगे ? ॥१३॥ जो सीताजीसे विनावार्त्ता किये और बिना समाचार लिये हम शीघ्रता पूर्वक यहां से चले जायँ तो काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी क्रोधदृष्टिसे हमको भस्म कर डालेंगे ॥ १४ ॥ और जो सीताजीसे बिना संभाषण किये आज हम राजासुग्रीवके पास जाकर श्रीरामचन्द्रजीके लिये उत्साहित कर उनको यहांपर लावें तो उनका, सेनासहितयहांपर आना भी वृथा हो जायगा, क्यों कि जानकीजी तो पहलेही प्राण त्याग कर देंगी ॥१५॥ हम जरा इनराक्षसियोंकी ओटकारी अवसरचाहते हैं, जैसेही कि अवसर मिलेगा; वैसेही शोकसे संतापित हुई सीताजीको हम धीरे २ समझाबुझादेंगे ॥ १६ ॥ यद्यपि हम इस समय बहुत छोटे और वानरदेह धारण किये हुये हैं, तथापि वानर होकर भी मनुष्यके समान बोली बनाय व्याकरणादिसे शुद्ध वचन कहेंगे ॥ १७ ॥ यदि ब्राह्मणोंके समान हम संस्कृत बोलेंगे तो सीताजी हमको रावण

सीतासंदेशरहितंमामितस्त्वरयागतम् ॥ निर्दहेदपिकाकुत्स्थःक्रोधतीव्रेणचक्षुषा ॥१४॥ यदिवोद्योजयिष्यामिभर्तारंरामकारणात् ॥ व्यर्थमागमनंतस्यससैन्यस्यभविष्यति ॥ १५ ॥ अंतरंत्वहमासाद्यराक्षसीनामवस्थितः ॥ शनैराश्वासयाम्यद्यसंतापबहुलामिमाम् ॥ १६ ॥ अहंह्यतितनुश्चैववानरश्चविशेषतः ॥ वाचंचोदाहरिष्यामिमानुषीमिहसंस्कृताम् ॥ १७ ॥ यदिवाचंप्रदास्यामिद्विजातिरिवसंस्कृताम् ॥ रावणंमन्यमानामांसीताभीताभविष्यति ॥ १८ ॥ अवश्यमेववक्तव्यंमानुषंवाक्यमर्थवत् ॥ मयासांत्वयितुंशक्यानान्यथेयमनिंदिता ॥ १९ ॥ सेयमालोक्यमेरूपंजानकीभाषितंतथा ॥ रक्षोभिस्त्रासितापूर्वंभूयस्त्रासमुपैष्यति ॥ २० ॥ ततोजातपरित्रासाशब्दंकुर्यान्मनस्विनी ॥ जानानामांविशालाक्षीरावणंकामरूपिणम् ॥ २१ ॥ सीतयाचकृतेशब्देसहसाराक्षसीगणः ॥ नानाप्रहरणोघोरःसमेयादंतकोपमः ॥ २२ ॥ ततोमांसंपरिक्षिप्यसर्वतोविकृताननाः ॥ वधेचग्रहणेचैवकुर्युर्यत्नंमहाबलाः ॥ २३ ॥

समझ कर डर जायँगी ॥ १८ ॥ इसलिये हमको अवश्यही अर्थयुक्त मनुष्य बोली (प्राकृत) बोलनी पडेगी, नहीं तो हम किसीप्रकारसे इन निन्दारहित जानकीजीको न समझा सकेंगे ॥१९ ॥ पहले राक्षसोंने जानकीजीको त्रासित किया है इसलिये हमें वानर देह धारण किये मनुष्यके समान बात करते सुन कदाचित् जानकीजी और भी डर जायँगी ॥ २० ॥ हमको दुरात्मा पापरूपी रावण जानकर, मनस्विनी और बडे २ नेत्रवाली जानकीजी अपना बचाव करनेके लिये आर्त शब्द न कर उठें ॥२१॥ जब वह एकाएक आर्त्त नादकर उठेंगी तब अनेक अस्त्रशस्त्र धारण किये हुए यमराजकेसमान भयंकर राक्षसियें कोप किये आजायँगी ॥२२॥ उसके पीछे यह सब महाबलवान् विकट वदनवाली राक्षसियें चारों और देख, सब वृत्तान्त जान हमको वध करने या पकड़

लेनेके लिये यत्न करेंगी ॥२३॥ तब हमको बडे २ वृक्षोंकी छोटी २ और बडी२डालियों, और स्कंधोंपर दौडता हुआ देखकर यह सब राक्षसियें बहुतही डरजायँगी ॥ २४ ॥ वनमें घूमनेके समय हमारी भयानक मूर्तिका दर्शन करके सब राक्षसियें भयके मारे व्याकुलहो अतिविकट शब्द करेंगी ॥ २५ ॥ और पीछेसे वह राक्षसियें उन राक्षसोंको भी पुकारेंगी । जो कि, इस अशोकवाटिकाकी रक्षा रावणकी आज्ञासे अतियत्नसहित किया करते हैं ॥ २६ ॥ तब वे राक्षसलोग उद्विग्न हो शूल,शर,भाला,विविध भाँतिके अस्त्र शस्त्र लेकर अतिवेगसे यहां पर आवेंगे ॥२७॥ उस राक्षसबलसे घेरे जाकर जो हम उन समस्तका संहार भी कर डालें,तब भी फिर थकावटके मारे समुद्रके पार न जाय सकेंगे ॥२८॥ अथवा कार्य करनेमें कुशल राक्षस लोग यदि हमकोही बन्दी करलेंगे; तो एक हम बँधुए हुए, और दुसरी जानकीजी हमारे आनेका प्रयोजन भी न जान सकेंगी ॥२९॥ अथवा राक्षस लोग अत्यन्त हिंसाके करनेवाले

तंमांशाखाःप्रशाखाश्चस्कंधांश्चोत्तमशाखिनाम् ॥ दृष्ट्वाचपरिधावंतंभवेयुःपरिशंकिताः ॥ २४ ॥ ममरूपंचसम्प्रेक्ष्यवनेविचरतोमहत् ॥ राक्षस्योभयवित्रस्ताभवेयुर्विकृतस्वराः ॥ २५ ॥ ततःकुर्युःसमाह्वानं राक्षसोरक्षसामपि ॥ राक्षसेन्द्रनियुक्तानांराक्षसेंद्रनिवेशने ॥२६॥ तेशूलशरनिस्त्रिंशविविधायुधपाणयः ॥ आपतेयुर्विमर्देऽस्मिन्वेगेनोद्वेगकारणात् ॥२७॥ संरुद्धस्तैस्तुपरितोविधमेराक्षसंबलम् ॥ शक्नुयांनतुसंप्राप्तुं परंपारंमहोदधेः ॥ २८ ॥ मांवागृह्णीयुराप्लुत्यबहवःशीघ्रकारिणः ॥ स्यादियंचागृहीतार्थाममचग्रहणं भवेत् ॥२९॥ हिंसाभिरुचयोहिंस्युरिमां वाजनकात्मजाम् ॥ विपन्नंस्यात्ततःकार्यंरामसुग्रीवयोरिदम्॥३०॥उद्देशेनष्टमार्गेऽस्मिन्राक्षसैःपरिवारिते॥सागरेणपरिक्षिप्तेगुप्तेवसतिजानकी॥ ॥ ३१ ॥ विशस्तेवागृहीतेवारक्षोभिर्मयिसंयुगे ॥ नान्यंपश्यामिरामस्यसहायंकार्यसाधने ॥ ३२ ॥ विमृशंश्चनपश्यामियोहतेमयिवानरः ॥ शतयोजनविस्तीर्णंलंघयेतमहोदधिम् ॥३३॥ कामंहंतुंसमर्थोऽस्मिसहस्राण्यपिरक्षसाम् ॥ नतुशक्ष्याम्यहंप्राप्तुंपरंपारंमहोदधेः ॥ ३४ ॥

होते हैं सो यदि वह राक्षस जनकसुता जानकीजीकोही मारडालें तो श्रीरामचन्द्रजी और सुग्रीव दोनोंका कार्य नष्ट हो जायगा ॥३०॥हम बँधुए होजायँ तो हो जायँ परंतु एक बातका सोच है कि,हमारे पीछे सीतादेवीजी राक्षसोंसे घिरे हुए सागरसे व्याप्त, मार्गहीन,लांघनेके अयोग्य, इस गुप्त स्थानमें वसती हैं, सो इनके पास इनकी खोज खबर लेनेको भी फिर कोई नहीं आ सकेगा ॥३१॥युद्धमें राक्षस लोग हमको मारहीडालें परंतु हम और किसीको ऐसा नहीं देखते कि, हमारे मरनेके पीछे श्रीरामचंद्रजीके कार्यकी सहायता करे ॥३२॥ क्योंकि हम ठीक२अपने मनमें विचार करते हैं कि, हमारे मरजाने पर कोई वानर ऐसा नहीं है जो शतयोजनका विस्तावाला समुद्र लांघे॥३३॥हम तो अकेले सरलतासे सहस्र२लक्ष२राक्षसोंके मारनेमें समर्थ हैं, परंतु इसके पीछे समुद्रके उस पार को नहीं

जाय सकेंगे, क्योंकि युद्धसे थकावट बहुत चढ जायगी ॥ ३४॥ युद्धमें जय पराजय होनेका कुछ ठीक नहीं इस लिये संदिग्ध कार्यमें प्रवृत्त होनेके लिये हमारी रुचि नहीं होती, हां जो संशयरहित कार्य हो तो उसको कर भी डालें, कारण कि संशयविहीनकार्यको कौन पुरुष संदेहवाला बतलावेगा॥ ३५॥ इस समय सीता जीके साथ वार्त्तालापकरनेसे भी दोषहै और विना वार्त्ता किये भी वैदेहीजीका प्राण जाता है ॥ ३६॥ सिद्ध होनेके निकट पहुँचा कार्य यदि असावधान दूतके पास आजाय, तो वह देशकालके विरुद्ध होकर सूर्यके उदयहोनेपर अंधकारके समान नष्ट हो जाता है॥ ३७॥ कार्य और अकार्य दोनोंमेंसे स्थिर करके जो कर्तव्य विचाराजाय, तो अपने आपको पंडित माननेवाले दूतोंके हाथमें पडकर वह कार्यभी बिगड जाता है ॥ ३८ ॥ क्या करनेसे कार्यकी हानि न हो, और हमारे वचन जानकीजी भी सुनलें और उकसावें भी नहीं और हमारा समुद्रका लांघना भी वृथा न जाय ॥ ३९॥ क्या करनेसे सीताजी डर न पायकर हमारे

असत्यानिचयुद्धानिसंशयोमेनरोचते ॥ कश्चनिःसंशयंकार्यंकुर्यात्प्राज्ञःससंशयम् ॥ ३५॥ एषदोषोमहान्हिस्यान्ममसीताभिभाषणे॥ प्राणत्यागश्चवैदेह्याभवेदनभिभाषणे ॥ ३६॥ भूताश्चार्थाविरुध्यंतिदेशकालविरोधिताः ॥ विक्लवंदूतमासाद्यतमःसूर्योदयेयथा ॥ ३७॥ अर्थानर्थांतरेबुद्धिर्निश्चितापिनशोभते ॥ घातयंतिहिकार्याणिदूताःपंडितमानिनः ॥ ३८॥ नविनश्येत्कथंकार्य्यंवैक्लव्यंनकथंमम॥ लंघनंचसमुद्रस्यकथंनुनवृथा भवेत् ॥ ३९॥ कथंनुखलुवाक्यंमेशृणुयान्नोद्विजेतच ॥ इतिसंचिन्त्यहनुमांश्चकारमतिमान्मतिम् ॥ ४०॥ राममक्लिष्टकर्माणंसुबंधुमनुकीर्तयन् ॥ नैनामुद्वेजयिष्यामितद्बंधुगतचेतनाम् ॥ ४१॥ इक्ष्वाकूणांवरिष्ठस्यरामस्यविदितात्मनः ॥ शुभानिधर्मयुक्तानिवचनानिसमर्पयन् ॥ ४२॥ श्रावयिष्यामिसर्वाणिमधुरांप्रब्रुवन्गिरम् ॥ श्रद्धास्यतियथासीतातथासर्वंसमादधे॥ ४३॥ इतिसबहुविधंमहाप्रभावोजगतिपतेःप्रमदामवेक्षमाणः॥ मधुरमवितथंजगादवाक्यंद्रुमविटपांतरमास्थितोहनूमान् ॥ ४४॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच० सा० सुंदरकांडेत्रिंशःसर्गः॥ ३०॥

वचन श्रवण करें, बुद्धिमान् हनुमान्‌जीने इन सब बातोंको भलीभांतिसे विचार कर स्थिर किया कि ॥ ४०॥ क्लेशरहित होकर कार्य करनेमें श्रीरामचंद्रजीही इनके प्यारे हैं, और उन प्रियजनोंमेंही इनका चित्त लग रहा है इससे एकाएक श्रीरामचंद्रजीका समाचार देकर; इनको घबड़ावें नहीं॥ ४१॥ इक्ष्वाकुवंशियोंमें श्रेष्ठ जितेन्द्रिय श्रीरामचन्द्रजीके धर्मयुक्त शुभ वचन आपही आप कह कर ॥ ४२ ॥ मीठी वाणीसे सब वृत्तांत सुनावेंगे जिस प्रकारसे सीताजीको विश्वास आवे, अब हम उसेही सर्वप्रकारसे करते हैं ॥ ४३ ॥ महानुभाव हनुमान्‌जी जगन्नाथ श्रीरामचंद्रजीकी भार्याको निहार इस प्रकारकी अनेक चिंतायें कर वृक्ष शाखाके मध्यमें लुककर मधुर वाणीसे सत्य वचन कहने लगे ॥ ४४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० सुंदरकांडे भाषायां त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥

महामतिवाले हनुमान्जी ऐसी अनेक प्रकारकी चिंतायें कर दूरसे इस प्रकारसे मधुर वचन बोले कि, जिससे केवल सीताजीही सुनपावें और कोई नहीं ॥१॥ हनुमान्जी कहने लगे कि,दशरथजी नामक एक राजा थे. उनके बहुत सारे रथ,हाथी और घोडे थे। और वह पुण्यशील, महाकीर्ति और इक्ष्वाकु लोगोंके मध्यमें बडे विख्यात थे ॥२॥ वह हिंसासे अलग, ऊंचे मनवाले, दयालु; सत्य विक्रम, इक्ष्वाकुराजवंशमें प्रधान और लक्ष्मीके बढानेवाले थे ॥३॥ राजलक्षणोंसे युक्त,विपुल श्रीमान्,राजाओंमें श्रेष्ठ, ससागरा पृथ्वीमें विख्यात,बंधुजनोंके सुखदाता और सुखी थे ॥४॥ श्रीरामचन्द्रजी नामक उनके एक प्यारे दुलारे बडे पुत्र थे, पूर्ण चन्द्रमाके समान मुखवाले श्रीरामचन्द्रजी ज्ञानी और सब धनुष धारण करनेवालोंमें श्रेष्ठ हुए ॥५॥ वह श्रीरामचन्द्रजी अपने चरित्रकी रक्षा

एवंबहुविधांचिंतांचिंतयित्वामहामतिः ॥ संश्रवेमधुरंवाक्यंवैदेह्याव्याजहारह ॥ १ ॥ राजादशरथोनामरथकुंजरवाजिमान् ॥ पुण्यशीलोमहाकीर्तिरिक्ष्वाकूणांमहायशाः ॥२॥ अहिंसारतिरक्षुद्रोघृणीसत्यपराक्रमः ॥ मुख्यस्येक्ष्वाकुवंशस्यलक्ष्मीवाँल्लक्ष्मिवर्धनः ॥३॥ पार्थिवव्यंजनैर्युक्तः पृथुश्रीःपार्थिवर्षभः ॥ पृथिव्यांचतुरंतायांविश्रुतःसुखदःसुखी ॥४॥ तस्यपुत्रःप्रियोज्येष्ठस्ताराधिपनिभाननः ॥ रामोनामविशेषज्ञःश्रेष्ठःसर्वधनुष्मताम् ॥ ५ ॥ रक्षितास्वस्यवृत्तस्यस्वजनस्यापिरक्षिता ॥ रक्षिताजीवलोकस्यधर्मस्यचपरंतपः ॥६॥ तस्यसत्याभिसंधस्यवृद्धस्यवचनात्पितुः ॥ सभार्यःसहचभ्रात्रावीरःप्रव्रजितोवनम् ॥७॥ तेनतत्रमहारण्येमृगयांपरिधावता ॥ राक्षसानिहताःशूराबहवःकामरूपिणः ॥ ८ ॥ जनस्थानवधंश्रुत्वानिहतौखरदूषणौ ॥ ततस्त्वमर्षापहृताजानकीरावणेनतु ॥ ९ ॥ वंचयित्वावनेरामंमृगरूपेणमायया ॥ समार्गमाणस्तांदेवींरामःसीतामनिंदिताम् ॥ १० ॥ आससादवनेमित्रंसुग्रीवंनामवानरम् ॥ ततःसवालिनंहत्वारामःपरपुरंजयः ॥ ११ ॥

करनेवाले निज जनोंकी रक्षाकरनेवाले, समस्तजीवोंकी रक्षाकरनेवाले, धर्मकी रक्षाकरनेवाले और शत्रुगणोंके तपानेवाले थे ॥ ६ ॥ वीर श्रीरामचन्द्रजी सत्य प्रतिज्ञ वृद्ध अपने पिताजीकी आज्ञा पाय भार्या और भ्राताके सहित वनको पठाये गये ॥७॥ अतिघोर भयंकर वनमें शिकार खेलते २ उन्होंने कामरूपी अनेक बलवान् राक्षसोंके प्राण हरण किये ॥८॥ जनस्थानके (१४०००) चौदह हजार राक्षस और खर व दूषणके मरनेकी वार्ता श्रवण कर रावणने क्रोधके वश हो इस बातको न सहा और उनकी स्त्रीकोहरण किया ॥९॥ मायामृगके रूपसे वनमें श्रीरामचन्द्रजीके साथ छल करा कर उनकी स्त्री जानकीजीका हरण कर लिया सो निंदारहित जानकीजी को ढूँढते ॥१०॥ श्रीरामचन्द्रजीने वनमें सुग्रीव वानरके साथ मित्रता की,तब परपुरविजयी श्रीरामचन्द्रजीने वालीका संहार कर ॥११॥

महात्मा सुग्रीवजीको वानरोंका राज्यदे दिया। उन सुग्रीवजीकी आज्ञासे कामरूपधारी वानर ॥१२॥ हजार२करोड २ मिल कर सब दिशाओंमें खोज करते हैं, हम सम्पातीके वचनानुसार शत योजनके विस्तारवाला ॥१३॥ समुद्र उन्ही विशालाक्षीके हेतु अतिवेगसे नांघ कर आये हैं, कि जैसे रूपरंगकी, व जिस प्रकारके चिह्नोंसे युक्त उन सीताजीको ॥१४॥ हमने श्रीरामचन्द्रजीके मुखसे सुना था वैसीही पाया, वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जी इतना कह कह कर चुप हो रहे ॥१५॥ जानकीजीभी यह सब वचन सुन कर अतिशय विस्मित हुईं, फिर टेढेवालोवाली सुकेशी जानकीजी भयकेमारे बालोंसे ढका हुआ वदन ऊंचा करके शिंशपावृक्षकेझांझरोंमेंसे देखने लगीं ॥१६॥ सीताजी हनुमानजीकी कथा श्रवण करतीं, समस्त दिशाविदिशाको देखतीं एकमनसे श्रीरामचन्द्रजीकी ही चिन्ता करती हुईं अतिहर्षितहुईं ॥१७॥

आयच्छत्कपिराज्यंतुसुग्रीवायमहात्मने ॥ सुग्रीवेणाभिसंदिष्टाहरयःकामरूपिणः ॥१२॥ दिक्षुसर्वासुतांदेवींविचिन्वंतःसहस्रशः ॥ अहंसंपातिवचनाच्छतयोजनमायतम् ॥ १३ ॥ तस्याहेतोर्विशालाक्ष्याःसमुद्रंवेगवान्प्लुतः ॥ यथारूपांयथावर्णांयथालक्ष्मवतींचताम् ॥१४॥ अश्रौषंराघवस्याहंसेयमासादितामया ॥ विरराममेवमुक्त्वासवाचंवानरपुंगवः ॥ १५ ॥ जानकीचापितच्छ्रुत्वाविस्मयंपरमंगता ॥ ततःसावक्रकेशांतासुकेशीकेशसंवृतम् ॥उन्नम्यवदनंभीरुःशिंशपामन्ववैक्षत ॥१६॥ निशम्यसीतावचनं कपेश्चदिशश्चसर्वाःप्रदिशश्चवीक्ष्य ॥ स्वयंप्रहर्षंपरमंजगामसर्वात्मनाराममनुस्मरंती ॥१७॥ सातिर्यगूर्ध्वंचतथाप्यधस्तान्निरीक्षमाणातमचिंत्यबुद्धिम् ॥ ददर्शपिंगाधिपतेरमात्यंवातात्मजंसूर्यमिवोदयस्थम् ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च० सा० सुन्दर० एकत्रिंशः सर्गः ॥३१॥ ततःशाखांतरेलीनंदृष्ट्वाचलितमानसा॥ वेष्टितार्जुनवस्त्रंतंविद्युत्संघातपिंगलम् ॥१॥ साददर्शकपिंतत्रप्रश्रितंप्रियवादिनम्॥ फुल्लाशोकोत्कराभासंतप्तचामीकरेक्षणम्॥२॥ साथदृष्ट्वाहरिश्रेष्ठंविनीतवदवस्थितम्॥ मैथिलीचिंतयामासविस्मयंपरमंगता॥३॥ अहोभीममिदंसत्त्ववानरस्यदुरासदम्॥ दुर्निरीक्ष्यमिदंमत्वापुनरेवमुमोहसा॥४॥

उन्होंने अगल बगल ऊंचे नीचे सब ओरको देखते २ उदय होते हुए सूर्यके समान वानरपति सुग्रीवजीके मंत्री असाधारणबुद्धियुक्त पवनपुत्र हनुमानजीको देखा ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामेकत्रिंशः सर्गः ॥ ३१ ॥ विजलीके समान तडित् वर्ण हरे वसन पहरेहुए हनुमान्‌जी शाखामें छिपे हुए बैठे थे, इसलिये उनको स्पष्ट न देखपानेसे सीताजीका मन कुछेक चंचल हो गया ॥१॥ उन जानकीजीने अशोकको राशिके समान प्रभायुक्त तपाये हुए सुवर्णके समान नेत्रवाले प्रियवादी वानर हनुमान्‌जीको देखा ॥२॥ विनीत वदनसे बैठे हुए वानरश्रेष्ठको देखकर सीताजी परमविस्मययुक्त होकर चिन्ता करने लगीं ॥ ३ ॥ अहो ! वानरजातिके मध्यमें यह वानर बडे भयंकर शरीरवाला और बडे दुःखसे देखनेके योग्य है ऐसा विचार श्रीजानकीजी फिर मोहित हो

गईं ॥४॥ भयसे मोहित और दुःखसे कातरहो भामिनी जानकीजी हा राम ! हा लक्ष्मण ! कह२कर करुणस्वरसे विलाप करने लगीं ॥५॥ कहीं राक्षस न जानपावें इस लिये वह धीरे२रोने लगीं इनके पीछे जानकीजी वानर श्रेष्ठहनुमानूजीको विनीत भावसे निकट आते देखकर विचारने लगीं कि, यह स्वप्न तो नहीं है ॥६॥ सीताजीने शाखामृगोंके समान मुखवाले पहला कहा हुआ वेष धारण किये बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ महत्गुण सम्पन्न वानरोंमें मुख्य पवनकुमारकोफिर दूसरी बार देखा ॥७॥ हनुमानूजीको देखकर सीताजी बहुतही डरीं और मृतकतुल्य हो गईं, फिर कुछ क्षणेक पीछे चैतन्यता प्राप्त करके विशाललोचनवालीजानकीजीने चिंता की ॥८॥ कि, स्वप्नमें वानर देखनेसे आज हमने बडा बुरा स्वप्न देखा वानरका देखना शास्त्रमें खोटे स्वप्नमें गिनाजाता है कि यह निषिद्ध है,

विललापभृशंसीताकरुणंभयमोहिता ॥ रामरामेतिदुःखार्तालक्ष्मणेतिचभामिनी ॥५॥ रुरोदसहसासीतामंदमंदस्वरासती॥ साथदृष्ट्वाहरिवरं विनीतवदुपागतम् ॥ मैथिलीचिंतयामासस्वप्नोऽयमितिभामिनी॥६॥सावीक्षमाणापृथुभग्नवक्रंशाखामृगेन्द्रस्ययथोक्तकारम्॥ ददर्शपिंगप्रवरंमहार्हंवातात्मजंबुद्धिमतांवरिष्ठम् ॥७ ॥ सातंसमीक्ष्यैवभृशंविपन्नागतासुकल्पेवबभूवसीता॥चिरेणसंज्ञांप्रतिलभ्यचैवंविचिंतयामासविशालनेत्रा ॥८॥ स्वप्नोमयायंविकृतोद्यदृष्टः शाखामृगःशास्त्रगणैर्निषिद्धः॥ स्वस्त्यस्तुरामायसलक्ष्मणायतथापितुर्मेजनकस्यराज्ञः ॥९॥ स्वप्नोहिनायंनहिमेस्तिनिद्राशोकेनदुःखेनचपीडितायाः॥सुखंहिमेनास्तियतोविहीनातेनेंदुपूर्णप्रतिमाननेन ॥१०॥ रामेतिरामेतिसदैवबुद्ध्याविचिंत्यवाचाब्रुवतीतमेव ॥तस्यानुरूपांचकथांतदर्थामेवंप्रपश्यामितथाशृणोमि ॥ ११ ॥ अहंहितस्याद्यमनोभवेनसंपीडितातद्गतसर्वभावा ॥ विचिंतयंतीसततंतमेवतथैवपश्यामितथाशृणोमि ॥ १२ ॥

हम प्रार्थना करती हैं कि,श्रीरामचन्द्रजीका लक्ष्मणका और हमारे पिताजनकजीका मंगल होवे॥९॥ उन पूर्ण चन्द्रमाके समान वदनवाले श्रीरामचन्द्रजीके विरहमें हम शोक दुःखसे पीडित हो रही हैं,हमारे मनको कुछ भी सुख नहीं,निद्रातो कभी आतीही नहीं फिर भला स्वप्न कैसे दीखेगा इसलिये यह स्वप्न नहीं है ॥ १० ॥ हम बराबरअपने मनमें राम २ जपती रहती हैं और वचनसे सर्वदा रामही राम निकालती हैं और निरन्तर ध्यानके वशमें मनमें जो विचारती हैं वही श्रवण करती हैं और श्रवण करनेके अनुसार देखभी लेती हैं ॥ ११ ॥ एक मनमें सदा जो उनकी चिन्ताकरती रहती हैं, इस कारणसे उनकारूप हमारे मनमें उहित होकर हमको पीडा पहुँचाता है, इसलिये हमनित्य उनकी कथाको सुनती हैंऔर उनकीही कथावार्ता श्रवण करतीव उनकोही देखती हैं ॥१२॥

फिर ऐसा समझ पडता है कि यह वानर मनकल्पित है और फिर जोभली भांति विचार कर देखती हैं तो यह जाना जाता है कि, मनोरथसे कल्पित हुई वस्तुका तो कोई रूपही नहीं है, क्योंकि यह तो स्पष्टरूप धारण करके हमसे वार्त्ता करता है ॥१३॥ बृहस्पतिजीको नमस्कार, शस्त्रधारी इन्द्रजीको नमस्कार, ब्रह्मजीको नमस्कार, और अग्निजीको हमारा नमस्कार, हम प्रणाम करके प्रार्थना करती हैं कि, हमारे सन्मुख जो इस वानरने यह कथा कही, यह सत्यही सत्यहो मिथ्या न हो ॥१४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां द्वात्रिंशः सर्गः ॥३२॥ मूँगेके समानलाल मुखवाले पवनकुमार हनुमानूजी ऊपरकी शाखासे नीचेकी शाखापर उतरकर सीताके दुःखसे दुःखित और विनीतभावयुक्तहो दूरहींसे प्रणाम कर ॥१॥ शिरपरसे नोंदो हाथ जोड अतिमधुर वाणीसे

मनोरथःस्यादितिचिंतयामितथापिबुद्ध्यापिवितर्कयामि ॥ किंकारणंतस्यहिनास्तिरूपंसुव्यक्तरूपश्चवदत्ययंमाम् ॥१३॥ नमोस्तुवाचस्पतये सवज्रिणेस्वयंभुवेचैवहुताशनाय ॥ अनेनचोक्तंयदिदंममाग्रतोवनौकसातच्चतथास्तुनान्यथा ॥ १४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे द्वात्रिंशः सर्गः ॥३२॥ सोवतीर्यद्रुमात्तस्माद्विद्रुमप्रतिमाननः ॥ विनीतवेषःकृपणःप्रणिपत्योपसृत्यच ॥ १ ॥ तमब्रवीन्महातेजाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ शिरस्यंजलिमाधायसीतांमधुरयागिरा ॥ २ ॥ कानुपद्मपलाशाक्षिक्लिष्टकोशेयवासिनि ॥ द्रुमस्यशाखामालंब्यतिष्ठसित्वमनिंदिता ॥ ३ ॥ किमर्थंतवनेत्राभ्यांवारिस्रवतिशोकजम् ॥ पुंडरीकपलाशाभ्यांविप्रकीर्णमिवोदकम् ॥ ४ ॥ सुराणामसुराणांचनागगंधर्वरक्षसाम् ॥ यक्षाणांकिन्नराणांचकात्वंभवसिशोभने ॥ ५ ॥ कात्वंभवसिरुद्राणांमरुतांवावरानने ॥ वसूनांवावरारोहेदेवताप्रतिभासिमे ॥६॥ किंनुचन्द्रमसाहीनापतिताविबुधालयात् ॥ रोहिणीज्योतिषांश्रेष्ठाश्रेष्ठासर्वगुणाधिका ॥७॥ "कात्वंभवसिकल्याणि त्वमनिंदितलोचने" कोपाद्वायदिवामोहाद्भर्तारमसितेक्षणे ॥ वसिष्ठंकोपयित्वात्वंवाऽसिकल्याण्यरुंधती ॥ ८ ॥

महातेजस्वी पवनकुमार हनुमानूजी श्रीरामचन्द्रजीसे बोले ॥२॥ हे कमलनयने ! तुम कौन हो ? तुम सर्वाङ्गसुन्दरी, मलीन रेशमी वस्त्र पहरे वृक्षकी शाखा पकडे हुये क्यों खडी हो ? ॥३॥ कमलपत्रसे जलके गिरनेके समान तुम्हारे दोनों नेत्रोंसे शोकजनित आंसुओंकी बूँदे क्यों गिर रही हैं ॥४॥ हे शोभने ! सुर, असुर, नाग, गन्धर्व, राक्षस, यक्ष, और किन्नर इन सबमें तुम कौन हो ? ॥ ५ ॥ हे चारुवदने ! हे सर्वांगसुन्दरि ! तुम रुद्रगण, मरुद्गण या वसुगणोंमेंसे कोई हो; हमतो जानते हैं कि तुम देवताहो ॥ ६ ॥ क्या तुम ज्योतिर्मय नक्षत्रगणोंमें मुख्य सर्वश्रेष्ठ गणोंमें पहले गिरनेके योग्य रोहिणीहो ? जो चन्द्रमाके वियोगमें ग्रसितहो स्वर्गसे यहांपर गिरीहो ॥७॥ "हे कल्याणि ! हे निन्दारहित लोचनवाली ! तुम कौन हो ?" हे काले वर्णके नेत्रोंवाली ! क्या तुम

कल्याणी अरुन्धती हो जो कोप और मोहके वश अपने स्वामी वसिष्ठजीको क्रोधित कराय यहां पर चली आई हो ? ॥८॥ हे सुमध्यमे ! तुम्हारे पुत्र; पिता, स्वामी या भ्राताका क्या नाम है ? या इन लोगोंका कुछ अनभल होनेसे ही या इस लोकसे दूसरे लोकमें उनके जानेसे तो तुम शोक नहीं कर रहीहो ?॥९॥ तुम रोय रोय कर लम्बे लम्बे श्वास लेरही हो; भूमिका स्पर्श किये हो और नरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीका नाम वारम्बार मुखसे उच्चारण कर रही हो इस लिये हम तुमको देवी भी नहीं मान सकते हैं ॥१०॥ परन्तु जिस प्रकारसे तुम्हारे शुभलक्षण हम देख रहे हैं;इससे तो हमको यही जान पडता है कि तुम राजाकीरानी अथवा कोई राजकन्या होगी ॥११॥ रावणने बलात्कार करके जिन जानकीजीको जनस्थानसे हरण किया है तुम यदि वही सीता हो तो बताओ हम तुमसे इस बातको जानना चाहते हैं तुम्हारा मंगल होवे ॥१२॥ जिस प्रकारकी तुम्हारी दीन अवस्था और जिस प्रकारका अलौकिक रूप और जिसप्रकारका तपस्वियोंके

कोनुपुत्रःपिताभ्राताभर्तावातेसुमध्यमे ॥ अस्माल्लोकादमुंलोकंगतंत्वमनुशोचसि॥९॥रोदनादतिनिःश्वासाद्भूमिसंस्पर्शनादपि॥ नत्वांदेवीमहं मन्येराज्ञःसंज्ञावधारणात् ॥ १० ॥ व्यंजनानिहितेयानिलक्षणानिचलक्षये ॥ महिषीभूमिपालस्यराजकन्याचमेमता ॥११॥ रावणेनजन स्थानाद्बलात्प्रमथितायदि ॥ सीतात्वमसिभद्रंतेतन्ममाचक्ष्वपृच्छतः॥१२॥यथाहितववैदैन्यंरूपंचाप्रतिमानुषम् ॥ तपसाचान्वितोवेषस्त्वं राममहिषीध्रुवम् ॥१३॥सातस्यवचनंश्रुत्वारामकीर्तनहर्षिता॥उवाचवाक्यंवैदेहीहनूमंतंद्रुमाश्रितम्॥१४॥पृथिव्यांराजसिंहानांमुख्यस्यविदि तात्मनः॥स्नुषादशरथस्याहंशत्रुसैन्यप्रणाशिनः॥१५॥दुहिताजनकस्याहंवैदेहस्यमहात्मनः॥सीतेतिनाम्नाचोक्ताहंभार्यारामस्यधीमतः॥१६॥ समाद्वादशतत्राहंराघवस्यनिवेशने॥भुंजानमानुषान्भोगान्सर्वकामसमृद्धिनी॥१७॥ततस्त्रयोदशेवर्षेराज्येचेक्ष्वाकुनंदनम् ॥ अभिषेचयितुंराजा सोपाध्यायःप्रचक्रमे ॥ १८ ॥

योग्य वेष देखते हैं इससे तो निश्चयही जान पडताहै कि,तुम श्रीरामचन्द्रजीकी रानी हो ॥१३॥ विदेहकुमारी सीताजी हनुमान्‌जीके वचन और रामनामको सुनकर आनंद सहित वृक्षकी शाखाका आश्रय किये हुये हनुमान्‌जीसे बोलीं ॥१४॥ इससारी पृथ्वीमें राजसिंह गणोंमें जो प्रथम गिने जानेके योग्य हैं हम उन जितेन्द्रिय शत्रुसेनाके मथनेवाले महाराज दशरथजीकी पुत्र वधू हैं ॥१५॥ और विदेहराज महात्मा जनकजीकी हम कन्या हैं हमारा सीता नाम है और बुद्धिमान् महान् श्रीरामचन्द्रजीकी हम स्त्री हैं ॥१६॥ हमने श्रीरामचन्द्रजीके साथ गृहमें बारह वर्षतक रहसब अभिलाषा पूर्ण कर मनुष्य लोकके भोगोंका भोगकिया ॥१७॥ इसके पीछे जब तेरहवां वर्ष आया तब राजा दशरथजी अपने पुरोहितकी सम्मति लेकर इक्ष्वाकुकुमार श्रीरामचंद्रजीको राज्याभिषेकमें

अभिषेकित करनेके लिये तैयार हुए ॥ १८ ॥ जब श्रीरामचंद्रजीके अभिषेककी सब सामग्री आने लगीं कि, इतनेमें कैकेयी नामक रानीने अपने स्वामीसे कहा ॥ १९ ॥ कि जो श्रीरामचन्द्रजीका अभिषेक कराया जायगा, तो हम प्रतिदिन भोजन न करेंगी न जल पियेंगी तुम जान रक्खो कि, रामचंद्रजीका अभिषेक होनाही हमारे जीवनका अन्त है ॥२०॥ हे राजश्रेष्ठ ! आप जो उस देवासुरसंग्राममें प्रसन्न होकर हमको दो वर देना चाहते थे; उन दोनों वरोंको मिथ्या करनेकी यदि आपकी इच्छा न होवे; तो हम प्रार्थना करती हैं कि रामचंद्र वनको चले जांय ॥२१॥ सत्यवादी राजा दशरथजी रानीको जो वचन दे चुकेथे उनको यादकर; और कैकेयीके निठुर अप्रियवचनसुन मूर्च्छित होगये ॥२२॥ उसके पीछे वृद्धराजा दशरथजीने सत्यधर्ममें स्थिर रहकर रोदन करके

तस्मिन्संभ्रियमाणेतुराघवस्याभिषेचने ॥ कैकेयीनामभर्तारमिदंवचनमब्रवीत्॥१९॥नपिबेयंनखादेयंप्रत्यहंममभोजनम् ॥ एषमेजीवितस्यांतोरामोयद्यभिषिच्यते॥२०॥यत्तदुक्तंत्वयावाक्यंप्रीत्यानृपतिसत्तम॥तच्चेन्नवितथंकार्यंवनंगच्छतुराघवः॥२१॥सराजासत्यवाग्देव्यावरदानमनुस्मरन्॥मुमोहवचनंश्रुत्वाकैकेय्याःक्रूरमप्रियम्॥२२॥ततस्तंस्थविरोराजासत्यधर्मेव्यवस्थितः॥ज्येष्ठंयशस्विनंपुत्रंरुदन्राज्यमयाचत॥२३॥ सपितुर्वचनंश्रीमानभिषेकात्परंप्रियम् ॥ मनसापूर्वमासाद्यवाचाप्रतिगृहीतवान् ॥२४॥ दद्यान्नप्रतिगृह्णीयात्सत्यंब्रूयान्नचानृतम् ॥ अपिजीवितहेतोर्हिरामःसत्यपराक्रमः ॥ २५ ॥ सविहायोत्तरीयाणिमहार्हाणिमहायशाः ॥ विसृज्यमनसाराज्यंजनन्यैमांसमादिशत ॥२६॥ साहंतस्याग्रतस्तूर्णंप्रस्थितावनचारिणी ॥ नहिमेतेनहीनायावासःस्वर्गेऽपिरोचते॥२७॥प्रागेवतुमहाभागःसौमित्रिर्मित्रनंदनः ॥ पूर्वजस्यानुयात्रार्थेकुशचीरैरलंकृतः ॥ २८ ॥

यशस्वी अपने बडे पुत्र रामचंद्रजीसे राज्य मांगलिया ॥ २३ ॥ पिताजीका वचन राज्याभिषेकसे भी श्रीरामचंद्रजीको अधिक प्यारा हुआ, प्रथम उसको वह मनमें अंगीकार कर फिर प्रगटमें स्वीकार करते हुए॥२४॥क्योंकि,श्रीरामचंद्रजी जिस वस्तुका दान कर चुके हैं फिर चाहै उनके प्राणभी जाते रहें,तो भी उस वस्तुका ग्रहण नहीं करते, उनका स्वभावही ऐसा कि,सदा सत्य कहेंगे मिथ्या कभी नहीं कहते ॥२५॥ वह महायशस्वी श्रीरामचन्द्रजी बड़े २ मोलके वस्त्रोंको त्यागकर अपने पूरे अंतःकरणसे राज्यको छोड़ वन जानेके समय हमको अपनी माताके निकट सौंपने लगे ॥२६॥ परंतु हम बहुत शीघ्र वनचारिणीका वेश धारण करके उनके आगेही साथ वन चलनेको तैयार हुई, क्योंकि उनकेबिना स्वर्गमेंवास करनेसे भी हमको प्रसन्नता नहीं ॥२७॥ मित्रोंके आनंद बढानेवाले

महाभाग सुमित्रानन्दन लक्ष्मणजी भी अपने बडे भ्राताके साथ वन चलनेके लिये पहलेही कुश चीरपहर कर तैयार हो गये ॥२८॥ इस प्रकारसे हम तीनों जने अपने बडे राजा दशरथजीकी आज्ञा अति आदर मानसे अंगीकार करके कठोर व्रत धर ऐसे गम्भीर दर्शन वनमें प्रवेश करते हुए जो पहले कभी नहीं देखा था ॥ २९ ॥ वह अमित तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी दण्डकारण्यमें वस रहे थे कि, उसी समय दुरात्मा राक्षस रावणने उनकी भार्या हमको हरण किया ॥ ३० ॥ उसने अनुग्रह करके हमारी जीवन रक्षाके लिये दो मासकी अवधि दी है दो मासके बीत जाने पर हमको जीव त्याग करना पडेगा ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकाण्डे भाषायां त्रयस्त्रिंशः सर्गः॥३३॥शोक संतापसे संतापित हुई श्रीजानकीजीके यह वचन सुन वानर श्रेष्ठ हनुमान्जी

तेवयंभर्तुरादेशंबहुमान्यदृढव्रताः ॥ प्रविष्टाःस्मपुरादृष्टंवनंगंभीरदर्शनम् ॥२९॥ वसतोदंडकारण्येतस्याहममितौजसः ॥ रक्षसापहृताभार्या रावणेनदुरात्मना ॥ ३० ॥ द्वौमासौतेनमेकालोजीवितानुग्रहःकृतः ॥ ऊर्ध्वंद्वाभ्यांतुमासाभ्यांततस्त्यक्ष्यामिजीवितम् ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा०सुंदरकांडे त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥३३ ॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाहनुमान्हरिपुंगवः ॥ दुःखादुःखा भिभूतायाःसांत्वमुत्तरमब्रवीत् ॥ १ ॥ अहंरामस्यसंदेशाद्देविदूतस्तवागतः ॥ वैदेहिकुशलीरामःसत्वांकौशलमब्रवीत् ॥ २ ॥ योब्राह्ममस्त्रं वेदांश्चवेदवेदविदांवरः ॥सत्वांदाशरथीरामोदेविकौशलमब्रवीत ॥३॥ लक्ष्मणश्चमहातेजाभर्तुस्तेऽनुचरःप्रियः ॥ कृतवाञ्छोकसंतप्तःशिरसा तेऽभिवादनम् ॥ ४ ॥ सातयोःकुशलंदेवीनिशम्यनरसिंहयोः ॥ प्रतिसंहृष्टसर्वांगीहनूमंतमथाब्रवीत ॥ ५ ॥कल्याणीबतगाथेयंलौकिकीप्रति भातिमाम् ॥एतिजीवंतमानंदोनरंवर्षशतादपि ॥ ६ ॥

उनको समझाते बुझाते हुएउत्तर देने लगे ॥१॥ हे देवि ! श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञानुसार हम आपके निकट दूत होकर आये हैं, हे विदेहनंदिनि ! श्रीरामचं द्रजीकुशल हैं, उन्होंने आपकी कुशल पूंछी है॥२॥जो वेदवित् श्रेष्ठ ब्रह्मास्त्र और चार वेदोंको जानते हैं । देवि ! उन दशरथकुमार श्रीरामचंद्रजीने आपके कुशल मंगलका प्रश्नकियाहै॥ ३ ॥तुम्हारे स्वामीके प्रिय अनुचरमहातेजस्वी लक्ष्मणजीने शोकसे संतापित हो मस्तक झुकाय आपको प्रणाम किया है॥४॥उनदोनरसिंहों की कुशलवार्त्ता श्रवणकर देवीजानकीके सब अंगोंमें रोमाञ्च हो आया तबउन्होंने हनुमान्जीसे कहा॥५॥मनुष्य जीवित रहनेपर सौ वर्षके पीछे भी आनंद पाता है(अर्थात् जो मनुष्य जीवित रहे तो कभी न कभी उसे आनंद मिलता ही है)यह जो कहावतलोग कहा करते हैं,सो अब हम उसको सत्यही सत्य देखती हैं॥६॥

श्रीराम लक्ष्मणजीके मिलने पर जैसा आनंद सीताजीको होता, इस समय भी सीताजीको वैसाही आश्चर्यका आनंद उपजा तब सीताजी और हनुमानजीमें विश्वस्तभावसे परस्पर वार्ता होने लगी॥७॥शोकसे संतापित हुए जानकीजीके यह वचन सुनकर पवनकुमार हनुमानूजी धीरे २ उनके समीपचले गये॥८॥ धीरे २ हनुमानूजी ज्यों२निकट आते थे, त्यों२सीताजीके मनमेंइनको रावण जानकर शंका होती थी॥९॥वह मनहीमनमें कहने लगीं हाय!धिक्कार है!हमने कैसा बुरा कार्य किया ? इससे अपना वृत्तांत कहा । यह तो वही रावण दूसरा रूप धारण कर यहां आया है॥१०॥यह विचार सुंदर अंगवाली जानकीजी शिंशपाकी डालीको छोड शोकसे आकर्शित हो उस धरती परही बैठ गई॥११॥इसी अवसरमें महाबाहु हनुमानूजीने जानकीजीको प्रणाम किया, परंतु भयके

तयोःसमागमेतस्मिन्प्रीतिरुत्पादिताऽद्भुता ॥ परस्परेणचालापंविश्वस्तौतौप्रचक्रतुः ॥७॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ सीता
याःशोकतप्तायाःसमीपमुपचक्रमे ॥ ८ ॥ यथायथासमीपंसहनूमानुपसर्पति ॥ तथातथारावणंसातंसीतापरिशंकते ॥ ९ ॥ अहोधिग्धिक्कृ
तमिदंकथितंहियदस्यमे ॥ रूपांतरमुपागम्यसएवायंहिरावणः ॥१०॥ तामशोकस्यशाखांतुविमुक्त्वाशोककर्शिता ॥ तस्यामेवानवद्यांगीधर
ण्यांसमुपाविशत ॥ ११ ॥ अवंदतमहाबाहुस्ततस्तांजनकात्मजाम् ॥ साचैनंभयसंत्रस्ताभूयोनैनमुदैक्षत ॥ १२ ॥ तंदृष्ट्वावंदमानंचसीताश
शिनिभानना ॥ अब्रवीद्दीर्घमुच्छ्वस्यवानरंमधुरस्वरा ॥ १३ ॥ मायांप्रविष्टोमायावीयदित्वंरावणःस्वयम् ॥ उत्पादयसिमेभूयःसंतापंतन्नशो
भनम् ॥ १४ ॥ स्वंपरित्यज्यरूपंयःपरिव्राजकरूपवान् ॥ जनस्थानेमयादृष्टस्त्वंसएवहिरावणः ॥ १५ ॥ उपवासकृशांदीनांकामरूपनिशा
चर ॥ संतापयसिमांभूयःसंतापंतन्नशोभनम् ॥१६॥ अथवानैतदेवंहियन्मयापरिशंकितम् ॥ मनसोहिममप्रीतिरुत्पन्नातवदर्शनात् ॥१७॥

मारे त्रासित जानकीजीने फिर उनको न निहारा॥१२॥हनुमानूजीको वंदना करते हुयेदेख कर चंद्रमुखी सीताजी लंबे२श्वास लेकर उन वानरश्रेष्ठसे मधुरवचन बोलीं॥१३॥यदि तुम सत्य२ही मायावी रावण, माया अवलंबन कर फिर हमको संताप देने आये हो तो हम तुमसे कहती हैं कि, हमें इस प्रकारका दुःखदेना तुमको उचित नहीं है॥१४॥जनस्थानमें जिसको हमने अपना प्राकृतरूपछोड़ कर भिक्षुकका रूप धारण किये देखा था, निश्चय तुम वही रावणहो ॥ १५ ॥ हे कामरूपी निशाचर!हम उपवास करनेसेक्षीणहो दीनभावसे समय बिताती हैं सो हमको पुनर्वारसताना तुम्हारा उचित कर्मनहीं है॥१६॥अथवा हमारीशंका

झूठीहै, क्यों कि तुम्हारे दर्शनसे हमारे मनमें आनंद उपजताहै, इससे तुमरावण नहीं हो॥ १७॥ यदि तुम श्रीरामचंद्रजीके दूत होकर यहां आये होतो तुम्हारा मंगलहोवे हे वानरश्रेष्ठ! हम तुमसे श्रीरामचंद्रजीकी कथा पूछती हैं क्यों किश्रीरामचंद्रजीकी कथाही हमको अधिक प्यारीहै॥ १८॥ हेवानर! तुमहमारे प्यारे श्रीरामचंद्रजीके गुणोंका कीर्त्तन करो। हे सौम्य! जिस प्रकार जलकावेग नदीके किनारेको होता है वैसेही तुम हमारे मनको हरण करते हो॥ १९॥ अहो! स्वप्नने हमकोक्यामहासुख दिया है? बहुत दिनसे हरी हुई हमने आज श्रीरामचंद्रजीकेभेजे हुए दूतको देखा ॥ २० ॥ वीर श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीको यदि हम स्वप्नमें भी देख पावें तो हमें व्याकुलता न होवे, परंतु स्वप्न भी हमारा विरोधी है अर्थात् नींदही नहीं आती स्वप्न कहांसे हो ॥ २१ ॥ इसको हम स्वप्न नहीं समझ सकतीं, क्योंकि स्वप्नमें वानर देखनेसे अभ्युदय नहीं प्राप्त होता, परन्तु हमने तो संतोषरूप अभ्युदय प्राप्त किया ॥ २२॥ तो फिर क्या यह बुद्धिका भ्रम; पवनका या उन्मादसे उत्पन्न

यदिरामस्यदूतस्त्वमागतोभद्रमस्तुते ॥ पृच्छामित्वांहरिश्रेष्ठप्रियारामकथाहिमे ॥ १८ ॥ गुणान्रामस्यकथयप्रियस्यममवानर ॥ चित्तंहरसिमेसौम्यनदीकूलयथारयः ॥१९॥ अहोस्वप्नस्यसुखताथाहमेवंचिराहृता॥ प्रेषितंनामपश्यामिराघवेणवनौकसम् ॥२०॥ स्वप्नेऽपियद्यहंवीरंराघवंसहलक्ष्मणम् ॥ पश्येयंनावसीदेयंस्वप्नोऽपिममभत्सरी॥२१॥नाहंस्वप्नमिमंमन्येस्वप्नेदृष्ट्वाहिवानरम्॥ नशक्योभ्युदयःप्राप्तुंप्राप्तश्चाभ्युदयोमम॥२२॥ किंनुस्याच्चित्तमोहोऽयंभवेद्वातगतिस्त्वियम् ॥ उन्मादजोविकारोवास्यादियंमृगतृष्णिका॥२३॥ अथवानायमुन्मादोमोहोप्युन्मादलक्षणः॥संबुध्येचाहमात्मानमिमंचापिवनौकसम्॥२४॥ इत्येवंबहुधासीतासंप्रधार्यबलाबलम् ॥ रक्षसांकामरूपत्वान्मेनेतंराक्षसाधिपम्॥२५॥एतांबुद्धिंतदाकृत्वासीतासातनुमध्यमा॥नप्रतिव्याजहाराथवानरंजनकात्मजा॥२६॥सीतायानिश्चितंबुद्ध्वाहनूमान्मारुतात्मजः॥ श्रोत्रानुकूलैर्वचनैस्तदातांसंप्रहर्षयन् ॥ २७ ॥ आदित्यइवतेजस्वीलोककांतःशशीयथा ॥ राजासर्वस्यलोकस्यदेवोवैश्रवणोयथा ॥ २८ ॥

हुआ विकार अथवा मृगतृष्णा है॥२३॥ यह उन्माद भी नहीं है क्योंकि उन्मादका लक्षण ज्ञानकी हानि है, परंतु हमको ज्ञान भली भाँति है, हमअपनेकोभीजानती हैं, और इन वानरको भी प्रत्यक्ष देख रही हैं॥२४॥ सीताजी इस प्रकारकी अनेक चिंताओंसे कामरूपी राक्षस और वानर दोनों पक्षके बलाबलको निर्णय करजानकीजी हनुमान्‌जीको रावणही मानती हुई॥२५॥ क्योंकि वहजानतीथीं कि, राक्षसलोग अपनी इच्छानुसार दूसरेरूप धारणकरसकते हैं। जनकनंदिनी सुमध्यमा सीताजी उस कालमें यह स्थिर करके फिर हनुमान्‌जीसे कुछ न बोलीं॥२६॥ पवनकुमार हनुमान्‌जी सीताजीके अभिप्रायको जान; उस समय श्रवणसुखकारी वचन कह उनके आनंदको बढाने लगे॥२७॥ कि; श्रीरामचंद्रजी सूर्यके समान तेजस्वी और चंद्रमाके समान लोकोंके आनंद बढाया करते हैं और वह कुबेरजीके

समान सब लोकोंके राजा हैं ॥२८॥ और विक्रम करनेमें महायशस्वी विष्णुजीके समान और बृहस्पतिजीकी भाँति सत्यवादी और मधुरभाषी हैं ॥२९॥
वह रूपवान् स्त्रीजातिके वांछनीय साक्षात् मूर्तिमान् कंदर्पके समान श्रीमान् हैं जिस स्थानमें क्रोध करना उचित होता है वह उसी स्थानमें क्रोध किया करते हैं।
और लोकोमें वह सर्वश्रेष्ठ तथा महारथी हैं॥३०॥सब लोक उन महात्माकी भुजच्छायाका आश्रय लेकर टिके हुये हैं। जिसने मायामय मृगके द्वारा रघुनंदन
श्रीरामचंद्रजीको दूर कर॥३१॥सूने आश्रमसे आपको दूर किया है,सो आपशीघ्रही उसका फल देखेंगी,वीर्यवान् श्रीरामचंद्रजी शीघ्रहीउसरावणकोमारडालेंगे
॥३२॥वह श्रीरामचंद्रजी क्रोधकर अग्निके समान प्रकाशित बाणोंके समूहोंको छोड उस रावणका संहार करेंगे।सो उनकेही भेजेहुए दूत होकर हमतुम्हारे पास

विक्रमेणोपपन्नश्चयथाविष्णुर्महायशाः॥सत्यवादीमधुरवाग्देवोवाचस्पतिर्यथा॥२९॥रूपवान्सुभगःश्रीमान्कंदर्पइवमूर्तिमान्॥स्थानक्रोधेप्रहर्ता
चश्रेष्ठोलोकेमहारथः॥३०॥ बाहुच्छायामवष्टब्धोयस्यलोकोमहात्मनः॥ अपक्रम्याश्रमपदान्मृगरूपेणराघवम् ॥३१॥ शून्येयेनापनीतासित
स्यद्रक्ष्यसितत्फलम् ॥ अचिराद्रावणंसंख्येयोवधिष्यतिवीर्यवान् ॥३२॥ क्रोधप्रमुक्तैरिषुभिर्ज्वलद्भिरिवपावकैः॥ तेनाहंप्रेषितोदूतस्त्वत्सका
शमिहागतः ॥३३॥ त्वद्वियोगेनदुःखार्तःसत्वांकौशलमब्रवीत् ॥ लक्ष्मणश्चमहातेजाःसुमित्रानंदवर्धनः ॥ ३४ ॥ अभिवाद्यमहाबाहुःसत्वां
कौशलमब्रवीत् ॥ रामस्यचसखादेविसुग्रीवोनामवानरः ॥३५॥ राजावानरमुख्यानांसत्वांकौशलमब्रवीत् ॥नित्यंस्मरतितेरामःससुग्रीवःसल
क्ष्मणः॥३६॥ दिष्ट्यावजीसिवैदेहिराक्षसीवशमागता॥नचिराद्द्रक्ष्यसेरामंलक्ष्मणंचमहारथम्॥३७॥मध्येवानरकोटीनांसुग्रीवंचामितौजसम्॥
अहंसुग्रीवसचिवोहनूमान्नामवानरः ॥ ३८ ॥ प्रविष्टोनगरींलंकांलंघयित्वामहोदधिम् ॥ कृत्वामूर्ध्नितदान्यासंरावणस्यदुरात्मनः ॥ ३९ ॥

आये हैं ॥३३॥ आपके विरहसे कातर होकर उन्होंने आपकी कुशल वार्त्ता पूछी है,सुमित्राके आनंद बढानेवाले तेजस्वी महाबाहु लक्ष्मणजीने भी ॥३४॥
प्रणामकर आपकी कुशल वार्ता पूछी है। हे देवि! श्रीरामचंद्रजीके सखा सुग्रीव नाम वानरने भी॥३५॥जो कि, वानरोंके राजा हैं उन्होंने भीआपसे कुशल
प्रश्न किया है। श्रीरामचंद्रजी सुग्रीव व लक्ष्मणजीके साथ नित्यही तुम्हारी याद किया करते हैं ॥३६॥ यह बडे भाग्यकी बात है कि,आप निशाचरियोंके
वशमें पडकर भी अब तक जीवित हैं। अब बहुतही शीघ्र महारथ श्रीरामचंद्रजी व लक्ष्मणजीके सहित ॥ ३७ ॥ करोड २ वानरोंके बीचमें अमित तेजस्वी
सुग्रीवजीको देखोगी, हम हनुमान् नामक वानर सुग्रीवजीके मंत्री ॥ ३८ ॥ महासमुद्रको लांघकर लंका नगरीमें आये हैं। दुरात्मा रावणके मस्तकपर चरण

धर ॥३९॥ पराक्रमका अवलम्बनकर तुम्हारे दर्शनकी लालसासे यहां आये हैं। हे देवि ! आप जो हमको रावण समझती हैं सो हम रावण नहीं हैं, अब आप इस उपस्थित शंकाको छोड हमारे कहनेका विश्वास कीजिये ॥ ४० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुंदरकांडे भाषायां चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥ वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जीके मुखसे यह कथा श्रवणकर सीताजी मधुर वाणी और विनीतभावसे उनसे बोलीं ॥ १ ॥ कि, श्रीरामचन्द्रजीके साथ तुम्हारा कहां मिलना हुआ? लक्ष्मणजीको तुमने किसप्रकारसे जाना? और वानर मनुष्योंका समागम परस्पर कैसे हुआ? ॥ २॥ हे वानर! श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके जो चिह्न हैं तुम फिर भली भाँति उनको कहो; जिसके सुननेसे हमारे मनका शोक जाता रहेगा ॥३॥ और श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीके शरीरका गठन, दोनों

त्वांद्रष्टुमुपयातोऽहंसमाश्रित्यपराक्रमम् ॥ नाहमस्मितथादेवियथामामवगच्छसि ॥ विशंकात्यज्यतामेषाश्रद्धस्ववदतोमम ॥४०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥३४॥ तांतु रामकथां श्रुत्वावैदेहीवानरर्षभात् ॥ उवाचव चनंसांत्वमिदंमधुरयागिरा ॥ १ ॥ क्वतेरामेणसंसर्गःकथंजानासिलक्ष्मणम् ॥ वानराणांनराणांचकथमासीत्समागमः ॥ २ ॥ यानिरामस्य चिह्नानिलक्ष्मणस्यचवानर ॥ तानिभूयःसमाचक्ष्वनमांशोकःसमाविशेत् ॥ ३ ॥ कीदृशंतस्यसंस्थानंरूपंतस्यचकीदृम् ॥ कथमूरूकथंबाहू लक्ष्मणस्यचशंसमे ॥ ४ ॥ एवमुक्तस्तुवैदेह्याहनूमान्मारुतात्मजः ॥ ततोरामयथातत्त्वमाख्यातुमुपचक्रमे ॥ ५ ॥ जानंतीबतदिष्ट्या मांवैदेहिपरिपृच्छसि ॥ भर्तुःकमलपत्राक्षिसंस्थानंलक्ष्मणस्यच ॥ ६ ॥ यानिरामस्यचिह्नानिलक्ष्मणस्यचयानिवै ॥ लक्षितानिविशालाक्षि वदतःशृणुतानिमे ॥७॥ रामःकमलपत्राक्षःपूर्णचंद्रनिभाननः ॥ रूपदाक्षिण्यसंपन्नःप्रसूतोजनकात्मजे ॥ ८ ॥

बाँहें, दोनों जांघें, और वर्ण कैसा है, सो तुम सबही हमको बताओ ॥४॥ विदेहराजकुमारी जानकीजीके यह वचन सुनकर पवनकुमार हनुमान्‌जी श्रीरामचन्द्रजीका रूप यथावत् वर्णन करने लगे ॥५॥ हे कमलनेत्रवाली वैदेही जानकीजी! तुम अपने स्वामी और लक्ष्मणजीके भी सब अंग चिह्न जानकरभी हमसे पूछती हो यह बडे भाग्यकी बात है (अथवा भाग्यसे यदि आप हमको श्रीरामचन्द्रजीका दूत जानकर स्वामी और अपने देवरके अंग चिह्न पूछती हैं) ॥ ६ ॥ तो हमनेश्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके अंगोंमें जो चिह्न देखे हैं हम उन समस्तको कहते हैं, हे विशालनेत्रवाली ! आप श्रवण करें ॥७॥ श्रीरामचन्द्रजीके नेत्र कमलदलके समान, और वदनमंडल पूर्णमासीके चंद्रमाके समान हैं। हे जनकनंदिनि! वह रूप और चातुर्यताको साथही लिये पृथ्वीपर उत्पन्न हुये हैं ॥८॥

वह तेजमें सूर्य, क्षमामें पृथ्वी, बुद्धिमें बृहस्पति और यशमें इन्द्रजीके समान हैं ॥ ९ ॥ सब प्राणियोंकी, निज जनोंकी, अपने चरित्रकी और धर्मकी वह रक्षा करनेवाले और शत्रुओंके तपानेवाले हैं॥१०॥हे भामिनी ! श्रीरामचन्द्रजी सब लोकोंके रक्षाकर्त्ता और चारों वर्णकी रक्षा करनेवालेहैं; और लोकोंकी मर्यादाके अधिष्ठाता अर्थात् करने करानेवाले हैं ॥११॥ इस लियेवह सूर्य समान हैं और सूर्यके समान विराजित हैं; वह गृहस्थधर्ममें टिके हुये भी ब्रह्मचर्य व्रताचारी हैं वहइस बातको भली भाँतिसे जानते हैं कि, किस समय साधु लोगोंका उपकार करना होगा ! कार्यके स्वरूप और अनुष्ठानके विषयको भी वह भली भाँति जानते हैं ॥ १२ ॥ राजनीति भली भाँतिसे सीखे हुये और ब्राह्मणोंकी आज्ञाके पालन करनेवाले हैं, और शत्रुओंके तपानेवाले श्रीरामचन्द्रजी ज्ञानवान् सुशील और विनीत हैं ॥ १३ ॥ यजुर्वेद भली भाँति सीखे व वेदवित् पंडितगणोंसे अत्यन्त पूजनीय; धनुर्वेद; चारों वेद और वेदाङ्ग इन सबमें

तेजसादित्यसंकाशःक्षमयापृथिवीसमः ॥ बृहस्पतिसमोबुद्ध्यायशसावासवोपमः ॥९॥ रक्षिताजीवलोकस्यस्वजनस्यचरक्षिता ॥ रक्षितास्वस्यवृत्तस्यधर्मस्यचपरंतपः ॥ १० ॥ रामोभामिनिलोकस्यचातुर्वर्ण्यस्यरक्षिता ॥ मर्यादानांचलोकस्यकर्ताकारयिताचसः ॥११॥अर्चिष्मानर्चितोत्यर्थंब्रह्मचर्यव्रतेस्थितः॥साधूनामुपकारज्ञःप्रचारज्ञश्चकर्मणाम् ॥१२॥ राजनीत्यांविनीतश्चब्राह्मणानामुपासकः ॥ ज्ञानवाञ्शीलसंपन्नो विनीतश्चपरंतपः॥१३॥यजुर्वेदविनीतश्चवेदविद्भिःसुपूजितः॥ धनुर्वेदेचवेदेचवेदांगेषुचनिष्ठितः॥१४॥विपुलांसोमहाबाहुःकंबुग्रीवःशुभाननः॥ गूढजत्रुःसुताम्राक्षोरामोनामजनैःश्रुतः ॥ १५ ॥ दुंदुभिस्वननिर्घोषःस्निग्धवर्णःप्रतापवान् ॥ समःसमविभक्तांगोवर्णंश्यामंसमाश्रितः ॥१६॥ त्रिस्थिरस्त्रिप्रलंबश्चत्रिसमस्त्रिषुचोन्नतः॥ त्रिताम्रस्त्रिषुचस्निग्धोगंभीरस्त्रिषुनित्यशः ॥१७॥

भी अतिनिपुण हैं ॥ १४ ॥ जिनके कंधे बडे हैं बाँहें लंबी हैं, गर्दन शंखके समान और वदन मनोहर है, हँसलियोंकी अस्थिमें मांससे ढकीं और नेत्रयुगल अरुणवर्ण हैं और लोकमें वह श्रीरामचन्द्रजीके नामसे विदित हैं ॥१५॥ उनका स्वर नगाडेके शब्दके समान गंभीर है वर्ण चिकना सुंदर; वह प्रतापवान् हैं उनके सब अंग प्रत्यंग परस्पर सुविभक्त हैं; अर्थात् जो जितना चाहिये उतनाही चौडा लंबा और मोटा है औरशरीर भी जैसा बडा है वैसाही उसका प्रमाण भी है, उनकी देहका वर्ण नील अर्थात् श्यामरंगी है ॥१६॥ उनकी ऊरु, मणिबंध और मुष्टि यह तीन अंग अति कठिन हैं. भौंह, अंडकोश, बाहु यह तीन अंग लंबे हैं. केशाग्र वृषण और जानु यह तीनों अंग समान हैं, नाभिका अभ्यन्तरभाग, कुक्षि और छाती यह अंग ऊंचे हैं आंखोंके कोये; नख, चरणका तालुआ और हाथ यह अंग लाल हैं, पांवकीरेखा, केश, शिश्नका अग्रभाग, यह तीन अंग चिकने, स्वर, नाभि और गति यह गंभीर हैं ॥ १७ ॥

पेट और कंठमें त्रिवली पडी हुई, चरणोंके तलुओंका मध्यभाग, चरण रेखा और छातियें (स्तन) यह तीन अंग बराबर गहिरे, ग्रीवा, नेत्र और पृष्ठभाग, यह तीन अङ्ग छोटे, मस्तकमें तीन घेर, अँगूठेके मूलमें चार रेखा बनी जिससे चारों वेदोंका पढना विदित होता है. देह चार हाथका बडा, बाहु, ऊरु, और गंडस्थल यह चारों अंग सुगोल हैं ॥१८॥ भौंहें, नासिकाके छेद, नयन कर्ण, अधर, स्तन, कूर्पर माथेकीखली, मणिबंध, जानु, वृषण, कटि, हस्त, चरण, दोनों नितम्ब यह सब जोडे परस्पर समान यह नहीं कि एक अंग छोटा; और एक अंग बडा दोनों दांतोंकी पंक्तियोंकी दोनों ओर शास्त्रोक्त लक्षणयुक्त चार दांत हैं, उनकी गति सिंह शार्दूल गज और वृषभके समान है अधर, मांसल ठोडी परिपूर्ण और उन्नत हैं नासा दीर्घ, वाक्यमुख नख लोम और चर्म यह पांचअंग चिकने हैं; दोनों बांहे, कनिष्ठा अंगुल, दो ऊरु, दो जंघा यह आठ अंग सुदीर्घ हैं ॥१९॥ मुख १ नेत्र २ जीभ ३ ओष्ठ ४ तालू ५ स्तन ६ नख ७ मुखका भीतर ८ हाथ ९ और चरण १० यह दश अंग कमलसदृश और वक्षस्थल, मस्तक, ललाट, ग्रीवा, बाहु, कंधा, नाभि, चरण, पीठ और कर्ण, यह दश अंग विशाल हैं।

त्रिवलीमांस्त्र्यवनतश्चतुर्व्यंगस्त्रिशीर्षवान्चतुष्कलश्चतुर्लेखश्चतुष्किष्कुश्चतुःसमः ॥१८॥ चतुर्दशसमद्वन्द्वश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्गतिः ॥ महोष्ठहनुनासश्चपंचस्निग्धोऽष्टवंशवान् ॥१९॥ दशपद्मोदशबृहत्त्रिभिर्व्याप्तोद्विशुक्लवान् ॥ षडुन्नतोनवतनुस्त्रिभिर्व्याप्नोतिराघवः ॥२०॥ सत्यधर्मरतः श्रीमानसंग्रहानुग्रहेरतः ॥ देशकालविभागज्ञःसर्वलोकप्रियंवदः ॥२१॥ भ्राताचास्यचद्वैमात्रःसौमित्रिरमितप्रभः ॥अनुरागेणरूपेणगुणैश्चापितथाविधः ॥२२॥ सस्तुवर्णच्छविःश्रीमान्रामःश्यामोमहायशाः ॥ तावुभौनरशार्दूलौत्वद्दर्शनकृतोत्सवौ ॥ २३ ॥

श्री (लक्ष्मी) यश, और तेज उनमें वर्त्तमान है उनके पिता माताका कुल पवित्र है। कक्ष, कुक्षि, छाती, नासिका, कंधे और ललाट यह छः अंग ऊंचे हैं और उंगलियोंके पोरुए, केश, रोम, नख, त्वचा, शिश्न, श्मश्रु, दृष्टि और बुद्धि यह नव पदार्थ अति सूक्ष्म हैं ॥२०॥ श्रीरामचन्द्रजी समयका यथोचित विभाग करके धर्म अर्थ काम मोक्ष इनचारों वर्गोंकी सेवा सदा किया करते हैं वह सत्यरत श्रीमान् धन इकट्ठा करने और उस धनसे प्रजापालन करनेके कार्यमें तैयार देशकालका भेद जाननेवाले और सब जनोंसे प्रिय बोलनेवाले हैं॥२१॥उनके सौतेले भाई प्रमाणरहित प्रभाववाले सुमित्रानंदन लक्ष्मणजी भातृस्नेहरूप और गुणोंमें श्रीरामचन्द्रजीके समान हैं ॥ २२ ॥ परन्तु उन श्रीमान् लक्ष्मणजीके अंग सुवर्णके समान गौर हैं और महायशस्वी श्रीरामचन्द्रजी श्यामवर्ण हैं; बस केवल इतनाही अन्तर है जिस समय हम चले थे उस समय आपके दर्शन प्राप्त करनेके सिवाय उन दोनों नर शार्दूलोंको और कोई भी चिन्ता नहीं थी और

वह छटपटातेथे कि, कब आपके दर्शन हों ॥२३॥ इस प्रकारसे समस्त पृथ्वीमें आपकोही ढूँढते भालते अनेक स्थानोंमें घूमते घामते ॥ २४ ॥ वह दोनों भाई अनेक सघन वृक्षोंसे युक्त ऋष्यमूक पर्वतके नीचे बैठे अपने ज्येष्ठभाई वालिसे निकाले ॥ २५ ॥ और उसकेही भयसे दुःखित वानरोंके सहित बैठे वानरोंके महाराज प्रियदर्शन सुग्रीवजीसे मिले, हम सत्यप्रतिज्ञ वानरनाथ सुग्रीवजीकी ॥ २६ ॥ परिचर्या प्रथमहीसे करते थे, राज्य छूटनेके पहले भी हम बराबर उनकी सेवा करतेही रहे सो जब कि सुग्रीवजी राज्यसे निकाले जाकर वनमें वसते थे कि चीर वल्कल धारण किये श्रेष्ठ धनुष ग्रहण किये ॥ २७ ॥ राम लक्ष्मण वहां आये वानरोंमें श्रेष्ठ सुग्रीवजी उन धनुर्द्धर दोनों नरव्याघ्रोंको देखते हुए ॥ २८ ॥ और देखतेही भयके कारण मोहको प्राप्त हो एक छलांग मार पर्वत के शिखर पर चढ़ गये, और उस शिखरपर भली भाँती टिककर सुग्रीवजीने ॥ २९ ॥ बहुतही शीघ्र उन दोनों जनोंके निकट हमको

विचिन्वंतौमहींकृत्स्नामस्माभिःसहसंगतौ ॥ त्वामेवमार्गमाणौतौविचरंतौवसुंधराम्॥२४॥ददर्शतुर्मृगपतिंपूर्वजेनावरोपितम्॥ऋष्यमूकस्य मूलेतुबहुपादपसंकुले॥२५॥भ्रातुर्भयार्तंमासीनंसुग्रीवंप्रियदर्शनम् ॥ वयंचहरिराजंतंसुग्रीवंसत्यसंगरम्॥२६॥ परिचर्यामहेराज्यात्पूर्वजेनावरोपितम्॥ततस्तौचीरवसनौधनुःप्रवरपाणिनौ॥२७॥सतौदृष्ट्वानरव्याघ्रौधन्विनौवानरर्षभः॥२८॥अभिप्लुतोगिरेस्तस्यशिखरंभयमोहितः॥ ततःसशिखरेतस्मिन्वानरेंद्रोव्यवस्थितः ॥ २९ ॥ तयोःसमीपंमामेवप्रेषयामाससत्वरम् ॥ तावहंपुरुषव्याघ्रौसुग्रीववचनात्प्रभू॥३०॥रूपलक्षणसंपन्नौकृतांजलिरुपस्थितः ॥ तौपरिज्ञाततत्त्वार्थौमयाप्रीतिसमन्वितौ॥३१॥पृष्ठमारोप्यतंदेशंप्रापितौपुरुषर्षभौ ॥ निवेदितौचतत्त्वेनसुग्रीवायमहात्मने ॥ ३२ ॥ तयोरन्योन्यसंभाषाद्भृशंप्रीतिरजायत ॥ तत्रतौकीर्तिसंपन्नौहरीश्वरनरेश्वरौ ॥३३॥ परस्परकृताश्वासौकथयापूर्ववृत्तया॥तंततःसांत्वयामाससुग्रीवंलक्ष्मणाग्रजः॥३४॥स्त्रीहेतोर्वालिनाभ्रात्रानिरस्तंपुरुतेजसा॥ततस्त्वन्नाशजंशोकंरामस्यक्लिष्टकर्मणः॥३५॥

भेजा, सुग्रीवजीकी आज्ञानुसार हम वहां जाय उन पुरुष सिंह सब कार्योंके करनेमें समर्थ ॥ ३० ॥ रूप लक्षण सम्पन्न दोनों वीरोंके सन्मुख हाथ जोडकर खडे हुये और तब एक दूसरेके वृत्तान्तसे ठीक २ अवगत हो गये और वह भी समाचार जान बडे प्रसन्न हुये ॥ ३१ ॥ तब हम उन दोनों पुरुष श्रेष्ठोंको अपनीपीठपर चढाकर ऋष्यमूक पर्वतके शिखर पर लाये, और वहां पहुँच महात्मा सुग्रीवजीसे समस्त वृत्तान्त निवेदन किया ॥ ३२ ॥ यशस्वी नर श्रेष्ठ और वानर श्रेष्ठ दोनोंही परस्पर वार्तालाप करके अतिशय प्रसन्न हुए ॥ श्रीरामचन्द्रजी व सुग्रीवजी दोनोंने ॥ ३३ ॥ एक दूसरेसे अपना पूर्ववृत्तान्त कहा और परस्परमें परस्परको आगत स्वागत किया लक्ष्मणजीके बडे भाई श्रीरामचंद्रजीने प्रथम सुग्रीवको धीरज दिया ॥ ३४ ॥ कारण कि, स्त्री हरण करने की

इच्छा किये उनके बडे भ्राता तेजस्वी वालिने उन्हें घरसे निकाल दिया था। जब श्रीरामचंद्रजी समझा चुके; तब तुम्हारे हरणहो जानेसे जो शोक विशेष कर्मकारी श्रीरा मचंद्रजी को था॥ ३५॥उसका समस्त वृत्तान्त लक्ष्मणजीने वानर पति सुग्रीवजीसे कहा, वानरराज सुग्रीवजी लक्ष्मणजीके वचन सुन कर॥ ३६॥राहुसे ग्रसे हुये सूर्यके समान मलीनहो गये तत्पश्चात् तुम्हारे अंगोंमें स्पर्श करनेके कारण शोभायमान होनेवाले गहने॥ ३७॥राक्षससे हरी जानेके समय जो आकाशसे पृथ्वी पर तुमने छोडेथे वानर यूथपतिगण वही सब गहने श्रीरामचंद्रजीके पास लाये॥ ३८॥और हर्षित हो उनको दिखाये, परंतु उसकाल वे वानर आपकी गतिको नहीं जानते थेकि, आप कहां हैं जो समस्त गहने श्रीरामचंद्रजी को दिखाये गयेथे ॥३९॥ वह समस्त जबकि शब्द करते २ गिरे थे, तब हमनेही इकठा करके उनको उठा लिया था

लक्ष्मणोवानरेंद्रायसुग्रीवायन्यवेदयत्॥ सश्रुत्वावानरेंद्रस्तुलक्ष्मणेनेरितंवचः॥३६॥तदासीन्निष्प्रभोत्यर्थंग्रहग्रस्तइवांशुमान्॥ततस्त्वद्गात्रशो भीनिरक्षसाह्रियमाणया ॥३७॥ यान्याभरणजालानिपातितानिमहीतले ॥ तानिसर्वाणिरामायआनीयहरियूथपाः ॥३८॥ संहृष्टादर्शयामा सुर्गतिंतुनविदुस्तव ॥ तानिरामायदत्तानिमयैवोपहृतानिच॥३९॥स्वनवंत्यवकीर्णानितस्मिन्विहृतचेतसि॥तान्यंकेदर्शनीयानिकृत्वाबहुविधं तदा ॥४०॥ तेनदेवप्रकाशेनदेवेनपरिदेवितम् ॥ प्रादीपयद्दाशरथेस्तदाशोकहुताशनम् ॥४१॥ शायितंचचिरंतेनदुःखार्तेनमहात्मना॥मयापि दिविधैर्वाक्यैःकृच्छ्रादुत्थापितःपुनः ॥ ४२ ॥ तानिदृष्ट्वामहार्हाणिदर्शयित्वामुहुर्मुहुः ॥ राघवःसहसौमित्रिःसुग्रीवेसन्यवेशयत ॥ ४३ ॥ सतवादर्शनादार्येराघवःपरितप्यते ॥ महताज्वलतानित्यमग्निनेवाग्निपर्वतः ॥४४॥ त्वत्कृतेतमनिद्राचशोकश्चिताचराघवम् ॥ तापयंति महात्मानमग्न्यगारमिवाग्नयः ॥ ४५ ॥

श्रीरामचंद्रजी उन सबको देखतेही मूर्च्छितसे होगये थे फिर इन सुंदर गहनोंको वारंवार हृदयसे लगाये ॥४०॥ उन देवताओंके समान श्रीरामचंद्रजीनेअनेक भाँतिके विलाप रोय २ कर किये । उन समस्त गहनोंसे दशरथ कुमार श्रीरामचंद्रजीके शोकानल को और भी प्रज्वलित किया ॥४१॥ वह महात्मा श्रीराम चंद्रजी शोकसे व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिरपडे; हमने अनेक भाँतिके मीठे २ वचनोंसे समझा कर अतिकठिनाईसे फिर उनको उठा कर बैठाया॥४२॥श्रीराम चंद्रजीने वारंवार वहसब गहने देखे और लक्ष्मणजीको दिखाये और फिर देखदाखकर सुग्रीवजीको सौंप दिये॥४३॥हे आर्ये! नित्य जलती हुई बडी भारी अग्निके द्वारा पर्वत जैसे संतापित होता है वैसेही रघुनन्दन श्रीरामचंद्रजी आपके दर्शन न पानेसे संतापित हो रहेहैं ॥४४॥ तीन अग्नियोंसे युक्त अग्नि गृहके समान अनि

द्रा. शोक और चिंतासे महात्मा श्रीरामचन्द्रजी संतापित होते हैं॥४५॥जैसे बडे भारी भूकम्पसे पर्वत हिलता है, वैसेही आपके अदर्शनसे उत्पन्न हुये शोकके कारण श्रीरामचन्द्रजी कंपायमान रहते हैं॥४६॥हे राजनंदिनी! श्रीरामचन्द्रजी विविध मनोहर कानन नदी और झरनोंके समीप घूमते हुये फिरा करतेहैं, परंतु आपके दर्शन न मिलनेसे उनको यहकुछ भी अच्छे नहीं लगते॥४७॥हे राजनंदिनी! वह नर सिंह रघुनंदनजी शीघ्रही रावणको बंधु मित्र बाँधवों सहित मार कर आपको प्राप्त करेंगे॥ ४८ ॥ अनंतर श्रीरामचन्द्रजी और सुग्रीव दोनों एक वालिका संहार, और एक तुम्हारे खोजनेके निमित्त परस्पर प्रतिज्ञा करते हुये ॥४९॥ इसके पीछे वह वानर राज सुग्रीवजी उन दो कुमारों के साथ किष्किन्धामें आये और समरमें वालिको मार डाला॥५०॥श्रीरामचन्द्रजीने अपने बलसे

तवादर्शनशोकेनराघवःपरिचाल्यते।महताभूमिकंपेनमहानिवशिलोच्चयः ॥४६॥ काननानिसुरम्याणिनदीप्रस्रवणानिच ॥ चरन्नरतिमाप्नोति त्वामपश्यन्नृपात्मजे ॥४७॥ सत्वांमनुशार्दूलःक्षिप्रंप्राप्स्यतिराघवः॥समित्रबांधवंहत्वारावणंजनकात्मजे ॥ ४८ ॥ सहितौरामसुग्रीवावुभावकुरुतांतदा ॥ समयंवालिनंहंतुंतवचान्वेषणंप्रति ॥४९॥ ततस्ताभ्यांकुमाराभ्यांवीराभ्यांसहरीश्वरः ॥ किष्किंधांसमुपागम्यवालीयुद्धेनिपातितः ॥५०॥ ततोनिहत्यतरसारामोवालिनमाहवे॥सर्वर्क्षहरिसंघानांसुग्रीवमकरोत्पतिम्॥५१॥रामसुग्रीवयोरैक्यंदेव्येवंसमजायत॥हनूमंतंचमांविद्धितयोर्दूतमुपागतम् ॥ ५२ ॥ स्वंराज्यंप्राप्यसुग्रीवः स्वानानीयमहाकपीन्॥त्वदर्थंप्रेषयामासदिशोदशमहाबलान् ॥५३॥ आदिष्टावानरेंद्रेणसुग्रीवेणमहौजसः॥ अद्रिराजप्रतीकाशाःसर्वतःप्रस्थितामहीम् ॥५४॥ ततस्तेमार्गमाणावैसुग्रीववचनातुराः॥चरंतिवसुधांकृत्स्नांवयमन्येचवानराः॥ ५५ ॥ अंगदोनामलक्ष्मीवान्वालिसूनुर्महाबलः ॥ प्रस्थितःकपिशार्दूलस्त्रिभागबलसंवृतः ॥ ५६ ॥

मार कर सुग्रीवजी को समस्त ऋक्ष और वानरोंका राजा बनाया॥५१॥हे देवि ! इस प्रकारसे श्रीरामचन्द्र और सुग्रीवजीमें मित्रता उत्पन्न हुई, यह आप जानें हम उन लोगोंकेही दूत हनुमान्‌जी आपके निकट आये हैं ॥५२॥ सुग्रीव जीने अपने राज्यको पाया, अपने अधीनवाले महा बलवान् बडे २ वानरोंको बुला कर आपके खोजनेके लिये उनको दशों दिशाओं में भेजा है ॥ ५३ ॥ वानरराज सुग्रीवजी की आज्ञा पाय कर पर्वतराजके समान बडे २ शरीर वाले महा तेजस्वी वानरगण पृथ्वी के चारों ओर को गये हैं ॥५४॥ सुग्रीवजी की आज्ञा से भीत हो वह वानर लोग तथा हम तबसे ही आपका पता लगाने के लिये समस्त पृथिवी पर घूमते हैं॥५५॥हमारा भी उनमें से एक दल है। जितनी सेना भेजनेसे बाकी रह गई थी उसका एक भाग किष्किन्धा में छोड़ वालि पुत्र अंगदना

मक सौंदर्य सम्पन्न, महा बलवान् वानरश्रेष्ठ तीन भाग सेना संग लेकर इधर कोआये हैं ॥५६॥ अंगदजीके अनुचर हम लोग पर्वत श्रेष्ठ विन्ध्याचल पर मार्ग भूलकर अत्यन्त शोकको प्राप्त हुए थे; वहां पर हम लोगोंको बहुत दिन रात बीत गये थे॥५७॥इसके पीछे हम लोगोंने कार्य सिद्ध होनेकी आशा छोडदी, और सुग्रीवजीनेजो अवधि नियत करदी थी वही भी बीत गई इसलिये कपिराजके भयसे भीत होकर प्राणत्याग करनेके लिये हम सब जने तैयार हुये ॥५८॥ विविध गिरि, दुर्ग, नदी, झरने, इन सबको ढूँढनेपर भी आपका सन्धान न पानेसे हमलोगोंने प्राण त्याग करनेका निश्चय किया ॥५९॥ इसके पीछे हमने उसी पर्वतके ऊपर चढ प्रायोपवेशन[1] व्रत धारण किया । हे जनकनन्दिनी ! सबही वानरगण प्रायोपवेशन व्रतले मरनेपर उतारू हुये ॥६०॥ यह देख अंगदजी शोकसागरमें

एषांनोविप्रनष्टानांविंध्येपर्वतसत्तमे ॥ भृशंशोकपरीतानामहोरात्रगणागताः ॥ ५७ ॥ तेवयंकार्यनैराश्यात्कालस्यातिक्रमेणच ॥ भयाच्चकपि
राजस्यप्राणांस्त्यक्तुमुपस्थिताः ॥ ५८ ॥ विचित्यगिरिदुर्गाणिनदीप्रस्रवणानिच ॥ अनासाद्यपदंदेव्याःप्राणांस्त्यक्तुंव्यवस्थिताः ॥ ५९ ॥
ततस्तस्यगिरेर्मूर्ध्निवयंप्रायमुपास्महे॥दृष्ट्वाप्रायोपविष्टांश्चसर्वान्वानरपुंगवान् ॥६०॥ भृशंशोकार्णवे मग्नः पर्यदेवदंगदः ॥ तवनाशंचवैदेहिवा
लिनश्चतथावधम् ॥ ६१ ॥ प्रायोपवेशमस्मकंमरणंचजटायुषः ॥ तेषांनःस्वामिसंदेशान्निराशानांमुमूर्षताम् ॥ ६२ ॥ कार्यहेतोरिहायातःश
कुनिर्वीर्यवान्महान् ॥ गृध्रराजस्यसोदर्यःसंपातिर्नामगृध्रराट् ॥६३॥ श्रुत्वाभ्रातृवधंकोपादिदंवचनमब्रवीत् ॥ यवीयान्केनमेभ्राताहतःक्व
निपातितः॥६४॥ एतदाख्यातुमिच्छामिभवद्भिर्वानरोत्तमाः ॥ अंगदोऽकथयत्तस्यजनस्थानेमहद्वधम् ॥६५॥ रक्षसाभीमरूपेणत्वामुद्दिश्यय
थार्थतः॥ जटायोस्तुवधंश्रुत्वादुःखितःसोरुणात्मजः ॥ ६६ ॥

डूब आपका न मिलना, और वालिका मरना कहकर वारंवार रोदन करने लगे ॥६१॥ वह हम सबका मरनेको तैयार होना, जटायुका मरना यह कहकर बडे दुःखी हुये, सुग्रीवजीकी आज्ञा अतिकठिन थी इसलिये हम सब निराश हो मरनेके लिये इसप्रकारसे बैठे हैं ॥ ६२ ॥ कि, इतनेही में मानो हम लोगोंकी सिद्धिके निमित्तही गृध्रराज जटायुके भाई सम्पाति नामक महाकाय वीर्यवान् गृध्रराज पक्षी हमारे समीप आये ॥ ६३ ॥ और भाईका मरण वृत्तान्त सुन क्रोधमें भर कर यह बोले "कि, हमारे छोटे भाईको किसने कौनसे स्थानपर मारा है ?॥६४॥हे वानरश्रेष्ठगण ! तुम लोग हमको बताओ, हमारी इच्छा यह सब सुननेकी है" जब इस भाँतिसे उस पक्षीने कहा तो अंगदजीने सम्पातिसे जनस्थानमें बडा भारी वध ॥६५॥ जो तुम्हारे लिये भीमरूपी राक्षस रावणने महात्मा

१ कुश बिछाकर मरनेके लिये निराहार बैठना 'प्रायोपवेशन' व्रत कहाता है ॥

जटायुका किया था, सब कह सुनाया जटायुका वध सुन कर अति दुखितहो अरुणके पुत्र सम्पातिने ॥६६॥ बताया कि, तुम निंदारहित अंगवाली रावणके गृहमें बसती हो सम्पातिके यह प्रीति देनेवाले वचन सुनकर ॥ ६७ ॥ अंगद इत्यादि हम सबही वहांपरसे चले । विन्ध्याचलसे उतरकर हम सब समुद्रके रमणीक किनारेपर आये ॥ ६८ ॥ आपके दर्शनाभिलाषसे उत्साहित और प्रसन्न होकर अंगदादि सब वानरगण प्रायः समुद्रके तटपर ही पहुँच गये ॥६९॥ आपका दर्शन करनेके लिये उद्यत वानरगणोंको फिर एक विषम भावना आय पहुँची जब वानरोंकी सेना समुद्र देख उत्साह रहित और शोकाकुल हुई तब हम ॥ ७० ॥ उन सब वानरोंका महाभय छुड़ाय शतयोजनके फांटवाले समुद्रको नांघ रात्रिकालमें राक्षसोंसे परिपूर्ण लंका नगरीमें प्रवेश करते हुए ॥७१ ॥

त्वामाहसवरारोहेवसंतींरावणालये ।। तस्यतद्वचनंश्रुत्वासंपातेःप्रीतिवर्धनम् ॥६७॥ अंगदप्रमुखाःसर्वेततःप्रस्थापितावयम् ॥ विंध्यादुत्थायसंप्राप्ताःसागरस्यांतमुत्तमम् ॥ ६८ ॥ त्वद्दर्शनेकृतोत्साहाहृष्टाःपुष्टाःप्लवंगमाः ॥ अंगदप्रमुखाःसर्वेवेलोपांतमुपागताः ॥६९॥ चिंतांजग्मुःपुनर्भीमांत्वद्दर्शनसमुत्सुकाः ॥ अथाहंहरिसैन्यस्यसागरंदृश्यसीदतः ॥७०॥ व्यवधूयभयंतीव्रंयोजनानांशतंप्लुतः ॥ लंकाचापिमयारात्रौप्रविष्टाराक्षसाकुला ॥७१॥ रावणश्चमयादृष्टस्त्वंचशोकनिपीडिता ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंयथावृत्तमनिंदिते ॥७२॥ अभिभाषस्वमांदेविदूतोदाशरथेरहम् ॥ तन्मांरामकृतोद्योगंत्वन्निमित्तमिहागतम् ॥ ७३ ॥ सुग्रीवसचिवंदेविबुध्यस्वपवनात्मजम् ॥ कुशलीतवकाकुत्स्थःसर्वशस्त्रभृतांवरः ॥ ७४ ॥ गुरोराराधनेयुक्तोलक्ष्मणःशुभलक्षणः॥ तस्यवीर्यवतोदेविभर्तुस्तवहितेरतः ॥७५॥ अहमेकस्तुसंप्राप्तःसुग्रीववचनादिह ॥ मयेयमसहायेनचरताकामरूपिणा ॥ ७६ ॥

रावणको भी और शोकसे पीडित आपको भी हमने देखा, हे अनिन्दिते ! आदिसे अंततक जो बातें हुई हैं, वह आपके निकट हमने समस्त वर्णन कीं ॥ ७२ ॥ हे देवि ! आप हमारे साथ संभाषण कीजिये; हम दशरथनंदन श्रीरामचन्द्रजीके दूत हैं हम आपकेही देखनेको श्रीरामचन्द्रजीके भेजे यहां आये हैं ॥ ७३ ॥ हम सुग्रीव जीके मंत्री और पवनके पुत्र हैं हे देवि ! आपके वह सर्व शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी कुशल मंगलयुक्त हैं ॥ ७४ ॥ और शुभलक्षण सम्पन्न लक्ष्मणजी भी सकुशल हैं, आपके उन वीर्यवान् स्वामी श्रीरामचंद्रजीके हित साधनमें सदा लगे रह कर व हम अपने गुरुकी आराधना किया करते हैं ॥ ७५ ॥ हम अकेलेही सुग्रीवजीकी आज्ञासे यहांपर आये हैं, और सहायरहित कामरूपी घूमते हुए ॥ ७६ ॥

तुम्हारा मार्ग ढूँढते २ हमने इस समस्त दक्षिण दिशाको छाना बडे भाग्यकी बात है कि, हम तुम्हारे अदर्शन जनित शोकसे व्याकुल और आपको मृतक समझती वानरोंकी सेनासे ॥७७॥ आपका दर्शन संवाद देकर उन सबका संताप दूरकर सकेंगे, बडे शुभ भाग्यसे समुद्र लांघकर हमारा यहां आना व्यर्थ न हुआ॥७८॥ हे देवि! भाग्यसेही हम आपका दर्शन पानेसे उस स्थानमें यश प्राप्त करेंगे और महावीर्यवान् रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी भी शीघ्र ॥७९॥ राक्षसपतिरावणको पुत्र और बन्धु बान्धवोंसहित संहार करके आपको प्राप्त होंगे । हे देवि ! सब पर्वतोंमें मनोहर माल्यवान् नामक एक पर्वत है ॥ ८० ॥ हमारे पिता महाकपि केसरी वहां पर रहते थे । उन्होंने एक समय देवर्षियोंकी आज्ञापाय वहांसे गोकर्ण पर्वतपर जाय उस पवित्र नदीपतिके पुण्यतीर्थमें शम्बरसादन नामक असुरको

दक्षिणादिगनुक्रांतात्वन्मार्गविचयैषिणा॥दिष्ट्याहंहरिसैन्यानांत्वन्नाशमनुशोचताम्॥७७॥अपनेष्यामिसंतापंतवाधिगमशासनात्॥दिष्ट्या हिममव्यर्थसागरस्येहलंघनम् ॥ ७८ ॥ प्राप्स्याम्यहमिदंदेवित्वद्दर्शनकृतंयशः ॥ राघवश्चमहावीर्यःक्षिप्रंत्वामभिपत्स्यते ॥७९॥ सपुत्रबांधवंहत्वारावणंराक्षसाधिपम् ॥ माल्यवान्नामवैदेहिगिरीणामुत्तमोगिरिः ॥८०॥ ततोगच्छतिगोकर्णंपर्वतंकेसरीहरिः ॥ सचदेवर्षिभिर्दिष्टःपिता ममहाकपिः॥ तीर्थेनदीपतेःपुण्येशंबसादनमुद्धरन् ॥ ८१ ॥ यस्याहंहरिणःक्षेत्रेजातोवातेनमैथिलि॥हनूमानितिविख्यातोलोकेस्वेनैवकर्मणा ॥ ८२ ॥ विश्वासार्थंतुवैदेहिभर्तुरुक्तामयागुणाः॥अचिरात्त्वामितोदेविराघवोनयिताध्रुवम् ॥८३॥ एवंविश्वासितासीताहेतुभिःशोककर्शिता उपपन्नैरभिज्ञानैर्दूतंतमधिगच्छति ॥८४॥ अतुलंचगताहर्षंप्रहर्षेणतुजानकी ॥ नेत्राभ्यांवक्रपक्ष्माभ्यांमुमोचानन्दजंजलम् ॥ ८५ ॥ चारुतद्वदनंतस्यास्ताम्रशुक्लायतेक्षणम् ॥ अशोभतविशालाक्ष्याराहुमुक्तइवोडुराट् ॥ ८६ ॥

मारडाला ॥८१॥ हे मैथिलि ! इन्हीं केशरीजीकी अंजनी नामक स्त्रीमें क्षेत्रजरूप पवनसे हमारी उत्पत्ति हुई है। अपने पराक्रमके बलसे हम इस लोकमें हनुमान् नामसे विख्यात हैं ॥८२॥ हे विदेहनंदिनि ! आपको विश्वास देनेके लिये आपके स्वामी श्रीरामचंद्रजीके समस्त गुण विस्तारसे वर्णन किये हे देवि ! रघुनंदन श्रीरामचंद्रजी आपको शीघ्रही इस स्थानपरसे ले जायँगे ॥ ८३ ॥ शोकसे पीड़ित हुई सीताजीने अनेक हेतु और राम लक्ष्मणजीके यथार्थ चिह्न पाय विश्वासकर हनुमानजीको श्रीरामचन्द्रजीका दूत जाना॥८४॥और अतुल हर्ष प्राप्त करती हुई जानकीजी मारे आनंदके टेढी पलकवाले दोनों नेत्रोंसे आनंदके आँसू गिराने लगीं ॥८५॥ बड़े २ नेत्रवाली जानकीजीका वह रक्तप्रान्तसुदीर्घ शुभ लोचन शोभित (ताम्रवत् अरुण बड़े २ नेत्रोंसे युक्त) मनोहर मुखमंडल

राहुसे छुटे हुए चंद्रमाके समान शोभायमान होने लगा ॥ ८६ ॥ तब उन्होंने हनुमान्‌जीकोप्राकृत वानरही जान सब भांति छोड़दी इसके पीछे हनुमान्‌जीने उन प्रियदर्शनवाली जानकीजीसे फिर कहा ॥ ८७ ॥ हे विदेहनंदिनि ! हमने आपसे यह समस्त वृत्तान्त कहा अब इस समय आप प्रसन्न होजायँ इस समय हमको क्या करना होगा और आपकी क्या इच्छा है सो प्रगट कीजिये । क्योंकि अब हम शीघ्रही श्रीरामचन्द्रजीके निकट जायँगे ॥ ८८ ॥ हे मिथलेश कुमारी ! महर्षिगणोंकी आज्ञासे वानरश्रेष्ठ केशरीने जब शम्बरसाद असुरको युद्धमें मारा था, तब उन महर्षियोंके प्रसादसे हमने पवनजीके औरससे अपनी मातामें जन्मग्रहण किया, परन्तु प्रभाववमें हम पवनहीकी तुल्य हैं ॥ ८९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां पंचत्रिंशः सर्गः ॥ ३५ ॥

हनूमंतकपिंव्यक्तंमन्यतेनान्यथेतिसा॥ अथोवाचहनूमांस्तामुत्तरंप्रियदर्शनाम्॥८७॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंसमाश्वसिहिमैथिलि॥किंकरोमिकथं वातेरोचतेप्रतियाम्यहम्॥८८॥ हतेसुरेसंयतिशंबसादनेकपिप्रवीरेणमहर्षिचोदनात्॥ततोस्मिवायुप्रभवोहिमैथिलिप्रभावतस्तत्प्रतिमश्चवानरः ॥८९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे पंचत्रिंशः सर्गः ॥३५॥ भूयएवमहातेजाहनूमान्पवनात्मजः ॥ अब्रवीत्प्रश्रितंवाक्यंसीताप्रत्ययकारणात्॥ १ ॥ वानरोहंमहाभागेदूतोरामस्यधीमतः ॥ रामनामांकितंचेदंपश्यदेव्यंगुलीयकम् ॥२॥ प्रत्ययार्थंतवानीतंतेनदत्तंमहात्मना॥ समाश्वसिहिभद्रंतेक्षीणदुःखफलाह्यसि॥३ ॥ गृहीत्वाप्रेक्षमाणासाभर्तुःकरविभूषितम्॥ भर्तारमिवसंप्राप्तंजानकीमुदिताभवत्॥४॥ चारुतद्वदनंतस्यास्ताम्रशुक्लायतेक्षणम्॥बभूवहर्षोदग्रंचराहुमुक्तइवोडुराट्॥५॥ ततःसाह्रीमतीबालाभर्तुःसंदेशहर्षिता॥ परितुष्टाप्रियंकृत्वाप्रशशंसमहाकपिम् ॥ ६ ॥

पवनकुमार महातेजस्वी हनुमान्‌जी सीताजीको विश्वास देनेके लिये फिर विनीत वचनसे बोले ॥ १ ॥ हे महाभागे ! हम वानर हैं; बुद्धि शक्तिसम्पन्न श्रीरामचन्द्रजीके दूत हैं । हे देवि! रामनामांकित यह अँगूठी देखिये॥२॥आपके विश्वासके लिये हम इसको लाये हैं उन्हीं महात्मा श्रीरामचन्द्रजीनेहमको यहदी है स्वस्थचित्त हूजिये, अब निश्चयही आपके दुःखका अंत हो आया है ॥३॥ जानकीजी अपने स्वामीकी उँगलीका गहना उस अँगूठीको ग्रहण कर और देख ऐसी हर्षित हुई मानों श्रीरामचन्द्रजीही मिल गये ॥४॥ उनका वह अरुणकोयेवाले बडे २ शुभनेत्रोंसे विराजमान मनोहर बदनमंडल राहुसे छुटे हुए चन्द्रमाके समान शोभायमान हुआ।५॥उस समय वह लज्जिता बाला सीताजी अपनेस्वामीका संवाद पानेसे हर्षित और प्रसन्न होकर आदर करके कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जीकी प्रशंसा

करने लगीं॥६॥हे वानरश्रेष्ठ ! तुमने अकेलेही राक्षसोंका स्थान मथडाला इससेही हमने जान लिया कि; तुम बडे विक्रमवान् समर्थ और बडे पंडित हो ॥७॥ तुम्हारा विक्रम अत्यंत बड़ाई करनेके योग्य है कि, शतयोजन विस्तारवाला मकरादिकोंका स्थान समुद्र तुम गोपदकी तुल्य समझकर सरलतासे लांघ आये॥८॥ हे वानरश्रेष्ठ ! जब कि, रावणसेभी भय और सम्भ्रम नहीं है तब हम तुमको साधारण वानर नहीं समझ सकतीं ॥९॥ उन परमविज्ञानी श्रीरामचन्द्रजीने जब कि, तुमको यहां भेजा है तब तुम निःसन्देह हमसे संभाषण करनेके योग्य हो ॥१०॥ दुर्द्धर्ष श्रीरामचन्द्रजीने विना जाने परीक्षा किये तुमको कभी न भेजा होगा विशेष करके पराक्रमके विना जाने हमारे निकट तुमको कभी नहीं भेजते ॥ ११ ॥ यह बडे भाग्यकी बात है कि सत्यप्रतिज्ञ महात्मा श्रीरामचन्द्रजी और

विक्रांतस्त्वंसमर्थस्त्वंप्राज्ञस्त्वंवानरोत्तम॥येनेदंराक्षसपदंत्वयैकेनप्रधर्षितम् ॥७॥ शतयोजनविस्तीर्णःसागरोमकरालयः॥ विक्रमश्लाघनीयेन क्रमतागोष्पदीकृतः॥८॥ नहित्वांप्राकृतंमन्येवानरंवानरर्षभ॥यस्यतेनास्तिसंत्रासोरावणादपिसंभ्रमः ॥९॥ अर्हसेचकपिश्रेष्ठमया समभिभाषितुम ॥ यद्यसिप्रेषितस्तेनरामेणविदितात्मना ॥१०॥प्रेषयिष्यतिदुर्धर्षोरामोनह्यपरीक्षितम् ॥ पराक्रममविज्ञायमत्सकाशंविशेषतः॥११॥ दिष्ट्याचकुशलीरामोधर्मात्मासत्यसंगरः ॥ लक्ष्मणश्चमहातेजाःसुमित्रानंदवर्धनः ॥ १२ ॥ कुशलीयदिकाकुत्स्थःकिंनसागरमेखलाम् ॥ महींदहतिकोपेनयुगांताग्निरिवोत्थितः ॥ १३ ॥ अथवाशक्तिमंतौतौसुराणामपिनिग्रहे ॥ ममैवतुनदुःखानामस्तिमन्येविपर्ययः ॥ १४ ॥ कच्चिन्नव्यथतेरामःकच्चिन्नपरितप्यते ॥ उत्तराणिचकार्याणिकुरुतेपुरुषोत्तमः ॥१५॥ कच्चिन्नदीनःसंभ्रांतःकार्येषुचनमुह्यति ॥ कच्चित्पुरुषकार्याणिकुरुतेनृपतेःसुतः॥ १६ ॥द्विविधंत्रिविधोपायमुपायमपिसेवते ॥ विजिगीषुःसुहृत्कच्चिन्मित्रेषुचपरंतपः ॥१७॥ कच्चिन्मित्राणिलभते मित्रैश्चाप्यभिगम्यते ॥ कच्चित्कल्याणमित्रश्चमित्रैश्चापि पुरस्कृतः ॥ १८ ॥

सुमित्राके आनंद बढानेवाले महातेजस्वी श्रीलक्ष्मणजी कुशलसे रहें ॥ १२ ॥ यदि काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी कुशल सहित हैं तो क्रोधसे प्रलयकालके उठे हुये अग्निके समान समुद्रपर्यन्त इस पृथ्वीको भस्म क्यों नहीं कर डालते ॥१३॥ अथवा वह तो देवता लोगोंको भी दंड दे सकते हैं, परन्तु अभी केवल हमारे ही दुःखोंका अन्त नहीं हुआ है ॥ १४ ॥ श्रीरामचंद्रजी व्यथित तो नहीं होते ? परिताप तो नहीं करते ? वह पुरुषोत्तम हमारा उद्धार करनेके लिये चेष्टा तो कर रहे हैं ? ॥१५॥ वह दीन और व्याकुल चित्त होकर पुरुषोचित कर्त्तव्य कार्योंका करना तो नहीं भूल जाते हैं ? ॥१६॥ शत्रुओंके तपानेवाले श्रीरामचन्द्रजी विजयकी अभिलाषा कर मित्रोंके प्रति साम; दान, और शत्रुके प्रति, भेद व दंडका उपाय तो प्रयोग किये जाते हैं ?॥१७॥व श्रीरामचन्द्रजी औरोंके साथ

मित्रता करते हैं, औ दूसरे भी उनके साथ मित्रता करते हैं? मित्रलोग उनका सत्कार करते हैं? और वह भी मित्रोंका आदर मान तो करते हैं !॥१८॥वह नृपनंदन श्रीरामचन्द्रजी; देवतालोगोंके अनुग्रहकी प्रार्थना तो किया करते हैं उन्होंने पौरुष और दैव बल दोनोंका आश्रय तो ले रक्खा है ?॥१९॥बहुत दूर रहनेसे उनका स्नेह जो हमारे प्रति था वह तो नहीं जाता रहा ? वह श्रीरामचन्द्रजी हमारा उद्धार तो इस विपदसे करेंगे?॥२०॥वह प्यारे नित्यही सुख पाय कर इतने बडे हुये हैं कभी दुःख नहीं पाया सो इस महादुःख भोग करनेसे वह व्याकुल तो नहीं होते ? ॥२१॥ भला कौशल्या सुमित्रा भरतजीका कुशलसंवाद तो बारंबार मिलता रहता है॥२२॥सदा मानपानेके योग्य श्रीरामचन्द्रजी हमारे वियोगके शोकसे संतापित विमन तो नहीं होते! भला वह हमारी रक्षा इस विपदसे करेंगे तो सही ? ॥२३॥

कच्चिदशास्तिदेवानांप्रसादंपार्थिवात्मजः ॥ कच्चित्पुरुषकारंचदैवंचप्रतिपद्यते॥१९॥ कच्चिन्नविगतस्नेहोविवासान्मयिराघवः॥ कच्चिन्मांव्यसनादस्मान्मोक्षयिष्यतिराघवः ॥ २० ॥ सुखानामुचितोनित्यमसुखानामनूचितः ॥ दुःखमुत्तरमासाद्यकच्चिद्रामोनसीदति ॥ २१ ॥ कौसल्यायास्तथाकच्चित्सुमित्रायास्तथैवच॥ अभीक्ष्णंश्रूयतेकच्चित्कुशलंभरतस्यच ॥ २२ ॥ मन्निमित्तेनमानार्हःकच्चिच्छोकेनराघवः ॥ कच्चिन्नान्यमनारामःकच्चिन्मांतारयिष्यति ॥२३॥ कच्चिदक्षौहिणींभीमांभरतोभ्रातृवत्सलः ॥ ध्वजिनींमंत्रिभिर्गुप्तांप्रेषयिष्यतिमत्कृते ॥ २४ वानराधिपतिःश्रीमान्सुग्रीवःकच्चिदेष्यति॥मत्कृतेहरिभिर्वीरैर्वृतोदंतनखायुधैः॥२५॥ कच्चिच्चलक्ष्मणःशूरःसुमित्रानंदवर्धनः॥ अस्त्रविच्छरजालेनराक्षसान्विधमिष्यति ॥२६ ॥ रौद्रेणकच्चिदस्त्रेणरामेणनिहतंरणे ॥ द्रक्ष्याम्यल्पेनकालेनरावणंससुहृज्जनम् ॥ २७ ॥ कच्चिन्नतद्धेमसमानवर्णंतस्याननंपद्मसमानगंधि ॥ मयाविनाशुष्यतिशोकदीनंजलक्षयेपद्ममिवातपेन ॥ २८ ॥

भइयासे स्नेह करनेवाले भरतजीने क्या हमारा उद्धार करनेके लिये मंत्रियोंसे रक्षित भयंकर अक्षौहणी सेना भेजी है ? ॥ २४ ॥ क्या हमको यहांसे छुटानेके लिये वानर श्रेष्ठ श्रीमान् सुग्रीवजी, दांत और नखोंकेही आयुध बनाये हुये वानरवीरगणोंके साथ यहां आवेंगे ? ॥ २५ ॥ क्या वह अस्त्रविशारद वीर सुमित्रा कुमार लक्ष्मणजी अस्त्रजाल वर्षाय राक्षसोंको भस्म कर डालेंगे ? ॥२६॥ क्या हम अल्पकालमें यह देखपावेंगी कि, श्रीरामचन्द्रजीने संग्रामभूमिमें अमोघ अस्त्र शस्त्र चलाय बन्धुबान्धवोंके सहित रावणका संहार किया ? ॥ २७ ॥ कहीं जलविहीन कमलके समान हमारे विरहमें श्रीरामचन्द्रजीका कमलफूलके समान

१ इससे विदित होता है कि, रघुनाथजीके पास समाचार आते रहते थे

सुगन्धियुक्त स्वर्णवर्ण मुखमंडल शोकसे मलीनहो सूख तो नहीं गया ? ॥२८॥ धर्मके लिये जो अपना राज्य त्यागकर हमको साथ ले पैदलही वनमें आनेसे जिनके मनमें पीडा, भय या शोक नहीं हुआ ! भला वहश्रीरामचन्द्रजी धैर्यको तो धारण किये हैं ? ॥ २९ ॥ हे दूत ! क्या माता क्या पिता क्या कोई और दूसरा पुरुष, किसीके प्रति उनका हमसे अधिक या समान स्नेह नहीं है, सो हम जब तक परमप्रिय श्रीरामचन्द्रकी कथा सुनती हैं, तबही तक जीती हैं ॥ ३० ॥ मनोरमा मैथिली जानकीजी वानरवीर हनुमान्जीसे इस प्रकार युक्तियुक्त मधुर वचन कह उनके मुखसे फिर श्रीरामचन्द्रजी की कथा सुननेकी इच्छासे मौन होरहीं ॥ ३१ ॥ सीताजीके वचन श्रवण कर भयंकर विक्रमकारी पवननंदन हनुमान्जी शिरसे हाथ जोड उत्तर देते हुये ॥ ३२ ॥ इस

धर्मापदेशात्त्यजतःस्वराज्यंमांचाप्यरण्यंनयतःपदातेः ॥ नासीद्व्यथायस्यनभीर्नशोकःकच्चित्सधैर्यंहृदयेकरोति ॥२९॥ नचास्यमातानपितानचान्यःस्नेहाद्विशिष्टोऽस्तिमयासमोवा ॥ तावद्ध्यहंदूतजिजीविषेयंयावत्प्रवृत्तिंशृणुयांप्रियस्य ॥३०॥ इतीवदेवीवचनंमहार्थंतंवानरेन्द्रंमधुरार्थमुक्त्वा ॥ श्रोतुंपुनस्तस्यवचोभिरामंरामार्थयुक्तंविरराम रामा ॥३१॥ सीतायावचनंश्रुत्वामारुतिर्भीमविक्रमः ॥ शिरस्यंजलिमाधायवाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥ ३२ ॥ नत्वामिहस्थांजानीतेरामःकमललोचनः ॥ तेनत्वांनानयत्याशुशचीमिवपुरंदरः ॥ ३३ ॥ श्रुत्वैवचवचोमह्यंक्षिप्रमेष्यतिराघवः ॥ चमूंप्रकर्षन्महतींहर्यृक्षगणसंयुताम् ॥३४॥ विष्टंभयित्वाबाणौघैरक्षोभ्यंवरुणालयम् ॥ करिष्यतिपुरींलंकांकाकुत्स्थःशांतराक्षसाम् ॥३५॥ तत्रयद्यंतरामृत्युर्यदिदेवामहासुराः ॥ स्थास्यंतिपथिरामस्यसतानपिवधिष्यति ॥ ३६ ॥ तवादर्शनजेनार्यैशोकेनपरिपूरितः ॥ नशर्मलभतेरामःसिंहार्दितइवद्विपः ॥३७॥ मंदरेणतेदेविशपेमूलफलेनच ॥ मलयेनचविंध्येनमेरुणादर्दुरेणच ॥ ३८ ॥

स्थानमें आपका रहना कमलदलसमान नेत्रवाले श्रीरामचन्द्रजी नहीं जानते हैं देवराज जिस प्रकार विनाजाने अनुह्लाद दैत्यसे हरीहुई शचीको नहीं लाय सके इसी प्रकारसे वह अबतक आपका उद्धार करनेमें समर्थ नहीं हुये ॥३३॥ हमसे आपका समाचार पातेही रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी बडी भारी ऋक्ष और वानरोंकी सेना साथ लेकर आवेंगे ॥ ३४ ॥ अक्षोभ्य समुद्रको अपने बाणोंसे पाट सेतुबांध वह काकुत्स्थ रघुवंशवाले श्रीरामचन्द्रजी लंकाके संपूर्ण राक्षसोंका संहार कर डालेंगे ॥३५॥ लंकापर चढाई करनेसेयदि साक्षात् यम या देवासुरगण भी बीचमें पडेंगे तब श्रीरामचन्द्रजी उनको भी तो मारडालेंगे ॥३६॥ आपके दर्शनसे उत्पन्न हुये शोकसे ढकनेके कारण श्रीरामचन्द्रजी सिंह पीडित गजकेसमान शांति नहीं प्राप्त कर सकते हैं ॥३७॥ हे देवि ! हम मंदर, मलय, विन्ध्य और दर्दुर

पर्वतोंके और फल फूलोंके नाम करके शपथ करते हैं॥३८॥कि, आप देखेंगी कि, श्रीरामचन्द्रजीका सुन्दर नयन शोभित, मनोहर बिम्बाफलके समान अधरोंमें विराजमान सुन्दर कुंडल भूषित मुखमंडल पूर्णचन्द्र समान उदित होगा॥३९॥हे विदेहनन्दिनी ! शीघ्रही ऐरावतकी पीठपर इन्द्रजीके समान श्रीरामचन्द्रजीको प्रस्रवण पर्वतपर बैठे हुये देखोगी ॥४०॥ श्रीरामचन्द्रजी मांसभोजन मधुपानको त्याग करके वनके नियमानुसार नित्य संध्याके समय अन्न आहार किया करते हैं वह दोदिन छोड़ तीसरे दिन भोजन करते हैं ॥४१॥ उनका अन्तरात्मा आपमें इस प्रकार लगा हुआ है कि, शरीरपर मच्छरके बैठने, या कीड़े मकोड़े काटनेवाले जीवोंके आजानेसे उनको नहीं अलग करते ॥४२॥सर्वदाही ध्यान लगाये रहते, सदाही शोकसे विह्वल हो और कुछभी चिंता नहीं करते, बस उनको

यथासुनयनंवल्गुबिंबोष्ठंचारुकुंडलम्॥मुखंद्रक्ष्यसिरामस्यपूर्णचंद्रमिवोदितम् ॥३९॥ क्षिप्रंद्रक्ष्यसिवैदेहिरामंप्रस्रवणेगिरौ ॥ शतक्रतुमिवासीनंनागपृष्ठस्यमूर्धनि ॥ ४० ॥ नमांसंराघवोभुंक्तेनचैवमधुसेवते ॥ वन्यंसुविहितंनित्यंभक्तमश्नातिपंचमम्॥४१॥ नैवदंशान्नमशकान्नकीटान्नसरीसृपान् ॥ राघवोऽपनयेद्गात्रात्त्वद्गतेनांतरात्मना ॥ ४२ ॥ नित्यंध्यानपरोरामोनित्यंशोकपरायणः ॥ नान्यच्चिंतयतेकिंचित्सतुकामवशंगतः ॥४३॥ अनिद्रःसततंरामःसुप्तोऽपिचनरोत्तमः॥सीतेतिमधुरांवाणींव्याहरन्प्रतिबुध्यते ॥४४॥ दृष्ट्वाफलंवापुष्पंवायच्चान्यत्स्त्रीमनोहरम्॥ बहुशोहाप्रियेत्येवंश्वसंस्त्वामभिभाषते ॥४५॥ सदेविनित्यंपरितप्यमानस्त्वामेवसीतेत्यभिभाषमाणः ॥ धृतव्रतोराजसुतोमहात्मातवैवलाभायकृतप्रयत्नः ॥ ४६ ॥ सारामसंकीर्तनवीतशोकारामस्यशोकेनसमानशोका ॥ शरन्मुखेनांबुदशेषचंद्रानिशेववैदेहसुताबभूव ॥ ४७ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०सुन्दरकांडेषट्त्रिंशःसर्गः ॥ ३६ ॥

केवल यही वासना है कि, आपके दर्शन करें॥४३॥श्रीरामचन्द्रजी बहुधा सोते नहीं जोकुछ सोतेभी हैंतोउसी अवस्थामें "सीते" यहमधुरवाणी कहकर वैसेही जाग उठते हैं ॥४४॥ फलपुष्प या और कोई स्त्रियोंकी आनंद देनेवाली चीज देखतेही लंबे श्वास लेते हा प्रिये ! कहकर आपको पुकारते हैं॥४५॥हे देवि ! महात्मा श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकारसे हा सीते! हा सीते ! कह कर सदाही परिताप करते हैं। और वह महात्मा राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी आपहीका उद्धार करनेके लिये यत्न कर रहेहैं॥४६॥श्रीरामचन्द्रजीकी यह कथा सुनकर सीताजीको जिसप्रकारका आनंद हुआ था, वैसेही उनको शोकाकुल सुन सीताजी समान शोकग्रस्त हुई। मानोशारदीय रात्रिमें चंद्रमा निकल कर फिर मेघसे थक गया ❋॥४७॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षट्त्रिंशः सर्गः॥३६॥

❋ चौ०–प्रभु संदेश सुनत वैदेही । मगन प्रेम तनु सुधि नहिं तेही ॥

पूर्णचंद्रमाके समान विमल वदनवाली सीताजी हनुमान्‌जीके वचन श्रवण करके धर्म और युक्तिसिद्ध वचनोंसे उत्तर देती हुई ॥ १ ॥ हे वानर ! तुमने जो कहाकि और किसी वस्तुमें श्रीरामचन्द्रजीका मन नहीं लगता और वह शोकपरायण हैं यह बात तुम्हारी विषमिले हुए अमृतके तुल्य है ॥ २ ॥ मनुष्य महाऐश्वर्यही भोग करें या दुःसह दुःखही पायकर काल बितावे, परन्तु काल रस्सीसे बांध करके उसको खैंचा करता है ॥३॥ हे कपिश्रेष्ठ ! निश्चय है कि होनहारका निवारण नहीं हो सकता देखोना कि, श्रीराम लक्ष्मण और हम किस दुःखमें पडे हैं ॥४॥ न जाने नौका टूटजानेसे उस परसे गिर समुद्र में तैरते हुए पुरुषके समान श्रीरामचंद्रजी पराक्रमका प्रकाश करके भी कितने दिनोंमें शोकका पार पावेंगे ॥५॥ अब कितने दिनोंमें हमारे स्वामी राक्षस कुलका ध्वंस रावणका विनाश

सासीतावचनंश्रुत्वापूर्णचंद्रनिभानना॥हनूमंतमुवाचेदंधर्मार्थसहितंवचः ॥ १ ॥ अमृतंविषसंपृक्तंत्वयावानरभाषितम् ॥ यच्चनान्यमनारामो यच्चशोकपरायणः ॥ २ ॥ऐश्वर्येवासुविस्तीर्णेव्यसनेवासुदारुणे ॥ रज्ज्वेवपुरुषंबद्ध्वाकृतांतःपरिकर्षति ॥३॥ विधिर्नूनमसंहार्यःप्राणिनांप्लव गोत्तम॥ सौमित्रिंमांचरामंचव्यसनैःपश्यमोहितान् ॥४॥ शोकस्यास्यकथंपारंराघवोधिगमिष्यति ॥ प्लवमानःपरिक्रांतोहतनौःसागरेयथा ॥ ५ ॥ राक्षसानांवधंकृत्वासूदयित्वाचरावणम् ॥ लंकामुन्मथितांकृत्वाकदाद्रक्ष्यतिमांपतिः ॥ ६ ॥ सवाच्यःसंत्वरस्वेतियावदेवनपूर्यते ॥ अयंसंवत्सरःकालस्तावद्धिममजीवितम् ॥ ७ ॥ वर्ततेदशमोमासोद्वौतुशेषौप्लवंगम ॥ रावणेननृशंसेनसमयोयःकृतोमम ॥ ८ ॥ विभीषणे नचभ्रात्राममनिर्यातनंप्रति ॥ अनुनीतःप्रयत्नेननचतत्कुरुतेमतिम् ॥ ९ ॥ ममप्रतिप्रदानंहिरावणस्यनरोचते॥ रावणंमार्गतेसंख्येमृत्युःकाल वशंगतम् ॥ १० ॥ जेष्ठाकन्याकलानामविभीषणसुताकपे ॥ तयाममैतदाख्यातंमात्राप्रहितयास्वयम् ॥ ११ ॥

और लंकापुरीको मर्दित करकेहमको दर्शन देवेंगे ॥६॥ इस वर्षके पूर्ण न होते होते श्रीरामचन्द्रजीको शीघ्रही यहां आना चाहिये कारण कि जब तक वर्षपूर्ण नहीं होता, तब ही तक हमारा जीवन है, यह उनसेकहदेना॥७॥अब यह दशमां महीना चलता है, वर्ष पूर्णहोनेमें केवल दो मास रहे हैं। क्रूर रावणने इन्हीं दो महीनोंको हमारे जीवन कालकी अवधि नियत कियाहै॥८॥जिससे कि रावण हमको बहुत पीडित न करे सो रावणके भ्राता विभीषणने इस लिये उसकी बहुत अनुनय विनय यत्न सहित की थी, और यह भी कहा था, जानकी रामको दे दे। परंतु उस दुरात्माने उसकी एक बात न मानी॥९॥उसकी इच्छा हमें श्रीरामचंद्रजीके सौंप देनेकी नहीं है, क्योंकि उसका काल निकट आगया है मृत्यु उसके समय कोढूंढ रही है॥१०॥हे वानर ! विभीषणकी कला नामक एक बडी कन्याने अपनी

माताके कहनेसे हमसे यह वृत्तान्त कहा है ॥ ११ ॥ अविन्ध्या नामक एक मेधावी विद्वान् वीर्य सुशील रावणका मन्त्री वृद्ध राक्षस है, रावण भी उसका बहुत मान करता है॥१२॥उसने भी रावणसे कहा था कि, श्रीरामचन्द्रजीसे रावण का क्षय होगा, परंतु दुरात्मा रावणने उस राक्षसका एक भी हितकारी वचन नहीं सुना ॥१३॥ हे वानर श्रेष्ठ! आशा होती है, कि शीघ्रही हमारे स्वामी हमको प्राप्त होंगे, क्योंकि हमारा अन्तरात्मा अति पवित्र है, श्रीरामचन्द्रजी में अनेक गुण हैं ॥१४॥ हे महावीर! उत्साह, पौरुष, बल, दया, कृतज्ञता, विक्रम, प्रभाव यह समस्त ही श्रीरामचन्द्रजी में वर्तमान हैं॥१५॥उन्होंने बिनाही भ्राताकी सहायतासे अकेले जनस्थानमें चौदह हजार राक्षसोंको मार डाला, फिर भला कौन शत्रु उनसे न डरेगा ॥१६॥ श्रीरामचंद्रजी के साथ इन समस्त दुःखदाता राक्षसोंकी

अविंध्योनाममेधावीविद्वान्राक्षसपुंगवः॥ धृतिमाच्छीलवान्वृद्धोरावणस्यसुसंमतः ॥ १२ ॥ रामक्षयमनुप्राप्तंरक्षसांप्रत्यचोदयत् ॥ नचतस्य सदुष्टात्माशृणोतिवचनंहितम् ॥ १३ ॥ आशंसेयंहरिश्रेष्ठक्षिप्रंमांप्राप्स्यतेपतिः॥ अन्तरात्माहितेशुद्धस्तस्मिंश्चबहवोगुणाः ॥१४॥ उत्साहः पौरुषंसत्त्वमानृशंस्यकृतज्ञता॥ विक्रमश्चप्रभावश्चसंतिवानरराघवे ॥१५॥ चतुर्दशसहस्राणिराक्षसानांजघानयः ॥ जनस्थानेविनाभ्रात्राशत्रुः कस्तस्यनोद्विजेत् ॥ १६ ॥ नशक्यस्तुलयितुंव्यसनैःपुरुषर्षभः ॥ अहंतस्यानुभावज्ञाशक्रस्येवपुलोमजा ॥ १७ ॥ शरजालांशुमाञ्छूरःकपे रामदिवाकरः ॥ शत्रुरक्षोमयंतोयमुपशोषंनयिष्यति ॥१८॥ इतिसंजल्पमानांतांरामार्थेशोककर्शिताम् ॥ अश्रुसंपूर्णवदनामुवाचहनुमान्कपिः ॥ १९ ॥ श्रुत्वैवचवचोमह्यंक्षिप्रमेष्यतिराघवः ॥ चमूंप्रकर्षन्महतींहर्यृक्षगणसंकुलाम् ॥ २० ॥ अथवामोचयिष्यामित्वामद्यैवसराक्षसात् ॥ स्माद्दुःखादुपारोहममपृष्ठमनिंदिते ॥ २१ ॥ त्वांतुपृष्ठगतांकृत्वासंतरिष्यामिसागरम् ॥ शक्तिरस्तिहिमेवोढुंलंकामपिसरावणाम् ॥ २२ ॥ अहंप्रस्रवणस्थायराघवायाद्यमैथिलि ॥ प्रापयिष्यामिशक्रायहव्यंहुतमिवानलः ॥ २३ ॥

समानता नहीं हो सकती। शची जिस प्रकार इन्द्रजीका वैसेही हम श्रीरामचन्द्रजी का प्रभाव जानती हैं॥१७॥हे वानर !रामरूपी सूर्य शरजालरूप किरणजालसे हमारे शत्रु जल रूपी राक्षसोंको सुखाय डालेंगे ॥१८॥ यहसब वार्त्ता कहते २ सीताजी श्रीरामचंद्रजी के लिये शोक करने लगीं, आंसुओंके जलसे उनका पूर्णचंद्रानन पूर्ण होगया तब हनुमानजीने उनसे कहा॥१९॥हमारे मुखसे संवाद सुनतेही श्रीरामचंद्रजी ऋक्ष और वानरोंसे पूर्ण बडी भारी सेना ले शीघ्रही यहां पर आवेंगे॥२०॥ अथवा हे अनिन्दिते! हम अभी आपको इस राक्षसके उत्पन्न हुये दुःख छुटावेंगे आप हमारी पीठपर चढलें ॥२१॥ आपको पीठपर चढाकर हम समुद्रके पार होंगे हममें इतनी शक्ति है कि हम रावणके सहित इस लंकापुरीको पीठपर धर समुद्रके पार हो जाँय॥२२॥हे जनकनन्दिनि! अग्नि जिस प्रकार होममें हवन की हुई सामग्री

इन्द्रजीके पास पहुँचाय देते हैं; हम भी वैसेही आज आपको लेकर प्रस्रवण पर्वत पर बैठे हुये श्रीरामचंद्रजी के निकट समर्पण करेंगे॥ २३॥ हे ! वैदेही आजही आप देखेंगी कि, दैत्योंका वध करनेके लिये विष्णुजीके समान श्रीरामचंद्रजी लक्ष्मणजी के सहित शत्रु का वध करनेके लिये तैयारी कर रहे हैं ॥२४॥ हे देवि ! वह महा बलवान् श्रीरामचंद्रजी आपके दर्शनकी लालसासे उत्साही हो पर्वत राज प्रस्रवणके शिखरका आश्रय लिये इंद्रजीके समान बैठे हुये हैं ॥ २५॥ हे शोभने ! अब कुछ न सोचों विचारो झटपट हमारी पीठपर चढलो, चंद्रमाके सहित रोहिणीके समान तुम श्रीरामचंद्रजीसे मिलो ॥ २६ ॥ इस बातके कह नेमें कि हम श्रीरामचंद्रजीके निकट जायँगे जितना समय लगता है बस इतनेही समय में आप हमारे सहित चंद्रमाके साथ रोहिणीके समान श्रीरामचंद्रजीके साथ मिल जायँगी, आप हमारी पीठपर चढिये, हम आकाशमार्गसे समुद्रके पार होंगे॥ २७॥ हे अङ्गने ! जब हम आपको इस स्थानसे ले जायँगे तो लंकामें कोई

द्रक्ष्यस्यद्यैववैदेहिराघवंसहलक्ष्मणम् ॥ व्यवसायसमायुक्तंविष्णुंदैत्यवधेयथा ॥२४॥ त्वद्दर्शनकृतोत्साहमाश्रमस्थंमहाबलम् ॥ पुरंदरमिवासीनंनगराजस्यमूर्धनि ॥२५॥ पृष्ठमारोहमेदेविमाविकांक्षस्वशोभने ॥ योगमन्विच्छरामेणशशांकेनेवरोहिणी ॥२६॥ कथयंतीवशशिनासंगमिष्यसिरोहिणी ॥ मत्पृष्ठमधिरोहत्वंतराकाशंमहार्णवम् ॥२७॥ नहिमेसंप्रयातस्यत्वामितोनयतोंगने ॥ अनुगंतुंगतिंशक्ताःसर्वेलंकानिवासिनः ॥ २८ ॥ यथैवाहमिहप्राप्तस्तथैवाहमसंशयम् ॥ यास्यामिपश्यवैदेहित्वामुद्यम्यविहायसम् ॥ २९ ॥ मैथिलीतुहरिश्रेष्ठाच्छ्रुत्वावचनमद्भुतम् ॥ हर्षविस्मितसर्वांगीहनूमंतमथाब्रवीत् ॥३०॥ हनूमन्दूरमध्वानंकथंमांनेतुमिच्छसि ॥ तदेवखलुतेमन्येकपित्वंहरियूथप ॥ ३१ ॥ कथचाल्पशरीरस्त्वंमांमितोनेतुमिच्छसि ॥ सकाशंमानवेंद्रस्यभर्तुर्मेप्लवगर्षभ ॥३२॥ सीतायस्तद्वचःश्रुत्वाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ चिंतयामासलक्ष्मीवान्नवंपरिभवंकृतम् ॥ ३३ ॥

ऐसा राक्षस नहीं है कि जो हमारा पीछा कर सके ॥२८॥ हे विदेहनंदिनि! आप देखेंगी कि हम जिस प्रकारसे यहांपर आये हैं वैसेही आपको पीठपर चढाय आकाशमार्गसे चले जायँगे इसमें कुछभी संशय नहीं है ॥२९॥ वानर श्रेष्ठ हनुमानजीके मुखसे निकले हुये यह अद्भुत वचन सुनकर आनंद के और विस्मयके मारे जानकीजीके सब अंगोंमें रोमाञ्च हो आया और वह हनुमान्‌जीसे बोलीं॥ ३०॥ हे हनुमन् !इस बडे भारी दूरकेमार्गमें तुम किसप्रकारसे हमको ले जाना चाहते हो ? बस इसीबातसे तुम्हारावानरी भाव प्रगट होताहै भला वानरोंमें इतना बल कहांसे आया॥ ३१॥हेवानर श्रेष्ठ! ऐसे छोटे शरीरवाले होकर तुम किस साहससे हमको यहांसे हमारे स्वामी श्रीरामचंद्रजीके निकट ले जाया चाहते हो? ॥३२॥ सीताजीकेवचन सुनकर लक्ष्मीवान् पवनकुमार हनुमानजीने मनमें विचाराकि यही

हमारा प्रथम अनादर हुआ॥३३॥यह इन्दीवरनयनी सीताजी हमारी शक्तिके प्रभावको नहीं जानती इस लिये इच्छानुसार जो रूप धारण कर सकते हैं उसको वैदेहीजी देखें ॥ ३४ ॥ इसप्रकारसे चिन्ताकरके शत्रुओंके दमन करनेवाले हनुमानजीने सीताजीको अपना रूप दिखाया ॥ ३५ ॥ कपिश्रेष्ठ हनुमानजी छलांगमार वृक्षपरसे उतर सीताजीको विश्वास उपजानेके लिये वर्धित होने लगे॥ ३६॥उस समय उनका शरीर मेरु पर्वतकेसमान हो प्रदीप्त अग्निकी भाँति प्रकाशित हो शोभायमान होने लगा और वह जानकीजीके आगे खडे होगये ॥ ३७ ॥ पर्वताकार लालमुख महाबलवान् वज्रवत् दांत नख इस प्रकारका महाभयंकर रूप धारण कर हनुमानजी श्रीजानकीजीसे बोले ॥ ३८ ॥ हे देवि ! हममें इस प्रकारकी शक्ति है कि हम पर्वत वन भूमि देश प्राकार

नमेजानातिसत्त्वंवाप्रभावंवासितेक्षणा ॥ तस्मात्पश्यतुवैदेहीयद्रूपंममकामतः ॥३४॥ इतिसंचिंत्यहनुमांस्तदाप्लवगसत्तमः ॥ दर्शयामाससीतायाःस्वरूपमरिमर्दनः॥३५॥ सतस्मात्पादपाद्धीमानाप्लुत्यप्लवगर्षभः॥ ततोवर्धितुमारेभेसीताप्रत्ययकारणात् ॥३६॥ मेरुमंदरसंकाशोबभौदीप्तानलप्रभः ॥ अग्रतोव्यवतस्थेचसीतायावानरर्षभः ॥ ३७ ॥ हरिःपर्वतसंकाशस्ताम्रवक्त्रोमहाबलः ॥ वज्रदंष्ट्रनखोभीमोवैदेहीमिदमब्रवीत् ॥ ३८ ॥सपर्वतवनोद्देशांसाट्टप्राकारतोरणाम् ॥ लंकामिमांसनाथांवानयितुंशक्तिरस्तिमे ॥३९॥ तदवस्थाप्यतांबुद्धिरलंदेविकांक्षया॥ विशोकंकुरुवैदेहिराघवंसहलक्ष्मणम् ॥ ४० ॥ तंदृष्ट्वाचलसंकाशमुवाचजनकात्मजा ॥ पद्मपत्रविशालाक्षीमारुतस्यौरसंसुतम् ॥ ४१ ॥ तवसत्त्वंबलंचैवविजानामिमहाकपे॥वायोरिवगतिश्चापितेजश्चाग्नेरिवाद्भुतम् ॥४२॥ प्राकृतोन्यःकथंचेमांभूमिमागंतुमर्हति ॥ उदधेरप्रमेयस्यपारंवनरयूथप ॥ ४३ ॥ जानामिगमनेशक्तिंनयनेचापितेमम ॥ अवश्यंसंप्रधार्याशुकार्यसिद्धिरिवात्मनः ॥ ४४ ॥ अयुक्तंतुकपिश्रेष्ठमयागंतुंत्वयासह ॥ वायुवेगसवेगस्यवेगोमांमोहयेत्तव ॥ ४५ ॥

अटारीव तोरणादि औररावणके सहित इस लंकापुरीको उठाय कर लेजा सकते हैं ॥३९॥ इस लिये हमारे ऊपर विश्वास रखिये अविश्वास न कीजिये । हे विदेह दुहिते! लक्ष्मणजीके सहित श्रीरामचन्द्रजीका भी शोक दूर कीजिये॥४०॥कमलदलसम नेत्रवाली सीताजी पवनके औरस पुत्र हनुमानजीको पर्वतके समान बढा हुआ देख कर कहने लगीं ॥ ४१ ॥ हे कपिवर ! हमने तुहारा साहस बल और पवनके समान गति अग्निके समान अद्भुत तेजका परिचय पाया ॥ ४२ ॥ हे वानरश्रेष्ठ ! भला तुम्हारे विना कौनहै जो इस लांघनेके अयोग्य समुद्रको पार हो इस देशमें आनेको समर्थ होगा ? ॥४३॥ हम जान गईं कि तुम लौट भी जासकते और हमको भी साथ ले जासकते हो परन्तु जल्दीकार्यसिद्ध होनेके विषयमें हमें स्वयंभी विचार करना उचित है ॥४४॥हमारातुम्हारे

साथ जाना युक्ति युक्त नहीं है, क्योंकि तुम्हारा वेग पवनके समान प्रबल है, सो जब तुम वेगसे लेकर चलोगे तो हम मूर्च्छित होजायँगी ॥ ४५ ॥ तुम भयंकर वेगसे गमन करते२ जबकि समुद्रके ऊपर हो आकाशमार्गमें उडोगे तब हम निरालम्ब होकर गिर जायँगी ॥ ४६ ॥ तिमि, नाके और महामत्स्यसमाकुल समुद्रमें गिरकर शीघ्रही हम विवश हो कुम्भीरादिजलजन्तुओंका उत्तम भोजन बन जायँगी ॥ ४७ ॥ हे अरिदमन ! तुम्हारे साथ हम नहीं जासकेंगी, क्योंकि एक जन स्त्रीको लिये जारहा है ऐसा देखकर निश्चयही राक्षस लोग तुम्हारे पर संदेह करेंगे ॥ ४८ ॥ हमको लिये जाते हुए देखकर दुरात्मा रावणकी आज्ञा पाय भयंकर विक्रमकारी राक्षसगण तुम्हारे पीछे २ धावमान होंगे ॥ ४९ ॥ एक तो स्त्रीके साथमें तिसपर फिर इनसब शूल और मुद्गरधारी वीरराक्षसोंसे घेरे जाकर

अहमाकाशमासक्ताउपर्युपरिसागरम् ॥ प्रपतेयंहितेपृष्ठाद्भयोवेगेनगच्छतः ॥४६॥ पतितासगरेचाहंतिमिनक्रझषकुले ॥ भवेयमाशुविवशायाद सामन्नमुत्तमम् ॥ ४७ ॥ नचशक्ष्येत्वयासार्द्धंगंतुंशत्रुविनाशन ॥ कलत्रवतिसंदेहस्त्वयिस्यादप्यसंशयम् ॥४८॥ ह्रियमाणांतुमांदृष्ट्वाराक्षसा भीमविक्रमाः ॥ अनुगच्छेयुरादिष्टारावणेनदुरात्मना ॥४९॥ तैस्त्वंपरिवृत्तःशूरैःशूलमुद्गरपाणिभिः ॥ भवेस्त्वंसंशयंप्राप्तोमयावीरकलत्रवान् ॥ ५० ॥ सायुधाबहवोव्योम्निराक्षसास्त्वंनिरायुधः ॥ कथंशक्ष्यसिसंयातुंमांचैवपरिरक्षितुम् ॥ ५१ ॥ युध्यमानस्यरक्षोभिस्ततस्तैःक्रूरक र्मभिः ॥ प्रपतेयंहितेपृष्ठाद्भयार्ताकपिसत्तम ॥ ५२ ॥ अथरक्षांसिभीमानिमहांतिबलवंतिच ॥ कथंचित्सांपरायेत्वांजयेयुःकपिसत्तम ॥५३॥ अथवायुध्यमानस्यपतेयंविमुखस्यते ॥ पतितांचगृहीत्वामांनयेयुःपापराक्षसाः ॥५४॥ मांवाहरेयुस्त्वद्धस्ताद्विशसेयुरथापिवा ॥ अनवस्थौ हिदृश्येतेयुद्धेजयपराजयौ ॥ ५५ ॥ अहंवापिविपद्येयंरक्षोभिरभितर्जिता ॥ त्वत्प्रयत्नोहरिश्रेष्ठभवेन्निष्फलएवतु ॥ ५६ ॥

तुम्हारे जीवनमें संशय होगा ॥ ५० ॥ आकाशमार्गमें राक्षसगण अस्त्रशस्त्र लिये होंगे और तुम अस्त्ररहित, इस अवस्थामें भला तुम किस प्रकारसे जाओगे और कौनसा उपायहै कि, जिससे हमारी रक्षा कर सकोगे? ॥ ५१ ॥ क्रूरकर्म करनेवाले भयंकरराक्षसोंसे जब तुम्हारा युद्ध होगा तब भयसे भयभीतहो अवश्य हम तुम्हारी पीठसे नीचे गिर पडेंगी ॥ ५२ ॥ हे कपिश्रेष्ठ ! बडे भयंकर और बडे बलवान् राक्षस लोगोंने जो संग्राममें तुमको किसीप्रकारसे जीतही लिया ॥ ५३ ॥ अथवा संग्राम करते२ तुम्हारी दृष्टि हमारे ऊपर न रही और हम गिर पडीं तो गिरतेही राक्षस लोग फिर हमको पकड करले आवेंगे ॥ ५४ ॥ अथवा वह राक्षस लोग हमको तुम्हारे हाथसे छीन लेंगे, या मार डालेंगे क्योंकि युद्धमें जय पराजयका कोईभी निश्चय नहींहै ॥ ५५ ॥ जो राक्षसोंने युद्धमें हमको मार डाला

या यहां को लाये तो हमको भी विपद होगी और तुम्हाराभी समुद्रके पार होकरयहां आना व्यर्थ हो जायगा ॥५६॥ यद्यपि तुम सत्यही अकले समस्त राक्षसोंका संहार करसकते हो, परन्तु जो तुमनेराक्षसोंका नाश कर दिया तो श्रीरामचन्द्रजीके यशका नाश होजायगा ॥५७॥ और एक दोष यह है कि जो राक्षस लोग फिर हमको यहां पकडकर ले आये, तो ऐसे स्थानमें छिपाकर रक्खेंगे कि जहां वानरगण या कोई भी हमको फिर न देख पावेंगे ॥५८॥ इस लिये हमारे अर्थ तुम्हारा जो इतना उद्योग है वह समस्त विफल हो जायगा इस लिये तुम्हारे साथ श्रीरामचन्द्रजीके आनेपरही सब कार्य सिद्ध होंगे ॥ ५९ ॥ हे महा बाहो ! अतितेजस्वी श्रीरामचन्द्रका उनके भ्राताओंका और तुमलोगोंके राजवंशका जीवन सब हमारेही अधीन है ॥ ६० ॥ क्योंकि हमारे मरजानेपर

कामंत्वमपिपर्याप्तोनिहंतुंसर्वराक्षसान्॥राघवस्ययशोहीयेत्त्वयाशस्तैस्तुराक्षसैः ॥५७॥ अथवादायरक्षांसिन्यसेयुःसंवृतेहिमाम् ॥ यत्रतेनाभि जानीयुर्हरयोनापिराघवः ॥५८॥ आरंभस्तुमदर्थोऽयंततस्तवनिरर्थकः ॥ त्वयाहिसरामस्यमहानागमनेगुणः ॥ ५९ ॥ मयिजीवितमायत्तं राघवस्यामितौजसः ॥ भ्रातॄणांचमहाबाहोतवराजकुलस्यच ॥ ६० ॥ तौनिराशौमदर्थेचशोकसंतापकर्शितौ ॥ सहसर्वर्क्षहरिभिस्त्यक्ष्यतः प्राणसंग्रहम् ॥ ६१ ॥ भर्तुर्भक्तिंपुरस्कृत्यरामादन्यस्यवानर ॥ नाहंस्प्रष्टुंस्वतोगात्रमिच्छेयंवानरोत्तम ॥ ६२ ॥ यदहंगात्रसंस्पर्शंरावणस्यग ताबलात् ॥ अनीशाकिंकरिष्यामिविनाथाविवशासती ॥ ६३ ॥ यदिरामोदशग्रीवमिहहत्वासराक्षसम् ॥ मामितोगृह्यगच्छेततत्तस्यसदृशं भवेत् ॥६४॥ श्रुताश्चदृष्टाहिमयापराक्रमामहात्मनस्तस्यरणावमर्दिनः ॥ नदेवगंधर्वभुजंगराक्षसाभवंतिरामेणसमाहिसंयुगे ॥६५॥ समीक्ष्य तंसंयतिचित्रकार्मुकंमहाबलंवासवतुल्यविक्रमम् ॥ सलक्ष्मणंकोविषहेतराघवंहुताशनदीप्तमिवानिलेरितम् ॥ ६६ ॥

श्रीरामचन्द्रजी और सुग्रीवजी हमारे लिये शोकसे व्याकुलहो समस्त वानर और ऋक्षगणोंके साथ प्राण त्याग करेंगे॥६१॥ व एक बात और भी है कि जब स्वामीमें हमारी भक्ति है, तब उनके सिवाय और दूसरे पुरुष का शरीर इच्छा करके हम छू नहीं सकती हैं॥६२॥ रावणने बलात्कारसे हमारे शरीरको छुआ था, इसमें क्या करें? उस समय हमारा अपना तो कोई वश नहीं था और पराये वशमें थीं॥६३॥ श्रीरामचंद्रजी इस स्थानमें रावणको मार कर हमको यहांसे ले जायँ, तभी तो उनके योग्य कार्य होगा ❀ ॥६४॥ हमने युद्धमें शत्रुओंके मारनेवाले श्रीरामचन्द्रजीके अनेक पराक्रम श्रवण किये और प्रत्यक्षभी देखती हैं, क्या देवता, क्या गंधर्व, क्या नाग, क्या राक्षस कोई भी युद्धमें श्रीरामचन्द्रजीके समान नहीं है॥६५॥ संग्रामभूमिमें अद्भुत धनुर्धारी; इन्द्रजीके समान विक्रमकारी, लक्ष्मण समभिव्याहारी (लक्ष्मणजीके

❀ इससे यह गूढभाव निकलता है कि मैं रावणके वध निमित्तही यहां आई हूं ॥

साथ) महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजीको देख कर चलते हुये प्रदीप्त अग्निके समान उनका प्रभाव कौन जनसहन कर सकेगा ? ॥६६॥ युद्धमें मर्दन करनेवाले मत वाले दिग्गजके समान टिके हुये युगान्तकालीन सूर्यके समान बाणरूपी किरण वर्षानेवाले लक्ष्मणजीके साथ श्रीरामचन्द्रजीको समरमें कौन सहन कर लेगा? ॥६७॥ हे वानरश्रेष्ठतुम लक्ष्मण और सुग्रीवके साथ प्रियतम श्रीरामचन्द्रजीको शीघ्रही इस स्थानमें ले आओ हे वीर ! हम श्रीरामचन्द्रजीके शोकमें बहुत दिनोंसे कातर हैं, सो हमको हर्षित कराओ॥६८॥इत्यार्षे श्रीमद्वा०वा०आदि०सुन्दरकांडे भाषायां सप्तत्रिंशः सर्गः॥३७॥जनककुमारी सीताजीके यह वचन सुनकर संतुष्ट हो वाक्य विशारद कपिश्रेष्ठ हनुमान्जी सीताजीसे बोले॥१॥हे देवि ! आपने स्त्रीस्वभावसुलभ और पतिव्रता स्त्रियोंके आचरण करने योग्य युक्तिसंगत जो वचन कहे हैं वे ठीक हैं॥२॥

सलक्ष्मणंराघवमाजिमर्दंनंदिशागजंमत्तमिवव्यवस्थितम् ॥ सहेतकोवानरमुख्यसंयुगेयुगांतसूर्यप्रतिमंशरार्चिषम् ॥ ६७ ॥ समेकपिश्रेष्ठस लक्ष्मणंप्रियंसयूथपंक्षिप्रमिहोपपादय ॥ चिरायरामंप्रतिशोककर्षितांकुरुष्वमांवानरवीरहर्षिताम् ॥ ६८ ॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥ ततः सकपिशार्दूलस्तेनवाक्येनतोषितः॥ सीतामुवाचतच्छ्रुत्वावाक्यंवाक्य विशारदः ॥ १ ॥ युक्तरूपंत्वयादेविभाषितंशुभदर्शने ॥ सदृशंस्त्रीस्वभावस्यसाध्वीनांविनयस्यच ॥ २ ॥ स्त्रीत्वान्नत्वंसमर्थासिसागरंव्यति वर्तितुम् ॥ मामधिष्ठायविस्तीर्णंशतयोजनमायतम् ॥३॥ द्वितीयंकारणंयच्चब्रवीषिविनयान्विते ॥ रामादन्यस्यनार्हामिसंसर्गमितिजानकि ॥४॥ एतत्तेदेविसदृशंपत्न्यास्तस्यमहात्मनः॥काह्यन्यात्वामृतेदेविब्रूयाद्वचनमीदृशम् ॥५॥ श्रोष्यतेचैवकाकुत्स्थःसर्वंनिरवशेषतः ॥ चेष्टितं यत्त्वयादेविभाषितंचममाग्रतः ॥ ६ ॥ कारणैर्बहुभिर्देविरामप्रियचिकीर्षया ॥ स्नेहप्रस्कन्नमनसामयैतत्समुदीरितम् ॥ ७ ॥

यह बात सत्य है कि, स्त्री होनेके कारण आप हमारी पीठपर चढकर शत योजन विस्तारवाले अपार समुद्रके पार न हो सकेंगी॥३॥हे विनयसे युक्ते ! आपने श्रीरामचंद्र जीके सिवाय दूसरे पुरुषकी देहको स्पर्श करनेकी हमें अभिलाषा नहीं है; यह दूसरा कारण जो तुमने बताया ॥४॥ हे देवि ! सो यह भी आपके योग्यही है, क्योंकि आप महातमा श्रीरामचन्द्रजीकी सहधर्मिणी हैं। आपके सिवाय और कौन स्त्री ऐसे वचन कह सकती है ॥५॥ देवि ! आपने हमसे जिस प्रकारका आचरण किया, और जोवार्ता की श्रीरामचन्द्र हमारे मुखसे वह समस्त आदिसे अन्ततक यथार्थ २ सुनेंगे॥६॥हे देवि ! स्नेहसे हमारा हृदय गीला हो गया है, और श्रीरामचन्द्र

जीका हित साधनही हमारा एक मात्र आशय है, इसी लिये अनेक कारणोंसे हमने यह वार्ता कही थी ॥७॥ लंकानगरीमें औरका प्रवेश करना दुःसाध्य महासागरका पार उतरना भी कठिन है सो हममें यह सामर्थ्य है; सो इन्हीं समस्त कारणोंसे यह कहा था कि, हमारे संग चली चलो॥८॥ महान् स्नेहके वश होनेसे हमारा अभिलाषा हुआ कि, आजही आपको श्रीरामचन्द्रजीके निकट ले चलें, इसी कारण हमने यह वार्ता कही कुछ गर्वसे नहीं कही है॥९॥ हे अनिन्दिते! यदि आप हमारे साथ नहीं जाना चाहतीं तो हमें अपनी कुछ निशानी दीजिये कि, जिससे श्रीरामचन्द्रजीको विश्वास हो कि यह जानकीजीके पास हो आये ॥१०॥ जब हनुमान्‌जीने ऐसा कहा तो देवकन्याके समान सीताजी रुदन करते २ धीरे धीरे बोलीं॥११॥ कि, हमारी यही सबसे श्रेष्ठ निशानी और यही पता है कि चित्रकूट

लंकायांदुष्प्रवेशत्वाद्दुस्तरत्वान्महोदधेः ॥ सामर्थ्यादात्मनश्चैवमयैतत्समुदीरितम् ॥ ८ ॥ इच्छामित्वांसमानेतुमद्यैवरघुनंदिना ॥ गुरुस्नेहेनभक्त्याचनान्यथातदुदाहृतम् ॥ ९ ॥ यदिनोत्सहसेयातुंमयासाधमनिंदिते ॥ अभिज्ञानंप्रयच्छत्वंजानीयाद्राघवोहियत् ॥ १० ॥ एवमुक्ताहनुमतासीतासुरसुतोपमा ॥ उवाचवचनंमंदंबाष्पप्रग्रथिताक्षरम् ॥११॥ इदंश्रेष्ठमभिज्ञानंब्रूयास्त्वंतुममप्रियम् ॥ शैलस्यचित्रकूटस्यापादेपूर्वोत्तरेपदे ॥ १२ ॥ तापसाश्रमवासिन्याःप्राज्यमूलफलोदके ॥ तस्मिन्सिद्धाश्रितेदेशेमंदाकिन्याविदूरतः॥ १३ ॥ तस्योपवनखंडेषुनानापुष्पसुगंधिषु ॥ विहृत्यसलिलेक्लिन्नोममांकेसमुपाविशः ॥ १४ ॥ ततोमांससमायुक्तोवायसः पर्यतुंडयत् ॥ तमहंलोष्टमुद्यम्यवारयामिस्मवायसम् ॥ १५ ॥ दारयन्सचमांकाकस्तत्रैवपरिलीयते ॥ नचाप्युपारमन्मांसाद्भक्षार्थीबलिभोजनः ॥१६॥ उत्कर्षंत्यांचरशनांक्रुद्धायांमयिपक्षिणे ॥ स्रंसमानेचवसनेततोदृष्टात्वयाह्यहम् ॥ १७ ॥

पर्वतके ईशान कोणवाले वृक्षके नीचे॥१२॥ मन्दाकिनीके धोरे वह सिद्धजनोंसे सेवित फल फूल और जल सम्पन्न देशके तपस्वियोंके आश्रममें बसनेके समय हमारे ऊपर क्या घटना हुई थी ॥१३॥ वह घटना यह है कि, एक दिन अनेक विधिंफूलोंके समूह सुगंधिसे आमोदित उस उपवन भूमिमें विहार कर जलमें क्रीडा करनेसे थकित हो तुम हमारे अंगमेंसो गये॥१४॥ कि, उसी समयमें एक कौएने आकर मांसके लालचसे हमारी छातीमें चोंच मारी कि, जिसको हमने ढेलेसे निवारण किया॥१५॥ परन्तु वह कौवा न हटकर उसी स्थानपर बैठ हमको विदारण करने लगा। वह कहीं उठ कर न गया मानो मांस भोजनके निमित्त बैठाही रहा ॥१६॥ तब उस समय हमने उसके प्रति क्रोधक्कर दृढ भाँतिसे वस्त्र पहरनेके लिये जैसेही अपनी रशना-कौंधनी पकडी कि वैसेही हमारा वस्त्र खसक गया, उसीसमय

तुम उठकर हमारी ओर दृष्टि करके हसने लगे ॥ १७ ॥ आपको हँसता हुआ देख कर हम लज्जित व क्रोधित हुई और भोजनके लिये ललचाये काक करिके बिदारित हो हमने तुम्हारी शरण ली ॥ १८ ॥ काकके निवारण करनेसे हमको श्रम हुआ इसलिये हम तुम्हारे अंकमें बैठीं, हमारी ऐसी अवस्थादेख तुमने कुछ न कहकर और हमारी हँसी की सो हमको इससे क्रोध हुआ था सो क्रोध देखकर आपने हमको बहुत समझाया बुझाया ॥ १९ ॥ उस समय हम आँसूपूर्ण मुखसे धीरे धीरे आँसुओंको पोंछने लगीं । हे नाथ ? काकके क्रोध उपजानेसे तुमने इस अवस्थामें हमारा अनादर किया ॥ २० ॥ इसके पीछे हम मारे परिश्रमके शांत होकर तुम्हारी गोदीमें गई अनेक क्षणतक सोई रहीं, जब हम जागीं तब तुम हमारे अंकमें सोगये ॥ २१ ॥ कि; इस अवसरमेंही अचा

त्वयाविहसिताचाहंक्रुद्धासंलज्जितातदा॥ भक्ष्यगृद्ध्नेनकाकेनदारितात्वामुपागता ॥१८॥ ततःश्रांताहमुत्संगमासीनस्यतवाविशम् ॥ क्रुध्यंतीवप्रहृष्टेनत्वयाहंपरिसांत्विता ॥१९॥ बाष्पपूर्णमुखीमंदंचक्षुषीपरिमार्जिती॥ लक्षिताहंत्वयानाथवायसेनप्रकोपिता ॥ २० ॥ परिश्रमाच्च सुप्ताहेराघवांकेस्म्यहंचिरम्॥ पर्यायेणप्रसुप्तश्चममांकेभरताग्रजः ॥ २१ ॥ सतत्रपुनरेवाथवायसः समुपागमत् ॥ ततःसुप्तप्रबुद्धांमांराघवांकात्समुत्थिताम्॥ वायसःसहसागम्यविददारस्तनांतरे ॥ २२ ॥ पुनःपुनरथोत्पत्यविददारसमांभृशम् ॥ ततःसमुत्थितोरामोमुक्तैःशोणितबिंदुभिः॥ २३ ॥ समांदृष्ट्वामहाबाहुर्वितुन्नांस्तनयोस्तदा॥ आशीविषइवक्रुद्धःश्वसन्वाक्यमभाषत॥ २४ ॥ केनतेनागनासोरुविक्षतंवैस्तनांतरम् ॥ कःक्रीडतिसरोषेणपंचवक्त्रेणभोगिना ॥ २५ ॥ वीक्षमाणस्ततस्तंवैवायसंसमवैक्षत ॥ नखैःसरुधिरैस्तीक्ष्णैर्मामेवाभिमुखंस्थितम् ॥ २६ ॥

नक इस काकने फिर तुम्हारे अंकसे जागरित हमारे निकट आयकर हमारी छातीमें पंजे मारकर विदीर्ण कर डाला ॥ २२ ॥ बार बार उडकर और फिर आय २ कर उसने हमारे शरीरको क्षत विक्षत करदिया, जब छातीमेंसे रुधिरकी बूँदें गिरने लगीं तब श्रीरामचन्द्रजी जागे ॥ २३ ॥ स्तनोंके बीचमें घाव हुआ देखकर महाबाहु श्रीरामचंद्रजी क्रोधित सर्पके समान गर्जना करते २ हमसे बोले कि, ॥ २४ ॥ हे करिकरोरु ! (गजके समान गोल व चढा उतार जांघोंवाली) तुम्हारे स्तनोंके बीचमें किसने घाव किया ? क्रोधित पंचमुहे सर्पके साथ किसको खेलनेकी इच्छा हुई है ? ॥ २५ ॥ फिर उन श्रीरामचन्द्र जीने इधर उधर दृष्टि चलायकर देखा कि, काक रुधिरसे भीगा तीक्ष्ण नखयुक्त हमारेही ओरको मुखकिये खडा था ॥ २६ ॥

हे हनुमन् ! यह काक कपटवेषधारी जयन्त इन्द्रका पुत्र था, यह पवनके समान वेगवान् बडी शीघ्रतासे वनमें आया था पृथ्वीमें प्रवेश कर सकता था ॥२७॥ इस काकको देखकर क्रोधके मारे महाबाहु श्रीरामचन्द्रजीके नेत्र घूमने लगे उन्होंने इस काकके विनाशकी वासना की॥२८॥ उन्होंने बिछे हुए कुशों मेंसे एक कुश निकाल उसे मंत्रसे अभिमंत्रितकर ब्रह्मास्त्र योजित किया, वह कुश उस काकके सामने जलती हुई कालाग्निके समान उसे जलाता हुआ॥२९॥श्रीराम चन्द्रजीने वह प्रज्वलित कुश उस काकके प्रति छोडा, वह आकाशमार्गमें उस काकके पीछे २ धाया ॥३०॥ काक उस अस्त्रसे छुटकारा पानेकी अभिलाषासे विचित्र गतिसे एक २ करके ब्रह्मांडके सब लोकोंमें घूमा परंतु किसीने भी उसको आश्रय नहीं दिया ॥३१॥समस्त ब्रह्मर्षि देवर्षियोंने बरन् उसके पिता इन्द्र तकने उसको

पुत्रःकिलसशक्रस्यवायसःपततांवरः ॥ धरांतरगतःशीघ्रंपवनस्यगतौसमः ॥ २७ ॥ ततस्तस्मिन्महाबाहुःकोपसंवर्तितेक्षणः ॥ वायसेकृतवान्क्रूरांमतिंमतिमतांवरः॥ २८ ॥ सदर्भसंस्तराद्गृह्यब्रह्मणोस्त्रेणयोजयत्॥सदीप्तइवकालाग्निर्जज्वालाभिमुखोद्विजम् ॥२९ ॥ सतंप्रदीप्तंचिक्षेपदर्भंतंवायसंप्रति ॥ ततस्तुवायसंदर्भःसोऽम्बरेनुजगामह ॥ ३० ॥ अनुसृष्टस्तदाकाकोजगामविविधांगतिम् ॥ त्राणकामइमंलोकंसर्वंवैविचचारह ॥३१॥ सपित्राचपरित्यक्तःसर्वैश्चपरमर्षिभिः ॥ त्रीँल्लोकान्संपरिक्रम्यतमेवशरणंगतः ॥३२॥ सतंनिपतितंभूमौशरण्यःशरणागतम् ॥ वधार्हमपिकाकुत्स्थःकृपयापर्यपालयत् ॥३३॥ परिद्यूनंविवर्णंचपतमानंतमब्रवीत॥मोघमस्त्रंनशक्यंतुब्राह्मंकर्तुंतदुच्यताम् ॥३४॥ ततस्तस्याक्षिकाकस्यहिनस्तिस्मसदक्षिणम् ॥ दत्त्वातुदक्षिणंनेत्रंप्राणेभ्यःपरिरक्षितः ॥ ३५ ॥ सरामायनमस्कृत्वाराज्ञेदशरथायच॥ विसृष्टस्तेनवीरेणप्रतिपेदेस्वमालयम् ॥ ३६ ॥

त्याग कर बात तक नहीं पूछी, इस प्रकारसे वह त्रिलोकीमें घूमघामकर फिर श्रीरामचन्द्रजीकीही शरणमें आया ॥३२॥ जबकि, वह शरणागत हो पृथ्वीपर आय कर गिर गया, तब आश्रयदाता श्रीरामचन्द्रजीने वधके योग्य होनेपर भी इसका वध नहीं किया और कृपा करके उसके प्राणोंकी रक्षा की ॥३३॥ जब काक क्षीण और विवर्णभावसे आकर गिर गया तब श्रीरामचन्द्रजीने उससे कहा कि, ब्रह्मास्त्र कभी निष्फल नहीं होता, इस लिये बताओ कि, तुम्हारा कौनसा अंग नष्ट करें ॥३४॥ तब काकने कहाकि हमारा एक नेत्र इस बाणकी भेंटहै, तब श्रीरामचन्द्रजीके उस अस्त्रने काकका दहना नेत्र फोड डाला, काकने भी दहना नेत्र देकर अपने प्राणोंको बचाया ॥३५॥ तब वह काक श्रीरामचन्द्रजीको और दशरथजीको प्रणाम कर, व श्रीरामचन्द्रजीसे बिदाहो अपने स्थानको चला गया

॥३६॥हे महीपते! जबकि, तुमने एक काकपर जिसने कि, हमसे थोडाही अन्याय किया था ब्रह्मास्त्र चलाया; तब उसको आप क्यों क्षमा कर रहे हैं कि, जो आपके निकटसे हमको हरण करके ले आया है॥३७॥हे नरश्रेष्ठ! अतिप्रबल उत्साहका आश्रय लेकर तुम हमपर कृपा करो। हे नाथ! तुम्हारे साथ रहते हुए भी हम अनाथके समान जान पडती हैं ॥ ३८ ॥ हमने आपसेही सुना है कि, दयाही परम धर्म है फिर आप क्यों नहीं हमारे ऊपर दया प्रगट करते हैं ? हम जानती हैं कि, आप महाबलवान् महावीर्यशाली और महोत्साहसम्पन्न हैं ॥३९॥ अपार महिमावाले, स्थिर प्रकृति, गंभीरतामें समुद्रके समान और इन्द्रजीके समान इस वन सागर सहित पृथ्वीके तुम एक ही राजा हो ॥४०॥ परन्तु हे राम ! इस प्रकारसे अस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ बलवान् और साहसी होकर भी राक्षसोंके

मत्कृतेकाकमात्रेऽपिब्रह्मास्त्रंसमुदीरितम् ॥ कस्माद्योमाहरत्त्वत्तःक्षमसेतंमहीपते ॥ ३७ ॥ सकुरुष्वमहोत्साहांकृपांमयिनरर्षभ ॥ त्वयानाथवतीनाथअनाथाइवदृश्यते॥३८आनृशंस्यंपरोधर्मस्त्वत्तएवमयाश्रुतः॥जानामित्वांमहावीर्यंमहोत्साहंमहाबलम्॥३९अपारवारमक्षोभ्यंगांभीर्यात्सागरोपमम्॥भर्तारंससमुद्रायाधरण्यावासवोपमम् ॥४०॥एवमस्त्रविदांश्रेष्ठोबलवान्सत्त्ववानपि॥किमर्थमस्त्रंरक्षस्सुनयोजयसिराघव॥४१॥ ननागानापिगंधर्वानसुरानमरुद्गणाः॥रामस्यसमरेवेगंशक्ताःप्रतिसमीहितुम्॥४२तस्यवीर्यवतःकच्चिद्यद्यस्तिमयिसंभ्रमः॥किमर्थंनशरैस्तीक्ष्णैःक्षयंनयतिराक्षसान्॥ ४३ ॥ भ्रातुरादेशमादायलक्ष्मणोवापरंतपः ॥ कस्यहेतोर्नमांवीरःपरित्रातिमहाबलः ॥ ४४ ॥ यदितौपुरुषव्याघ्रौवाय्विन्द्रसमतेजसौ॥सुराणामपिदुर्धर्षौकिमर्थंमामुपेक्षतः ॥४५॥ ममैवदुष्कृतंकिंचिन्महदस्तिनसंशयः॥समर्थावपितौयन्मांनावेक्षेतेपरंतपौ॥४६॥

ऊपर आप अस्त्र क्यों नहीं चलाते हैं ? ॥ ४१ ॥ हे हनुमन् ! क्या नाग; क्या गन्धर्व; क्या असुर; क्या मरुद्गण ! कोई भी युद्धमें श्रीरामचन्द्रजीका वेग निवारण करनेमें समर्थ नहीं हैं॥४२॥वह महावीर श्रीरामचन्द्रजी हमारा कुछ भी आदर करते हों तो फिर तीक्ष्ण बाणोंको वर्षाय कर राक्षसकुलका क्षय क्यों नहीं करते हैं ? ॥ ४३ ॥ महाबलवान् शत्रुओंके तपानेवाले वीर लक्ष्मणजी भी किस कारणसे अपने भाईका अनुमति लेकर हमारा उद्धार नहीं करते हैं ? ॥४४॥ यदि वह दोनों पुरुषश्रेष्ठ सत्यही सत्य पवन और इन्द्रजीके समान तेजस्वी और देवता लोगोंसे भी जीतने योग्य नहीं हैं तो फिर किस कारणसे हमारी उपेक्षा करते हैं ?॥४५॥निश्चय हमाराही कोई ऐसा घोर पाप है कि, वह श्रीरामचन्द्रजी सामर्थ्यवान् और शत्रुओंके दमन करनेमें समर्थ होकर भी हमारे प्रति दया नहीं

करते हैं ? ॥ ४६ ॥ सीताजीके इस प्रकारसे अश्रुपूर्ण और करुणासे भरे वचन सुनकर वानरयूथपति महातेजवान् हनुमान्‌जी उनसे बोले ॥४७॥ हे देवि ! हम सत्यकी सौगन्ध करते हैं कि, आपके दर्शन न होनेके शोकसे श्रीरामचन्द्रजी सबही कार्योंसे विमुख हो रहे हैं और उनका शोक देखकर लक्ष्मणजी भी संतापित होते हैं ॥४८॥ हे शोभने! बडे भाग्यकी बात है कि, इस समय हमने आपका दर्शन पाया; अब शोक करनेका कुछ प्रयोजन नहीं है; अब बहुतही शीघ्र आपके दुःखका अंत आवेगा॥४९॥वह दो महाबलवान् पुरुष शार्दूल आपका दर्शन करनेके लिये उत्साहित होकर अवरोधकारक त्रिलोकीको भी भस्म कर देंगे॥५० ॥ हे विशालनयने ! श्रीरामचन्द्रजी संग्राममें क्रूर रावण राक्षसको उसके वंश सहित संहार करके तुमको नगरमें ले जायँगे॥५१॥महाबलवान् श्रीमान् राम, लक्ष्मण तेजस्वी

वैदेह्यावचनंश्रुत्वाकरुणंसाश्रुभाषितम् ॥ अथाब्रवीन्महातेजाहनूमान्हरियूथपः॥ ४७ ॥ त्वच्छोकविमुखोरामोदेविसत्येनतेशपे ॥ रामेदुःखा भिपन्नेतुलक्ष्मणःपरितप्यते ॥४८॥ कथंचिद्भवतीदृष्टानकालःपरिशोचितुम् ॥ इमंमुहूर्तंदुःखानामंतंद्रक्ष्यसिशोभने ॥४९॥ ताबुभौपुरुषव्या घ्रोराजपुत्रौमहाबलौ ॥त्वद्दर्शनकृतोत्साहौलोकान्भस्मीकरिष्यतः ॥ ५० ॥ हत्वाचसमरेक्रूरंरावणंसहबांधवम् ॥ राघवस्त्वांविशालाक्षिस्व पुरींप्रतिनेष्यति ॥ ५१ ॥ ब्रूहियद्राघवोवाच्योलक्ष्मणश्चमहाबलः ॥ सुग्रीवोवापितेजस्वीहरयोवासमागताः ॥ ५२ ॥ इत्युक्तवतितस्मिंश्च सीतापुनरथाब्रवीत् ॥ कौसल्यालोकभर्तारंसुषुवेयंमनस्विनी ॥ ५३ ॥ तंममार्थेसुखंपृच्छशिरसाचाभिवादय॥ स्रजश्चसर्वरत्नानिप्रियायाश्च वरांगनाः॥५४॥ ऐश्वर्य्यंचविशालायांपृथिव्यामपिदुर्लभम् ॥ पितरंमातरंचैवसंमान्याभिप्रसाद्यच ॥ ५५ ॥ अनुप्रव्रजितोरामंसुमित्रायेनसु प्रजाः ॥ आनुकूल्येनधर्मात्मात्यक्त्वासुखमनुत्तमम् ॥ ५६ ॥

सुग्रीव और एकत्र हुये वानरोंसे जो हम सन्देशा कहें सो आप बतलादीजिये ॥ ५२ ॥ जब हनुमान्‌जीने ऐसा कहा तब सीताजी फिर बोलीं कि, मन स्विनी कौशल्या देवीने निज लोकप्रतिपालक पुत्रको उत्पन्न किया है॥५३॥तुम हमारी ओरसे उनसे कुशल पूछकर प्रणाम करना जो विविधप्रकारके पुष्पोंकी माला, सर्व प्रकारके रत्न व उत्तम स्त्रियां ॥५४॥ और इस विशाल पृथ्वी के दुर्लभ ऐश्वर्यको छोड पिता माता का वचन मानकर उनकी प्रसन्नता ले ॥५५॥ श्रीरामचन्द्रजी के साथ बनमें आये हैं और जिनको उत्पन्न करके सुमित्रा सुसंतानवती हुई हैं, जो सब भाँतिके सुखको त्याग धर्मके अनुकूल महात्मा ॥५६॥

यहां बनमें आये श्रीरामचन्द्रजीकी रक्षा करते जो सिंह स्कन्ध, महाबाहु बुद्धिमान् प्रिय दर्शन॥ ५७॥ जो श्रीरामचन्द्रजीमें पिताके समान और हममें जननीके समान आचरण करते हैं, हम हरण करी जायंगी ऐसा उन वीरने नहीं जाना था॥ ५८॥ जो वृद्धजनोंकी सेवा किया करते हैं, जो लक्ष्मीवान् समर्थ और अल्पभाषी हैं जिनसे श्रीरामचन्द्रजीको और कुछ अधिक प्रिय नहीं है वे सब बातोंमें हमारे श्वशुर अनुरूप॥ ५९॥ जो हमसे भी अधिक आपसे भ्राता, श्रीरामचन्द्रजी के प्यारे हैं, जो किसी कार्य में नियुक्त होकर अति चतुरताके साथ पूरा करते हैं॥ ६०॥ जिनको देखकर श्रीरामचन्द्रजी, अपने मृतक पिताका व्यवहार भूल गये हैं, जो मृदुलस्वभाव सदा पवित्र कार्य करनेमें चतुर और श्रीरामचन्द्रजी के प्यारे हैं सो तुम हमारी ओरसे उन लक्ष्मणजीका सन्मान करके क्षमाकी प्रार्थना करना; क्योंकि हरण होनेसे

अनुगच्छतिकाकुत्स्थंभ्रातरंपालयन्वने ॥ सिंहस्कंधोमहाबाहुर्मनस्वीप्रियदर्शनः ॥ ५७ ॥ पितृवद्वर्ततेरामेमातृवन्मांसमाचरत् ॥ ह्रियमाणांतदावीरोनतुमांवेदलक्ष्मणः ॥५८॥ वृद्धोपसेवीलक्ष्मीवाञ्छक्तोनबहुभाषिता ॥राजपुत्रप्रियश्रेष्ठःसदृशःश्वशुरस्यमे ॥ ५९ ॥ मत्तःप्रियतरोनित्यंभ्राताराम स्यलक्ष्मणः॥नियुक्तोधुरियस्यांतुतामुद्वहतिवीर्यवान् ॥६०॥ यंदृष्ट्वाराघवोनैववृत्तमार्यमनुस्मरत ॥ सममार्थायकुशलंवक्तव्योवचनान्मम ॥ ६१ ॥ मृदुर्नित्यंशुचिर्दक्षःप्रियोरामस्यलक्ष्मणः ॥ यथाहिवानरश्रेष्ठदुःखक्षयकरोभवेत् ॥ ६२ ॥ त्वमस्मिन्कार्यनिर्वाहे प्रमाणंहरियूथप॥राघवस्त्वत्समारंभान्मयियत्नपरोभवेत् ॥६३॥ इदंब्रूयाश्चमेनाथंशूरंरामंपुनःपुनः॥ जीवितंधारयिष्यामिमासंदशरथात्मज ॥६४॥ ऊर्ध्वंमासान्नजीवेयंसत्येनाहंब्रवीमिते॥ रावणेनोपरुद्धांमांनिकृत्यापापकर्मणा॥ त्रातुमर्हसिवीरत्वंपातालादिवकौशिकीम् ॥६५॥ ततो वस्त्रगतंमुक्त्वादिव्यंचूडामणिंशुभम् ॥ प्रदेयोराघवायेतिसीताहनुमतेददौ ॥ ६६ ॥

॥६१॥ हे वानर श्रेष्ठ ! कुछ देर पहले हमने उन्हें बडे २ वचन कहे थे, फिर कुशल पूँछकर कहना कि, आप हमारा दुःखनाश करनेके लिये शीघ्र यत्नवान् हों ॥६२॥ हे हनुमन्! अधिक क्या कहें, इस कार्यकी सिद्धिके तुमही मूल हो सो ऐसा करना कि जिससे इस कार्यका निर्वाह होजाय वह श्रीरामचन्द्रजी तुम्हारा कार्य देखकर हमारे प्रति यत्नपरायण होंगे॥ ६३॥ हमारे प्यारे स्वामी पुरुषोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचंद्रजीसे बारंबार कहना कि, हे दशरथकुमार हम और एक मासतक जीवन धारण करेंगी॥ ६४॥ हम सत्य ही कहती हैं कि, एक मासके पीछे हम अवश्य प्राण छोड देंगी । हे वीर ! भगवान्जीने पातालसे जिसप्रकार पृथ्वी का उद्धार किया था, वैसेही क्रूरकारी रावण राक्षसके बंधनमें पडी हमारा रघुनाथ जी उद्धार करें ॥ ६५ ॥ यह कहकर सीताजीने वस्त्रमें बँधा हुआ, मुक्ताखचित चूणामणि ग्रहण करके "यह

श्रीरामचन्द्रजीको देना" यह कहकर हनुमानूजीके हाथमें वह चूणामणि देदी॥६६॥ हनुमानूजीको वह उत्तम रत्न ग्रहण करके बांधना ठीक न विचार उसे अपनी उँगलीमें बांधलिया ॥६७॥ और सीताजीकी परिकमा करके फिर प्रणाम कियाउस रत्नोंको ग्रहण करके माथा नवाय एकओर खडे होगये॥६८॥ सीताजीके दर्शनका लाभ पाय हनुमानूजी अतिशय हर्षित हो मनहीमनमें शुभलक्षण श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके निकट पहुँच गये॥६९॥ जनकनंदिनी सीताजी अतिउत्तम प्रभावके वश जिसको इतनेदिन अतिगुप्तभावसे धारण करती थीं हनुमानूजी वह महामोलकी मणिरत्न पाय कर पर्वतकेशिखर पर झंझावायुके कम्पसे छुटकारापायेहुये पुरुषके समान मनमें सुखी हुए, इसके पीछे लंकाके दुर्गद्वारके सन्मुख हनुमानूजीने जाना चाहा॥७०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भा० टी० यामष्टात्रिंशः सर्गः ॥३८॥ चूडामणि देकर सीताजी हनुमानूजीसे बोलीं कि श्रीरामचन्द्रजी इस चिह्नको भलीभाँति जानतेहैं ॥१॥ इस मणिके देखतेही श्रीरामचन्द्रको तीनजने

प्रतिगृह्यततोवीरोमणिरत्नमनुत्तमम् ॥ अंगुल्यायोजयामासनह्यस्यप्राभवद्भुजः ॥६७॥ मणिरत्नंकपिवरःप्रतिगृह्याभिवाद्यच ॥ सीतांप्रदक्षिणंकृत्वाप्रणतःपार्श्वतःस्थितः ॥६८॥ हर्षेणमहतायुक्तःसीतादर्शनजेनसः॥ हृदयेनगतोरामंलक्ष्मणंचसलक्षणम् ॥६९॥ मणिवरमुपगृह्यतंमहार्हंजनकनृपात्मजयाधृतंप्रभावात्॥गिरिवरपवनावधूतमुक्तःसुखितमनःप्रतिसंक्रमंप्रपेदे ॥७०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च०सा०सुंदरकांडे अष्टात्रिंशःसर्गः ॥३८॥ मणिंदत्वाततःसीताहनूमंतमथाब्रवीत्॥अभिज्ञानमभिज्ञातमेतद्रामस्यतत्त्वतः ॥ १ ॥ मणिंदृष्ट्वातुरामोवैत्रयाणांसंस्मरिष्यति॥वीरोजनन्याममचराज्ञोदशरथस्यच ॥२॥ सभूयस्त्वंसमुत्साहचोदितोहरिसत्तम ॥ अस्मिन्कार्यसमुत्साहेप्रचिंतययदुत्तरम् ॥ ३ ॥ त्वस्मिन्कार्यनियोगेप्रमाणंहरिसत्तम ॥ तस्यचिंतयतोयत्नोदुःखक्षयकरोभवेत् ॥ ४ ॥ हनूमन्यत्नमास्थायदुःखक्षयकरोभव॥सतथेतिप्रतिज्ञायमारुतिर्भीमविक्रमः ॥५॥ शिरसावंद्यवैदेहींगमनायोपचक्रमे॥ज्ञात्वासंप्रस्थितंदेवीवानरपवनात्मजम् ॥ ६ ॥

याद आवेंगे हमें हमारी माता और राजा दशरथजी क्योंकि, विवाहके समय हमारी मातासे यह मणि लेकर हमारे पिताने हमारे देनेको दशरथजीको दीथी ॥२॥ हे वानरश्रेष्ठ ! तुमइस कार्यमें विशेष करके उद्योग करना, क्योंकि जब श्रीरामचन्द्रजी को तुम यहचूणामणि दोगे, तब वहमणिपाय युद्ध करनेके विषयमें तुमको प्रेरित करेंगे। इसकारण इस कार्यमें उत्साह बढाने के लिये तुम अभीसे भलाउत्तर विचार रक्खो ॥३॥ हेवानरश्रेष्ठ ! तुमही इस कार्यको पूरा करनेकी सामर्थ्य रखतेहो, इसलिये जिसप्रकार कार्य करनेसे दुःखकाअन्त हो; वही विचार करना तुमको उचित है हे हनुमन् ! तुम यत्नवान् होकर हमारे दुःखको भी दूर करो ॥४॥ हे हनुमन् ! तुम यत्नमें स्थिर हुए हमारे दुःखका नाशकरनेवाले हो, यह सुन भयंकर कर्म करनेवाले पवनकुमार हनुमानूजी जो आज्ञा कह प्रतिज्ञाकर॥५॥ मस्तकनवाय

सीताजीको प्रणामकर चलनेके लिये तैयार हुये । पवनकुमार हनुमान् जीका जाना जान देवी जानकीजी ॥ ६ ॥ वाक्यसे गद्गद हुए वाणीके द्वारा हनुमा
न्जीसे बोलीं कि,हे हनुमन् ! हमारी कुशलता श्रीरामचन्द्रजीसे लक्ष्मणजीके सहित कहना ॥ ७ ॥ हे वानरश्रेष्ठ ! मंत्रियोंके सहित सुग्रीवजीसे और वृद्ध
वानरोंसे समस्तसेही तुम हमारी धर्मयुक्त कुशलता कहना ॥ ८ ॥ तुम उस बातमें यत्न करना कि जिससे महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी हमको इस दुःखसागरसे उबार
लें ॥ ९ ॥ हे हनुमन् ! तुम इसप्रकार उनसे कहना कि,जिससे यशस्वी श्रीरामचन्द्रजी हमारे जीवित रहते २ हमसे मिल जाँय ऐसे वचन कहनेसे तुमको धर्म
लाभ होगा ॥१०॥ श्रीरामचन्द्रजी सदाही उत्साहसे पूर्ण रहते हैं;वह तुम्हारे मुखसे हमारे इन वचनोंको सुनते ही अवश्यहीहमारी प्राप्तिके लिये अपने पौरुषको

बाष्पगद्गदयावाचामैथिलीवाक्यमब्रवीत्॥हनुमन्कुशलंब्रूयाःसहितौरामलक्ष्मणौ ॥७॥ सुग्रीवंचमहामात्यंसर्वान्वृद्धांश्चवानरान् ॥ ब्रूयास्त्वं
वानरश्रेष्ठकुशलंधर्मसंहितम् ॥८॥ यथासचमहाबाहुर्मांतारयतिराघवः ॥अस्माद्दुःखांबुसंरोधात्त्वंसमाधातुमर्हसि ॥९॥ जीवंतींमांयथारामः
संभावयतिकीर्तिमान्॥तत्त्वयाहनुमन्वाच्यंवाचाधर्ममवाप्नुहि ॥१०॥ नित्यमुत्साहयुक्तस्यवाचःश्रुत्वामयेरिताः॥वर्धिष्यतेदाशरथेःपौरुषंम
दवाप्तये॥११॥ मत्संदेशयुतःवाचस्त्वत्तःश्रुत्वैवराघवः॥पराक्रमेमतिंवीरोविधिवत्संविधास्यति ॥१२॥ सीतायाःतद्वचःश्रुत्वाहनूमान्मारुता
त्मजः ॥ शिरस्यंजलिमाधायवाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥१३॥ क्षिप्रमेष्यतिकाकुत्स्थोहर्यृक्षप्रवरैर्वृतः ॥ यस्तेयुधिविजित्यारीञ्शोकंव्यपनयिष्य
ति ॥१४॥ नहिपश्यामिमर्त्येषुनासुरेषुसुरेषुवा॥यस्तस्यवमतोबाणान्स्थातुमुत्सहतेग्रतः ॥ १५ ॥ अप्यर्कमपिपर्जन्यमपिवैवस्वतंयमम् ॥
सहिसोढुंरणेशक्तस्तवहेतोर्विशेषतः ॥ १६ ॥ सहिसागरपर्यंतांमहींसाधितुमर्हति ॥ त्वन्निमित्तोहिरामस्यजयोजनकनंदिनि ॥ १७ ॥

बढायेंगे ॥११॥ तुम्हारे मुखसे हमारे संवादसे मिश्रित वचन सुन कर वह वीरश्रीरामचन्द्रजी यथाविधानसे पराक्रम प्रकाश करनेमें अपना मन लगावेंगे ॥१२॥
सीताजीके वचन सुनकर पवननंदन हनुमान्जीने शिरसे हाथजोड़कर सीताजीको उत्तरदिया ॥१३॥ हे देवि!काकुत्स्थनंदन श्रीरामचन्द्रजी बहुतही शीघ्र महावीर
वानर और रीछोंकी सेनाके साथ यहां आय,शत्रुपर विजय पाय आपको दुःखसेछुडाय लेंगे॥१४॥हम मनुष्य देवया सब असुरोंको बीचमें ऐसा किसीको नहीं देखते
जो किबाण वर्षणकरते हुए श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुख टिका रहे॥१५॥इतनाही नहीं वरन् वह आपके लिये युद्धमें सूर्यको,इन्द्रको व यमको भी सहसकते औरपरा
जित कर सकतेहैं ॥१६॥ हे जनकनंदिनि! वह आपके लिये सागर सहित इसपृथ्वीको जीत लेनेके लिये तैयार हुयेहैंहेदेवि!श्रीरामचन्द्रजीकी ही जय होगी॥१७॥

हनुमान्‌जीके वह युक्तियुक्त और भलीभाँतिसे कहे हुये सत्य वचन सुनकर जानकीजीने इन वचनोंका बहुत मान किया और ॥१८॥ इसके पीछे जानेके लिये तैयार हनुमान्‌जीपर वारंवार दृष्टि डालकर अपने पतिके स्नेहवाक्योंको भलीभाँति विचार कर बोलीं ॥१९॥ हे शत्रुओंके दमन करनेवाले वीर ! यदि अच्छा समझो तो एक दिन, इसी स्थानमें कहीं छिपकर टिके रहो फिर श्रम दूर करके कल चले जाना ॥२०॥ हे अरिंदमन ! तुम्हारे निकट रहनेसे इसमंदभागिनीका भी अपार शोकमुहूर्त्तके लिये विध्वंस हो जायगा ॥२१॥ परंतु एक दिन यहां रहे यहांसे जानेपर फिर जानें तुम यहांपर आओगे या नहीं इसमें भी संदेह है क्योंकि जो तुम न आये तो निश्चयही हमारे जीवित रहनेमें संशय होगा ॥ २२ ॥ क्योंकि तुम्हारे न देखनेसे उत्पन्न हुआ शोक हमको और अधिक बढ

तस्यतद्वचनंश्रुत्वासम्यक्सत्यंसुभाषितम् ॥ जानकीबहुमेनेतंवचनंचेदमब्रवीत् ॥ १८ ॥ ततस्तंप्रस्थितंसीतावीक्षमाणापुनःपुनः ॥ भर्तृस्नेहान्वितंवाक्यंसौहार्दादनुमानयत् ॥१९॥ यदिवामन्यसेवीरवसैकाहमरिंदम ॥ कस्मिंश्चित्संवृतेदेशेविश्रांतःश्वोगमिष्यसि ॥२०॥ ममचैवाल्पभाग्यायाःसान्निध्यात्तववानर ॥ अस्यशोकस्यमहतोमुहूर्तंमोक्षणंभवेत् ॥२१॥ ततोहिहरिशार्दूलपुनरागमनायतु ॥ प्राणानामपिसंदेहोममस्यान्नात्रसंशयः ॥२२॥ तवादर्शनजःशोकोभूयोमांपरितापयेत् ॥ दुःखाद्दुःखपरामृष्टांदीपयन्निववानर ॥२३॥ अयंचवीरसंदेहस्तिष्ठतीवममाग्रतः ॥ सुमहांस्त्वत्सहायेषुहर्यृक्षेषुहरीश्वरः ॥ २४ ॥ कथंनुखलुदुष्पारंतरिष्यतिमहोदधिम् ॥ तानिहर्यृक्षसैन्यानितौवानरवरात्मजौ ॥ २५ ॥ त्रयाणामेवभूतानांसागरस्येहलंघने ॥ शक्तिःस्याद्वैनतेयस्यतववामारुतस्यवा ॥ २६ ॥ तदस्मिन्कार्यनिर्योगेवीरैवंदुरतिक्रमे ॥ किंपश्यसेसमाधानंत्वंहिकार्यविदांवरः ॥ २७ ॥

कर भस्म करडालेगा कारण कि तुमको अबतो देखा और फिर न देखेंगी तो यह शोक मानो हमको दुःखसे निकालकर दुःखहीमें डाल देगा ॥२३॥ हे वीर ! तुम्हारी सहायता करनेवाले वानरों और ऋक्षोंके विषयमेंभी हमारे मनमें संदेह हुआ है; उस सेनाके बीचमें बडे भारी सुग्रीवजी ॥ २४ ॥ और ऋक्ष वानरोंकी सेना किस उपायसे समुद्रके पार होगी और श्रीराम लक्ष्मणजी यहां किसप्रकारसे आय सकेंगे ॥२५॥ महासमुद्रके लांघनेकी शक्ति तीनप्राणियोंकी है विनताके पुत्र गरुडजीकी, पवनजीकी और तुम्हारी ॥२६॥ इसलिये हे वीर ! इस दूर विक्रम कार्यकी सिद्धिके अर्थ तुमने कौनसा उपाय स्थिर किया है ? क्योंकि तुम कार्यके जाननेवाले पुरुषोंमें श्रेष्ठ हो ॥ २७ ॥

अथवा हे परवीरविनाशन ! तुम तो इकलेही सरलतासे सब कार्य कर सकते हो और ऐसा करनेसे तुम्हारा यशभी बडा भारी होगा ॥ २८ ॥ परन्तु यदि श्रीरामचन्द्रजी चतुरंग सेनाके साथ रावणको जीतकर मुझे ले विजयी हो अपनी नगरीमें चले जांय तोही यह कार्य उनके उपयुक्त हो ॥ २९ ॥ इसलिये शत्रुकी सेनाके संहारकारी श्रीरामचन्द्रजी लंका नगरीको सेनासे घेरकर जो हमको यहांसे ले जांय तो ही यह कार्य उनके सदृश हो ॥ ३० ॥ इसलिये हे वीर ! जिससे उन महात्मा रणवीर श्रीरामचन्द्रजीके विक्रम प्रकाश पावें वैसाही उपाय तुमको करना चाहिये ॥ ३१ ॥ श्रीजानकीजीके अर्थ सहित और युक्तियुक्त वचन श्रवण करके हनुमान्‌जी उनको सब उत्तर देते हुये ॥३२॥ हे देवि ! रीछ वानरोंकी सेनाके अधिपति वानरश्रेष्ठ बलवान सुग्रीवजी आपके उद्धार

काममस्यत्वमेवैकःकार्यस्यपरिसाधने ॥ पर्याप्तःपरवीरघ्नयशस्यस्तेफलोदयः ॥२८॥ बलैःसमग्रैर्युधिमांरावणंजित्यसंयुगे ॥ विजयीस्वपुरंयायात्तत्तस्यसदृशंभवेत् ॥२९॥ बलैस्तुसंकुलांकृत्वालंकांपरबलार्दनः ॥ मांनयेद्यदिकाकुत्स्थस्तत्तस्यसदृशंभवेत् ॥३०॥ तद्यथातस्यविक्रांतमनुरूपंमहात्मनः ॥ भवेदाहवशूरस्यतथात्वमुपपादय ॥३१॥ तदर्थोपहितंवाक्यंप्रश्रितंहेतुसंहितम् ॥ निशम्यहनुमाञ्शेषंवाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥ ३२ ॥ देविहर्यृक्षसैन्यानामीश्वरःप्लवतांवरः ॥ सुग्रीवःसत्यसंपन्नस्तवार्थेकृतनिश्चयः ॥३३॥ सवानरसहस्राणांकोटीभिरभिसंवृतः ॥ क्षिप्रमेष्यतिवैदेहिराक्षसानांनिबर्हणः ॥३४॥ तस्यविक्रमसंपन्नाःसत्त्ववंतोमहाबलाः ॥ मनःसंकल्पसंपातानिदेशेहरयःस्थिताः ॥ ३५ ॥ येषांनोपरिनाधस्तान्नतिर्यक्सज्जतेगतिः ॥ नचकर्मसुसीदंतिमहत्स्वमिततेजसः ॥३६॥ असकृत्तैर्महोत्साहैःससागरधराधरा ॥ प्रदक्षिणीकृताभूमिर्वायुमार्गानुसारिभिः ॥३७॥ मद्विशिष्टाश्चतुल्याश्चसंतितत्रवनौकसः ॥ मत्तःप्रत्यवरःकश्चिन्नास्तिसुग्रीवसन्निधौ ॥ ३८ ॥

करनेकी प्रतिज्ञा कर चुके हैं ॥३३॥ हे देवि ! राक्षस गणोंके संहारकारी वह सुग्रीवजी कोटि २ वानरोंकी सेना लिये शीघ्रही यहांपर आगमन करेंगे ॥३४॥ बडे विक्रमवान् साहसी महाबलवान् मनोरथके समान अतिदूर गमनकारी असंख्यों वानरगण उसकी आज्ञाके अधीनमें हैं ॥३५॥ क्या ऊपर क्या नीचे क्या तिरछे किसी ओरको जानेको भी उसकी गति नहीं रुकती, वह अतुल प्रभाववाले अतिदुष्कर कार्य करनेमें भी कष्टित नहीं होते ॥ ३६ ॥ उनका उत्साह अति बडा है वह पवनकेमार्गका अवलंबन करके अति उत्साह सहित अनेक बार सागरऔर पर्वतोंके सहित इस पृथ्वी मण्डलकी परिक्रमा कर चुके हैं॥३७॥सुग्रीवजीके निकट हमसे अधिक बलवान् और हमारे समान बलवाले अनेक वनवासी वानरहैं, हमसे हीन तो एक भी वानर सुग्रीवजीके निकट नहीं हैं ॥ ३८ ॥

जब कि हम हीनबल होकर भी इस स्थानमें आय सकतेहैं तब उन महाबलवान् वानरोंकी तो बातही क्याहै ? और भी देखिये साधारण व छोटेही पुरुष ऐसे कार्योंमें भेजे जाते हैं परन्तु प्रधानोंको कहीं कोई भी भेजताहै ? ॥३९॥ इसकारण हे देवि ! परिताप करनेका कुछ प्रयोजन नहीं है;शोक दूर कीजिये वह समस्त वानरयूथपति एकही छलांग मार कर लंकामें आजायँगे ॥ ४० ॥ और वह बलवान् सहाययुक्त नरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी हमारी पीठपर चढकर चन्द्रमा सूर्यके समान उदित हो आपके निकट उपस्थित होंगे॥४१॥वह दो नरश्रेष्ठ वीरवर श्रीराम लक्ष्मणजी एक साथ यहां आय कर लंका नगरीके धुर्रे अपने बाणोंके समूहसे उडाय देंगे॥४२॥हे श्रेष्ठवर्णवाली!रघुकुलके हर्ष बढानेवालेश्रीरामचन्द्रजी रावणको सपरिवार संहार करके आपको ले अपनी नगरी अयो

अहंतावदिहप्राप्तः किंपुनस्तेमहाबलाः ॥ नहिप्रकृष्टाःप्रेष्यंतेप्रेष्यंतेहीतरेजनाः ॥३९॥ तदलंपरितापेनदेविशोकोव्यपैतुते ॥ एकोत्पातेनतेलंकामेष्यंतिहरियूथपाः ॥४०॥ ममपृष्ठगतौतौचचंद्रसूर्याविवोदितौ ॥ त्वत्सकाशंमहासङ्घौनृसिंहावागमिष्यतः ॥४१॥ तौहिवीरौनरवरौसहितौरामलक्ष्मणौ॥आगम्यनगरींलंकांसायकैर्विधमिष्यतः ॥४२॥ सगणंरावणंहत्वाराघवोरघुनंदनः ॥ त्वामादायवरारोहेस्वपुरींप्रतियास्यति ॥ ४३ ॥ तदाश्वसिहिभद्रंतेभवत्वंकालकांक्षिणी ॥ नचिराद्द्रक्ष्यसेरामंप्रज्वलंतमिवानलम् ॥ ४४ ॥ निहतेराक्षसेंद्रेचसपुत्रामात्यबांधवे ॥ त्वंसमेष्यसिरामेणशशांकेनेवरोहिणी ॥४५॥ क्षिप्रंत्वंदेविशोकस्यपारंद्रक्ष्यसिमैथिलि ॥ रावणंचैवरामेणद्रक्ष्यसेनिहतंबलात् ॥४६॥ एवमाश्वास्यवैदेहींहनूमान्मारुतात्मजः ॥ गमनायमतिंकृत्वावैदेहींपुनरब्रवीत् ॥४७॥ तमरिघ्नंकृतात्मानंक्षिप्रंद्रक्ष्यसिराघवम् ॥ लक्ष्मणंचधनुष्पाणिंलंकाद्वारमुपागतम् ॥४८॥ नखदंष्ट्रायुधान्वीरान्सिंहशार्दूलविक्रमान् ॥ वानरान्वरणेंद्राभान्क्षिप्रंद्रक्ष्यसिसंगतान् ॥ ४९ ॥

ध्याको चले जायँगे ॥४३॥ इससे धीरज धरिये आपका मंगल हो कुछ कालतक और ठहरिये अब बहुतही शीघ्र आप प्रदीप्त अनलके समान श्रीरामचन्द्रजीका दर्शन करेंगी.॥४४॥ तब पुत्र मंत्री और बन्धुबान्धवोंके सहित रावणके मरनेपर चन्द्रमासे रोहिणीके समान आप मिलेंगी ॥४५॥ हे देवी जनकनंदिनि! आप शीघ्रही शोकका पार देखेंगी. आप देखेंगी कि,श्रीरामचन्द्रजीने बल प्रकाश करके रावणको संहार कियाहै ॥४६॥ वायुसुवन हनुमानजी इसप्रकार जानकीजी को समझा बुझाकर चलनेके लिये तैयार हो फिर बोले ॥ ४७ ॥ हे आर्ये ! आप बहुतही शीघ्र देखेंगी कि, वह शत्रुओंके नाश करनेवाले विजयी श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी धनुष हाथमें लिये लंकाके द्वारपर आय गये हैं ॥४८॥ नख,डाढों को आयुध बनाये सिंह शार्दूलके समान विक्रमवाले हाथि

योंके समान एकत्र हुए वानरोंको भी शीघ्र देखोगी ॥ ४९ ॥ इस लंका नगरीमें पर्वतोंके शिखरपर मेघोंके समान आकारवाले अनेक २ प्रधान २ वानर यूथ पोंको गर्जता हुआ देखोगी ॥५०॥ श्रीरामचन्द्रजी आपके बिना देखे कामदेवके बाणोंसे मर्दित होकर सिंहसे घायल हुए हाथीके समान एकक्षण भरको भी शांति नहीं पाय सकतेहैं ॥५१॥ हे देवि ! अब शोक या रुदन कुछ न कीजिये आपअपने मनसे भयको दूर करें । हे शोभने ! इन्द्रजीके साथ शचीकी नाईं आप भी अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीसे मिलेंगी ॥५२॥ श्रीरामचन्द्रजीसे और कौन श्रेष्ठ है ? और लक्ष्मणजीकी समानता भी कौन पाय सकता है ? सो वही अग्नि और वायुके तुल्य दोनों भ्राताओंके आश्रयमें आये हैं ॥ ५३ ॥ हे देवि ! आपको इस राक्षसके घोरस्थानमें और अधिक दिन वास नहीं करना पडेगा अब

शैलांबुदनिकाशानांलंकामलयसानुषु॥नर्दतांकपिमुख्यानामार्येयूथान्यनेकशः ॥५०॥ सतुमर्मणिघोरेणताडितोमन्मथेषुणा ॥ नशर्मलभते रामःसिंहार्दितइवद्विपः ॥ ५१ ॥ रुदमादेविशोकेन्माभूत्तेमनशोभयम् ॥ शचीवभर्त्राशक्रेणसंगमेष्यसिशोभने ॥ ५२ ॥ रामाद्विशिष्टः कोन्योस्तिकश्चित्सौमित्रिणासमः ॥ अग्निमारुतकल्पौतौभ्रातरौतवसंश्रयौ ॥५३॥ नास्मिंश्चिरंवत्स्यसिदेविदेशेरक्षोगणैरध्युषितेऽतिरौद्रे॥नते चिरादागमनंप्रियस्यक्षमस्वमत्संगमकालमात्रम् ॥५४॥ इत्यार्षे श्री० वा० आ०च० सा० सुं० एकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥३९॥ श्रुत्वातुव चनंतस्यवायुसूनोर्महात्मनः ॥ उवाचात्महितंवाक्यंसीतासुरसुतोपमा ॥१॥ त्वांदृष्ट्वाप्रियवक्तारंसंप्रहृष्यामिवानर ॥ अर्धसंजातसस्येववृष्टिं प्राप्यवसुंधरा॥ २ ॥ यथातंपुरुषव्याघ्रंगात्रैःशोकाभिकर्शितैः॥ संस्पृशेयंसकामाहंतथाकुरुदयांमयि ॥३॥ अभिज्ञानंचरामस्यदत्वाहरिगणो त्तम ॥ क्षिप्तामिषीकांकाकस्यकोपादेकाक्षिशातनीम् ॥ ४ ॥

बहुतही शीघ्र आपके स्वामी यहां आवेंगे;हम जबतक वहां जाय कर उनके दर्शन नहीं करते हैं आप तबही तक समयको परखती रहियेगा ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामेकोनचत्वारिंशःसर्गः ॥ ३९ ॥ महात्मा पवन तनय हनुमान्‌जीके वचन सुन कर देवकन्याके समान सीताजी अपने हितकी बात कहती हुई ॥१॥ हे हनुमन् ! अन्नके आधे पकजानेपर अनावृष्टिके पीछे जो वृष्टि होती है और फिर अन्न उससे दूना उत्पन्न होता है हम भी मरणमें निश्चय बुद्धि किये,प्रियवक्ता तुमको पाय वैसेही प्रसन्न हुई हैं ॥२॥ तुम हमारे ऊपर दया करके ऐसा उपाय करोकि हम इन शोक क्षीण अंगोंसे उन पुरुषव्याघ्र श्रीरामचन्द्रजीको स्पर्श करसकें ॥३॥ हे वानरकुलतिलक ! श्रीरामचन्द्रजीको चिह्नस्वरूप यहमणि दे देना और चिह्नरूप यह बातें भी उनसे कहना

कि आपने काकके प्रति एकाक्षिनाशिनी शक्ति चलायकर उसके प्राणोंकी रक्षाकीथी ॥४॥ औरभी कहना; फिर एकसमय जब हमारा तिलकविनस गयाथा; सो आपने हमारे गालोंपर मैनसिलका तिलक बना दियाथा सो इस बातकाभी स्मरण करना आपको उचितहै ॥५॥ वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजीइन्द्र और वरुण जीके समान पराक्रमीहैं, तो भी हमको राक्षस हरकरले आया और इन राक्षसोंहीके बीचमें हमको वास करना पडताहै ॥६॥ सो वह किस प्रकारसे इसबातको सह रहे हैं; उनसे इतना भी कहना कि हमने यह दिव्य चूडामणि अति यत्नसे रखछोडाथा । दुःखके समय हम इस मणिको देख मानो तुमकोही पाय आनन्दित हुआ करती थीं ॥७॥ इससमय यह जलसे उत्पन्न हुआ रत्न हमने तुम्हारे निकट चिह्न स्वरूपमें भेजा, अब शोकमें डूब कर हम और अधिक जीवन धारण कर न सकेंगी ॥८॥ विविध भाँतिके न सहने योग्य दुःख मर्मभेदी वचन और राक्षसोंकेसाथ एक जगह वास; यह सब हम तुम्हारे ही कारण सह रही हैं ॥९॥ हे

मनःशिलायास्तिलकोगंडपार्श्वेनिवेशितः॥त्वयाप्रनष्टेतिलकेतंकिलस्मर्तुमर्हसि ॥५॥ सवीर्यवान्कथंसीतांहृतांसमनुमन्यसे ॥ वसंतींरक्षसां मध्येमहेंद्रवरुणोपम ॥६॥ ऐषचूडामणिर्दिव्योमयासुपरिरक्षितः॥एतंदृष्ट्वाप्रहृष्यामिव्यसनेत्वामिवानघ ॥७॥ एषनिर्यातितःश्रीमान्मयातेवारिसंभवः ॥ अतःपरंनशक्ष्यामिजीवितुंशोकलालसा ॥८॥ असह्यानिचदुःखानिवाचश्चहृदयच्छिदः ॥ राक्षसैःसहसंवासंत्वत्कृतेमर्षयाम्यहम् ॥९॥ धारयिष्यामिमासंतुजीवितं शत्रुसूदन॥ मासादूर्ध्वंनजीविष्येत्वयाहीनानृपात्मज॥१०॥घोरोराक्षसराजोयंदृष्टिश्चनसुखामयि ॥ त्वांचश्रुत्वाविषज्जंतंनजीवेयमपिक्षणम्॥११॥वैदेह्यावचनंश्रुत्वाकरुणंसाश्रुभाषितम्॥अथाब्रवीन्महातेजाहनूमान्मारुतात्मजः॥१२॥त्वच्छोकविमुखोरामोदेवि सत्येनतेशपे॥रामेशोकाभिभूतेतुलक्ष्मणःपरितप्यते॥१३॥दृष्टाकथंचिद्भवतीनकालःपरिदेवितुम्॥इमंमुहूर्तंदुःखानामंतंद्रक्ष्यसिभामिनि॥१४॥

शत्रुदमन ! और एक मासतक जीती हैं, हे राजकुमार ! एक मास पीछे फिर तुम्हारे बिना इस जीवनको हम नहीं रक्खेंगी ॥१०॥ राक्षसोंका राजा रावण अतिनिर्दयी है, उसपर हमारी ओर उसकी दृष्टि भी अच्छी नहीं है । सो इसपर यदि हम सुनेंगी कि, तुम आनेमें विलम्ब करते हो तो एक क्षणभरको भी हम न जियेंगी ॥११॥ वैदेहीके आंसु गिरनेके साथ करुणासे कहे वचन श्रवण कर महातेजस्वी पवनकुमार हनुमान्‌जी बोले ॥१२॥ हे देवि ! हम सत्यकी सौगन्ध करके कहते हैं कि, आपके शोकमें श्रीरामचन्द्रजी समस्त ही कार्योंसे विमुखहो रहेहैं और उन श्रीरामचन्द्रजीके शोकाकुल होनेसे लक्ष्मणजी भी संताप करते हैं ॥१३॥ हे देवि ! इस समय बडे भाग्य व अनेक कष्टोंसे हमने आपको पाया है अब संताप करनेका कुछ प्रयोजन नहीं; अब इसी मुहूर्त्तमें आप अपने शोकका

अन्त देखोगी ॥१४॥ वह निंदारहित दो पुरुषव्याघ्र राजकुमार आपके देखनेका उत्साही हो लंकापुरीको भस्म कर डालेंगे ॥१५॥ हे बडेनेत्रोंवाली ! वह दोनों रघुवीर राक्षस रावणका बन्धुबान्धवोंके सहित व जितने राक्षस हैं, उन सबका संहार करके आपको अपनी पुरी राजधानी अयोध्याजीमें लेजायँगे ॥१६॥ हेनिन्दारहिते ! जिससे श्रीरामचन्द्र निश्चय इसको आपही चिह्न समझे और जिससे उनकी प्रसन्नता हो, सो इस समय आप ऐसा कुछ और चिह्न हमको दीजिये॥१७॥ तब सीताजी विस्मययुक्त होकर बोलीं कि,हे हनुमन्! हमने तो पहलेही तुमको श्रेष्ठ अभिज्ञान (निशानीचिह्न) प्रदान किया है इसी हमारे केशभूषण रत्नको देखतेही श्रीरामचन्द्रजी ॥१८ ॥ हेवीर ! तुम्हारे वचनका विश्वास करेंगे। तब वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीने वह श्रेष्ठमणि ग्रहण कर॥ १९ ॥ शिर नवाय देवी जानकी

तावुभौपुरुषव्याघ्रौराजपुत्रावनिंदितौ ॥ त्वद्दर्शनकृतोत्साहौलंकांभस्मीकरिष्यतः ॥ १५ ॥ हत्वातुसमरेरक्षोरावणंसहबांधवैः ॥ राघवौत्वां विशालाक्षिस्वांपुरींप्रतिनेष्यतः ॥१६॥ यत्तुरामोविजानीयादभिज्ञानमनिंदिते ॥ प्रीतिसंजननंभूयस्तस्यत्वंदातुमर्हसि ॥ १७ ॥ साब्रवीदत्तमेवाहोमयाभिज्ञानमुत्तमम् ॥ एतदेवहिरामस्यदृष्ट्वामत्केशभूषणम्॥ १८ ॥श्रद्धेयंहनुमन्वाक्यंतववीरभविष्यति ॥ सतंमणिवरंगृह्यश्रीमान्प्लवगसत्तमः ॥१९॥ प्रणम्यशिरसादेवींगमनायोपचक्रमे ॥ तमुत्पातकृतोत्साहमवेक्ष्यहरियूथपम् ॥ २० ॥ वर्धमानंमहावेगमुवाचजनकात्मजा ॥ अश्रुपूर्णमुखीदीनाबाष्पगद्गदयागिरा ॥२१॥ हनूमन्सिंहसंकाशौभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ सुग्रीवंचसहामात्यंसर्वान्ब्रूयाअनामयम् ॥२२॥ यथाचसमहाबाहुर्मांतारयतिराघवः ॥ अस्माद्दुःखांबुसंरोधात्त्वंसमाधातुमर्हसि ॥ २३ ॥ इदंचतीव्रंममशोकवेगंरक्षोभिरेभिःपरिभर्त्सनंच ॥ ब्रूयास्तुरामस्यगतःसमीपंशिवश्चध्वास्तुहरिप्रवीर ॥ २४ ॥

जीको प्रणामकर चलनेके लिये विचार करते हुये उन वानरश्रेष्ठको उत्साह सहित छलांग मारनेका मन किये ॥२०॥ वअतिवेगसे देख कर जनकनंदिनी सीताजी नयनोंके नीरसे मुखगीलाकर दीन हो गद्गद वाणीसे बोलीं ॥२१॥ हे हनुमन् ! सिंहके समान पराक्रमी दोनों भाई श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी व सुग्रीवजी और उनके मंत्रियोंसे सबहीसे हमारी (अनामय) कुशल कहना ॥२२॥ महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजी जिससे हमको इस शोकसागरसे उद्धार करलें सो तुमको ऐसा ही करना चाहिये ॥२३॥ और श्रीरामचन्द्रजीके समीप जायकर हमारे इस असह्य शोकको वराक्षसोंसे जो हमारा अपमान होताहै उसको उनसे भलीभाँति कहना हे वानरवीर ! मार्गमें तुम्हारा मंगल हो ॥ २४ ॥

सब भाँतिसे कृतार्थ हो हनुमानजी संतुष्ट हो राजकुमारी सीताजीका संवादले और यह जानकर कि, यह कार्य अब थोडा ही बाकी रह गया है, ऐसा जान उत्तर दिशाकी ओर जानेका मन करते हुये ॥ २५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४० ॥ इसके पीछे वह वानरश्रेष्ठ सीताजीकी मधुर वचनवाणी द्वारा आदरमान पाकर गमननकरनेके अभिलाषसे वहांसे चल कर चिन्ता करने लगे ॥१॥ इन कृष्णनेत्रोंवाली जानकीजीका तो दर्शन किया,परन्तु शत्रुका बल दर्शनरूप एक थोडासा कार्य बाकी रहाजाता है सो इसके विषयमें साम,दान, भेद, दंड इन चार उपायोंमेंसे एक दंडहीके द्वारा इस कार्यका साधन होना हम देखते हैं ॥२॥ क्योंकि राक्षसलोगोंको समझाना कुछ फलनकरेगा, और फिर इन धनधान्यसे भरे पुरे राक्षसोंको

सराजपुत्र्याप्रतिवेदितार्थःकपिःकृतार्थःपरिहृष्टचेताः ॥ तदल्पशेषंप्रसमीक्ष्यकार्यंदिशंह्युदीचींमनसाजगाम ॥२६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे चत्वारिंशः सर्गः ॥४०॥सचवाग्भिःप्रशस्ताभिर्गमिष्यन्पूजितस्तया ॥ तस्माद्देशादपाक्रम्यचिंतयामासवानरः ॥१॥अल्पशेषमिदंकार्यंदृष्टेयमसितेक्षणा ॥ त्रीनुपायानतिक्रम्यचतुर्थइहदृश्यते ॥२॥ नसामरक्षस्सुगुणायकल्पतेनदानमर्थोपचितेषुयुज्यते ॥ नभेदसाध्याबलदर्पिताजनाःपराक्रमस्त्वेषममेहरोचते ॥ ३ ॥ नचास्यकार्यस्यपराक्रमादृतेविनिश्चयःकश्चिदिहोपपद्यते ॥ हतप्रवीराश्वरणेतुराक्षसाःकथंचिदीयुर्यदिहाद्यमार्दवम् ॥ ४ ॥ कार्येकर्मणिनिर्वृत्तेयोबहून्यपिसाधयेत् ॥ पूर्वकार्याविरोधेनसकार्यंकर्तुमर्हति ॥ ५ ॥ नह्येकःसाधकोहेतुःस्वल्पस्यापीहकर्मणः ॥ योह्यर्थंबहुधावेदससमर्थोऽर्थसाधने ॥ ६ ॥

दान करनेसे भी कुछ फल न निकलेगा, और बलसे गर्वित पुरुषोंमें भेद डालना भी कठिन है इस लिये इस समय बचेहुए कार्यको पूराकरनेमें पराक्रम ही प्रकाश करनेकी हमारी अभिलाषा है ॥ ३ ॥ और पराक्रम प्रकाशकरनेके सिवाय पराये बलको जाननेके लिये किसी दूसरे उपायसेहम कार्यकी सिद्धि नहीं देखते; हां जो कुछेक वीर मारे जांय तब यदि आगेको संग्राम करनेके लिये राक्षसलोग कदाचित् कुछ नरम पडें ॥ ४ ॥ पहले बडे कार्यको पूराकरके जो दूत इस पहले किये हुए कार्यके अविरोधमें और भी कई एक कार्य पूरे करदें वही पुरुष यथार्थमें कार्य करनेके योग्य हैं ॥५॥ जो पुरुष बहुत सारा यत्न करके थोडेसे कार्यकी साधना करे उस कार्यका मुख्य साधन करनेवाला नहीं कहा जा सकता जो साधारण प्रकारसे अपना कार्य अनेक प्रकारसे साधन कर सकते हैं, वहीं प्रधान कार्यके साधक हैं ॥ ६ ॥

यद्यपि प्रधान कार्य तो हमारा सीताजीका ही ढूँढना था, वह तो करही चुके, तथापि राक्षसोंका बल और अनेक बलके अंतरको भली भाँतिसे जानकर वानरराज सुग्रीवजीके पास चले जाँय तो ऐसा करनेसे ही यथार्थ स्वामीका सर्व भाँतिके प्रतिपालन करना हो जायगा ॥ ७ ॥ अब इस समय किस उपायका आश्रय करनेसे हमारे आगमनका शुभ फल फलेगा किस उपायसे हम अनिष्टकारी राक्षसोंके साथ संग्राम करनेमें लगें ? और किस प्रकारसे रावण हमको संग्राम स्थलमें खडा देख अपनी सेनाके और हमारे बलकी निचाई ऊँचाई को जाने ? ॥ ८ ॥ अपने आश्रित सेनापति और मंत्रीगणोंके सहित रावणके संग्राममें आते ही हम उसके हृदयका अभिप्राय बलसरलतासे जान इस स्थानसे चले जायँगे ॥ ९ ॥ सो इसके लिये हमारे मनमें यह बात आती है कि यह जो क्रूर रावण

इहैवतावत्कृतनिश्चयोह्यहंव्रजेयमद्यप्लवगेश्वरालयम्॥परात्मसंमर्दविशेषतत्त्ववित्ततःकृतंस्यान्ममभर्तृशासनम् ॥७॥ कथंनुखल्वद्यभवेत्सुखा
गतंप्रसह्ययुद्धंममराक्षसैःसह ॥ तथैवखल्वात्मबलंचसारवत्समानयेन्मांचरणेदशाननः ॥ ८ ॥ ततःसमासाद्यरणेदशाननंसमंत्रिवर्गंसबलंसया
यिनम् ॥ हृदिस्थितंतस्यमतंबलंचसुखेनमत्वाहमितःपुनर्व्रजे ॥९॥ इदमस्यनृशंसस्यनंदनोपममुत्तमम् ॥ वनंनेत्रमनःकांतंनानाद्रुमलतायुतम्
॥ १० ॥ इदंविध्वंसयिष्यामिशुष्कंवनमिवानलः ॥ अस्मिन्भग्नेततःकोपंकरिष्यतिसरावणः ॥११॥ ततोमहत्साश्वमहारथद्विपंबलंसमाने
ष्यतिराक्षसाधिपः ॥त्रिशूलकालायसपट्टिशायुधंततोमहद्युद्धमिदंभविष्यति ॥ १२ ॥ अहंचतैःसंयतिचंडविक्रमैःसमेत्यरक्षोभिरभंगविक्रमः॥
निहत्यतद्रावणचोदितंबलंसुखंगमिष्यामिहरीश्वरालयम् ॥ १३ ॥ ततोमारुतवत्क्रुद्धोमारुतिर्भीमविक्रमः ॥ ऊरुवेगेनमहताद्रुमान्क्षेप्तुमथा
रभत् ॥ १४ ॥ ततस्तद्धनुमान्वीरोबभंजप्रमदावनम् ॥ मत्तद्विजसमाघुष्टंनानाद्रुमलतायुतम् ॥ १५ ॥

का अनेक जातिकी तरुलताओंसे पूर्ण नन्दनवनके समान नयन और मनको प्रसन्न करनेवाला उपवन है ॥ १० ॥ सो आग जिस प्रकार सूखे हुये वनको भस्म करडालती है, वैसेही हम भी इस वनका नाश कर डालें । इस वनके उजाड होनेसे पीछे राक्षस पति रावण क्रोधित हो ॥ ११ ॥ हाथी, घोडे रथोंसे व्याप्त, त्रिशूल, खड्ग और पटा धारण करनेवाली बडी सेना हमारे सामने युद्धमें भेजेगा तब महाभयंकर युद्ध होगा ॥१२॥ हम भी भयंकर पराक्रमसे प्रचंड पराक्रम सम्पन्न राक्षसोंके साथ युद्ध करते हुये समस्त सेनाको संहार करके सुखसे वानर राज सुग्रीवजीके भवनमें गमन करेंगे ॥ १३ ॥ इस प्रकार निश्चय करके भयंकर विक्रमशाली पवन कुमार हनुमान्जी क्रोधित होकर महा वेगसे वृक्षोंको उखाडने तोडने लगे ॥ १४ ॥ थोडेही समयमें वीर्यवान् हनुमान्जीने अनेक

भाँतिकी लता व वृक्षोंसे पूर्ण, मतवाले पक्षीकुलके शब्दसे शब्दायमान वह सब प्रमदावन उजाड डाला ॥१५॥ उस समय वनके वृक्ष सब टूट गये, जलाशयोंके किनारे खसक गये और विविध भाँति के प्रिय दर्शन पर्वतके सब शृङ्ग चूर्ण होगये ॥१६॥ अनेक प्रकारके जलचर पक्षियोंके शब्दसे शब्दायमान जलाश योंका जल उछलने और लाल वर्ण कमल फूलोंके वा द्रुम लताओंके मलीन होजानेसे ॥१७॥ दावानलसे भस्म हुये वनकी नाई वह शोभा विहीन होगया, ढकनोंके टूट जानेसे सब लता विध्वंसित होकर ओढनी इत्यादि वसनोंको खसकाये स्त्रीके समान विह्वल होगई॥१८॥लता गृह, चित्रगृह, सबका विध्वंस हो गया, शार्दूलादि मृग और पक्षी गण दुःखित शब्दसे चिल्लाने लगे और शिलागृह व सामान्य गृहके गिर जानेसे इस महावनका स्वरूप भ्रष्ट होगया ॥१९॥ रावणकी स्त्रियोंके रति

तद्वनंमथितैर्वृक्षैर्भिन्नैश्चसलिलाशयैः ॥चूर्णितैःपर्वताग्रैश्चबहुधाप्रियदर्शनैः॥ १६ ॥नानाशकुंतविरुतैःप्रभिन्नसलिलाशयैः ॥ ताम्रैःकिसलयैः क्लांतैःक्लांतद्रुमलतायुतैः ॥ १७ ॥नबभौतद्वनंतत्रदावानलहतंयथा॥ व्याकुलावरणारेजुर्विह्वलाइवतालतः ॥ १८ ॥ लतागृहैश्चित्रगृहैश्चसादि तैर्व्यालैर्मृगैरार्तैश्चपक्षिभिः ॥ शिलागृहैरुन्मथितैस्तथागृहैःप्रनष्टरूपंतदभून्महद्वनम् ॥ १९ ॥ साविह्वलाशोकलताप्रतानावनस्थलीशोक लताप्रताना॥जातादशास्यप्रमदावनस्यकपेर्बलाद्धिप्रमदावनस्य॥ २० ॥ ततःसकृत्वाजगतीपतेर्महान्महद्व्यलीकंमनसोमहात्मनः॥ युयुत्सुरेको बहुभिर्महाबलैःश्रियाज्वलंस्तोरणमाश्रितःकपिः ॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच० सा० सुंदरकांडे एकचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥ ततः पक्षिनिनादेनवृक्षभंगस्वनेनच ॥ बभूवुस्त्राससंभ्रांताःसर्वेलंकानिवासिनः ॥ १ ॥ विद्रुताश्चभयत्रस्ताविनेदुर्मृगपक्षिणः ॥ रक्षसांचनिमित्तानिक्रूराणिप्रतिपेदिरे ॥ २ ॥ ततोगतायांनिद्रायांराक्षस्योविकृताननाः ॥तद्वनंददृशुःभग्नंतंचवीरंमहाकपिम् ॥ ३ ॥

बढानेवाले तथा चलायमान अशोक लता प्रतानवाले सब अशोकवनकेलता समूह रक्षाहीन होनेके कारण वानर श्रेष्ठ हनुमानूजीके बलसे अतिशोचनीय दशाको प्राप्त हुए ॥ २० ॥ वह सौंदर्य सम्पन्न महाकपि हनुमानूजी महात्मा रावणका महा अप्रिय कार्य साधन करके इकलेही महाबलवान् बहुत सारे राक्षसोंके साथ युद्ध करनेकीइच्छाकर बलकीसम्पत्तिसे प्रज्वलित हो इन वनकेबाहरी द्वारपरचढगये ॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा०आदि०सुन्दरकांडे भाषायामेकचत्वारिंशः सर्गः॥४१॥तत्पश्चात् पक्षियोंकी चिल्लाहटसे,और वृक्ष टूटनेके खड२मड२शब्दोंसे त्रासित होकर लंकाके सबही निवासी चलायमान हो भीत होगये ॥१॥पशुपक्षी सबही भयके मारे उसस्थानसे उडकर दूसरे स्थानोंमें छिपने लगे, और राक्षसोंके निकट विविध भांतिके अमंगल लक्षण होने लगे ॥२॥ इस ओर विकराल वदन

वाली सबराक्षसियोंने निद्रात्याग कर उस टूटे फूटे वन और महावीर वानर श्रेष्ठ हनुमानूजीको देखा॥ ३॥ वह महाबलवान् दीर्घबाहू हनुमानूजी राक्षसियोंको देख उनको डरानेकेलिये भयंकर रूप धारण करते हुए ॥ ४ ॥ तब सब राक्षसियोंने पर्वतके समान बडे आकारवाले महाबलवान् वानर श्रेष्ठ हनुमानूजीको देखकर जानकीसे बूझा ॥ ५ ॥ यह कौन है ? किसका दूत है ? कहांसे और किस कारणसे इस स्थानमें आया है ! और तुमसे इसने किस कारण बाते कीं ? अथवा क्या तुमसे वार्त्ता की ? ॥६॥ हे विशालाक्षी ! यह सब तुम हमसे कहो ? हे सुभगे ! तुमको कोई भय नहीं है। हे असितापांगि ! इस वानरने तुम्हारे साथ क्या २ कथा वार्त्ता कही ❋ ॥ ७॥ तब जनक कुमारी सर्वाङ्गसुन्दरी पतिव्रता सीताजी उन राक्षसियोंको उत्तर देने लगीं कि, कामरूपी राक्षसलोग

ततोदृष्ट्वामहाबाहुर्महासत्त्वोमहाबलः ॥ चकारसुमहद्रूपंराक्षसीनांभयावहम् ॥ ४ ॥ ततस्तुगिरिसंकाशमतिकायंमहाबलम् ॥ राक्षस्योवानरं दृष्ट्वापप्रच्छुर्जनकात्मजाम्॥ ५ ॥ कोयंकस्यकुतोवायंकिंनिमित्तमिहागतः ॥ कथंत्वयासहानेनसंवादःकृतइत्युत ॥ ६ ॥ आचक्ष्वनोविशालाक्षिमाभूत्तेसुभगेभयम् ॥ संवादमसितापांगित्वयाकिंकृतवानयम् ॥७॥ अथाब्रवीत्तदासाध्वीसीतासर्वांगशोभना ॥ रक्षसांकामरूपाणांविज्ञानेकागतिर्मम ॥ ८ ॥ यूयमेवास्यजानीतयोयंयद्वाकरिष्यति॥अहिरेवह्यहेःपादान्विजानातिनसंशयः ॥९॥ अहमप्यतिभीतास्मिनैवजानामिकोह्ययम्॥वेद्मिराक्षसमेवैनंकामरूपिणमागतम्॥१०॥ वैदेह्यावचनंश्रुत्वाराक्षस्योविद्रुताद्रुतम् ॥ स्थिताःकाश्चिद्गताःकाश्चिद्रावणायनिवेदितुम् ॥ ११ ॥ रावणस्यसमीपेतुराक्षस्योविकृताननाः ॥ विरूपंवानरंभीमंरावणायन्यवेदिषुः ॥ १२ ॥ अशोकवनिकामध्येराजन्भीमवपुःकपिः ॥ सीतयाकृतसंवादस्तिष्ठत्यमितविक्रमः ॥ १३ ॥

अपनी इच्छानुसार रूप धारणकर सकतेहैं सो भला हम उनको किस प्रकारसे जानें ॥८॥ इसलिये यह कौन है और किस कार्यको पूरा करेगा ? यह सब बातें तुमही जान सकती हो कारण कि सर्पही सर्पके पाँव जानता है ॥९॥ हमभी बहुत डरगई हैं,नहीं जानतीं कि कौन है? हम समझती हैं कि यह कामरूपी राक्षस मायारूप बनाकर यहां आया है ॥१०॥ श्रीजानकीजीके वचन सुनकर राक्षसियें भयके मारे दौडीं,उनमेंसे कोई २ तो वनमेंही टिकरहीं, और कोई २ रावणको यह समाचार देनेके लिये बडी शीघ्रतासे गईं ॥११॥ उन समस्तविकराल वदनवाली राक्षसियोंने रावणके निकट पहुँचकर,विकराल वदनवाले वानरके आनेका समाचार निवेदन किया ॥ १२ ॥ वह राक्षसी बोलीं कि, हे राजन् ! अशोक वनके बीच एक भयंकर शरीरधारी अतुल पराक्रमसम्पन्न वानरआया

❋ राक्षसियें जाग कर भी देवमायासे मोहित हो सोगईं इससे उनको संवादका भान सो रहा ।

है और न जाने उसने सीताजीके साथ क्या कुछ वार्त्ता की है ?॥१३॥हमने उस मृगनयनी सीताजीसे बार२पूछाकि,उस वानरसे और तुमसे क्या बातचीत हुई परंतु सीताजीने हमलोगोंसे किसी प्रकार उस वानरकी कही बात कहनेकीइच्छा न की ॥१४॥ वह वानर इन्द्रका दूत होगा वा कुबेरका दूत होगा, अथवा रामचन्द्रने हीसीताके ढूँढनेकी अभिलाषा करके इस वानरको भेजा होगा ॥१५॥ किसीका भी दूत हो सो उसही अद्भुत वानरने आपका अनेक प्रकारके मृगगणोंके सेवित मनोहर प्रमदावन तोड फोडकर उजाड कर दिया ॥१६॥ उस वनमें ऐसा कोई स्थान नहीं कि,जिसको उस वानरने नहीं विध्वंस कर डाला; हां केवलजिसस्थानमेंदेवी जानकीजी रहती हैं;उसही स्थानको उस वानरने नष्ट नहीं किया॥१७॥ यातो जानकीजी रक्षाके लिये, या मारे थकावटके उस स्थानको उस वानरने छोड दिया है,यहबात जानी नहींजाती अथवा जब उसने इस महावनकोही तोडफोड डालाहै,तब इसको इस जरासे स्थानको तोडनेमें क्यापरिश्रम था,

नचतंजानकीसीताहरिंहरिणलोचना॥अस्माभिर्बहुधापृष्टानिवेदयितुमिच्छति ॥१४॥ वासवस्यभवेद्दूतोदूतोवैश्रवणस्यवा॥प्रेषितोवापिरामेणसीतान्वेषणकांक्षया ॥ १५ ॥ तेनैवाद्भुतरूपेणयत्तत्तवमनोहरम् ॥ नानामृगगणाकीर्णंप्रमृष्टंप्रमदावनम् ॥ १६ ॥ नतत्रकश्चिदुद्देशोयस्तेननविनाशितः ॥ यत्रसाजानकीदेवीसतेननविनाशितः ॥ १७ ॥ जानकीरक्षणार्थंवाश्रमाद्वानोपलक्ष्यते ॥ अथवाकःश्रमस्तस्यसैवतेनाभिरक्षिता ॥ १८ ॥चारुपल्लवपत्राढ्यंयंसतीस्वयमास्थिता ॥ प्रवृद्धःशिंशपावृक्षःसचतेनाभिरक्षितः ॥ १९ ॥ तस्योग्ररूपस्योग्रंत्वंदंडमाज्ञातुमर्हसि ॥ सीतासंभाषितायेनवनंतेनविनाशितम् ॥ २० ॥ मनःपरिगृहीतांतांतवरक्षोगणेश्वर ॥ कःसीतामभिभाषेतयोनस्यात्त्यक्तजीवितः ॥२१॥ राक्षसीनांवचःश्रुत्वारावणोराक्षसेश्वरः ॥ चिताग्निरिवजज्वालकोपसंवर्तितेक्षणः ॥ २२ ॥ तस्यक्रुद्धस्यनेत्राभ्यांप्रापतन्नश्रुबिंदवः ॥ दीप्ताभ्यामिवदीपाभ्यांसार्चिषस्नेहबिंदवः ॥ २३ ॥

वास्तवमें और बात नहीं; केवल उस वानरने जानकीजीकी रक्षा की है ॥१८॥ स्वयं सीतादेवी जिस मनोहर पल्लव पत्रयुक्त शोभायमान बडेभारी शिंशपावृक्षके नीचे बैठी हैं,बस उस वानरने केवल उसीवृक्षको छोड दिया है ॥१९॥ जिससे कि,उस उग्रमूर्ति वानरनेसीताजीके सहित वार्तालाप किया और वनको तोडताड डाला, इसलिये आप उस वानरको उचित दंड देनेकी आज्ञा दीजिये ॥ २० ॥ हे राक्षसनाथ ! आपने अपने मनसे जिस सीताको ग्रहण कर लिया है, सो उस सीतासे बिना अपनेजीवनकी आशा त्याग किये कौन बातचीत कर सकताहै ? ॥२१॥समस्त राक्षसियोंके यह वचन सुनकर रावण इस प्रकार जल बल गया कि जिस प्रकार चिताकी आग एकबारही धूधू करके जल उठती है,क्रोधसे नेत्र लाल होगये ॥२२॥ क्रोधके मारे रावणके दोनों नेत्र चलायमान होने लगे और

दीपक अग्निकी शिखाके सहित तेल बून्दोंके समान उसके दोनों नेत्रोंसे आंसुओंकी बून्दें गिरने लगीं ॥२३॥ उसके पीछे प्रबल प्रतापशाली रावणने महातेजस्वी हनुमान्‌जीको पकडनेके लिये अपने समान पराक्रमवाले अपने किंकरराक्षसोंको आज्ञादी ॥२४॥ उन राक्षसोंमें अस्सी हजार ८०००० वेगवान् किंकर कूट मुद्गर इत्यादि शस्त्र हाथोंमें लेकर स्थानसे निकले ॥२५॥ सबकेही पेट बडे२डाढेंभी मोटी और बडी सबही बडे भयंकर मूर्तिमान् और प्रमाणरहित बलवाले थे सबही हनुमान्‌जीको पकडनेके लिये युद्ध करनेको तैयार हो ॥२६॥ बाहरके द्वारपर खडे उस वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जीके निकट पहुंच;अग्निके सम्मुख पंतगके समान उनके ऊपर वे राक्षस दौडे ॥२७॥ और सबही चारों ओरसे घेरकर विविध भांतिकी गदा सुवर्णके बंध बँधे हुए परिघोंसे और सूर्यके समान प्रकाशित उन वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जीके बाणोंसे ॥ २८ ॥ मुद्गर,पटा,शूल,फांसी और भालोंसे ऊपर वह राक्षसलोग चोट चलाने लगे ॥ २९ ॥ पर्वत समान आकारवाले

आत्मनःसदृशान्वीरान्किंकरान्नामराक्षसान् ॥ व्यादिदेशमहातेजानिग्रहार्थंहनूमतः ॥२४॥ तेषामशीतिसाहस्रंकिंकराणांतरस्विनाम् ॥ निर्ययुर्भवनात्तस्मात्कूटमुद्गरपाणयः ॥२५॥ महोदरामहादंष्ट्राघोररूपामहाबलाः ॥ युद्धाभिमनसःसर्वेहनूमद्ग्रहणोन्मुखाः ॥२६॥ तेकपिंतंसमासाद्यतोरणस्थमवस्थितम् ॥ अभिपेतुर्महाभागाःपतंगाइवपावकम् ॥२७॥ तेगदाभिर्विचित्राभिःपरिघैःकांचनांगदैः ॥ आजघ्नुर्वानरश्रेष्ठंशरैश्चादित्यसन्निभैः ॥ २८ ॥ मुद्गरैःपट्टिशैःशूलैःप्रासतोमरपाणयः ॥ परिवार्यहनूमंतंसहसातस्थुरग्रतः ॥२९॥ हनूमानपितेजस्वीश्रीमान्पर्वतसन्निभः ॥ क्षितावाविध्यलांगूलंननादचमहाध्वनिम् ॥३०॥ सभूत्वातुमहाकायोहनूमान्मारुतात्मजः ॥ पुच्छमास्फोटयामासलंकांशब्देनपूरयन् ॥३१॥ तस्यास्फोटितशब्देनमहताचानुनादिना ॥ पेतुर्विहंगागगनादुच्चैश्चेदमघोषयत् ॥३२॥ जयत्यतिबलोरामोलक्ष्मणश्चमहाबलः ॥ राजाजयतिसुग्रीवोराघवेणाभिपालितः ॥ ३३ ॥ दासोहंकोशलेंद्रस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ हनूमान्शत्रुसैन्यानांनिहंतामारुतात्मजः ॥ ३४ ॥ नरावणसहस्रंमेयुद्धेप्रतिबलंभवेत् ॥ शिलाभिश्चप्रहरतःपादपैश्चसहस्रशः ॥ ३५ ॥

तेजस्वी पवनकुमार हनुमान्‌जी भी पृथ्वीपर अपनी पूंछ पकड बडे भारी शब्दसे गर्जन करने लगे ॥३०॥ पवनकुमार हनुमान्‌जी बडी भारी देह धारण करते हुए भयंकर नादसे लंकाको पूर्ण करते अपनी पूंछको बार २ पृथ्वीपर पटकने लगे ॥३१॥ उनके उस भयंकर चिल्लाने और पूंछ पटकनेके शब्दसे उडते हुए पक्षी आकाशसे पृथ्वीपर गिरने लगे;फिर हनुमान्‌जी बडे शब्दसे पुकारतेहुएकि ॥३२॥ अतिबलवान् श्रीरामचन्द्रजीकी जय ! महाबलवान् लक्ष्मणजीकी जय !! राघव पालित सुग्रीवजीकी जय !!! ॥ ३३ ॥ हम अमित कर्म करनेवाले कोसलपति श्रीरामचन्द्रजीके दास हैं,हमारा नाम हनुमान् है,हम पवनके पुत्र समरमें शत्रुकी सेनाको संहार किया करते हैं ॥ ३४ ॥ इस समय हम संग्राममें सहस्र शिला और वृक्षोंका प्रहार करेंगे,तब एक रावणकी क्या चलाई,हजार रावणभी हमारी

समानता नहीं कर सकेंगे ॥ ३५ ॥ हम समस्त राक्षसोंके सामनेही लंकापुरीको पीस पासकर जानकीजीको प्रणाम कर अपने कार्यको साध यहांसे चले जायँगे ॥३६॥ कपिश्रेष्ठ हनुमानूजीका यह सिंहनाद सुन कर राक्षस लोग भयके मारे त्रासित होगये, और उन हनुमानूजीको सन्ध्याकालके मेघके समान उन राक्षसोंने ऊंचा देखा ॥३७॥ परन्तु अपने स्वामीकी आज्ञासे निःशंक होकर वे राक्षस अनेक प्रकारके भयंकर अस्त्र शस्त्र धारण करके चारों ओरसे हनुमानूजीपर धाये ॥ ३८ ॥ जब महावीरजीको राक्षसोंने चारों ओरसे घेर लिया, तब हनुमानूजीने उस फाटकके समीप रक्खा हुआ लोहेका एका भयंकर परिघ ग्रहण कर लिया ॥ ३९ ॥ विनतानंदन गरुडजी फडफडाते हुए सर्पको पकड जिस प्रकार आकाशमें उडकर घूमते हैं वैसेही पवनकुमार हनुमानजी इस परिघको ग्रहण करके निशाचरोंका संहार करतेकूदने फांदने लगे ॥४०॥ हजार नेत्रवाले इन्द्रजी वज्रसे जिसप्रकार दैत्योंका संहार करतेहैं; वीर पवनकुमार भी वैसेही आकाशमार्गमें

अर्दयित्वापुरीलंकामभिवाद्यचमैथिलीम् ॥ समृद्धार्थोगमिष्यामिमिषतांसर्वरक्षसाम् ॥३६॥ तस्यसन्नादशब्देनतेऽभवन्भयशंकिताः ॥ददृशुश्चह
नूमंतंसंध्यामेघमिवोन्नतम् ॥३७स्वामिसंदेशनिःशंकास्ततस्तेराक्षसाःकपिम् ॥ चित्रैःप्रहरणैर्भीमैरभिपेतुस्ततस्ततः ॥३८॥सतैःपरिवृतःशूरैःसर्वतः
समहाबलः ॥आससादायसंभीमंपरिघंतोरणाश्रितम् ॥ ३९ ॥सतंपरिघमादायजघानरजनीचरान् ॥ सपन्नगमिवादायस्फुरंतंविनतासुतः ॥४०॥
विचचारांबरेवीरःपरिगृह्यचमारुतिः ॥सूदयामासवज्रेणदैत्यानिवसहस्रदृक् ॥४१॥ सहत्वाराक्षसान्वीरःकिंकरान्मारुतात्मजः ॥ युद्धाकांक्षीमहा
वीरस्तोरणंसमवस्थितः ॥४२॥ ततस्तस्माद्भयान्मुक्ताःकतिचित्तत्रराक्षसाः ॥ निहतान्किंकरान्सर्वान्रावणायन्यवेदयन् ॥ ४३ ॥ सराक्षसा
नांनिहतंमहाबलंनिशम्यराजापरिवृत्तलोचनः ॥समादिदेशाप्रतिमंपराक्रमेप्रहस्तपुत्रंसमरेसुदुर्जयम् ॥४४॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मी०आदि०
च० सा० सुन्दरकांडे द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥४२॥ ततःसकिंकरान्हत्वाहनूमान्ध्यानमास्थितः ॥ वनंभग्नंमयाचैत्यप्रासादोनविनाशितः ॥ १ ॥

घूम घामकर इस परिघसे रावणके किंकर नाम राक्षसोंका नाश करने लगे ॥४१॥इसप्रकार उन अस्सी हजार किंकर नाम राक्षसोंको संहार महाबली पवन कुमार, युद्ध करनेकी इच्छासे फिर उसी तोरणपर चढकर बैठे ॥ ४२ ॥ उसके पीछे किसी प्रकारसे बचे बचाये अधमरे राक्षसोंने भयके मारे संग्रामभूमिसे भागकर रावणको यह संवाददिया, कि महाबलवान् राक्षस मारे गये ॥४३॥बडी भारी राक्षसीसेनाका संहार सुनकर राक्षसराजरावणके दोनों नेत्र घूमने लगे। और उसनेसंग्राममें जानेकेलिये अजीतप्रहस्तके बेटे जम्बुमालीनामराक्षसको आज्ञा दी ॥४४॥इत्यार्षेश्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०सुन्दरकांडेभाषायांद्विचत्वारिंशःसर्गः ॥४२॥
उसके पीछे हनुमानूजी उन अस्सी हजार किंकरोंका संहार करके यहविचार करने लगे कि, हमने वन तो तोड ताड डाला परन्तु राक्षसकुलके अधिष्ठाता देवता

लोगोंके मंदिर नहीं तोडे ॥१॥ इसलिये अभी बलको प्रगटकर इस मंदिरको भी तोडैं । वानरयूथपति हनुमानूजी मनही मन यह संकल्प कर बल दिखाया॥२॥ छलांग मार मेरु पर्वतके शिखरके समान ऊंचे उस राक्षस अधिष्ठाता देवताकेमंदिरपर पवनकुमार हनुमानूजी चढे ॥३॥ वानर केसरी पवनकुमार हनुमानूजी इस पर्वतके समान देवमंदिरपर चढ अतिशय तेज युक्त हुए दूसरे सूर्यके समान प्रकाशित हुए ॥४॥ इसके पीछे दुर्द्धर्ष हनुमानूजी उस मनोहर देवप्रसादको एकबार ही तोडकर, अपनी स्वाभाविक लक्ष्मीसे प्रज्वलित पारियात्रपर्वतके समान शोभायमान हुए ॥५॥ फिर हनुमानूजी निज प्रभावसे अपना शरीर बहुत ही बढाय निर्भयशब्दसे लंकाको पूर्ण करते हुए अपनी भुजाओंसे शब्द करने लगे ॥६॥ यहांतक कि, उनके उस श्रवणकठोर बडे भारी बाँहोंके शब्दसे मोहित होकर आका

तस्मात्प्रासादमद्यैवमिमंविध्वंसयाम्यहम् ॥ इतिसंचिन्त्यहनुमान्मनसादर्शयन्बलम् ॥२॥ चैत्यप्रासादमुत्प्लुत्यमेरुशृंगमिवोन्नतम् ॥ आरुरोहहरिश्रेष्ठोहनूमान्मारुतात्मजः ॥३॥ आरुह्यगिरिसंकाशंप्रासादंहरियूथपः ॥ बभौससुमहातेजाःप्रतिसूर्यइवोदितः ॥४॥ संप्रधृष्यतुदुर्धर्षश्चैत्यप्रासादमुन्नतम् ॥ हनूमान्प्रज्वलँल्लक्ष्म्यापारियात्रोपमोभवत् ॥ ५ ॥ सभूत्वासुमहाकायःप्रभावान्मारुतात्मजः ॥ धृष्टमास्फोटयामासलंकांशब्देनपूरयन् ॥ ६ ॥ तस्यास्फोटितशब्देनमहताश्रोत्रघातिना ॥ पेतुर्विहंगमास्तत्रचैत्यपालाश्चमोहिताः ॥ ७ ॥ अस्त्रविज्जयतांरामोलक्ष्मणश्चमहाबलः ॥ राजाजयतिसुग्रीवोराघवेणाभिपालितः ॥८॥ दासोहंकोशलेन्द्रस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ हनूमाञ्छत्रुसैन्यानांनिहंतामारुतात्मजः ॥ ९ ॥ नरावणसहस्रंमेयुद्धेप्रतिबलंभवेत् ॥ शिलाभिश्चप्रहरतःपादपैश्चसहस्रशः ॥१०॥ धर्षयित्वापुरींलंकामभिवाद्यचमैथिलीम् ॥ समृद्धार्थोगमिष्यामिमिषतांसर्वरक्षसाम् ॥११॥ एवमुक्त्वामहाकायश्चैत्यस्थोहरियूथपः ॥ ननादभीमनिर्ह्रादोरक्षसांजनयन्भयम् ॥ १२ ॥

शमें उडते हुए पक्षी और उस देवमंदिरके रक्षक सबही गिर पडे ॥७॥ अस्त्र जाननेवाले श्रीरामचन्द्रजीकी जय हो! महाबलवान् लक्ष्मणजीकी जय हो!! व श्रीरामचन्द्रजीके प्रतिपालित राजा सुग्रीवकी जय हो !!! ॥८॥ हम श्रेष्ठकर्म करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीके दास पवनके पुत्र, शत्रुकी सेनाके संहार करनेवाले, हनुमान् नाम वानर हैं॥९॥ हजार २ वृक्ष और शिलाओंका प्रहार करके जब हम संग्राम करेंगे तब एक रावणकी क्या चले हजार रावण भी हमारी समानता नहीं कर सकेंगे ॥१०॥ हम सब राक्षसोंके सम्मुख; समस्त लंकापुरीको मसल मसलाय जानकीजीको प्रणाम कर कार्यसाध अपने स्थानको चले जायँगे ॥११॥ यह कहकर देवमंदिरके

शिखरपर बैठे हुए बडे आकारवाले हनुमान्जी राक्षसोंके अन्तःकरणमें भय उपजाय घोर शब्दसे गर्जन करने लगे ॥१२॥ उस भयंकर शब्दको सुनकर सैकडों हजारों मंदिररक्षक विविध भाँतिके अस्त्र; शस्त्र,फांस,खड्ग और फरशे ग्रहण करके ॥१३॥ वहां आय हनुमान्जीको देख उनके ऊपर वह अस्त्र शस्त्र चलाने लगे,और विचित्र गदा सुवर्णके बंदोंसे बँधा हुआ शूल ॥ १४ ॥ और सूर्यके समान प्रभाववाले बाण चलायकर उनके ऊपर प्रहार करना आरंभ कर दिया। उस कालमें वह महाकाय राक्षस बल गंगाजीके बडे भारी कुण्डके समान ॥१५॥ हनुमान्जीको घेरकर परमशोभा धारण करता हुआ यह देखकर पवनसुत हनुमान्जी क्रोधित हो भयंकर रूप धर ॥ १६ ॥ बडे वेगसे प्रासादका स्वर्णसे बना एक खंभ उखाडकर मारुतसुवन ॥ १७ ॥ बडे वेगसे घुमाने लगे तब उस

तेननादेनमहताचैत्यपालाःशतंययुः ॥ गृहीत्वाविविधानस्त्रान्प्रासान्खड्गान्परश्वधान् ॥ १३ ॥ विसृजंतोमहाकायामारुतिंपर्यवारयन् तेगदा भिर्विचित्राभिः परिघैःकांचनांगदैः ॥ १४ ॥ आजग्मुर्वानरश्रेष्ठंबाणैश्चादित्यसन्निभैः ॥ आवर्तइवगंगायास्तोयस्यविपुलोमहान् ॥ १५ ॥ परि क्षिप्यहरिश्रेष्ठंसबभौरक्षसांगणः ॥ ततोवातात्मजःक्रुद्धोभीमरूपंसमास्थितः ॥ १६ ॥ प्रासादस्यमहांस्तस्यस्तंभंहेमपरिष्कृतम् ॥ उत्पाट यित्वावेगेनहनूमान्मारुतात्मजः ॥ १७ ॥ ततस्तंभ्रामयामासशतधारंमहाबलः ॥ तत्रचाग्निःसमभवत्प्रासादश्चाप्यदह्यत ॥१८॥ दह्यमानंत तोदृष्ट्वाप्रासादंहरियूथपः ॥ सराक्षसशतंहत्वावज्रेणेन्द्रइवासुरान् ॥१९॥ अंतरिक्षस्थितःश्रीमानिदंवचनमब्रवीत् ॥ मादृशानांसहस्राणिविसृष्टानि महात्मनाम् ॥२०॥ बलिनांवानरेंद्राणांसुग्रीववशवर्तिनाम् ॥ अटंतिवसुधांकृत्स्नांवयमन्येचवानराः ॥२१॥ दशनागबलाःकेचित्केचिद्दशगुणो त्तराः ॥ केचिन्नागसहस्रस्यबभूवुस्तुल्यविक्रमाः ॥२२॥ संतितौघबलाःकेचित्संतिवायुबलोपमाः ॥ अप्रमेयबलाःकेचित्तत्रासन्हरियूथपाः ॥२३॥

शत धारवाले खंभमेंसे अग्निकी चिनगारियोंने निकल कर उस समस्त मंदिरको भस्म कर दिया ॥१८॥ उस प्रासादको भस्म होता हुआ देखकर हनुमान्जीने सैकडों हजारों राक्षसोंको मारडाला कि, जिस प्रकार इन्द्रजी वज्र चलाय असुरोंको मार डालतेहैं ॥ १९ ॥ फिर हनुमान्जी आकाशमें टिककर यह कहने लगे कि, हमारे समान बलवान् महात्मा सैकडों हजारों वानर उत्पन्न हुए हैं ॥ २० ॥ वह सबही वानर सुग्रीवजीके वशमें हैं सो हम और दूसरे वह समस्त वानर गण समस्त पृथ्वीमंडलपर घूमते फिरते हैं ॥ २१ ॥ इस सब वानरोंमेंसे किसी २ का बल दश हाथीके समान किसीका शत हाथीके समान और किसीका हजार हाथीके समान, है ॥ २२ ॥ किसी २ का हाथियोंके समूहका बल है, कोई २ वायुके समान बलवाले हैं और किसी २ के बलका तो

कुछ अंतही नहीं है ॥ २३ ॥ इस प्रकारके नख और दांतोंको आयुध बनाये शत,हजार, दश हजार व लाख,करोडों; अरबों वानरोंके साथ ॥ २४ ॥ सुग्रीवजी यहां आयकर तुम सबको मार डालेंगे। महात्मा इक्ष्वाकुकुलमें उत्पन्न हुए महावीर श्रीरामचन्द्रजीके साथ जब कि, तुम्हारा वैरभाव हो गया है, तब इस लंकापुरीकी, तुम्हारी सबकी व रावणकी शीघ्रही समाप्ति होजायगी ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा०आदि०सुन्दरकांडे भाषायां त्रिचत्वारिंशः सर्गः॥४३॥ प्रहस्तका पुत्र महाबलवान् बडे२दांतवाला जम्बुमाली नाम राक्षस राक्षसपति रावण की आज्ञासे धनुष धारण कर नगरसे बाहर निकला ॥ १ ॥ उसके पहरे कपडे भी लाल थे;व लालही माला वह पहरे था कुण्डल युगल परम सुन्दर दोनों नेत्र बडे २ थे बडे भारी डील डौलवाला बडा कोपी अति अजीत ॥ २ ॥

ईदृग्विधैस्तुहरिभिर्वृतोदंतनखायुधैः ॥ शतैःशतसहस्रैश्चकोटिभिश्चायुतैरपि ॥२४॥ आगमिष्यतिसुग्रीवःसर्वेषांवोनिषूदनः ॥ नेयमस्तिपुरी लंकानयूयंनचरावणः ॥ यस्यत्विक्ष्वाकुवीरेणबद्धंवैरंमहात्मना ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा०सुंदरकांडे त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४३ ॥ संदिष्टोराक्षसेंद्रेणप्रहस्तस्यसुतोबली ॥ जंबुमालीमहादंष्ट्रोनिर्जगामधनुर्धरः ॥ १ ॥ रक्तमाल्यांबरधरःस्रग्वी रुचिरकुंडलः ॥ महान्विवृत्तनयनश्चंडःसमरदुर्जयः ॥२॥ धनुःशक्रधनुःप्रख्यंमहद्रुचिरसायकम् ॥ विस्फारयाणोवेगेनवज्राशनिसमस्वनम् ॥ ३ ॥ तस्यविस्फारघोषेणधनुषोमहतादिशः ॥ प्रदिशश्चनभश्चैवसहसासमपूर्यत ॥ ४ ॥ रथेनखरयुक्तेनतमागतमुदीक्ष्यसः ॥ हनूमान्वेग संपन्नोजहर्षचननादच॥५॥ ततोरणविटंकस्थंहनूमंतं महाकपिम् ॥ जंबुमालीमहातेजाविव्याधनिशितैःशरैः ॥ ६ ॥ अर्धचंद्रेणवदनेशिरस्ये केनकर्णिना ॥ बाह्वोर्विव्याधनाराचैर्दशभिस्तुकपीश्वरम् ॥ ७ ॥

धनुष इन्द्रधनुष के समान बडा जिसके देहमें वज्रके समान शब्द निकलता हुआ व उस धनुष पर सुन्दर बाण भी चढा हुआ ॥ ३ ॥ रणदुर्जय प्रचंड स्वभाव जम्बुमाली ऐसे बडे भारी धनुष को अतिवेगसे टंकार देता हुआ, धनुष की टंकारका वह घोर शब्द दिशा विदिशा और आकाश मंडलको सहसा पूर्ण कर देता हुआ ॥ ४ ॥ वेगवान् हनुमान्जी जम्बु मालीको गधेजुते रथपर सवार हो आया देखकर हर्षके मारे गर्जन करने लगे ॥ ५ ॥ हनुमान्जी उस समय तोरण खंभके ऊपर पक्षी के समान स्थापित की हुई कपोतपालिका पर बैठे थे। परमतेजस्वी जम्बुमालीने उनको बडे तीखे बाणोंसे वींध डाला ॥ ६ ॥ जम्बुमालीने अर्द्धचन्द्र बाणसे उनका वदन मंडल, अंकुशाका बाणसे मस्तक और दश बाणोंसे उनकी दोनों भुजाओंको भेदा ॥ ७ ॥

हनुमानजीकार अरुणमुखमण्डल बाणोंसे विद्ध होकर सूर्यकी किरण लगनेसे; शरद ऋतुके फूले कमलके समान शोभा धारण करता हुआ॥८॥ आकाशमें दिखलाई देता हुआ महाकमल सुवर्णबिन्दुओंसे सींचे जानेपर जिस प्रकार शोभित होताहै हनुमान्‌जीका अरुणवर्ण मुखमण्डलभी रुधिर लग कर वैसाही शोभायमान हुआ ॥९॥ तबहनुमान्‌जीने राक्षसोंके बाणोंसे घायलहोकरमहा कोपकर बगलमेंही रक्खी हुई एक बडी भारी शिलादेख॥१०॥अतिशीघ्रतासे उठायअति वेगसे उसको जम्बुमालीके ऊपर चलाया, बलवान् राक्षसने क्रोध करके दशबाण चलायउस शिलाको काटडाला॥११॥तबमहाबलवान् हनुमान्‌जीने अपनी चलाई शिलाको विफल देख कर बडा भारी शालका वृक्ष उखाड उसको बडे वीर्यसे घुमाया ॥१२॥ हनुमान्‌जीको शालका वृक्षघुमाते देखकरमहाबलवान् जम्बुमाली अनेक बाण चलाने लगा

तस्यतच्छुशुभेताम्रंशरेणाभिहतंमुखम् ॥ शरदीवांबुजंफुल्लंविद्धंभास्कररश्मिना ॥८॥ तत्तस्याक्तंरक्तेनरंजितंशुशुभेमुखम् ॥ यथाकाशेमहाप द्मंसिक्तंकांचनबिंदुभिः ॥९॥ चुकोपबाणाभिहतोराक्षसस्यमहाकपिः ॥ततःपार्श्वेतिविपुलांददर्शमहतींशिलाम् ॥१०॥ तरसातांसमुत्पाट्य चिक्षेपजववद्बली ॥ तांशरैर्दशभिःक्रुद्धस्ताडयामासराक्षसः ॥११॥ विपन्नंकर्मतद्दृष्ट्वाहनूमांश्चंडविक्रमः॥ सालंविपुलमुत्पाट्यभ्रामयामासवीर्यवान् ॥१२॥ भ्रामयंतंकपिंदृष्ट्वासालवृक्षंमहाबलम् ॥ चिक्षेपसुबहून्बाणाञ्जंबुमालीमहाबलः ॥१३॥ सालंचतुर्भिश्चिच्छेदवानरंपंचभिर्भुजे उरस्येकेनबाणेनदशभिस्तुस्तनांतरे ॥ १४ ॥ सशरैःपूरिततनुःक्रोधेनमहतावृतः ॥ तमेवपरिघंगृह्यभ्रामयासासवेगितः ॥ १५ ॥ अतिवेगोतिवेगेनभ्रामयित्वामहोत्कटः ॥ परिघंपातयामासजंबुमालेर्महोरसि ॥१६॥ तस्यचैवशिरोनास्तिनबाहूजानुनीनच ॥ नधनुर्नरथोनाश्वास्तत्राहश्यंतनेषव ॥ १७ ॥ सहतस्तरसातेनजंबुमालीमहारथः ॥ पपातनिहतोभूमौचूर्णितांगइवःद्रुमः ॥ १८॥ जंबुमालिंसुनिहतंकिंकरांश्चमहाबलान् ॥ चुक्रोधरावणःश्रुत्वाक्रोधसंरक्तलोचनः ॥ १९॥

॥१३॥ उसने चार बाणोंसे शालका वृक्ष काटकर, पांच बाणोंसे भुजाए बाणसे हृदय और दश बाणोंसे हनुमान्‌जीकी छातीको विद्ध किया ॥ १४ ॥ हनुमान्‌जी बाणजालसे सर्वांगमें विद्धहो अतिशय रोषके वशहो वही परिघ घुमाने लगे ॥ १५ ॥ इसके पीछे मदोन्मत्त अतिशय वेगशाली पवनकुमार हनुमान्‌जीने अतिवेगसे घुमाय कर वह परिघ जम्बुमालीकी विशाल छातीमें मारा ॥१६॥ उस परिघके लगतेही जम्बुमालीका मस्तक, बाहु, जानु धनु, रथ और अश्वगण व उसके बाण फिर यह कुछभी वहांपर न पायेगये ॥ १७ ॥महाबलवान् जम्बुमाली वानर हनुमान्‌जीसे शीघ्र मृतकऔर चूर्णित होकर टूटे हुयेवृक्षके समान पृथ्वी पर गिर पड़ा॥१८॥जम्बुमाली और महाबलवान्, अस्सी हजार किंकर नामक राक्षसोंके मरनेका वृत्तान्त सुनकर कोपके मारे रावणके दोनों नेत्र अतिशय अरुण

होकर घूमने लगे ॥ १९ ॥ इस प्रकारसे प्रहस्तके पुत्र महाबलवान् जम्बुमालीके मरजानेपर निशाचरपति रावणने अतिशय वीर्यवान् पराक्रम सम्पन्न अपने मन्त्रीके पुत्रोंको उसी समय युद्धमें जानेके लिये आज्ञा दी ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४४ ॥ तब येसूर्यके समान कांतिवाले सात मंत्रिपुत्र रावण कीप्रेरणासे अपने स्थानसे निकले ॥ १ ॥ वे सब महालवान् अस्त्रकुशल अस्त्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ, परस्पर जयके अभिलाषी, अतुल विक्रम सम्पन्न, धनुषधारी व तेजस्वी थे ॥२॥ सुवर्णके जालसे बने; ध्वजापताका युक्त, मेघके समान शब्द करते घोडे जुतेहुए बडे २ रथोंमें चढकर ॥३॥ विचित्र कांचनसे बने धनुषोंपर टंकारदेते हुए बडी भारी सेनाके साथ दामिनीयुक्त मेघ माला के समान अपने स्थानसे युद्ध करने के लिये

सरोषसंवर्तिततात्रलोचनःप्रहस्तपुत्रेनिहतेमहाबले॥अमात्यपुत्रानतिवीर्यविक्रमान्समादिदेशाशुनिशाचरेश्वरः ॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० च०सा०सुन्दरकाण्डे चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥४४॥ततस्तेराक्षसेंद्रेणचोदितामंत्रिणःसुताः॥निर्ययुर्भवनात्तस्मात्सप्तसप्तार्चिवर्चसः ॥१॥ महद्बलपरीवाराधनुष्मंतोमहाबलाः ॥ कृतास्त्रास्त्रविदांश्रेष्ठाःपरस्परजयैषिणः ॥ २ ॥ हेमजालपरिक्षिप्तैर्ध्वजवद्भिःपताकिभिः॥तोयदस्वननिर्घोषैर्वाजियुक्तैर्महारथैः ॥३॥ तप्तकांचनचित्राणिचापान्यमितविक्रमाः ॥ विस्फारयंतःसंहृष्टास्तडिद्वंतइवांबुदाः ॥४॥ जनन्यस्तास्ततस्तेषां विदित्वाकिंकरान्हतान् ॥ बभूवुःशोकसंभ्रांताःसबांधवसुहृज्जनाः ॥ ५ ॥ तेपरस्परसंघर्षास्तप्तकांचनभूषणाः ॥ अभिपेतुर्हनूमंतंतोरणस्थमवस्थितम् ॥ ६ ॥ सृजंतोबाणवृष्टिंतेरथगर्जितनिःस्वनाः ॥ प्रावृट्कालइवांभोदाविचेरुर्नैर्ऋतांबुदाः ॥७॥ अवकीर्णस्ततस्ताभिर्हनूमाञ्शरवृष्टिभिः ॥ अभवत्संवृताकारःशैलराडिववृष्टिभिः ॥ ८ ॥ सशरान्वंचयामासतेषामाशुचरःकपिः ॥रथवेगांश्चवीराणांविचरन्विमलेंबरे ॥ ९ ॥ सतैःक्रीडन्धनुष्मद्भिर्व्योम्निवीरःप्रकाशते ॥ धनुष्मद्भिर्यथामेघैर्मारुतःप्रभुरंबरे ॥१०॥

बाहर निकले ॥ ४ ॥ उनकी मातायें अस्सी हजार किंकरों की मृत्युका वृत्तान्त जानकरसुहृद और बन्धु बान्धवों के सहित शोकसे व्याकुलहुई ॥५॥ सुवर्णके गहनोंसे भूषित यह साथ मंत्रि पुत्र परस्पर आगे लडनेके लिये बढे जाते; फाटकके ऊपर अचलभावसे बैठे हुए हनुमान्जीकेसम्मुख हो॥६॥ रथगर्जनशब्दसे युक्त बाणोंकी वर्षा करने लगे और वर्षाकालके मेघपुंजोंकेसमान इधर उधर घूमने लगे ॥७॥ वेगवान हनुमानजी उनके चलाये नाराचोंसे ढककर वर्षाके जलसे व्याप्त पर्वतराजके समान न देख पडे ॥८॥ उसके पीछे हनुमानजी अति शीघ्रगतिसे विमल आकाशमें गमन करके, राक्षसलोगोंके बाणसमूह और रथके वेग दोनोंको निष्फल कर देते हुए, ॥९ ॥हनुमानजी उन धनुषधारी राक्षसोंके साथ आकाशमार्गमें खेल करते हुए, इन्द्रचापयुक्त मेघवृन्दके साथ विहार करते स्वामी पवनके

समान शोभायमान होनेलगे ॥१०॥ उसके पीछे शत्रुओंके तपानेवाले वीर्यवान् हनुमानजी घोर नाद करते हुए उस बडी भारी सेनाको त्रास उपजाय कर राक्षसोंकी ओरको बडे वेगसे दौडे ॥११॥ किसीके चपेट लगाई, किसीके लात जमाई और किसीके घूसा जडा, किसीको नखोंसे चीर फाड डाला ॥ १२ ॥ किसीको छातीकी चोटसे मसल डाला और किसीको दोनों जांघोंसे पीस दिया, और कोई२तो उनका गर्जनही सुन उसी स्थानमें पृथ्वीपर गिर पडे ॥१३॥ उसके पीछे मंत्रीके पुत्र जब इसप्रकारसे मृतक होकर गिर पडे, तब उनकी सब सेना भयसे पीडित होकर दशों दिशाओंको भाग खडी हुई ॥१४॥ हाथी विकट शब्द कर२के चिंघाडने लगे. घोडे उछल२पृथ्वी पर गिर गये; रथियोंके बैठनेकी टूटी बैठको व ध्वज और छत्रयुक्त रथसमूहोंसे पृथ्वी ढक गई ॥१५॥ रणभूमिके

सकृत्वानिनदंघोरंत्रासयंस्तांमहाचमूम् ॥ चकारहनुमान्वेगंतेषुरक्षस्सुवीर्यवान् ॥११॥ तलेनाभिहनत्कांश्चित्पादैःकांश्चित्परंतपः ॥ मुष्टिभि श्चाहनत्कांश्चिन्नखैःकांश्चिद्व्यदारयत् ॥ १२ ॥ प्रममाथोरसाकांश्चिदूरुभ्यामपरानपि ॥ केचित्तस्यैवनादेनतत्रैवपतिताभुवि ॥ १३ ॥ ततस्ते ष्ववपन्नेषुभूमौनिपतितेषुच ॥ तत्सैन्यमगमत्सर्वंदिशोदशभयार्दितम् ॥१४॥ विनेदुर्विस्वरंनागानिपेतुर्भुविवाजिनः ॥ भग्ननीडध्वजच्छत्रैर्भू श्चकीर्णाभवद्रथैः ॥ १५ ॥ स्रवतारुधिरेणाथस्रवंत्यो दर्शिताःपथि ॥ विविधैश्चस्वनैर्लंकाननादविकृतंतदा ॥ १६ ॥ सतान्प्रवृद्धान्विनि हत्यराक्षसान्महाबलश्चंडपराक्रमःकपिः ॥ युयुत्सुरन्यैःपुनरेवराक्षसैस्तदेववीरोभिजगामतोरणम् ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे पंचचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४५ ॥ ॥ छ ॥ हतान्मंत्रिसुतान्बुद्ध्वाकानरेणमहात्मना ॥ रावणः संवृताकारश्चकारमतिमुत्तमाम् ॥ १ ॥ सविरूपाक्षयूपाक्षौदुर्धर्षंचैवराक्षसम् ॥ प्रघसंभासकर्णंचपंचसेनाग्रनायकान् ॥ २ ॥ संदिदेशदशग्री वोवीरान्नयविशारदान् ॥ हनूमद्ग्रहणेव्यग्रान्वायुवेगसमान्युधि ॥ ३ ॥

मार्गमें रुधिरकी नदियें बहतीहुई दृष्टि आनेलगीं और समस्त लंका विविधभाँतिके विकट स्वरोंसे नादकर उठी ॥१६॥ प्रबल प्रतापशाली प्रचंडपराक्रमी वीर हनुमानजी प्रधान २ राक्षसोंका संहार करके फिर और राक्षसोंके साथ युद्ध करनेका अभिलाष करके कूदकर फिर उसी फाटक पर चढ गये ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० सुन्दरकांडे भाषायां पंचचत्वारिंश सर्गः ॥ ४५ ॥ महावीर पवनकुमार हनुमानजीसे मंत्रीके सातों पुत्रोंका माराजाना सुन कर रावण अपने मनके भयको छिपाय धैर्य धारण करता हुआ ॥ १ ॥ फिर वह रावण विरूपाक्ष, यूपाक्ष, दुर्द्धर्ष, प्रघस और भासकर्णइनपांचवीर्यवान सेनापतियोंको ॥ २ ॥ जो कि सबही नीतिविशारद सब कार्योंको शीघ्रतासे करनेवाले और युद्धमें पवनके वेगके तुल्य थे इन पांचों राक्षसोंको रावणने हनुमानजीके बांधनेके लिये

युद्धमें जानेकी आज्ञा दी और कहा ॥३॥ कि तुम सबही महाबलवान् सेनापति हो घोडे रथ व हाथियोंसे युक्त बडी भारी सेनाके साथ जाकर सिखावनदो ॥४॥ तुम सब लोग बडे यत्नसे उस वनवासी वानरके निकट जायकर अति सावधानीसे देशकालके अनुसार कार्य पूरा करना ॥५॥ उसके कर्मसे तर्क करते वह वानरही होगा ऐसा मैं नहीं मानताहूं सब तरहसे विचार होताहै कि,यह कोई एक महाबलवान प्राणी है॥६॥हमारा मन उसको वानर मानकर शुद्धनहीं होता है जिस प्रकारकी वार्ता आयकर उपस्थित हुई है इस बातसे तो हमारे मनमेंनहीं समाता कि वह वानर है ॥ ७ ॥ हमें तो यह जान पडताहै कि इस समय इन्द्रने हमलोगोंका संहार करनेके लिये अपने तपके प्रभावसे इस वानरको उत्पन्न किया होगा॥८॥नाग,यक्ष गन्धर्व,देव,असुर,महर्षि इन सबको हमारे पठाये हुए तुमलोगोंने एकही कालमें पराजित कियाहै॥९॥सो वह लोगभी हमारा किसी प्रकारसे अवश्य उपकार करेंगे ॥१०॥ निःसन्देह यह बात कुछ उनही लोगोंकी

यातसेनाग्रगाःसर्वेमहाबलपरिग्रहाः ॥ सवाजिरथमातंगाःसकपिःशास्यतामिति ॥४॥ यत्तैश्चखलुभाव्यंस्यात्तमासाद्यवनालयम् ॥ कर्मचापि समाधेयंदेशकालाविरोधितम् ॥५॥ नह्यहंतंकपिंमन्येकर्मणाप्रतितर्कयन् ॥ सर्वथातन्महद्भूतंमहाबलपरिग्रहम् ॥ ६ ॥वानरोयमितिज्ञात्वा नहिशुध्यतिमेमनः ॥७॥ नैवाहंतंकपिंमन्येयथेयंप्रस्तुताकथा ॥ ८ ॥ भवेदिंद्रेणवासृष्टमस्मदर्थंतपोबलात् ॥ सनागयक्षगंधर्वदेवासुरमहर्षयः ॥ ९ ॥ युष्माभिःप्रहितैःसर्वैर्मयासहविनिर्जिताः ॥ तैरवश्यंविधातव्यंव्यलीकंकिंचिदेवनः॥१०॥तदेवनात्रसंदेहःप्रसह्यपरिगृह्यताम् ॥ यातसे नाग्रगाःसर्वेमहाबलपरिगृहाः॥११॥ सवाजिरथमातंगाः सकपिःशास्यतामिति ॥ नावमन्योभवद्भिश्चकपिर्धीरपराक्रमः ॥१२॥ दृष्टाहिहरयः शीघ्रंमयाविपुलविक्रमाः ॥ बालीचसहसुग्रीवोजांबवांश्चमहाबलः ॥१३॥ नीलःसेनापतिश्चैवयेचान्येद्विविदादयः ॥ नैवतेषांगतिर्भीमानतेजो नपराक्रमः ॥ १४ ॥ नमतिर्नबलोत्साहोनरूपपरिकल्पनम् ॥ महत्सत्त्वमिदंज्ञेयंकपिरूपंव्यवस्थितम् ॥ १५ ॥ प्रयत्नंमहदास्थायक्रियताम स्यनिग्रहः॥ काममंलोकास्त्रयःसेंद्राःससुरासुरमानवाः॥ १६ ॥

कराईसी ज्ञात होतीहै इस लियेबलपूर्वक हनुमानको तुम बांधकर लेजाओ,तुम सबही महाबलवान् सेनाकेसेनापति हो ॥११॥हाथी,घोडे,रथ और बडी भारी सेनाके संग जायकर तुम उस वानरको शासन करोवह वानर यथार्थ वीरके समानपराक्रमवालाहै तुम लोगवानर जानके ही किसी प्रकारसे उनका कोई अपमान न करना ॥१२॥ प्रबलप्रतापशाली वाली तेजस्वी सुग्रीव और महाबलवान जाम्बुवान व और भी अनेक वेगवान् वानर हमने देखे हैं ॥१३॥ सेनापति नील और द्विविद इत्यादि उन वानरोंमें इनकीसी भयंकर गति न इनका सा तेजविक्रम॥१४॥ न मति,नबल उत्साह इसकेतुल्य वह वानररूप धारण करनेवाले हैं, इससे विदित होताहै कि यह वानररूप कोई बडा भारी जीव यहां आकर प्राप्त हुआहै ॥१५॥ तो तुम लोग अतिशय यत्न करके इस वानरको पकडना, अधिकसे

क्या कहें ? सुर, असुर, मनुष्य और इन्द्रके सहित तीनों लोक भी ॥१६॥ संग्राम भूमिमें तुम्हारे सामने खड़ा होनेकी सामर्थ्य नहीं रखते, तथापि युद्धमें जीतनेकी अभिलाषा किये नीतिका जाननेवाला पुरुष ॥१७॥ यत्नसहित अपने आत्माकी रक्षा करे क्योंकि, संग्राममें यह निश्चय नहीं हो सकता कि जीतही होगी क्योंकि यह चंचल विजयलक्ष्मी नजाने किसकी अंकशायिनी हो वह सब अपने स्वामी का वचन अंगीकार करके ॥१८॥ अग्निके समान तेजस्वी बलवान राक्षस महावेगसे चले रथ हाथी व अतिवेगवान् अनेक घोड़े भी उनके साथ चले ॥१९॥ अनेक प्रकारके तीखे अस्त्र शस्त्र धारण किये बडी भारी सेना भी उन लोगोंके साथ चली वहां जाय उन महावीरोंने अतिदीप्तियुक्त महा कपि हनुमान्जीको देखा ॥२०॥ उस समय वह अपने तेजके प्रभावसे प्रकाशित हो उदयाचलपर चढेहुए सूर्य भगवान्के समान

भवतामग्रतःस्थातुंनपर्याप्ताःरणाजिरे ॥ तथापितुनयज्ञेनजयमाकांक्षतारणे ॥१७॥ आत्मारक्ष्यःप्रयत्नेनयुद्धसिद्धिर्हिचंचला ॥ तेस्वामिवचनंसर्वेप्रतिगृह्यमहौजसः ॥ १८ ॥ समुत्पेतुर्महावेगाहुताशसमतेजसः ॥ रथैर्मत्तैर्नागैश्चवाजिभिश्चमहाजवैः ॥ १९ ॥ शस्त्रैश्चनिशितैस्तीक्ष्णैः सर्वैश्चोपहिताबलैः ॥ ततस्तुददृशुर्वीरादीप्यमानंमहाकपिम् ॥२०॥ रश्मिमंतमिवोद्यंतंस्वतेजोरश्मिमालिनम् ॥ तोरणस्थंमहावेगंमहासत्त्वंमहाबलम् ॥ २१ ॥ महामतिंमहोत्साहंमहाकायंमहाभुजम् ॥ तंसमीक्ष्यैवतेसर्वेदिक्षुसर्वास्ववस्थिताः ॥२२॥ तैस्तैःप्रहरणैर्भीमैरभिपेतुस्ततस्ततः ॥ तस्यपंचायसास्तीक्ष्णाःसिताः पीतमुखाःशराः ॥ शिरस्युत्पलपत्राभादुर्धरेणनिपातिताः ॥ २३ ॥ सतैःपंचभिराविद्धःशरैःशिरसिवानरः ॥उत्पपातनदन्व्योम्निदिशोदशविनादयन् ॥२४॥ ततस्तुदुर्धरोवीरःसरथःसज्जकार्मुकः ॥ किरन्छरशतैर्नैकैरभिपेदेमहाबलः ॥२५॥

फाटकके ऊपर चढे हुए बैठे थे ॥२१॥ महासत्त्व, महाबलवान्, महामति, महोत्साह महाकाय और महा भुजावाले हनुमान्जीका भयंकर रूप देखकर राक्षस लोग डरके मारे दूरहीसे खडे होकर ॥२२॥ चारोंओरसे भयानक अस्त्र शस्त्र चलाने लगे दुर्द्धरनामक राक्षसने लोहेके बने हुए पांच बाण हनुमान्जीके मस्तकमें मारे यह सब बाण तीक्ष्ण धारवाले मर्मविदारी सुवर्णलगे कमल पत्रके समान प्रभावाले थे॥२३॥जब हनुमान्जीके मस्तकमें वे पांचों बाण लगे तो वह नादकरके दशों दिशाओंको उसकेशब्दसे पूर्ण करते हुए आकाशमार्ग को कूद गये ॥२४॥ यह देख करवीर दुर्द्धर रथ पर खडा होकर धनुषमें रोदा चढाय शत २ बाण छोडता हुआ महा

बलवान् हनुमान्जीके निकट पहुँचा ॥२५॥ वर्षाकालके बीत जानेपर पवन जिसप्रकार जल वर्षानेवाले मेघोंको उडाय देता है,वैसेही पवनकुमार हनुमान्जीने बाण वर्षाते हुएदुर्द्धरके बाणोंको आकाशमार्गमेंही रहकर निवारण कर दिया;अर्थात् उसके बाण इनके न लगे बचाय गये ॥२६॥ उसके पीछे वीर्यवान् पवन कुमार हनुमान्जी दुर्द्धरके बहुत बाणोंसे पीडितहो फिर नाद करते हुए शरीरको बढाने लगे॥२७॥और सहसा अति दूर ऊपर को उछल पर्वतपर वज्र गिरनेके समान उस दुर्द्धरके रथपर महावेगसे गिरे ॥२८॥ हनुमान्जीके गिरनेसे उसके रथका चक्र व कूबर नष्ट होगया,आठ घोडेभी मसल गये,और दुर्द्धर भी उस टूटे चूर्ण हुए रथकेसाथ प्राण त्यागकर पृथ्वीपर गिरा ॥२९॥ शत्रु करके जीतनेकेअ योग्य अरिंदमनकारी विरूपाक्ष और यूपाक्ष यह दोनों राक्षस दुर्द्धरको पृथ्वीपर पडा देख महाक्रोध करते हुए उछले ॥ ३० ॥ उस समय महाबाहु पवनकुमार हनुमान्जी विमल आकाशमंडलमें टिके हुए थे,जो इन दोनों राक्षसोंने सहसा

सकपिर्वारयामासतंव्योम्निशरवर्षिणम्॥ वृष्टिमंतंपयोदांतेपयोदमिवमारुतः॥२६॥अर्द्यमानस्ततस्तेनदुर्धरेणानिलात्मजः॥चकारनिनदंभूयो व्यवर्धतचवीर्यवान् ॥ २७ ॥ सदूरंसहसोत्पत्यदुर्धरस्यरथेहरिः ॥ निपपातमहावेगोविद्युद्राशिर्गिराविव ॥२८॥ ततःसमथिताष्टाश्वंरथंभग्ना क्षकूबरम्॥ विहायन्यपतद्भूमौदुर्धरस्त्यक्तजीवितः ॥२९॥ तंविरूपाक्षयूपाक्षौदृष्ट्वानिपतितंभुवि ॥ तौजातरोषौदुर्धर्षावुत्पेततुररिंदमौ ॥३०॥ सताभ्यांसहसोत्प्लुत्यविष्ठितोविमलेऽबरे ॥ मुद्गराभ्यांमहाबाहुर्वक्षस्यभिहतःकपिः॥ ३१ ॥ तयोर्वेगवतोर्वेगंनिहत्यसमहाबलः ॥ निपपात पुनर्भूमौसुपर्णइववेगितः ॥ ३२ ॥ ससालवृक्षमासाद्यसमुत्पाट्यचवानरः ॥ तावुभौराक्षसौवीरौजघानपवनात्मजः ॥३३॥ ततस्तांस्त्रीन्हता ञ्ज्ञात्वावानरेणतरस्विना ॥ अभिगम्यमहावेगःप्रहस्यप्रघसोबली ॥ ३४ ॥ भासकर्णश्चसंक्रुद्धःशूलमादायवीर्यवान् ॥ एकतःकपिशार्दूल यशस्विनमवस्थितौ ॥ ३५ ॥ पट्टिशेनशिताग्रेणप्रघसःप्रत्यपोथयत ॥ भासकर्णश्चशूलेनराक्षसः कपिकूंजरम् ॥ ३६ ॥

उछल कर उनकी छातीमें दो मुद्गर मारे ॥३१॥ महाबलवान् वानर श्रेष्ठ हनुमान्जी उन वेगवान् दो राक्षसोंके अस्त्र व्यर्थ करते हुये फिर गरुड़जीके समान अति वेगसे पृथ्वी पर कूद आये ॥३२॥ और एक शाल वृक्ष के निकट जाय उसको उखाड़ उसीसे उन दो महावीर राक्षसोंको मार डाला ॥३३॥ उन तीन सेनापतियोंको मरा हुआ जानकर महा वेगवान् प्रघस नामक सेनापति हँसता हुआ हनुमान्जीके निकट पहुँचा ॥ ३४ और वीर्यवान् भासकर्ण भी शूल ग्रहण कर महाक्रोधित हो उनके निकट गया । अनन्तर एक दूसरेका सहाय होना विचार कर दोनों उन वानर श्रेष्ठ यशस्वी हनुमान्जीकोएक साथ ही घेरते हुए ॥३५॥ इन दोनोंमें प्रघसने तो तीक्ष्ण पट्टिशसे और भासकर्णने शूल ग्रहण करके कपिकुंजर हनुमान्जीको मारा ॥ ३६ ॥ शूल और पट्टिशके लग

नेसे हनुमान्‌जीके सर्वांगमें घाव हो गये और रुधिर बहने लगा तब बालसूर्यके समान द्युतिवाले हनुमान्‌जीने कोप किया ॥३७॥ मृग व्याल और वृक्षोंसे व्याप्त एक पर्वत का शिखर उखाड कर वानरोंमें कुंजर वीर हनुमान्‌जीने उन दोनों राक्षसोंको मारा; उस गिरिशिखरके लगनेसे वे दोनों तिल २ होकर चूर्ण होगये ॥ ३८ ॥ इस प्रकारसे जब पांचों सेनापति मारे गये, तब कपिकेशरी हनुमान्‌जीने बची बचाई सब सेनाको मार डाला ॥३९॥ और असुरोंके संहार कारी सहस्राक्ष इन्द्रजीके समान हनुमान्‌जीने घोडोंको उठाय घोडों पर देमारा जिससे वह घोडे मरे। हाथियोंको उठाय हाथियोंपर देमारा, योद्धालोगोंको उठाय योद्धाओंपर चलाया और रथोंको उठाय रथोंपर देमारा इस भाँतिसे सब सेनाकाविनाश किया ॥४०॥ मृतक पडे हुये घोडे, हाथी, राक्षसोंके व समूह टूटेहुए चक्र

सताभ्यांविक्षतैर्गात्रैरसृग्दिग्धतनूरुहः॥अभवद्वानरःक्रुद्धोबालसूर्यसमप्रभः ॥३७॥ समुत्पाट्यगिरेःशृंगंसमृगव्यालपादपम्॥जघानहनुमान्वीरोराक्षसौकपिकूंजरः ॥ गिरिशृंगसुनिष्पिष्टौतिलशस्तौबभूवतुः ॥ ३८ ॥ ततस्तेष्ववसन्नेषुसेनापतिषुपंचसु ॥ बलंतदवशेषंतुनाशयामासवानरः ॥ ३९ ॥ अश्वैरश्वान्गजैर्नागान्योधैर्योधान्रथैरथान् ॥ सकपिर्नाशयामाससहस्राक्षइवासुरान् ॥ ४० ॥ हतैर्नागैस्तुरङ्गैश्चभग्नाक्षैश्चमहारथैः ॥ हतैश्चराक्षसैर्भूमीरुद्धमार्गासमंततः ॥४१॥ ततः कपिस्तान्ध्वजिनीपतीन्रणेनिहत्यवीरान्सबलान्सवाहनान् ॥ तथैववीरःपरिगृह्यतोरणंकृतक्षणःकालइवप्रजाक्षये ॥४२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आ० च० सा० सुं० षट्चत्वारिंशःसर्गः ॥ ४६ ॥ सेनापतीन्पंचसतुप्रमापितान्हनूमतासानुचरान्सवाहनान्॥निशम्यराजासमरोद्धतोन्मुखंकुमारमक्षंप्रसमैक्षताक्षमम् ॥१॥ सतस्यदृष्ट्यर्पणसंप्रचोदितःप्रतापवन्कांचनचित्रकार्मुकः॥समुत्पपाताथसदस्युदीरितोद्विजातिमुख्यैर्हविषेवपावकः ॥२॥ ततोमहान्बालदिवाकरप्रभंप्रतप्तजांबूनदजालसंततम् रथंसमास्थायययौसवीर्यवान्महाहरिंतंप्रतिनैर्ऋतर्षभः ॥ ३ ॥

और महारथोंसे ढकजानेके कारण चारों ओरसे मार्ग बंद होगया ॥४१॥ इसप्रकार पांच सेनापतिवीरोंका बल और वाहनोंके सहित संहार करके वीर कपि प्रलयके कालके समान अवसर पायकर फिर उसी फाटक पर चढ बैठे ॥४२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षट्चत्वारिंशः सर्गः॥४६॥ राक्षसश्रेष्ठ रावण हनुमान्‌जीसे उक्त पांच सेनापतियोंको वाहन और अनुचर वर्गके सहित मारेहुए श्रवण कर सन्मुख बैठेहुए युद्धमें जानेके लिये तैयार कुमार अक्षको युद्धमें जानेकी आज्ञा देता हुआ॥१॥ यज्ञशालामें प्रधान२ब्राह्मणों कर के घृतकी सहायसे प्रेरित अनलके समान रावणके देखतेही विशेष भाँतिसे प्रेरित होकर प्रतापशाली अक्ष सुवर्णका धनुष धारण करउसी समयखडा होगया ॥ २ ॥ उसके पीछे महावीर्यवान् राक्षसश्रेष्ठ सूर्यके समान चमकते हुये रथपर सवार होकर

हनुमान्‌जीसे लडनेको चला, उसका यह रथ तपाये हुये सुवर्णसे बना और विचित्र था ॥३॥ यह रथ विपुल तपस्याके प्रभावसे प्राप्त हुआ था;यह रथ रत्न खचित ध्वजा पताकाओंसे सब प्रकार सजा हुआ था पवनकेसे वेगवान् आठ घोडेइसमें जुत रहे थे ॥ ४ ॥ देवासुरसे जीतनेके अयोग्य पर्वतादिकोंपर भी जिसकी गति न रुके, बिजलीके समान प्रभासम्पन्न आकाशमार्गमें भी घूमनेको समर्थ सुसज्जित तूण (तरकश) सहित आठ अङ्गोंसे युक्त यथाक्रमसे सुडौल बना हुआ शक्तितोमरादि अस्त्रोंसे परिपूर्ण ॥५॥ युद्धकी वस्तुओंसे भरा हुआ, सूर्यचन्द्रमाके समान द्युतिवाला, सुवर्णजालविभूषित और सूर्यके समान प्रभा सम्पन्न यह रथ था ॥६॥ देवताओंके समान विक्रम करनेवाला कुमार अक्ष ऐसे रथपर चढकर तुरंग,मातंग और महारथके शब्दसे पर्वतसहित भूमंडल और

ततस्तपःसंग्रहसंचयार्जितंप्रतप्तजांबूनदजालचित्रितम् ॥ पताकिनंरत्नवीभूषितध्वजंमनोजवाष्टाश्ववरैःसुयोजितम् ॥४॥सुरासुराधृष्यमसंगचा
रिणंतडित्प्रभंव्योमचरंसमाहितम् ॥सतूणमष्टासिनिबद्धबन्धुरंयथाक्रमावेशितशक्तितोमरम् ॥ ५ ॥ विराजमानंप्रतिपूर्णवस्तुनासहेमदाम्नाश
शिसूर्यवर्चसा ॥दिवाकराभंरथमास्थितस्ततःसनिर्जगामामरतुल्यविक्रमः ॥ ६ ॥ सपूरयन्खंचमहींचसाचलांतुरंगमातंगमहारथस्वनैः ॥ बलैः
समेतैःसहतोरणस्थितंसमर्थमासीनमुपागमत्कपिम् ॥७॥ सतंसमासाद्यहरिंहरीक्षणोयुगांतकालाग्निमिवप्रजाक्षये ॥ अवस्थितंविस्मितजातसंभ्र
मंसमैक्षताक्षोबहुमानचक्षुषा ॥ ८ ॥ सतस्यवेगंचकपेर्महात्मनःपराक्रमंचारिषुरावणात्मजः विचारयन्स्वंचबलंमहाबलोयुगक्षयेसूर्यइवाभि
वर्धत ॥ ९ ॥ सजातमन्युःप्रसमीक्ष्यविक्रमंस्थितःस्थिरःसंयतिदुर्निवारणम् ॥ समाहितात्माहनुमंतमाहवेप्रचोदयामासशितैःशरैस्त्रिभिः
॥ १० ॥ ततःकपिंतंप्रसमीक्ष्यगर्वितंजितश्रमंशत्रुपराजयोचितम् ॥ अवैक्षताक्षःसमुदीर्णमानसंसबाणपाणिःप्रगृहीतकार्मुकः ॥ ११ ॥

दशों दिशाओंको शब्दायमान करता हुआ एकत्र हुई सेनाकेसाथ अति समर्थ तोरण पर बैठे हुए हनुमान्‌जीके समीप आय पहुँचा ॥७॥ वहां प्रजागणोंके नाश कालमें प्रलयकी अग्निके समान रूप धारणकिये मुसकाते चतुर हनुमान्‌जीकोप्राप्तहोकर सिंहके समान क्रूर दृष्टिवाले अक्षने अपनी बडी आंखे फैलाय उनको बहुत देखा पवनकुमार हनुमान्‌जी अक्षको देखकर विस्मय और सम्भ्रमके वश हुये॥८॥महाबलवान् अक्ष,महात्मा हनुमान्‌जीका बल और शत्रुके प्रति पराक्रम और अपना बलाबल विचार करके युगक्षय कालके सूर्यके समान अपने तेजसे बढने लगा ॥९॥ और स्थिर भावसे टिककर कोपके वश हो रणसे विमुख नहोनेवाले पराक्रमसम्पन्न हनुमान्‌जीपर स्वस्थ चित्तसे पैनी धारवाले बाणोंका प्रहार कर उनको युद्ध करनेके लिये ललकारता हुआ ॥१०॥ अक्षने धनुषबाण हाथमें

थे और उनका मन भी बडे उत्साहसे लिया सो पवनकुमार हनुमान्जी शत्रुओंको हरानेके योग्यही पात्र थे इससे कुछ भी न थके थे,व अतिशय अहंकारवान् थे और उनका मन भी बडे उत्साहसे युक्त था॥११॥उनको उत्साहित देखकर सुवर्णका बना हुआ हृदयमें भूषणधारेबाजू मनोहर कुंडल,प्रचण्ड पराक्रम इन सबसे सजे अक्षने हनुमानूजीपर चढाई की, उसी समय दोनोंमें महाघोर युद्ध आरंभ हुआ,यह युद्ध देव और दानव गणोंको भी भयका देनेवाला हुआ ॥१२॥ वह दोनोंजने अपने ऐश्वर्यको दिखलाते हुए युद्ध करने लगे,उस समय पृथ्वीके सबही प्राणी चिल्लाने लगे,सूर्यभगवान्का तेज नष्ट हो गया,पवनकी गति बंद होगई,पर्वत काँपने लगे,आकाशमंडल शब्दसे पूर्ण होगया और समुद्र खलबलाय उठा ॥१३॥ फिर निशाना ताकने,बाण चढाने और बाण छोडनेमें चतुर अक्षने,सुवर्णमय पुंख सुन्दरमुख और पंखयुक्त बिषैले सर्पोंके समान तीनबाण कपिश्रेष्ठ हनुमानूजीके मस्तकमें मारे ॥१४॥ एकसाथ तीनों बाणोंके मस्तकमें लगनेसे हनुमानूजीके अंगसे रुधिर धारा बहने लगी

सहेमनिष्कांगदचारुकुंडलःसमाससादाशुपराक्रमःकपिम्॥ तयोर्बभूवाप्रतिमःसमागमःसुरासुराणामपिसंभ्रमप्रदः ॥१२॥ ररासभूमिर्नततापभानुमान्ववौनवायुःप्रचचालचाचलः ॥ कपेःकुमारस्यचवीर्यसंयुगंननादचद्यौरुदधिश्चचुक्षुभे ॥१३॥ सतस्यवीरःसुमुखान्पतत्रिणःसुवर्णपुंखान्सविषानिवोरगान्॥समाधिसंयोगविमोक्षतत्त्वविक्षरानथत्रीन्कपिमूर्ध्न्यताडयत्॥१४॥ सतैःशरैर्मूर्ध्निसमंनिपातैःक्षरन्नसृग्दिग्धविवृत्तनेत्रः॥नवोदितादित्यनिभःशरांशुमान्व्यराजतादित्यइवांशुमालिकः॥१५॥ततःप्लवंगाधिपमंत्रिसत्तमःसमीक्ष्यतंराजकरात्मजंरणे॥उदग्रचित्रायुधचित्रकार्मुकंजहर्षचापूर्यतचाहवोन्मुखः॥१६॥समंदराग्रस्थइवांशुमालीविवृद्धकोपोबलवीर्यसंवृतः॥कुमाररक्षंसवलंसवाहनंददाहनेत्राग्निमरीचिभिस्तदा ॥ १७ ॥ ततःसबाणासनशक्रकार्मुकःशरप्रवर्षोयुधिराक्षसांबुदः ॥ शरान्मुमोचाशुहरीश्वराचलेबलाहकोवृष्टिमिवाचलोत्तमे॥१८॥

उनके नेत्र घूमने लगे और सर्व शरीर लोहूलुहान होगया उस कालमें प्रभातकालके बाल सूर्यके समान अरुणवर्ण पवनकुमार हनुमान्जी शररूपी किरणमालासे ढककर रश्मिमाली सूर्यभगवानके समान शोभायमान होने लगे ॥१५॥उसके पीछे वानरराज सुग्रीवजीके प्रधान मंत्री हनुमानजी;राक्षसश्रेष्ठ रावणके पुत्र विचित्र धनुष और विचित्र तीक्ष्ण शस्त्र धारण किये अक्षको संग्रामभूमिमें अवलोकन करके हर्षित हुये और तत्काल युद्धके लिये तैयार होकर अपना रूप बढाते हुये ॥१६॥ हनुमानजीका बल, वीर्य, कोप यह समस्त ही बढने लगा। वह मन्दराचलपर टिके हुए सूर्यके समान नेत्रोंके द्वाराउठी हुई अग्निकी किरणोंसे अक्षकुमारको बल और बाहनोंके सहित भस्म करने लगे ॥ १७ ॥ मेघोंके समूह पर्वतश्रेष्ठ जिस प्रकार जलकी धारा वर्षाते हैं वैसेही शररूप वृष्टियुक्त निशाचर स्वरूप

विचित्र शरासनरूप इन्द्रधनुषसे शोभायमान होकर वानरश्रेष्ठ हनुमानरूप पर्वतपर बाण वर्षा करने लगे ॥१८॥ राक्षस अक्षका बल,वीर्य,सायक और तेज समस्तही बढा हुआ और संग्राममें विक्रम भी अतिप्रचंड था,उस अक्षकुमारको युद्धमें देख कपिश्रेष्ठ हनुमानूजी हर्षित हो मेघके समान गंभीर गर्जन कर उठे ॥१९॥ युद्धमें वीर्यसे गर्वित लाल नेत्रवाला अक्ष बलस्वभावके मारे अतिशय क्रोधित हो गज जिस प्रकार तृणसे ढके महाकूपमें चला जाता है,वैसेही योद्धाओंमें प्रधान हनुमानूजीको प्राप्त हुआ॥२०॥ जब वह अक्ष अतिबलसे बाणोंको छोडने लगे तब पवनकुमार हनुमानूजी भुजा और जांघे चलाय भयंकर रूप धारण कर परम उत्साह सहित तत्काल आकाशमंडलको छूते हुए मेघके समान शब्द कर उठे ॥ २१ ॥ उन्होंने जब इस प्रकारसे ऊपरको छलांग मारी; तो राक्षसश्रेष्ठ, रथिप्रधान, प्रतापशाली बलवान् रथी अक्षकुमार बाणोंकी वर्षा करता हुआ हनुमानजीको उनसे छाय अतिवेगसे उनके सामने हुआ उसने ऐसे बाण वर्षाये

कपिस्ततस्तंरणचंडविक्रमंप्रवृद्धतेजोबलवीर्यसायकम् ॥ कुमारमक्षंप्रसमीक्ष्यसंयुगेननादहर्षाद्घनतुल्यनिःस्वनः ॥१९॥ सबालभावाद्युधिवीर्यदर्पितःप्रवृद्धमन्युःक्षतजोपमेक्षणः ॥ समाससादाप्रतिमंरणेकपिंगजोमहाकूपमिवावृतंतृणैः ॥ २० ॥ सतेनबाणैःप्रसभंनिपातितैश्चकारनादंघननादनिःस्वनः ॥ समुत्सहेनाशुनभःसमारुजन्भुजोरुविक्षेपणघोरदर्शनः ॥ २१ ॥ तमुत्पततंसमभिद्रवद्बलीसराक्षसानांप्रवरःप्रतापवान् ॥ रथीरथिश्रेष्ठतरःकिरञ्छरैःपयोधरःशैलमिवाश्मवृष्टिभिः ॥२२॥ सतान्छरांस्तस्यहरिर्विमोक्षयंश्चचारवीरःपथिवायुसेविते ॥ शरांतरेमारुतवद्विनिष्पतन्मनोजवःसंयतिभीमविक्रमः ॥२३॥ तमात्तबाणासनमाहवोन्मुखंखमास्तृणंतंविविधैःशरोत्तमैः ॥ अवैक्षताक्षंबहुमानचक्षुषाजगामचिंतांसचमारुतात्मजः ॥२४॥ ततःशरैर्भिन्नभुजांतरःकपिःकुमारवर्येणमहात्मनानदन् ॥ महाभुजःकर्मविशेषतत्त्वविद्विचिंतयामासरणेपराक्रमम् ॥२५॥ अबालवद्बालदिवाकरप्रभःकरोत्ययंकर्ममहन्महाबलः ॥ नचास्यसर्वाहवकर्मशालिनःप्रमापणेमेमतिरत्रजायते ॥२६॥

कि; जैसे बादल ओले वर्षाकर पर्वतको जलसे गीला करता है ॥ २२ ॥ युद्धमें भयंकर विक्रमकारी और मनसे भी अधिक वेगगामी वीर कपि पवनकुमार हनुमानूजी पवनके समान बाणसमूहके बिचले मार्गमें प्राप्त होकर उसके समस्त शर व्यर्थ कर रणक्षेत्रमें घूमने लगे ॥ २३ ॥ युद्धमें तैयार अक्ष शरासन ग्रहण करके अनेक प्रकारके श्रेष्ठ शरसमूहोंसे आकाशको छाय देता हुआ । पवनकुमार हनुमानूजी यह बात देखकर अक्षके ऊपर आदर सहित दृष्टि डाल मनही मनमें चिन्ता करने लगे ॥ २४ ॥ कि इतनेहीमें महात्मा कुमारश्रेष्ठ अक्षने बाणोंसे इनकी भुजाका मध्यभाग घायल किया; कार्य करनेमें कुशल महाबाहु हनुमानूजी अक्षके युद्धविक्रमकी चिन्ता करके कहने लगे॥२५॥ कि इस महाबलवानूमहात्मा बलसूर्यके समान अक्षकुमारने वीर पुरुषके समान कार्य किया है. अब

भांतिके युद्ध कार्योंमें इसकी चतुरता है सो इस लिये हमारी इच्छा इस समय इसको वध करनेकी नहीं होती ॥ २६ ॥ यह अक्ष महात्मा, महावीर्यवान् युद्ध करनेको तत्पर, अतिशय क्लेशका सहनेवाला और भली भांतिसे कार्य करनेमें चतुर; कर्म कुशल और गुणवान् होनेसे नाग, यक्ष और ऋषिगण निःसन्देह इसकी पूजा किया करते हैं ॥ २७ ॥ पराक्रम और उत्साह युक्त भय व आकारादिके एक कालमेंही तिरोहित होनेसे यह वीरश्रेष्ठ सामने होकर हमारी ओर दृष्टि डाल रहा है। उस लघुहस्त निशाचरका पराक्रम देखकर देवदानवोंके मनभी कंपित हो जातेहैं ॥२८॥ परन्तु बात यह है कि जो हम इसको छोड देते हैं तो यह निशाचर निश्चय ही हमारा अनादर करेगा, क्योंकि युद्धमें इसका बीरत्व धीरे २ बढता ही जाता है आगेके बढजानेमें किसी प्रकारसे अब उदासीनता न करना चाहिये। अर्थात् यह न समझे कि आगकी जरासी चिनगारी क्या कर सकती है? इसलिये इसको हम अभी मार डालते हैं ॥२९॥ महाबलवान्

अयंमहात्मांचमहांश्चवीर्यतःसमाहितश्चातिसहश्चसंयुगे ॥ असंशयंकर्मगुणोदयादयंसनागयक्षैर्मुनिभिश्चपूजितः ॥ २७ ॥ पराक्रमोत्साविवृद्धमानसःसमीक्षतेमांप्रमुखोग्रतःस्थितः ॥ पराक्रमोह्यस्यमनांसिकंपयेत्सुरासुराणामपिशीघ्रकारिणः ॥२८॥ नखल्वयंनाभिभवेदुपेक्षितःपराक्रमोह्यस्यरणेविवर्धते ॥ प्रमापणंह्यस्यममाद्यरोचतेनवर्धमानोग्निरुपेक्षितुंक्षमः ॥२९॥ इतिप्रवेगंतुपरस्यतर्कयन्स्वकर्मयोगंचविधायवीर्यवान् ॥ चकारवेगंतुमहाबलस्तदामतिंचचक्रेस्यवधेतदानीम् ॥३०॥ सतस्यतानष्टवरान्महाहयान्समाहितान्भारसहान्विवर्तने ॥ जघानवीरःपथिवायुसेवितेतलप्रहारैःपवनात्मजःकपिः ॥३१॥ ततस्तलेनाहतोमहारथःसतस्यपिंगाधिपमंत्रिनिर्जितः ॥ सभग्ननीडःपरिवृत्तकूबरःपपातभूमौहतवाजिरंबरात् ॥३२॥ सतंपरित्यज्यमहारथोरथंसकार्मुकःखड्गधरःखमुत्पतन् ॥ तपोभियोगादृषिरुग्रवीर्यवान्विहायदेहंमरुतामिवालयम् ॥३३॥

और महावीर्यवान् हनुमानजी इसप्रकारसे शत्रुके पराक्रमकी चिन्ताकरके और अपने कर्तव्यका निश्चय कर अतिवेगसहित अक्षकुमारके संहारका विचार करते हुए ॥ ३० ॥ यह विचार कर पवनकुमार वीर्यवान् हनुमानजीने आकाशमार्गमेंही टिके २ बडाभार सहनेवाले व अनेक भांतिके चक्र देनेमें कुशल अक्षके रथके आठ घोडे अपनी लातके प्रहारसे मारडाले ॥ ३१ ॥ सुग्रीवजीके मंत्री हनुमानजी करके लातके प्रहारसे घायल और पराजित होनेसे अक्षकुमारका बडा भारी रथ बैठ कर और कूबर टूट जानेसे और घोडे मरनेसे शून्यहो पृथ्वीपर गिरपडा ॥३२॥ घोडे नष्ट होगये उग्रवीर्यवाले ऋषि जिस प्रकार तपके बलसे देह त्यागकर आकाश मार्गमें सुरलोकको चले जातेहैं; वैसेही महारथी अक्षकुमार टूटा रथ छोड़ धनुष बाण खड्ग धारण कर आकाशको कूद गया ॥३३॥ इस प्रकारसे

वह अक्षकुमार पक्षिराज गरुड और सिद्धगणोंसे सेवित आकाश मार्गमें विचरण करने लगा तब पवनसमान वेग और विक्रम सम्पन्न हनुमानजीने निकट पहुँचकर अतिदृढताईसे उसका चरण पकड लिया ॥ ३४ ॥ अण्डजेश्वर (पक्षियोंके राजा) गरुडजी जिस प्रकार महासर्पोंको पकड लेते हैं; ऐसेही अपने पिता पवनके समान वेगवान् वीर्यवान् महाकपि हनुमानजीने अक्षकुमारको पकड और हजारवार घुमाय पृथ्वीपर संग्रामभूमिमें फेंक दिया ॥ ३५ ॥ उसकी बाहैं, जांघैं, कमर, स्तन, टूट गये हड्डी और आंखोंका चूरा हो गया सब जोड अलग२होगये और जोडोंके बन्धन भी इधरउधर टूटकर गिर पडे इस प्रकारसे पवनकुमार हनुमानजीने उस राक्षसको मारडाला ॥ ३६॥ वह अक्ष इस अवस्थामें रुधिर वमन करता हुवा पृथ्वीपर गिर पडा महाकपि हनुमानने पृथ्वीपर पटक फिर उसके ऊपर कूद कर राक्षसपति रावणको महाभय उपजाया, कुमार अक्षके मरजानेपर महर्षि गण ज्योतिषचक्रके ग्रहगण, यक्ष, और पन्नगगण इन्द्रसहित देवताओंके वृन्द

कपिस्ततस्तंविचरंतमंबरेपतत्रिराजानिलसिद्धसेविते॥ समेत्यतंमारुतवेगविक्रमःक्रमेणजग्राहचपादयोर्दृढम्॥३४॥सतंसमाविध्यसहस्रशःकपिर्महोरगंगृह्यइवांडजेश्वरः ॥ मुमोचवेगात्पितृतुल्यविक्रमोमहीतलेसंयतिवानरोत्तमः ॥३५॥ सभग्नबाहूरुकटीपयोधरःक्षरन्नसृङ्निर्मथितास्थिलोचनः ॥ संभिन्नसंधिःप्रविकीर्णबंधनोहतःक्षितौवायुसुतेनराक्षसः॥३६॥महाकपिर्भूमितलेनिपीड्यतंचकाररक्षोधिपतेर्महद्भयम् ॥ महर्षिभिश्चक्रचरैःसमागतैःसमेत्यभूतैश्चसयक्षपन्नगैः ॥ सुरैश्चसेंद्रैर्भृशजातविस्मयैर्हतेकुमारेसकपिर्निरीक्षितः॥३७॥निहत्यतंवज्रिसुतोपमंरणेकुमारमक्षंक्षतजोपमेक्षणम् ॥ तदेववीरोभिजगामतोरणंकृतक्षणःकालइवप्रजाक्षये ॥ ३८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥४७॥ ततस्तुरक्षोधिपतिर्महात्माहनूमताक्षेनिहतेकुमारे ॥ मनःसमाधायसदेवकल्पंसमादिदेशेंद्रजितंसरोषः ॥१॥ त्वमस्त्रविच्छस्त्रभृतांवरिष्ठःसुरासुराणामपिशोकदाता ॥ सुरेषुसेंद्रेषुचदृष्टकर्मापितामहाराधनसंचितास्त्रः॥२॥

आयकर अतिशय विस्मय युक्त हो हनुमानजीको देखने लगे ॥३७॥ उस काल इन्द्रके पुत्र जयन्तके समान पराक्रम करनेवाले लालनेत्रयुक्त अक्षको महावीर हनुमानजी समरमें संहार करके प्रलयकालके समान समयकी बाट जोहनेके लिये फिर उस तोरणपर बैठ गये ॥ ३८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥४७॥ जब हनुमानजीने रणमें कुमार अक्षको मारडाला, तब राक्षसोंके पति महात्मा रावणने अपने मनके शोक वेगको रोक देवताओंके समान अपनेपुत्र इन्द्रजीतको क्रोधके वशहो युद्धमें जानेको आज्ञा दी ॥ १ ॥ रावणने मेघनादसे कहा कि; पुत्र तुम सब अस्त्रोंके जाननेवाले और सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ सुर असुरलोगोंको भी कँपानेवाले; इंद्रादि समस्तही देवताओंने तुम्हारे पराक्रमको समरमें देखा है और ब्रह्माजीकी

आराधना करके तुमने ब्रह्मास्त्र भी प्राप्त कर लिया है ॥ २ ॥ तुम्हारे अस्त्रके बलको प्राप्त हो देवराज इन्द्रजीके आश्रित उनचास पवनोंके साथ देवतालोग भी
युद्धमें टिकनेको समर्थ नहीं हैं ॥ ३ ॥ तुम्हारे सिवाय त्रिलोकमें ऐसा कोई भी नहीं है,जो युद्धमें न थके तुम अपनी बाँहोंके वीर और तपोबलसे सब भाँति
रक्षित हो असाधारण बुद्धि शक्ति सम्पन्न और देशकालकेजानने वालोंमें प्रधान हो ॥४॥ युद्धमें ऐसा कोई कार्य नहीं है कि जिसको तुम न कर सकते हो।
बुद्धिके साथ विचार करके समस्त राजकार्यके निर्वाह करनेको तुममें शक्ति है, त्रिभुवनमे ऐसा कोई नहीं है कि जो पुरुष तुम्हारे बाहुबल और अस्त्रबलको न
जानता हो ॥ ५॥ तुम्हारा तप, बल पराक्रम और युद्धमें अस्त्र बल यह सबही हमारे समान हैं, रणक्षेत्रमें जानेसे निश्चयही जय होना विचार कर हमारा
मन कुछ भी नहीं ऊबता ॥६॥ अस्सी हजार किंकर गण, जम्बुमाली, पांच सेनापति और मंत्रियोंके पुत्रगण यह सब ही मारे गये।॥७॥हाथी,घोडे और रथ

त्वदस्त्रबलमासाद्यससुराःसमरुद्गणाः॥नशेकुःसमरेस्थातुंसुरेश्वरसमाश्रिताः॥३॥नकश्चित्त्रिषुलोकेषुसंयुगेनगतश्रमः॥भुजवीर्याभिगुप्तश्चतपसा
चाभिरक्षितः॥ देशकालप्रधानश्चत्वमेवमतिसत्तमः ॥४॥ नतेस्त्यशक्यंसमरेषुकर्मणांनतेस्त्यकार्यमतिपूर्वमंत्रणे ॥ नसोस्तिकश्चित्त्रिषुसंग्रहेषु
नवेदयस्तेस्त्रबलंबलंच॥५॥ममानुरूपंतपसोबलंचतेपराक्रमश्चास्त्रबलंचसंयुगे ॥ नत्वांसमासाद्यरणावमर्देमनःश्रमंगच्छतिनिश्चितार्थम् ॥ ६ ॥
निहताःकिंकराःसर्वेजंबुमालीचराक्षसाः ॥ अमात्यपुत्रावीराश्चपंचसेनाग्रगामिनः॥७॥बलानिसुसमृद्धानिशाश्वनागरथानिच॥महोदरश्चशयि
तःकुमारोऽक्षश्चसूदितः ॥ नतुतेष्वेवमेसारोयस्त्वय्यरिनिसूदन ॥८॥ इदंचदृष्ट्वानिहतंमहद्बलंकपेःप्रभावंचपराक्रमंच ॥ त्वमात्मनश्चापिनिरी
क्ष्यसारंकुरुष्ववेगंस्वबलानुरूपम् ॥९॥ बलावमर्दैस्त्वयिसन्निकृष्टेयथागतेशाम्यतिशांतशत्रुः ॥ तथासमीक्ष्यात्मबलंपरंचसमारभस्वास्त्रभृतां
वरिष्ठ ॥ १० ॥ नवीरसेनागणशोच्यवंतिनवज्रमादायविशालसारम् ॥ नमारुतस्यास्तिगतिप्रमाणंनचाग्निकल्पःकरणेनहंतुम् ॥ ११ ॥

सहित परम समृद्धि सम्पन्न सेना और महोदर व तुम्हारा सहोदर अक्षकुमार यह सबही मारे गये. परन्तु हे शत्रुओंके मारनेवाले ! उन लोगोंमें तुम्हारे समान बलका
होना हम नहीं मानते, तुम उनसबसे बली हो ॥८॥ इस समय उस वानरका प्रभाव व पराक्रम और तुम अपनी अति श्रेष्ठ बडीभारी सेनाका मारा जाना इत्यादि
देख भाल सोच विचार कर सामर्थ्यके अनुसार बल दिखाओ॥९॥हे अस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ ! तुम्हारे युद्धके लिये तैयार हो वह पहुंचनेपर बहुत सारी सेना भी न
मारी जाय और बलका क्षय होनेमें शत्रुभी क्षीण होजाय,इसही प्रकारसे अपनेबल और पराया बल देखकर तुम कार्य प्रारंभ करो ॥ १० ॥ हे वीर ! साथमें
सेना ले जानेका कुछ प्रयोजन नहीं हैं, क्योंकि सेना भागती हैं तो झुण्डके झुण्ड होकर भाग निकलती है और सारवान अस्त्र शस्त्रोंके संगले जानेकी कुछ आव
श्यकता नहीं क्योंकि, वह अस्त्र शस्त्र भी टूट टाट जातेहैं, और हनुमान्‌के बलका भी कुछ ठिकाना नहीं। अधिक क्या कहें उस अग्निसमान वानरको शस्त्रादिकोंसे

संहार करना कठिन है ॥ ११ ॥ अब हमने जो कुछ कहा उसको स्थिर चित्त से विचार करके तुमको अपना कार्य सिद्ध करना पडेगा, यह विचारकर मन लगाय इस धनुषका दिव्य वीर्य स्मरण कर युद्धमें जान निर्विघ्न अपना कार्य पूरा करो ॥ १२ ॥ तुमको युद्धमें भेजना किसी प्रकारसे हमको उचित नहीं है, परन्तु क्या कियाजाय यही राज धर्मकी विधि और क्षत्रियोंके लिये शास्त्रसम्मत वार्त्ता है ॥ १३ ॥ हे शत्रुओंके नाश करनेवाले ! विविध शास्त्रोंमें और युद्धके विषयमें भलीभाँति चतुरता प्राप्त कर लेनी चाहिये जो पुरुष संग्राममें विजय प्राप्त होनेकी इच्छा करता है उसको इन सब बातोंमे ज्ञान प्राप्त कर लेना कर्त्तव्य है ॥ १४ ॥ देवताओंके समान प्रभाववाले इन्द्रजीतने पिता का वचन श्रवण कर युद्धमें कृतनिश्चय हो विना क्षण भरका विलम्ब किये रावणकी परिक्रमा की ॥ १५ ॥

तमेवमर्थंप्रसमीक्ष्यसम्यक्स्वकर्मसाम्याद्धिसमाहितात्मा ॥ स्मरंश्चदिव्यंधनुषोस्ववीर्यंव्रजाक्षतंकर्मसमारभस्व ॥१२॥ नखल्वियंमतिश्रेष्ठाय त्वांसंप्रेषयाम्यहम् ॥ इयंचराजधर्माणांक्षत्रस्यचमतिर्मता ॥१३॥ नानाशस्त्रेषुसंग्रामेवैशारद्यमरिंदम ॥ अवश्यमेवबोद्धव्यंकाम्यश्चविजयोरणे ॥ १४ ॥ ततःपितुस्तद्वचनंनिशम्यप्रदक्षिणंदक्षसुतप्रभावः ॥ चकारभर्तारमतित्वरेणरणायवीरः प्रतिपन्नबुद्धिः ॥१५॥ ततस्तैः स्वगणैरिष्टै रिंद्रजित्प्रतिपूजितः ॥ युद्धोद्धतकृतोत्साहःसंग्राममंसंप्रपद्यत ॥१६॥ श्रीमान्पद्मविशालाक्षोराक्षसाधिपतेःसुतः ॥ निर्जगाममहातेजाः समुद्रइव पर्वणि ॥१७॥ सपक्षिराजोपमतुल्यवेगैर्व्यालैश्चतुर्भिःसतुतीक्ष्णदंष्ट्रैः ॥ रथंसमायुक्तमसह्यवेगःसमारुरोहेंद्रजिदिंद्रकल्पः ॥ १८ ॥ सरथीध न्विनांश्रेष्ठःशस्त्रज्ञोऽस्त्रविदांवरः ॥ रथेनाभिययौक्षिप्रंहनूमान्यत्रसोऽभवत् ॥ १९ ॥

इन्द्रजीत जैसा युद्धमें बढा हुआ था वैसा ही उत्साहवाला था वह अपने बलवाले राक्षसगणों करके सम्मानित होकर युद्धमें जाता हुआ ॥ १६ ॥ पर्वके समय समुद्र जिस प्रकारसे बढता है कमलदलके समान बडे २ नेत्रवाला परमतेजस्वी श्रीमान् राक्षसराजनंदन मेघनाद भी वैसाही रण उत्साहसे परिपूर्ण होकर युद्धके लिये निकला ॥ १७ ॥ अनन्तर इन्द्रके समान असह्य वेगवाला इन्द्रजीत पक्षिराज गरुडके समान वेगशाली तेज डाढवाले चार सर्प जिसमें जुते हुए ऐसे रथपर सवार हुआ ॥ १८ ॥ समस्त धनुषधारी और सम्पूर्ण अस्त्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ, शस्त्रज्ञान सम्पन्न और युद्ध विशारद इन्द्रजीत रथपर चढ शीघ्र तासे गमन कर जहाँ हनुमान्जी बैठे थे उस स्थानमें पहुँचा ॥ १९ ॥

वानरवीर हनुमानजी उसके रथका शब्द श्रवण और धनुषकी टंकारका शब्द करके अतिशय हर्षित हुए ॥ २० ॥ रणपंडित मेघषनाद धनुष बाण और तेज फलके लगे हुए शर ग्रहण करके हनुमानजी के सामने चला ॥ २१ ॥ जिस समय वह मेघनाद हर्ष सहित बाण लेकर निकला, उस समय दशों दिशा मलीन होगई, शृगाल इत्यादि पशुगण वारंवार चिल्लायकर भयंकर शब्द करने लगे ॥ २२ ॥ नागगण, पशुगण, महर्षिगण, ग्रहगण और सिद्धगण वहां युद्ध देखनेके लिये आये और आकाशमें पक्षिगण उडते २ संग्राम होगा इस हर्षके मारे ऊंचे शब्दसे शब्द करने लगे ॥ २३ ॥ इस ओर इन्द्रजीतका रथ बड़ी शीघ्रताके साथ आता हुआ देखकर अति वेगसे गंभीर गर्जन करते हुये महावीरजी बढने लगे ॥ २४ ॥ विचित्र धनुषधारी इन्द्रजीत दिव्य रथपर सवार होकर,

सतस्यरथनिर्घोषंज्यास्वनंकार्मुकस्यच ॥ निशम्यहरिवीरोसौसंप्रहृष्टतरोऽभवत् ॥२०॥ इंद्रजिच्चापमादायशितशल्यांश्चसायकान् ॥ हनूमंतमभिप्रेत्यजगामरणपंडितः ॥२१॥ तस्मिंस्ततःसंयतिजातहर्षेरणायनिर्गच्छतिबाणपाणौ ॥ दिशश्चसर्वाःकलुषाबभूवुर्मृगाश्चरौद्राबहुधाविनेदुः ॥२२॥ समागतास्तत्रतुनागयक्षामहर्षयश्चक्रचराश्चसिद्धाः ॥ नभःसमावृत्यचपक्षिसंघाविनेदुरुच्चैःपरमप्रहृष्टाः ॥२३॥ आयांतंसरथंदृष्ट्वातूर्णमिंद्रध्वजंकपिः ॥ ननादचमहानादंव्यवर्धतचवेगवान् ॥२४॥ इंद्रजित्सरथंदिव्यमाश्रितश्चित्रकार्मुकः ॥ धनुर्विस्फारयामासतडिदूर्जितनिःस्वनम् ॥२५ ॥ ततःसमेतावतितीक्ष्णवेगौमहाबलौतौरणनिर्विशंकौ ॥ कपिश्चरक्षोधिपतेस्तनूजः सुरासुरेंद्राविवबद्धवैरौ ॥२६॥ सतस्यवीरस्यमहारथस्यधनुष्मतःसंयतिसंमतस्य ॥ शरप्रवेगंव्यहनत्प्रवृद्धश्चचारमार्गेपितुरप्रमेयः ॥२७॥ ततःशरानायततीक्ष्णशल्यान्सुपत्रिणःकांचनचित्रपुंखान् ॥ मुमोचवीरःपरवीरहंतासुसंततान्वज्रसमानवेगान् ॥ २८॥ ततःसतत्स्यंदननिःस्वनंचमृदंगभेरीपटहस्वनंच ॥ विकृष्यमाणस्यचकार्मुकस्यनिशम्यघोषंपुनरुत्पपात ॥ २९ ॥

वज्रके समान गंभीर शब्द युक्त सुन्दर धनुष पर टंकारको देता हुआ ॥ २५ ॥ उसके पीछे वैर बांधे हुए दैत्यराज और इन्द्र के समान दोनोंजने युद्ध करने लगे । वह दोनों जनेही तीक्ष्ण वेग युद्ध महाबलवान् और युद्ध में निडर चित्त वाले थे ॥२६॥ अद्वितीय वीर महाकपि हनुमानजी बहुत लंबे चौडे हो कर संग्राम करने में चतुर, वीर धनुष धारी महारथी इन्द्रजीत के बाणोंका वेग विफल करके पवनके मार्ग में विचरण करने लगे ॥२७॥ यह देखकर परवीरघाती इन्द्रजीतने बहुतसे बाण छोडे यह समस्त बाण बडे लम्बे चौडे तेज फलके लगे सुन्दर पंखयुक्त सुवर्णसे चित्रित और वज्रके समान वेगवान् थे ॥ २८ ॥ हनुमानजी उसके रथ, मृदंग भेरी, नगाडे खिंचते हुए धनुषका घोर शब्द श्रवण करके फिर उछल गये ॥ २९ ॥

इन्द्रजीत निशानेकी ओर स्थिर हो रहा था, तथापि हनुमानजी उसके बाणोंको व्यर्थकर शीघ्रतासे उन बाणोंके दूरही दूर घूमने लगे ॥३०॥ और फिर उन समस्त बाणोंके सन्मुख होकर बाण छोडनेके समय दोनों हाथोंको फैलाय उनको पकडकर मेघनादके सब बाणोंको विफल कर देते हुए कूदे ॥३१॥ वह दोनोंही बलवान् और युद्ध विशारद वीर थे वह दोनोंही वीर सब प्राणियोंके मनको हरनेवाला अति श्रेष्ठ युद्ध करने लगे ॥३२॥ राक्षसने तो यह भेद न पाया कि, वह हनुमान कैसे हमारे बाणोंको बचा जाते हैं, और हनुमानजीने यह न जाना कि, वह किस भाँति इतनी शीघ्रतासे बाण चलायेही जाता है। दोनों जनेही देवताओंके समान पराक्रम सम्पन्न थे, युद्ध करते हुए दोनोंही एक दूसरेके लिये सहनेके अयोग्य हो गये ॥३३॥ उसके पीछे महात्मा राक्षसराजका पुत्र मेघनाद बहुतेरे अमोघ बाण (विफल न होनेवाले) चलानेपर भी हनुमान्जीको न बिंधा हुआ देखकर इनका रूप जाननेके लिये ध्यान योगका आश्रय ले एकाग्र चित्तसे चिन्ता करने

शरणामंतरेष्वाशुव्यावर्तत महाकपिः ॥ हरिस्तस्याभिलक्ष्यस्य मोक्षयल्लँक्ष्यसंग्रहम् ॥३०॥ शराणामग्रतस्तस्य पुनः समभिवर्तत ॥ प्रसार्य हस्तौ हनुमानुत्पपातानिलात्मजः ॥ ३१ ॥ तावुभौ वेगसंपन्नौ रणकर्मविशारदौ ॥ सर्वभूतमनोग्राहि चक्रतुर्युद्धमुत्तमम् ॥ ३२ ॥ हनूमतो वेद न राक्षसोंतरं न मारुतिस्तस्य महात्मनोऽतरम् ॥ परस्परं निर्विषहौ बभूवतुः समेत्य तौ देवसमानविक्रमौ ॥३३॥ ततस्तु लक्ष्ये स विहन्यमाने शरेष्वमोघेषु च संपतत्सु ॥ जगाम चिंतां महतीं महात्मा समाधिसंयोगसमाहितात्मा ॥३४॥ ततो मतिं राक्षसराजसूनुश्चकार तस्मिन्हरिवीरमुख्ये ॥ अवध्यतां तस्य कपेः समीक्ष्य कथं निगच्छेदिति निग्रहार्थम् ॥३५॥ ततः पैतामहं वीरः सोऽस्त्रमस्त्रविदां वरः ॥ संदधे सुमहातेजास्तं हरिप्रवरं प्रति ॥ ३६ ॥ अवध्योयमिति ज्ञात्वा तमस्त्रेणास्त्रतत्त्ववित् ॥ निजग्राह महाबाहुं मारुतात्मजमिंद्रजित् ॥३७॥ तेन बद्धस्ततोऽस्त्रेण राक्षसेन स वानरः ॥ अभवन्निर्विचेष्टश्च पपात च महीतले ॥ ३८ ॥ ततोथ बुद्ध्वा स तदस्त्रबंधं प्रभोः प्रभावाद्विगताल्पवेगः ॥ पितामहानुग्रहमात्मनश्च विचिंतयामास हरिप्रवीरः ॥ ३९ ॥

लगा ॥३४॥ फिर ध्यानयोगसे हनुमानजीको अवध्य जानकर इनके पकडनेको क्या उपाय करना चाहिये इस विषयका विचार मेघनाद करने लगा ॥३५॥ इस प्रकारसे विचार करके अस्त्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ मेघनादने पितामह ब्रह्माजीके दिये हुये ब्रह्मास्त्रको हनुमानजीके ऊपर चढाया ॥३६॥ पवनकुमार हनुमानजीको ब्रह्मास्त्रसे भी अवध्य जान अस्त्रका मर्म जाननेवाले महाबाहु रावणके पुत्र मेघनादने ब्रह्मास्त्रसे हनुमानजीको बांध लिया ॥३७॥ राक्षस मेघनाद करके जब ब्रह्मास्त्रसे वानरश्रेष्ठ हनुमानजी बांधे जाकर एक बारही चेष्टा रहित होकर पृथ्वीपर गिर पडे॥३८॥ और फिर सँभलकर अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके प्रभावसे इस अस्त्रको अजमाया तो अपना वेग कुछ भी कम न पाया परन्तु ब्रह्माजीका वरदानी अस्त्र जान अपनेपर उनका बडा अनुग्रह माना; वानर श्रेष्ठ हनुमानजी

ब्रह्मास्त्रसे बँधकर ब्रह्माजीके वरदेनेके प्रभावसे कुछ भी क्लेश नहीं पाते हुए ॥ ३९ ॥ और हनुमान्‌जीने अपने मनमें भली भाँति विचार किया तो उस अस्त्र को सब मंत्रोंसे अभिमंत्रित और ब्रह्माजीका वरदानी पाया ॥ ४० ॥ हनुमानजीने विचारा कि, त्रिलोकगुरु ब्रह्माजीके प्रभावसे इस अस्त्रके बंधको छुडानेकी शक्ति हममें नहीं है, इस कारण हम मुहूर्त्त भरतक इसको सहन करते हैं ॥४१॥ पवनकुमार हनुमानजी इस प्रकारसे अस्त्रका वीर्य, ब्रह्माजीका वरदान अपनी इस अस्त्र से छूटनेकी सामर्थ्यको भली भाँतिसे शोच विचार कर मुहूर्त्त भरतक ब्रह्माजीकी, आज्ञाका पालन करते रहे। हनुमानजीको वरदान भी था कि, दो घड़ीसे अधिक तुमको अस्त्र पीडा न देगा ॥४२॥ हनुमानजीने विचारा कि, ब्रह्मा, इन्द्र, पवन यह सदाही हमारी रक्षा किया करते हैं, इस लिये ब्रह्मास्त्रसे बँध जानेपर भी हमको क्या भय है? ॥ ४३ ॥ बरन् जो बँधे रहेंगे तो राक्षसगण हमको राक्षसराज रावणके पास ले जायँगे और उस रावणसे वार्त्तालाप

ततःस्वायंभुवैर्मंत्रैर्ब्रह्मास्त्रंचाभिमंत्रितम् ॥ हनूमांश्चिंतयामासवरदानंपितामहात् ॥ ४० ॥ नमेस्यबंधस्यचशक्तिरस्तिविमोक्षणेलोकगुरोःप्रभावात् ॥ इत्येवमेवंविहितोऽस्त्रबंधोमयात्मयोनेरनुवर्तितव्यः ॥४१॥ सवीर्यमस्त्रस्यकपिर्विचार्यपितामहानुग्रहमात्मनश्च ॥ विमोक्षशक्तिंपरिचिंतयित्वापितामहाज्ञामनुवर्ततेस्म ॥ ४२ ॥ अस्त्रेणापिहिबद्धस्यभयंममनजायते ॥ पितामहमहेंद्राभ्यांरक्षितस्तानिलेनच ॥ ४३ ॥ ग्रहणेचापिरक्षोभिर्महन्मेगुणदर्शनम् ॥ राक्षसेंद्रेणसंवादस्तस्माद्गृह्णन्तुमांपरे ॥ ४४ ॥ सनिश्चितार्थःपरवीरहंतासमीक्ष्यकारीविनिवृत्तचेष्टः ॥ परैःप्रसह्याभिगतैर्निगृह्यननादतैस्तैःपरिभर्त्स्यमानः ॥४५॥ ततस्तेराक्षसाहृष्ट्वाविनिश्चेष्टमरिंदमम् ॥ बबंधुःशणवल्कैश्चद्रुमचीरैश्चसंहतैः ॥४६॥ सरोचयामासपरैश्चबंधंप्रसह्यवीरैरभिगर्हणंच ॥ कौतूहलान्मांयदिराक्षसेंद्रोद्रष्टुंव्यवस्येदितिनिश्चितार्थः ॥ ४७ ॥

करनेमें बडा फल निकलेगा कि, हम उसके मनकी बातको जानलेंगे इस लिये शत्रुलोग हमको पकडलें ॥४४॥ कार्य करनेमें चतुर परवीरघाती हनुमानजी इस प्रकारका कर्त्तव्य निश्चय करके चेष्टारहितभावसे पडे रहे। और जब राक्षसलोग निकट आय बलात्कारसे पकडकर इनको अनेक प्रकारसे पकडने व धमकाने लगे तब हनुमानजी घोर नाद करते हुए ॥ ४५ ॥ इसके पीछे निशाचर लोग शत्रुओंके दमन करनेवाले हनुमानजीको चेष्टारहित देख उनको सतसन और वृक्षोंके छालके रसोंसे खूब जकड़कर बांधते हुये ॥ ४६ ॥ राक्षस रावण कौतूहलके वश हो यदि हमको देखनेकी इच्छा करे तो उसके साथ बात चीत भी हो जायगी, यह बात विचारकर हनुमानजीने शत्रुओंका बल सहित पकडना, घुडकना, धमकाना सह लिया ॥ ४७ ॥

जैसेही कि रस्सियोंसे बांधे गये, वैसेही वीर्यवान् कपि हनुमानजी ब्रह्मास्त्रके, बंधनसे छूटगये क्योंकि जहां किसी और रस्सी इत्यादिसे बांध दिया जाता है, वैसेही ब्रह्मास्त्रका बंधन छूट जाता है ॥४८॥ वीर मेघनाद भी कपिकेसरी हनुमानजीको सन वल्कलादिसे बँधे और ब्रह्मास्त्रसे छूटे हुये देखकर चिन्ता करने लगा कि, और बंधनोंके बाँधनेसे ब्रह्मास्त्रके बंधन विफल हो जाते हैं ॥ ४९ ॥ हां राक्षसलोगोंके शस्त्रकी शक्ति कितनी है; इसका विचार न करके हमारा किया हुआ यह बडा कार्य निरर्थक कर दिया, अधिक क्या कहें ब्रह्मास्त्रके व्यर्थ होनेसे अब और किसी अस्त्रका प्रयोग भी नहीं किया जा सकता है, और एक वार वह राक्षसपुत्र जाननेलगा कि, इनको इस बातकी सुध नहीं है व्यर्थ होकर दुबारा यह शस्त्र चल भी नहीं सकता इस लिये हम संशयको प्राप्त हुए हैं ॥५०॥ हनुमानजीने ब्रह्मास्त्रसे छूटकर कुछ बल नहीं दिखाया इसलिये राक्षस लोग विविध भाँतिके बन्धनोंसे बांध और पकडकर खेंचने लगे ॥ ५१ ॥ उसके पीछे

सबद्धस्तेनवल्केनविमुक्तोऽस्त्रेणवीर्यवान् ॥ अस्त्रबंधःसचान्यंहिनबंधमनुवर्तते ॥४८॥ अथेंद्रजित्तंद्रुमचीरबद्धंविचार्यवीरःकपिसत्तमंतम् ॥ विमुक्तमस्त्रेणजगामचिंतामन्येनबद्धोप्यनुवर्ततेऽस्त्रम् ॥४९॥ अहोमहत्कर्मकृतंनिरर्थंनराक्षसैर्मंत्रगतिर्विमृष्टा ॥ पुनश्चनास्त्रेविहतेऽस्त्रमन्यत्प्रवर्ततेसंशयिताःस्मसर्वे ॥५०॥ अस्त्रेणहनुमान्मुक्तोनात्मानमवबुध्यते ॥ कृष्यमाणस्तुरक्षोभिस्तैश्चबंधैर्निपीडितः ॥५१॥ हन्यमानस्ततःक्रूरैराक्षसैःकालमुष्टिभिः ॥ समीपंराक्षसेंद्रस्यप्राकृष्यतसवानरः ॥५२॥ अथेंद्रजित्तंप्रसमीक्ष्यमुक्तमस्त्रेणबद्धंद्रुमचीरसूत्रैः ॥ व्यदर्शयत्तत्रमहाबलंतंहरिप्रवीरंसगणायराज्ञे ॥५३॥ तंमत्तमिवमातंगंबद्धंकपिवरोत्तमम् ॥ राक्षसाराक्षसेंद्रायरावणायन्यवेदन् ॥ ५४ ॥ कोयंकस्यकुतोवापिकिंकार्यंकोव्युपाश्रयः ॥ इतिराक्षसवीराणां दृष्ट्वासंजज्ञिरेकथाः ॥ ५५ ॥ हन्यतांदह्यतांवापिभक्ष्यतामितिचापरे ॥ राक्षसास्तत्रसंक्रुद्धाःपरस्परमथाब्रुवन् ॥ ५६ ॥ अतीत्यमार्गंसहसामहात्मासतत्ररक्षोधिपपादमूले ॥ ददर्शराज्ञःपरिचारवृद्धान्गृहंमहारत्नविभूषितंच ॥ ५७ ॥

वह क्रूर स्वभाव राक्षसलोग हनुमानजीको खेंचते और काल समान मुष्टियोंके प्रहारसे मारते २ राक्षसराज रावणके निकट लेगये ॥ ५२ ॥ मेघनाद उनको ब्रह्मास्त्रसे छूटा व दूसरे वल्कलादि रस्सोंके बन्धनोंसे बँधा देखकर, सब मंत्रियोंको व रावणको दिखाता हुआ ॥ ५३ ॥ व और दूसरे मेघनादके साथी लोगोंने मत्त मातंगके समान बंधन अवस्थामें पडे हुए हनुमानजीको और उनका सब वृत्तान्त रावणसे निवेदन किया ॥ ५४ ॥ उस समय यह कौन है ? किसका पुत्र है ? कहांसे और किसलिये आया है ? और इसका सहायकारी कौन है ? इस प्रकारकी कल्पना परस्पर सब राक्षसवीर करने लगे ॥ ५५ ॥ और इसको मारो इसको भस्म कर दो और इसको भक्षण कर डालो ऐसा और दूसरे राक्षसलोग कहने लगे ॥५६॥ महात्मा हनुमानजीने थोडीहीसी दूर चल

कर सहसा महामूल्यरत्न भूषित राजमंदिर और राक्षसराज रावणके चरणोंके समीप बहुत सारे वृद्ध नौकर चाकर बैठे हुए देखे ॥५७॥ फिर प्रबल प्रतापवाले रावणने देखा कि, विकट आकारवाले राक्षसलोग हनुमानजीको इधर उधरसे खैंचे हुए लिये आय रहे हैं॥५८॥ कपिश्रेष्ठ हनुमानजीने ये भी देखा कि, राक्षसपति रावण तेज और बलसे युक्त होकर घामदेते हुये सूर्यके समान दीप्ति पाय रहा है॥५९॥हनुमानजी को देखतेही रावणकी दृष्टि क्रोधके मारे लाल होकर घूमने लगी तब रावणने वहां बैठेहुए कुल शील सम्पन्न वृद्ध प्रधानमंत्रियोंको हनुमानजीका सब वृत्तांत जान लेनेको कहा॥६०॥रावणकी आज्ञा पाय उन मंत्रियोंने हनुमानजीसे पूँछा कि,तुम किसकी खोज और किस कार्यके लिये यहांपर आये हो ? तब हनुमानजीने कहाकि हम कपिराज सुग्रीव निकटसे दूरहोकर यहांपर आये हैं॥६१॥

सददर्शमहातेजारावणःकपिसत्तमम्॥रक्षोभिर्विकृताकारैःकृष्यमाणमितस्ततः ॥५८॥ राक्षसाधिपतिंचापिददर्शकपिसत्तमः ॥ तेजोबलसमायुक्तंतपंतमिवभास्करम् ॥५९॥ सरोषसंवर्तिततात्रदृष्टिर्दशाननस्तंकपिमन्ववेक्ष्य॥अथोपविष्टान्कुलशीलवृद्धान्समादिशत्तंप्रतिमुख्यमंत्रीन्॥ ॥ ६० ॥ यथाक्रमंतैःसकपिश्चपृष्टःकार्यार्थमर्थस्यचमूलमादौ ॥ निवेदयामासहरीश्वरस्यदूतःसकाशादहमागतोस्मि ॥६१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४८ ॥ ततःसकर्मणातस्यविस्मितोभीमविक्रमः ॥ हनुमान्क्रोधताम्राक्षोरक्षोधिपमवेक्षत ॥१॥ भ्राजमानंमहार्हेणकांचनेनविराजता॥मुक्ताजालवृतेनाथमुकुटेनमहाद्युतिम् ॥२॥ वज्रसंयोगसंयुक्तैर्महार्हमणिविग्रहैः॥ हैमैराभरणैश्चित्रैर्मनसेवप्रकल्पितैः ॥ ३ ॥ महार्हक्षौमसंवीतंरक्तचंदनरूषितम् ॥ स्वनुलिप्तंविचित्राभिर्विविधाभिश्चभक्तिभिः ॥४॥ विचित्रदर्शनीयैश्चरक्ताक्षैर्भीमदर्शनैः ॥ दीप्ततीक्ष्णमहादंष्ट्रप्रलंबदशनच्छदैः ॥ ५ ॥ शिरोभिर्दशभिर्वीरोभ्राजमानंमहौजसम् ॥ नानाव्यालसमाकीर्णैःशिखरैरिवमंदरम् ॥ ६ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा०अ०सुन्दरकांडे भाषायामष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥४८॥ भयंकर विक्रम करनेवाले हनुमानजीने इन्द्रजीतके कार्यको देख विस्मित होकर लाल २ नेत्रकर रावणकी ओर दृष्टि करके देखा ॥१॥ कि महातेजवान रावण बडे मोलका कांचनमय मुक्तजाल लगा हुआ महादीप्तिमान मुकुट ओंढे उज्ज्वल रूपसे शोभायमान हो रहा है ॥२॥ उनके द्रव्य गहने समस्त हीरक खचित और बडे मोलकी मणियोंसे प्रधानता चित्रित मानों मनकेही द्वारा बनाये गये हैं ॥ ३ ॥ रावणका शरीर लाल चन्दनसे चर्चित और बडे मोलके रेशमी वस्त्रोंसे ढका और विविध भाँतिकी रचनाओंसेसजा हुआ था ॥४॥ उसके बीस नेत्र भयंकर दर्शनवाले, अरुण, वर्ण और आश्चर्य जनक थे, उसके दांत बडे तीक्ष्ण व दीप्तिमान और अधरसमूह बडे लंबे थे ॥ ५ ॥ वह नीले अंजनके

समान परमतेजस्वी राक्षसराज रावण दशमस्कोंसे सर्पसेयुक्त शोभित शिखरमन्दरके समान गलेमें हार पहरेहुए और उसका वदनमंडल पूर्णचंद्रमाके तुल्य है इस लिये नवीन सूर्य युक्त मेघके समान रावणकी शोभा होरही है ॥६॥७॥ रावणके वीसौंहाथ पंचमुहे सर्पोंके समान भयंकर श्रेष्ठचंदनसे चर्चित और उज्ज्वल बाजू व केयूर उन बाँहोंमें पडे हुए थे॥८॥वह रावणरत्नोंके लगनेसे चित्रित उत्तम बिछौनेसे शोभित, स्फटिकमणि जटितसुविशालविचित्र श्रेष्ठ आसनपर बैठा है॥९॥अनेक प्रकारके आभूषणोंसे सजा हुआ है शृंगारा किये हुए स्त्रियें चमर व्यजन हाथमें लिये हुये निकटही चारों ओर रावणकी सेवाकर रही हैं॥१०॥दुर्द्धर्ष प्रहस्त महापार्श्व व निकुम्भ बलदर्पित इन चार मंत्रजाननेवाले मंत्रियोंसे॥११॥शोभित होनेके कारणचारों समुद्रोंमें शोभित पृथ्वीके समान शोभायमान रावणथा

नीलांजनचयप्रख्यंहारेणोरसिराजिता॥पूर्णचंद्राभवक्रेणसबालार्कमिवांबुदम् ॥७॥ बाहुभिर्बद्धकेयूरैश्चन्दनोत्तमरूषितैः॥ भ्राजमानांगदैर्भीमैः पंचशीर्षैरिवोरगैः ॥ ८ ॥ महतिस्फाटिकेचित्रेरत्नसंयोगचित्रिते ॥ उत्तमास्तरणास्तीर्णेसूपविष्टंवरासने ॥९॥ अलंकृताभिरत्यर्थंप्रमदाभिः समंततः॥ वालव्यजनहस्ताभिराराात्समुपसेवितम् ॥१०॥ दुर्धरेणप्रहस्तेनमहापार्श्वेनरक्षसा ॥ मंत्रिभिर्मंत्रतत्त्वज्ञैर्निकुंभेनचमंत्रिणा ॥११॥ उपोपविष्टंरक्षोभिश्चतुर्भिर्बलदर्पितम् ॥ कृत्स्नंपरिवृतंलोकंचतुर्भिरिवसागरैः ॥ १२ ॥ मंत्रिभिर्मंत्रतत्त्वज्ञैरन्यैश्चशुभदर्शिभिः ॥ आश्वास्यमानंसचिवैः सुरैरिवसुरेश्वरम् ॥ १३ ॥ अपश्यद्राक्षसपतिंहनूमानतितेजसम् ॥ वेष्टितंमेरुशिखरेसतोयमिवतोयदम् ॥ १४ ॥ सतैःसंपीड्यमानोपिरक्षोभिर्भीमविक्रमैः ॥ विस्मयंपरमंगत्वारक्षोधिपमवेक्षत ॥ १५ ॥ भ्राजमानंततोदृष्ट्वाहनूमान्राक्षसेश्वरम् ॥ मनसाचिंतयामासतेजसातस्यमोहितः ॥ १६ ॥ अहोरूपमहोधैर्यमहोसत्त्वमहोद्युतिः ॥ अहोराक्षसराजस्यसर्वलक्षणयुक्तता ॥ १७ ॥ यद्यधर्मोनबलवान्स्यादयंराक्षसेश्वरः ॥ स्यादयंसुरलोकस्यसशक्रस्यापिरक्षिता ॥ १८ ॥

॥१२॥देवमंत्रीलोग जिसप्रकारइन्द्रजीकोसिखलातेहैंवैसेहीमंत्रके जाननेवाले शुभ दर्शी मंत्री लोगभी सिखाते हैं॥१३॥हनुमानजीने देखाकि,महातेजस्वी राक्षसराज रावण मेरुपर्वतके शिखरपर जलवाले बादलके समान टिका हुआ है ॥१४॥ भयंकर विक्रमकारी राक्षसलोगोंके बहुत पीडादेनेपर भी हनुमानजी अतिविस्मय युक्त हो रावणको देखनेलगे ॥१५॥ उसकेपीछे राक्षसपति रावणका इस भाँतिका प्रभाव देख उसके तेजसे मोहित हो हनुमानजी मनही मनमें चिंता करने लगे ॥ १६ ॥ अहो राक्षसराज रावणका क्या रूप है, क्या धैर्य है, क्या पराक्रम क्या देहकी कांति, क्या सर्व लक्षण सम्पन्न है ॥१७॥ इस राक्ष-सराजका अधर्म

यदि इतना बलवान् न होता तो यह इन्द्रसहित समस्त देवलोककी रक्षाकरनेमें समर्थ होता ॥ १८ ॥ इस पापीने जो सकल लोकोंमें निन्दनीय बुरा करनेवाले नीचकार्योंके अनुष्ठान कियेहैं इससे सुरासुरसमेत तीनों लोक इससेडरतेहैं॥ १९॥ रावण क्रोधकर चाहे तो समस्त संसारको समुद्र कर डाले मतिमान् हनुमानूजी अति पराक्रम रावणका प्रभाव देखकर इसप्रकारकी विविध चिन्तायें करते हुए ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामेकोनपंचाशः सर्गः॥ ४९॥ पीली आंखोंवाले हनुमानूजीको सामने खडा हुआ देखकर महाबलवान् लोकोंको रुवानेवाला रावण महा क्रोधित हुआ ॥ १ ॥ परन्तु हनुमानूजी का तेजः पुंज शरीर देख शंकित हो चिन्ता करने लगा कि, यह वानर रूपी साक्षात् भगवानू नंदी तो यहां पर नहीं चले आये हैं ? ॥ २॥ पूर्वकालमें कैलासपर्वत पर हम

अस्यक्रूरैर्नृशंसैश्चकर्मभिर्लोककुत्सितैः ॥ सर्वेबिभ्यतिखल्वस्माल्लोकाःसामरदानवाः॥ १९॥ अयंह्युत्सहतेक्रुद्धःकर्तुमेकार्णवंजगत् ॥ इतिचिंतां बहुविधामकरोन्मतिमान्कपिः ॥ दृष्ट्वाराक्षसराजस्यप्रभावममितौजसः ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे एकोनपंचाशःसर्गः ॥ ४९ ॥ तमुद्वीक्ष्यमहाबाहुःपिंगाक्षंपुरतःस्थितम् ॥ रोषेणमहताविष्टोरावणोलोकरावणः ॥ १॥ शंकाहृतात्मादध्यौसकपींद्रंतेजसावृतम् ॥ किमेषभगवान्नंदीभवेत्साक्षादिहागतः ॥ २॥ येनशप्तोस्मिकैलासेमयाप्रहसितेपुरा ॥ सोयंवानरमूर्तिःस्यात्किंस्विद्बाणोपिवाऽसुरः ॥ ३ ॥ सराजारोषताम्राक्षः प्रहस्तंमंत्रिसत्तमम् ॥ कालयुक्तमुवाचेदंवचोविपुलमर्थवत् ॥ ४ ॥ दुरात्मपृच्छ्यतामेष कुतःकिंवास्यकारणम् ॥ वनभंगेचकोस्यार्थोराक्षसानांचतर्जने ॥ ५ ॥ मत्पुरीमप्रधृष्यांवैगमनेकिंप्रयोजनम् ॥ आयोधनेवाकिंकार्यंपृच्छ्यतामेषदुर्मतिः ॥ ६ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वाप्रहस्तोवाक्यमब्रवीत् ॥ समाश्वसिहिभद्रंतेनभीःकार्यात्वयाकपे ॥ ७ ॥

इनका वानर मुख देखकर हँसे थे सो तब इन नंदीने हमको शाप दिया था कि, मेरे मुख सरीखे वानर सेही तेरा नाश होगा, अथवा यह वानर राजा बलिका पुत्र बाण ! तो नहीं है? ॥ ३॥ इसप्रकारकी चिन्ता करता हुआ राक्षसोंका राजा रावण क्रोधके मारे लाल २ नेत्र कर समयानुसार अर्थयुक्त वचन प्रधान मंत्री प्रहस्तसे कहने लगा ॥ ४॥ कि, इस दुरात्मासे पूँछो कि, कहांसे किस कारण यह यहां पर आया है, और किस वास्ते अशोक वन उजाडकर इसने राक्षसोंको भय पहुँचाया ॥ ५ ॥ तुम फिर इस खोटी मतिवालेसे पूँछो कि, हमारी इस अगम्य नगरीमें आनेका इसका क्या प्रयोजन है, और हमारे नौकर राक्षसोंसे इसने क्यों युद्ध किया ? ॥ ६॥ रावणकी यह वार्त्ता सुनकर प्रहस्त हनुमानूजीसे कहने लगा कि, हे वानर ! तुम सावधान होवो, हम लोगोंसे भय करने की तुमको कुछ आवश्यकता

नहींहै ॥७॥ तुम्हारा मंगल होगा, सत्य २ कहो कि, क्या देवराज इन्द्रने तुमको इस लंकापुरीमें भेजा है ? तुमको कुछ भय नहीं सत्य कहो, तुम अवश्यही छुटजा ओगे ॥८॥ अथवा तुम कुबेर, यम, वरुण हो, जो यह सुन्दररूप बनाय इस पुरीमें आये ॥९॥ अथवा विजयाभिलाषी विष्णुजीके दूत होकर तुम यहां आये हो ? क्योंकि तुम रूपमें तो वानर हो परन्तु तुम्हारा विक्रम वानरके समान नहीं है ॥१०॥ हे वानर ! सत्य २ कहनेसे तुम अभी छूट जाओगे ! और जो मिथ्या कहोगे तो तुम्हारे जीते रहनेमें भी संशय है ॥११॥ जो कुछ भी हो तुम जिस कारणसे भी इस राक्षसराज रावणके स्थान पर आये हो सब कहो जब प्रहस्तने इसप्रकारसे कहा तो हनुमान्जी राक्षसपति रावणसे बोले ॥१२॥ हम इन्द्र यम व वरुणके दूत नहीं हैं, न कुबेरके साथ हमारी मित्रता है अथवा

यदितावत्त्वमिंद्रेणप्रेषितोरावणालयम् ॥ तत्त्वमाख्याहिमांतेभूद्भयंवानरमोक्ष्यसे ॥ ८ ॥ यदिवैश्रवणस्यत्वंयमस्यवरुणस्यच ॥ चारुरूप मिदंकृत्वाप्रविष्टोनःपुरीमिमाम् ॥ ९ ॥ विष्णुनाप्रेषितोवापिदूतोविजयकांक्षिणा ॥ नहितेवानरंतेजोरूपमात्रंतुवानरम् ॥ १० ॥तत्त्वतःकथ यस्वाद्यततोवानरमोक्ष्यसे ॥ अनृतंवदतश्चापिदुर्लभंतवजीवितम् ॥ ११ ॥ अथवायन्निमित्तस्तेप्रवेशोरावणालये ॥ एवमुक्तोहरिवरस्तदारक्षो गणेश्वरम् ॥ १२ ॥ अब्रवीन्नास्मिशक्रस्ययमस्यवरुणस्यच॥धनदेननमेसख्यंविष्णुनानास्मिचोदितः॥ १३ ॥ जातिरेवममत्वेषावानरोहमि हागतः ॥ दर्शनेराक्षसेंद्रस्यतदिदंदुर्लभंमया ॥१४॥ वनंराक्षसराजस्यदर्शनार्थेविनाशितम्॥ ततस्तेराक्षसाःप्राप्ताबलिनोयुद्धकांक्षिणः ॥१५॥ रक्षणार्थंचदेहस्यप्रतियुद्धामयारणे ॥ अस्त्रपाशैर्नशक्योहंबद्धुंदेवासुरैरपि ॥ १६ ॥ पितामहादेवपरोममापिहिसमागतः ॥ राजानंद्रष्टुकामे नमयास्त्रमनुवर्तितम् ॥ १७ ॥

विष्णुजीने भी हमको नहीं भेजाहै॥१३॥ हमारा रूप स्वभावसे ऐसा है हीवास्तवमें हमारी जाति ही वानर है, हमें तुम लोगोंके दर्शन होने दुर्लभहै इसी कारणसे हम तुम्हारे देखनेको यहां आयेहैं ॥१४॥ और राक्षस नाथके दर्शन करनेको ही हमने इस दुर्लभ वनको उखाड डालाहै और उस समयमें जो बलवान् निशाचर युद्धकी अभिलाषा करके आयेथे॥१५॥ शरीररक्षाके निमित्त हमने उनसे युद्धकिया और देवता व असुर कोई भी हमको अस्त्र या फांसीसे नहीं बाँधसकते॥१६॥ स्वयं पितामह ब्रह्माजीने भी हमको यह बर दिया है कि; दो घडीसे अधिक हमारा अस्त्र भी तुमको नहीं बांध सकेगा। सो हमने तो केवल राजाका दर्शन ही पानेके अर्थ इस अस्त्रके बंधनको माना ॥ १७ ॥

इस वार्त्ता को तुम्हारे सब राक्षस जानतेहैं कि,अस्त्रसे तो हम वहीं छूटगये थे;परंतु यथार्थ बात तो यह है कि,हम श्रीरामचन्द्रजी का कोई कार्य सिद्ध करनेको तुम्हारे पासआये हैं ॥१८॥ हे प्रभो ! हम अमित तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी के दूत हैं;यह भलीभाँति जानकर जो हितकारी वचन हम कहते हैं, वह तुम सुनो ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां पंचाशः सर्गः ॥ ५० ॥ सत्त्वसम्पन्न वानर श्रेष्ठ हनुमान्‌जी बलवान् रावणको देखकर विना घबडाहटके युक्त्युक्त वचन कहने लगे ॥ १ ॥ हे राजन् ! हम सुग्रीवजीकी आज्ञासे आपके निकट आये हैं। वानरराज सुग्रीवजीने भायपनसे तुम्हारी कुशल पूँछी है॥ २॥ तुम उन महात्मा अपने भ्राता सुग्रीवजीके दोनों लोकोंमें हितके करनेवाले धर्मअर्थ युक्त कहेहुए वचन श्रवण करो ॥ ३ ॥ उन सुग्रीवने कहा है कि,

विमुक्तोप्यहमस्त्रेणराक्षसैस्त्वभिवेदितः ॥ केनचिद्रामकार्येणआगतोस्मितवांतिकम् ॥ १८ ॥ दूतोहमितिविज्ञायराघवस्यामितौजसः ॥ श्रूयतामेववचनंममपथ्यमिदंप्रभो ॥१९॥ इत्यार्षेश्रीम०वा०आ०च०सा०सुं०पंचाशःसर्गः ॥ ५० ॥ तंसमीक्ष्यमहासत्त्वंसत्त्ववान्हरिसत्तमः॥ वाक्यमर्थवदव्यग्रस्तमुवाचदशाननम् ॥ १ ॥ अहंसुग्रीवसंदेशादिहप्राप्तस्तवांतिके ॥ राक्षसेशहरीशस्त्वांभ्राताकुशलमब्रवीत् ॥ २ ॥ भ्रातुः शृणुसमादेशंसुग्रीवस्यमहात्मनः ॥ धर्मार्थसहितंवाक्यमिहचामुत्रचक्षमम् ॥ ३ ॥ राजादशरथोनामरथकुंजरवाजिमान् ॥पितवेबंधुर्लोकस्य सुरेश्वरसमद्युतिः ॥ ४ ॥ ज्येष्ठस्तस्यमहाबाहुःपुत्रःप्रियतरःप्रभुः ॥ पितुर्निदेशान्निष्क्रांतःप्रविष्टोदंडकावनम् ॥ ५ ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्रासीतयासहभार्यया ॥ रामोनाममहातेजाधर्म्यंपंथानमाश्रितः ॥ ६ ॥ तस्यभार्याजनस्थानेभ्रष्टासीतेतिविश्रुता ॥ वैदेहस्यसुताराज्ञोजनकस्यमहात्मनः ॥ ७ ॥ मार्गमाणस्तुतादेवींराजपुत्रःसहानुजः ॥ ऋष्यमूकमनुप्राप्तःसुग्रीवेणचसंगतः ॥८॥ तस्यतेनप्रतिज्ञातंसीतायाःपरिमार्गणम् ॥ सुग्रीवस्यापिरामेणहरिराज्यंनिवेदितुम् ॥ ९ ॥

बहुत सारे हाथी, घोडे, रथोंके अधिपति और इन्द्रजीके समान द्युतिमान् दशरथनामक राजा अपनी प्रजाकी व सब लोककी इसभाँति रक्षा करतेथे कि, जैसे पिता पुत्रकीरक्षा करता है ॥४॥ उनके परमप्यारे बडे पुत्र महाबाहु सब कार्य्योंके करनेमें समर्थ अपने पिताकी आज्ञानुसार दंडक वनमें आये॥ ५॥वहधर्मके मार्गमें टिकेहुए अमित तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी भ्राता लक्ष्मण और अपनी भार्या सीताजीके सहित वनमें आये ॥ ६॥ इस प्रकारसे सुना जाता है कि, महात्मा राजर्षि जनकजीकी कन्या सीतानामक उनकी भार्या जनस्थानमें आकर हरी गई हैं ॥७॥ राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी अपने छोटेभाई लक्ष्मणजीके साथ श्रीसीताजीको ढूँढते २ ऋष्यमूक पर्वतपर पहुँचकर सुग्रीवजीके साथ मिले ॥ ८ ॥ सुग्रीवजीने प्रतिज्ञा की कि,सीताजीको ढूँढदेंगे और श्रीरामचन्द्रजीने भी अंगीकार किया

कि, सुग्रीवजीको वानरोंका राज्य देदेंगे ॥ ९ ॥ उसके पीछे राजकुमार श्रीरामचन्द्रजीने समरमें वालीको मारकर सुग्रीवजीको वानरोंका राजा बनादिया ॥ १० ॥ सो वानरराज वालीको तो तुम प्रथमहीसे जानते हो कि, उसमें कितना बलथा सो महात्मा श्रीरामचन्द्रजीने संग्रामस्थलमें केवल एकही बाण चलाय वानरश्रेष्ठ वालीको मारडाला ॥ ११ ॥ जबवाली मारागया तब सत्यप्रतिज्ञ सुग्रीवजीने सीताजीको ढूँढनेके लिये उसकाय कर सब वानर यूथोंको चारों ओर भेजदिया ॥ १२ ॥ उन सुग्रीवजीके भेजेहुए सहस्र २ लक्ष २ करोड २ वानर समस्त दिशामंडल आकाशमंडल वरन् पातालतक सीताजीकी खोज करने लगे ॥ १३ ॥ उन वानर यूथपोंमेंसे कोई गरुडजीके समान कोई पवनतुल्य शीघ्रगामी हैं, सबही महाबलवान् जिनकी गति कहीं जानेमें न रुके और शीघ्र गमनकरनेमें समर्थ हैं ॥ १४ ॥ उन्हीं वानरोंमेंसे हम पवनके औरसपुत्र हनुमान् नामक वानर सीताजीको ढूँढनेके लिये शतयोजन फांटवाले ॥ १५ ॥ महासमुद्रके पार

ततस्तेनमृधेहत्वाराजपुत्रेणवालिनम् ॥ सुग्रीवःस्थापितोराज्येहर्यृक्षाणांगणेश्वरः ॥ १० ॥ त्वयाविज्ञातपूर्वश्चवालीवानरपुंगवः ॥ सतेननिहतः संख्येशरेणैकेनवानरः ॥ ११ ॥ ससीतामार्गणेव्यग्रःसुग्रीवःसत्यसंगरः ॥ हरीन्संप्रेषयामासदिशःसर्वाहरीश्वरः ॥ १२ ॥ तांहरीणांसहस्राणि शतानिनियुतानिच ॥ दिक्षुसर्वासुमार्गतेह्यधश्चोपरिचांबरे ॥ १३ ॥ वैनतेयसमाःकेचित्केचित्तत्रानिलोपमाः ॥ असंगगतयःशीघ्राहरिवीरा महाबलाः ॥ १४ ॥ अहंतुहनुमान्नाममारुतस्यौरसःसुतः ॥ सीतायास्तुकृतेतूर्णंशतयोजनमायतम् ॥ १५ ॥ समुद्रंलंघयित्वैवत्वांदिदृक्षुरि हागतः ॥ भ्रमताचमयादृष्टागृहेतेजनकात्मजा ॥ १६ ॥ तद्भवान्दृष्टधर्मार्थस्तपःकृतपरिग्रहः ॥ परदारान्महाप्राज्ञनोपरोद्धुंत्वमर्हसि ॥ १७ ॥ नहिधर्मविरुद्धेषुबह्वपायेषुकर्मसु ॥ मूलघातिषुसज्जंतेबुद्धिमंतोभवद्विधाः ॥ १८ ॥ कश्चलक्ष्मणमुक्तानांरामकोपानुवर्तिनाम् ॥ शरणाम ग्रतःस्थातुंशक्तोदेवासुरेष्वपि ॥ १९ ॥ नचापित्रिषुलोकेषुराजन्विद्येतकश्चन ॥ राघवस्यव्यलीकंयःकृत्वासुखमवाप्नुयात् ॥ २० ॥ तत्त्रिका लहितंवाक्यंधर्म्यमर्थानुयायिच ॥ मन्यस्वनरशार्दूलजानकीप्रतिदीयताम् ॥ २१ ॥

होकर तुम्हारे दर्शन करनेकी अभिलाषासे यहांपर आये हैं हमने घूमते २ तुम्हारे गृहमें जनकनंदिनी सीताजीको देखा है ॥ १६ ॥ हे महापंडित ! तुमने धर्मके मर्मको न जानकर अपने तपबलसे विविध भांतिके अपूर्व सौभाग्य इकट्ठे कर रक्खे हैं इसलिये पराई स्त्रीका रोकना तुमको उचित नहीं है ॥ १७ ॥ जो कि, बहुत अनर्थोंका हेतु और जो कि, मूलसहित नष्टकर देताहै, ऐसे धर्मविरुद्धकार्यको तुम सरीखे बुद्धिमान् पुरुष कभी नहीं करते हैं ॥ १८ ॥ विशेष करके देवतागण और असुरोंके मध्यमेंभी ऐसा कोईभी है कि, जो श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीके क्रोधसे चलाये बाणोंके सम्मुख टिकनेमें समर्थ हो ? ॥ १९ ॥ हे राजन् ! त्रिलोकीमें ऐसा कोई नहींहैं कि; जो श्रीरामचन्द्रजीका अप्रिय कार्य करकेआप सुखमें रहनेको समर्थ हो ॥ २० ॥ इसलिये हेरावण ! राजशार्दूल पुरुषश्रेष्ठ श्रीरामच

न्द्रजीकी जानकीजी लौटाय दो; हमने जो कुछ कहा वहा वह तीनों कालमें हित करनेवाला धर्मयुक्त और शास्त्रसम्मत वचनहै॥ २१॥ इसकारणयह वचन मानलो, हमने उन सीता देवीको तुम्हारे स्थानमें देखा है. सो इनके देखनेसे हमको वह यश मिला कि, जो दूतोंके लिये दुर्लभ है; इसके पीछे जो कार्य शेष रहा अर्थात् जानकीजीका लेजाना वह श्रीरामचंद्रजी अपने आपही सिद्ध कर लेंगे ॥२२॥ हमने सीताजीको बहुत शोकयुक्त देखा है । तुम नहीं जानते कि, यह सीताजी पांच फणोंवाली सर्पिणीकी समान तुम्हारे स्थानमें टिकी हुईहैं ॥२३॥ असुरोंके सहित समस्त देवतागणभी उन सीताजीको नहीं पचाय सकेंगे, जैसे भोजनको शक्तिके बलसे विष मिला हुआ अन्न खानेपर कोई नहीं पचा सकता ॥२४॥ तुमने तपोबलसे यह धर्मसे साधन किया ऐश्वर्य और बडी भारी उमर प्राप्त कीहै सो इस प्रकारके धन ऐश्वर्य व अपनेको पराई स्त्रीके हरण करनेके अधर्मसे नाश नहीं करना चाहिये ॥२५॥ और तुमने जो अपनेको देवदानवोंसे अवध्य जाना है, सो

दृष्टाहीयंमयादेवीलब्धंयदिहदुर्लभम् ॥ उत्तरंकर्मयच्छेषंनिमित्तंतत्रराघवः ॥ २२ ॥ लक्षितेयंमयासीतातथाशोकपरायणा ॥ गृहेयांनाभिजानासिपंचास्यामिवपन्नगीम् ॥ २३ ॥ नेयंजरयितुंशक्यासासुरैरमरेरपि ॥ विषसंसृष्टमत्यर्थंभुक्तमन्नमिवौजसा ॥ २४ ॥ तपःसंतापलब्धस्तेसोयंधर्मपरिग्रहः ॥ नसनाशयितुंन्याय्यआत्मप्राणपरिग्रहः ॥२५॥ अवध्यतांतपोभिर्याभवान्समनुपश्यति ॥ आत्मनःसासुरैर्देवैर्हेतुस्तत्राप्ययंमहान् ॥ २६ ॥ सुग्रीवोनचदेवोयंनयक्षोनचराक्षसः ॥ मानुषोराघवोराजन्सुग्रीवश्चहरीश्वरः ॥ तस्मात्प्राणपरित्राणंकथंराजन्करिष्यसि ॥२७॥ नतुधर्मोपसंहारमधर्मफलसंहितम् ॥ तदेवफलमन्वेतिधर्मश्चाधर्मनाशनः ॥२८॥ प्राप्तंधर्मफलंतावद्भवतानात्रसंशयः॥ फलमस्याप्यधर्मस्यक्षिप्रमेवप्रपत्स्यसे ॥ २९ ॥ जनस्थानवधंबुद्धावालिनश्चवधंतथा ॥ रामसुग्रीवसख्यंचबुध्यस्वहितमात्मनः ॥ ३० ॥

इसमें भी तपका बलही प्रधान कारण है; सो इस तपबलका नष्ट करना तुमको उचित नहींहै ॥२६॥ कपिवीर सुग्रीवजी, देव राक्षस वा यक्ष नहीं हैं वे वानरोंके राजा हैं और श्रीरामचन्द्रजी मनुष्य हैं; इसलिये हे राक्षसनाथ ! तुम इनसे किस प्रकार बचकर जीवन धारण कर सकोगे ? क्योंकि ब्रह्माजीसे तुमने यह वर नहीं पाया कि, मनुष्य और वानरोंसे भी न मारे जाओ॥२७॥ यह सत्यही सत्यहै कि, धर्म करनेसे अधर्मका नाश होजाता है परन्तु जिसके अधर्मका फल फलाही चाहताहै वह कभी धर्मफलकोनहीं पायसकता बरन् अधर्मकेही फलको प्राप्तहोताहै॥ २८॥ पहले जो तुमने धर्म कियाहै उसका फलतो यह ऐश्वर्य निःसन्देह तुमने प्राप्त किया और इससमय पराई स्त्रीका जो हरण तुमने कियाहै इसका फलभी शीघ्रपाओगे अर्थात् तुम्हरानाश होजायगा ॥२९॥ जनस्थानमें चौदह हजार राक्षसोंका

विध्वंस, वालीका मरण श्रीरामचन्द्रजी व सुग्रीवजीकी मित्रता स्मरणकरके तुम अपनेहितकी चिन्ता करो॥३०॥यद्यपि निश्चयही हम अकेलेहैं परन्तु अश्व, रथ और गजोंके सहित समस्त लंकापुरीका नाश सरलतासे कर सकतेहैं, परन्तु श्रीरामचन्द्रजीने हमसे लंकाका विध्वंस करना निश्चय नहीं किया॥३१॥श्रीरामचन्द्रजीने रीछ वानरोंके निकट प्रतिज्ञाकीहै कि, जिनशत्रुओंने सीताजीका अपमान या तिरस्कारकियाहै हम उन सब शत्रुलोगोंका संहार अपनेहाथसे करेंगे॥३२॥अधिक क्या कहें साक्षात् इन्द्रभी श्रीरामचन्द्रजीका अपकार करके सुख नहीं पा सकते फिर तुम्हारे समान दूसरे लोगोंकी तो बातही क्या है ॥ ३३ ॥ जिनको तुम सीताजी जानते हो और जो तुम्हारी स्थानपर रहती हैं उन सीताजीको तुम काल रात्रिके समान जानो बस यही कालरात्रि समस्त लंकाका नाश करदेगी ॥ ३४ ॥

कामंखल्वहमप्येकःसवाजिरथकुंजराम् ॥ लंकांनाशयितुंसक्तस्तस्यैषतुनिश्चयः ॥ ३१ ॥ रामेणहिप्रतिज्ञातंहर्यक्षगणसन्निधौ ॥ उत्सादन
ममित्राणांसीतायैस्तुप्रधर्षिता ॥ ३२ ॥ अपकुर्वन्हिरामस्यसाक्षादपिपुरंदरः ॥ नसुखंप्राप्नुयादन्यःकिंपुनस्त्वद्विधोजनः ॥ ३३ ॥ यांसीते
त्यभिजानासियेयंतिष्ठतितेगृहे ॥ कालरात्रीतितांविद्धिसर्वलंकाविनाशिनीम् ॥ ३४ ॥ तदलंकालपाशेनसीताविग्रहरूपिणा ॥ स्वयंस्कंधा
वसक्तेनक्षेममात्मनिचिंत्यताम् ॥ ३५ ॥ सीतायास्तेजसादग्धांरामकोपप्रदीपिताम् ॥ दह्यमानामिमांपश्यपुरींसाट्टप्रतोलिकाम् ॥ ३६ ॥
स्वानिमित्राणिमंत्रींश्चज्ञातीन्भ्रातृन्सुतान्हितान् ॥ भोगान्दारांश्चलंकांचमाविनाशमुपानय ॥ ३७ ॥ सत्यंराक्षसराजेंद्रशृणुष्ववचनंमम ॥
रामदासस्यदूतस्यवानरस्यविशेषतः ॥ ३८ ॥ सर्वाँलोकान्सुसंहृत्यसभूतान्सचराचरान् ॥ पुनरेवतथास्रष्टुंशक्तोरामोमहायशाः ॥ ३९ ॥
देवासुरनरेंद्रेषुयक्षरक्षोरगेषुच ॥ विद्याधरेषुनागेषुगंधर्वेषुमृगेषुच ॥ ४० ॥

इसलिये सीतारूप कालकी फाँसीको तुम्हें अपने गलेमें बांधनेकी कुछ आवश्यकता नहीं सो इसकारण तुम अपने उद्धारका उपाय सोचो ॥३५॥ तुम बडी शीघ्रतासे देखोगे कि समस्त अटाअटारियें और राजमार्गोंके सहित यह लंकानगरी सीताजीके क्रोधसे दग्ध और श्रीरामचन्द्रजीके कोपसे भस्म हो जायगी॥३६॥ हे राक्षसनाथ ! अपने मित्र, मंत्री, जातीके लोग, भाई हित पुत्रस्त्रियाँ और लंकापुरी इन सबका विनाश तुम न करो स्वस्थ हो ॥ ३७ ॥ हे राक्षसेन्द्र ! हम श्रीरामचन्द्रजीके दास दूत और वानर हैं हम बहुतही सोच विचार कर जो सत्य वचन तुमसे कहतेहैं, वह सुनो ॥ ३८ ॥ महायशस्वी श्रीरामचन्द्रजी स्थावर, जंगम (चर व अचर) और सब जातिवाले प्राणिपुञ्जोंके समस्त लोगोंका संहार करके, फिर भी वैसेही सृष्टि उत्पन्नकर सकतेहैं ॥३९॥ देवता, असुर, नरपति,

यक्ष, रक्ष, उरग, विद्याधर; नाग, गन्धर्व, मृग ॥४०॥ सिद्ध किन्नरेन्द्र और पक्षी इत्यादि सब देशोंमें व सब कालमें ऐसा कोई भी नहींहै ॥४१॥ जो उन विष्णुके समान पराक्रमवाले श्रीरामचन्द्रजीसे संग्रामकर सके जब कि तुमने नरनाथ सब संसारके पति राजाश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीका पहले अनिष्ट कार्य कियाहै तब तो तुम्हारा जीनाही बहुत दुर्लभ होजायगा ॥४२॥ हे राक्षसपति! देवतादैत्य गन्धर्व विद्याधर नाग यक्ष कोई भी युद्धमें त्रिलोकीके नाथ श्रीरामचन्द्रजीके आगे नहीं ठहर सकता ॥४३॥ यही नहीं वरन् स्वयंभू चतुरानन ब्रह्मा त्रिपुरको दग्ध करनेवाले त्रिनेत्र रुद्र अथवा सुरनायक महेन्द्र इन्द्रभी श्रीरामचन्द्रजीके सम्मुख युद्ध करनेको समर्थ नहीं हैं ॥४४॥ महाकपि हनुमानजीने विना घवडाये यह सुन्दर अनुपम और प्यारे वचन कहे तबरावण यह अप्रिय पूर्वकालमें न सुने हुये वचन सुन

सिद्धेषुकिन्नरेंद्रेषुपतत्रिषुचसर्वतः ॥ सर्वत्रसर्वभूतेषुसर्वकालेषुनास्तिसः॥४१॥ योरामंप्रतियुध्येतविष्णुतुल्यपराक्रमम् ॥ सर्वलोकेश्वरस्येहकृत्वाविप्रियमीदृशम् ॥ रामस्यराजसिंहस्यदुर्लभंतवजीवितम् ॥४२॥ देवाश्चदैत्याश्चनिशाचरेंद्रगंधर्वविद्याधरनागयक्षाः ॥ रामस्यलोकत्रयनायकस्यस्थातुंनशक्ताःसमरेषुसर्वे॥४३॥ब्रह्मास्वयंभूश्चतुराननोवारुद्रस्त्रिनेत्रस्त्रिपुरांतकोवा ॥ इंद्रोमहेंद्रःसुरनायकोवास्थातुंनशक्तायुधिराघवस्य ॥४४॥ससौष्ठवोपेतमदीनवादिनःकपेर्निशम्याप्रतिमोऽप्रियंवचः॥दशाननःकोपविवृत्तलोचनःसमादिशत्तस्यवधंमहाकपेः॥४५॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०सुंदरकांडेएकपंचाशःसर्गः ॥५१॥सतस्यवचनंश्रुत्वावानरस्यमहात्मनः ॥ आज्ञापयद्वधंतस्यरावणःक्रोधमूर्च्छितः॥१॥वधेतस्यसमाज्ञप्तेरावणेनदुरात्मना ॥ निवेदितवतोदौत्यंनानुमेनेविभीषणः ॥२॥ तंरक्षोधिपतिंक्रुद्धंतच्चकार्यमुपस्थितम् ॥ विदित्वाचिंतयामासकार्यंकार्यविधौस्थितः ॥ ३ ॥ निश्चितार्थस्ततःसाम्नापूज्यंशत्रुजिदग्रजम् ॥उवाचहितमत्यर्थंवाक्यंवाक्यविशारदः ॥४॥

क्रोधके मारे दोनों नेत्र घुमाय हनुमानजीके वधकी आज्ञा देता हुआ ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकाण्डे भाषायामेकपंचाशः सर्गः ॥५१॥ राक्षसश्रेष्ठ रावण महात्मा हनुमानजीके यह वचन सुनकर क्रोधके मारे मूर्च्छित हो उनके विनाश करनेकी आज्ञा देता हुआ ॥ १ ॥ जब दुरात्मा रावण करके हनुमानजीके मार डालनेकी आज्ञा हुई तो बिभीषणजीने यह विचारकर उस बातको नहीं माना कि, हनुमानजीने अपनेको दूत बताया और वास्तवमें यह दूत ही हैं, सो दूत कभी नहीं मार डाला जा सकता ॥२॥ उसके पीछे बिभीषणजी रावणको क्रोधित और हनुमानजीका वध आया जान अपने कर्त्तव्य कार्यके विषय चिन्ता करने लगे ॥३॥ कुछ देरतक चिन्ता करनेके पीछे कर्त्तव्य कार्य स्थिर हो जानेपर वचन बोलनेवालोंमें चतुर विभीषणजी समझाने बुझानेके वचनोंसे

शत्रुओंके जीतनेवाले पूजनीय अपने बड़ेभाई रावणकी पूजा करके अत्यन्त हितकारी वचन बोले ॥४॥ हे राक्षसेन्द्र ! कोपको त्यागकर और क्षमाको ग्रहण करके प्रसन्न चित्तसे आप हमारी यह वार्त्ता श्रवण करें। जो लोग कि पूर्वापरकी बातोंको जानतेहैं; वह साधु स्वभाववाले राजालोग भी दूतको नहीं मारा करते ॥ ५ ॥ हे राजन्, ! हे वीर ! इस वानरका वध करना, धर्मविरुद्ध लोकाचारमें निन्दनीय, अयशका करनेवाला और आपकेयोग्य तो किसी प्रकारसे नहीं है ॥ ६ ॥ आप धर्मज्ञ, कृतज्ञ, राजधर्मविशारद, पूर्वापर सब बातोंके जाननेवाले और परमार्थतत्त्वके जाननेमें बहुतही चतुर हो ॥७॥ सो आपसरीखे पुरुष लोग भी यदि क्रोधायमान हो जावें और ऐसा करें तो शास्त्रका पढ़नाकेवल श्रमही समझाजाय ॥८॥ इस कारण हे शत्रुदमनकारी! दुःखसे प्राप्त होनेके योग्य राक्षसपते ! प्रसन्न हो युक्तायुक्तका विचार कर दूतको दंडही दीजिये ॥९॥ विभीषणजीकेऐसेवचन सुनकर राक्षस पति रावणने महाक्रोधके वश होकर उत्तर दिया ॥१०॥

क्षमस्वरोषंत्यजराक्षसेंद्रप्रसीदमेवाक्यमिदंशृणुष्व ॥ वधंनकुर्वंतिपरावरज्ञादूतस्यसंतोवसुधाधिपेंद्राः ॥ ५ ॥ राजन्धर्मविरुद्धंचलोकवृत्तंश्चगर्हितम् ॥ तवचासदृशंवीरकपेरस्यप्रमापणम् ॥६॥ धर्मज्ञश्चकृतज्ञश्चराजधर्मविशारदः ॥ परावरज्ञोभूतानांत्वमेवपरमार्थवित् ॥ ७ ॥ गृह्यंतेयदिरोषेणत्वादृशोपिविचक्षणाः ॥ ततःशास्त्रविपश्चित्त्वंश्रमएवहिकेवलम् ॥ ८ ॥ तस्मात्प्रसीदशत्रुघ्नराक्षसेंद्रदुरासद ॥ युक्तायुक्तंविनिश्चित्यदूतदंडोविधीयताम् ॥ ९ ॥ विभीषणवचःश्रुत्वारावणोराक्षसेश्वरः ॥ कोपेनमहताविष्टोवाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥ १० ॥ नपापानांवधेपापंविद्यतेशत्रुसूदन ॥ तस्मादिमंवधिष्यामिवानरंपापकारिणम् ॥ ११ ॥ अधर्ममूलंबहुदोषयुक्तमनार्यजुष्टंवचनंनिशम्य ॥ उवाचवाक्यंपरमार्थतत्त्वंविभीषणोबुद्धिमतांवरिष्ठः ॥ १२ ॥ प्रसीदलंकेश्वरराक्षसेंद्रधर्मार्थतत्त्वंवचनंशृणुष्व ॥ दूतानवध्याःसमयेषुराजन्सर्वेषुसर्वत्रवदंतिसंतः ॥ १३ ॥ असंशयंशत्रुरयंप्रवृद्धःकृतंह्यनेनाप्रियमप्रमेयम् ॥ नदूतवध्यांप्रवदंतिसंतोदूतस्यदृष्टाबहवोहिदंडाः ॥ १४ ॥

हे शत्रुओंके नाश करनेवाले ! पापी लोगोंके मारनेसे किसी प्रकारका पाप नहीं लगता इसकारण हम इस पापकारी वानरको अवश्यही मरवाडालेंगे ॥ ११ ॥ बुद्धिवान् लोगोंमें प्रथम गिने जानेके योग्य विभीषणजी रावणकी यह नीचजनोंके योग्य अधर्मकी मूल बहुत दोषोंसे युक्त वार्त्ता श्रवण करके परमार्थ तत्त्वसे सने वचन कहने लगे ॥१२॥ हे राक्षसेन्द्र हे लंकेश्वर ! प्रसन्न होकर धर्मका गूढ मर्म श्रवण कीजिये, अपने स्वामीका कार्य सिद्ध करनेके समय दूतको नहीं मारना चाहिये सदाही साधुगण इस प्रकारसे कहा करते हैं ॥ १३ ॥ इसमें सन्देह नहीं कि यह वानर आपका अति बलवान् शत्रु है; क्योंकि इसने आपके अप्रिय कार्यको कियाहै परन्तु साधुलोगोंके कहनेके अनुसार दूत कभी मार डालनेके योग्य नहीं है हां ! परन्तु शास्त्रमें उनके लिये और अनेक प्रकारके दंड

कहेहैं ॥१४॥ कोई अंग विरूप कर देना,अथवा नाक कानादि कटवा डालना, शरीरमें फोडे लगवाना, शिख मुँडवा देना, इन सब दंडोंको एक २ करके दे, या इन सब दन्डोंका एकबारही प्रयोग करना उचित है,बस दूतोंके लिये यह सब दंड कहेहैं. परंतु दूतोंके मार डालनेका दंड हमने कभीनहीं सुना॥१५॥और आप समान जिन पुरुषोंकी धर्मार्थमें विनीत बुद्धि है,और उत्तम अधमका विचार करके जो कार्यको निश्चय करतेहैं;भला वह किसप्रकारसे कोपके वश होसकते हैं,देखिये! सत्य गुणका आश्रय लेनेवाले लोग कभी क्रोध नहीं करते ॥१६॥ हे वीर!धर्मवादमें क्या लोकाचारमें,क्या बुद्धिसे शास्त्र का मर्म ग्रहण करनेमें सबही बातोंमें आपके तुल्य दूसरा कोई भी नहीं है, आप समस्त सुर व असुरोंके मध्यमें श्रेष्ठ पदपर आरूढ हैं ॥१७॥ ''अधिक क्या कहा जाय! आप पराक्रमी,

वैरूप्यमंगेषुकशाभिघातोमौंड्यंतथालक्षणसन्निपातः ॥ एतान्हिदूतेप्रवदंतिदंडान्वधस्तुदूतस्यननः श्रुतोस्ति ॥ १५ ॥ कथंचधर्मार्थविनीतबुद्धिःपरावरप्रत्ययनिश्चितार्थः ॥ भवद्विधःकोपवशेहितिष्ठेत्कोपंनगच्छंतिहिसत्त्ववंतः ॥ १६ ॥ नधर्मवादेनचलोकवृत्तेनशास्त्रबुद्धिग्रहणेषुवापि ॥ विद्येतकश्चित्तववीरतुल्यस्त्वंह्युत्तमःसर्वसुरासुराणाम् ॥ ॥ १७ ॥ " पराक्रमोत्साहमनस्विनांचसुरासुराणामपिदुर्जयेन ॥ त्वयाप्रमेयेणसुरेंद्रसंघाजिताश्चयुद्धेष्वसकृन्नरेंद्राः ॥ १ ॥ इत्थंविधस्यामरदैत्यशत्रोःशूरस्यवीरस्यतवाजितस्य ॥ कुर्वंतिवीरामनसाप्यलीकंप्राणैर्विमुक्तानतुभोःपुराते ॥ २ ॥ " नचाप्यस्यकपेर्घातेकंचित्पश्याम्यहंगुणम् ॥ तेष्वयंपात्यतांदंडोयैरयंप्रेषितःकपिः ॥ १८॥ साधुर्वायदिवाऽसाधुःपरैरेषसमर्पितः ॥ ब्रुवन्परार्थंपरवान्नदूतोवधमर्हति ॥ १९ ॥ अपिचास्मिन्हतेनान्यंराजन्पश्यामिखेचरम् ॥ तस्मान्नास्यवधेयत्नःकार्यःपरपुरंजय ॥ भवान्सेंद्रेषुदेवेषुयत्नमास्थातुमर्हति ॥ २० ॥

उत्साहशील,चिंताशीलहैं,इसलिये देवता और दैत्यगणभी आपको नहीं जीत सकतेकहीं भी आपकी तुल्यता नहींहै । आपने वारंवार असंख्य देवताओंके समूहव राजा लोगोंकोयुद्धमें जीताहै ॥१॥ जो कि वीर पुरुष मनमें भी ऐसे शूर वीर,अजीत,और देव दानवगणोंमें शत्रु आपका कुछ अनिष्ट करते हैं तों उनका भी प्राण लेलियाजाताहै, सो हे प्रभो! पहले आप देखही चुके हैं ॥२॥" और इस वानरका नाश करनेमें हम किसी प्रकारका भी गुण वा उपकार नहीं देखते इसलिये जिन्होंने इसको यहांपर भेजाहै उन्हीं लोगोंको वधका दंड देना उचितहै॥१८॥यह वानर साधु हो या असाधु हो परन्तु इसको शत्रुलोगोंनेयहांपर पठाया है।और दूत पराधीन है,पराये अर्थ व वचन कहनेसे वह किसीप्रकार वधके योग्य नहीं हो सकता॥१९॥हे राजन्!इस वानरके मार डालनेपर फिर यहां पर कोईआका

शचारी आताहुआ दिखलाई न देगा। इसकारण हे पराये पुरके जीतनेवाले! इसवानरके विनाश करनेकी वासनाका कुछ प्रयोजन नहीं। हां, यह यत्न तौ इन्द्रादि देव गणोंके प्रति आपको करना चाहिये ॥२०॥ हे युद्धप्रिय? इस दूतके मारे जाने पर हम और ऐसा किसीको नहीं देखते जोकि आपके विरोधी, दुर्जयी सुशिक्षित राम लक्ष्मणको युद्ध करनेका उत्साह दिलादे ॥२१॥ हे राक्षसगणोंके मनोंको आनंद देनेवाले! पराक्रम और उत्साहमें चित्त लगाये देवता और दानव गण भी आपको नहीं जीत सकते। इस कारण राक्षस लोगोंकी युद्धकी अभिलाषाका नाश करना आपको उचित नहींहै ॥२२॥ आपके अधीनमें करोडों योद्धा हैं, वह सबही आपके हितकारी शूत्रु एकाग्रचित्त अच्छे कुलमें उत्पन्न हुए अतिशय ऊंचे मतवाले, शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ और आप करके उत्तम रूपसे पाले जाते हुये हैं ॥ २३ ॥ सो इस सेनाके कुछ अंशको इससमय आज्ञा दे दीजिये कि; वह आपकी आज्ञासे मूढ स्वभाव राम लक्ष्मणको पकड़ बाँध यहां ले आवें, क्योंकि

अस्मिन्विनष्टेनहिभूतमन्यंपश्यामियस्तौनरराजपुत्रौ ॥ युद्धाययुद्धप्रियदुर्विनीतावुद्योजयेद्वैभवताविरुद्धौ ॥२१॥ पराक्रमोत्साहमनस्विनांच सुरासुराणामपिदुर्जयेन ॥ त्वयामनोनंदननैर्ऋतानांयुद्धायनिर्नाशयितुंनयुक्तम् ॥ २२ ॥ हिताश्चशूराश्चसमाहिताश्चकुलेषुजाताश्चमहा गुणेषु ॥ मनस्विनःशस्त्रभृतांवरिष्ठाःकोपप्रशस्ताःसुभृताश्चयोधाः ॥ २३ ॥ तदेकदेशेनबलस्यतावत्केचित्तवादेशकृतोद्ययांतु ॥ तौराजपुत्रा वुपगृह्यमूढोपरेषुतेभावयितुंप्रभावम् ॥२४॥ निशाचराणामधिपोनुजस्यविभीषणस्योत्तमवाक्यनिष्टम् ॥ जग्राहबुद्ध्यासुरलोकशत्रुर्महाबलो राक्षसराजमुख्यः ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे द्विपंचाशः सर्गः ॥ ५२ ॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वादशग्रीवोमहात्मनः ॥ देशकालहितंवाक्यंभ्रातुरुत्तरमब्रवीत् ॥ १ ॥ सम्यगुक्तंहिभवतादूतवध्याविगर्हिता ॥ अवश्यंतुवधायान्यःक्रि यतामस्यनिग्रहः ॥ २ ॥ कपीनांकिललांगूलमिष्टंभवतीभूषणम् ॥ तदस्यदीप्यतांशीघ्रंतेनदग्धेनगच्छतु ॥ ३ ॥ ततःपश्यंत्वमुंदीनमंगवै रूप्यकर्शितम् ॥ सुमित्रज्ञातयःसर्वेबांधवाःससुहृज्जनाः ॥ ४ ॥

शत्रुलोगोंके निकट अपना प्रभाव प्रगट करना उचित है ॥ २४ ॥ देवतागणोंके शत्रु राक्षसराज श्रेष्ठ निशाचर पति महा बलवान् रावणने भली भाँतिसे सोच विचार कर अपने प्रयोजनके और श्रेष्ठ समझ छोटे भाई बिभीषणके यह हितकारी वचनग्रहण किये ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां द्विपंचाशः सर्गः ॥ ५२ ॥ महाबली रावण, महात्मा बिभीषणके देशकालोचित वचन सुनकर अपने भाईसे बोला ॥ १ ॥ हे बिभीषण ! तुमने यथार्थ कहा, दूतका मार डालना अति निन्दाका कार्य है, परंतु मार डालनेके अतिरिक्त और किसी प्रकार का दंड तो इसको अवश्य ही दिया जायगा ॥ २ ॥ पूंछ वानरोंका अति प्यारा गहना है इसलिये शीघ्र इसकी पूंछको भस्म कर दो। तब यह वानर भस्म पूंछके साथ अपने स्वामी के पास जाये ॥ ३ ॥ जब इसकी पूंछ जल जायगी, तब इसके जातिवाले लोग, बान्धव सुहृद और मित्रगण सबही इसको देखेंगे कि अंगविरूप होनेसे यह कपि दुर्बल,

और व्याकुल होगयाहै ॥४॥ यह कह फिर राक्षसराज रावणने आज्ञा दी कीराक्षसलोग इसकी पूंछमें आग लगाय इस वानरको चौराहे व छोटे मार्गोंके साथ सारे नगर कीपरिक्रमा कराय लावें ॥५॥ क्रोधित स्वभाव राक्षसगण रावणकी यह आज्ञा पाय ढेरके ढेर पुराने रुईके वस्त्रोंसे हनुमान्‌जी की पूंछको लपेटने लगे ॥६॥ बनके बीच सूखा काठ पायकर अग्नि जिसप्रकार बढती है, वैसेही पूंछमें कपडे लपेट जानेसे महा कपि हनुमानजी बढ गये ॥७॥ कपडा लपेटनेके पीछे उसको तेलसे गीलाकर राक्षसोंने पूँछमेंअग्नि लगादी, तब हनुमान्‌जी उस जलतीहुईपूँछसे राक्षसोंको मारने लगे॥८॥ रोष व क्रोधके मारे हनुमान्‌जीकी आत्मा छायगई और वदन मंडल प्रातःकालके सूर्यके समान लाल हो कर दीपने लगा, तब क्रूरस्वभाववाले राक्षस लोगोंने मिलकर ॥ ९ ॥ फिर कपि श्रेष्ठ हनुमान्‌जीको बडी मजबूतीसे बांधा और हनुमान्‌जीको देखकर स्त्री बालक वृद्ध सब हर्षित होने लगे तब बीत हनुमान्‌जीनेबंधनमें पडकर उसकालके अनुसार यह मति की॥१०॥

आज्ञापयद्राक्षसेंद्रः पुरंसर्वंससत्त्वरम् ॥ लांगूलेनप्रदीप्तेनरक्षोभिः परिणीयताम् ॥५॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराक्षसाःकोपकर्कशाः ॥ वेष्टंतेतस्यलांगूलंजीर्णैःकार्पासिकैःपटैः ॥ ६ ॥ संवेष्ट्यमानेलांगूलेव्यवर्धतमहाकपिः शुष्कमिंधनमासाद्यवनेष्विवहुताशनः ॥ ७ ॥ तैलेनपरिषिच्याथतेग्नितत्रोपपादयन् ॥ लांगूलेनप्रदीप्तेनराक्षसांस्तानताडयत् ॥८॥ रोषामर्षपरीतात्माबालसूर्यसमाननः ॥ सभूयःसंगतैःक्रूरैराक्षसैर्हरिपुंगवः॥९॥ सहस्त्रीबालवृद्धाश्चजग्मुःप्रीतिंनिशाचराः ॥ निबद्धःकृतवान्वीरस्तत्कालसदृशींमतिम् ॥१०॥ कामंखलुनमेशक्तानिबद्धस्यापिराक्षसाः ॥ छित्त्वापाशान्समुत्पत्यहन्यामहमिमान्पुनः ॥ ११ ॥यदिभर्तृहितार्थायचरंतंभर्तृशासनात् ॥ निबध्नंतेदुरात्मानोनतुमेनिष्कृतिःकृता ॥१२॥ सर्वेषामेवपर्याप्तोराक्षसानामहंयुधि ॥ किंतुरामस्यप्रीत्यर्थंविषहिष्येहमीदृशम् ॥ १३ ॥ लंकाचारयितव्यामेपुनरेवभवेदिति ॥ रात्रौनहिसुदृष्टामेदुर्गकर्मविधानतः ॥ १४ ॥ अवश्यमेवद्रष्टव्यामयालंकानिशाक्षये ॥ कामंबध्नंतुमेभूयःपुच्छस्योद्दीपनेनच ॥ १५ ॥

कि, हमारे बंधनकी अवस्थामें चेष्टारहित होजाने परभी निशाचर लोग कभी हमारेनिकट, अपना पराक्रम प्रगट करनेको समर्थ नहीं होंगे, हम अभी इन समस्त बंधनोंको तोड ताड कूदकर इन सब राक्षसोंका संहार कर सकते हैं ॥११॥ इससमय हम श्रीरामचन्द्रजीके हितके लिये घूमतेहैं। इससमय यदि इन दुरात्मा राक्षसोंने रावणकी आज्ञासे हमको बाँधभी लियाहै; परन्तु जितनी हानि हम प्रथम इनकीकर चुके हैं, उसका यथार्थ बदला यह अबतक हमसे कुछ नहीं ले सकेहैं॥१२॥ यद्यपि हम इकलेही संग्राममें समस्त राक्षसोंका संहार कर सकतेहैं, तथापि श्रीरामचन्द्रजीकी प्रसन्नताके लिये हमइनबन्धनादिकोंकोभी सहन करलेंगे ॥ १३ ॥ विशेष करके रात्रिमें घूमनेके समय हमने लंकाके सारे किले भलीभाँति नहीं देखेहैं सो इस भले अवसरको पाय लंकाके समस्त स्थान घूम २ कर देखेंगे ॥१४॥ हमको

एकबार दिनके समय लंकाका देखना भालना अवश्य उचित है, इसलिये बहुत अच्छा यह हमें बांधे और पूंछमें अग्नि लगायकर ॥१५॥ यह राक्षसलोगहमको पीड़ा दे तोरहेहैं, परन्तु हमारा मन कुछभी खिन्न नहीं हुआ महासत्त्ववान् हनुमान्जी घेरेजाकर इसप्रकारसे चिन्ता कर रहेथेकि, इन कपिकुंजरको॥१६॥राक्षस लोग पकड़कर हर्षित चित्तसे पुरीमें फिरनेको ले चले और शंख भेरी बजाय २ इस राजदंडकी घोषणा करते हुए ॥ १७ ॥ हनुमान्जीको समस्त लंकापुरीमें घुमाने लगे, शत्रुओंके दमन करनेवाले हनुमान्जी क्रूरकर्म करनेवाले राक्षसोंके चलानेसे सुख सहित चले जाते थे ॥ १८ ॥ और घूम घामकर राक्षसों द्वारा समस्त लंका हनुमान्जीने देखी चित्र विचित्रविमानमहाकपि हनुमान्जीने देखे ॥१९॥ भाँति२के रचेरचाये भूमिभाग देखे, उनके द्वारोंपर बडे२चबूतरेमणियोंसे

क्रीडांकुर्वंतिरक्षांसिनमेस्तिमनसःश्रमः॥ततस्तेसंवृताकारंसत्त्ववंतंमहाकपिम् ॥१६॥ परिगृह्ययुर्हृष्टाराक्षसाःकपिकुंजरम् ॥ शंखभेरीनिनादैश्चघोषयंतःस्वकर्मभिः ॥१७॥ राक्षसाःक्रूरकर्माणश्चारयंतिस्मतांपुरीम् ॥ अन्वीयमानोरक्षोभिर्ययौसुखमरिंदमः ॥१८॥ हनूमांश्चारयामासराक्षसानांमहापुरीम् ॥ अथापश्यद्विमानानिविचित्राणिमहाकपिः ॥ १९ ॥संवृतान्भूमिभागांश्चसुविभक्तांश्चचत्वरान् ॥ रथ्याश्चगृहसंबाधाःकपिःशृंगाटकानिच॥२०॥ तथारथ्योपरथ्याश्चतथैवचगृहांतरान्॥चत्वरेषुचतुष्केषुराजमार्गेतथैवच ॥२१॥ घोषयंतिकपिंसर्वेचारइत्येवराक्षसाः ॥ दीप्यमाने ततस्तस्यलांगूलाग्रेहनूमतः ॥ २२ ॥ राक्षस्यस्ताविरूपाक्ष्यःशंसुर्देव्यास्तदप्रियम् ॥ यस्त्वयाकृतसंवादःसीतेताम्रमुखःकपिः ॥ २३ ॥ लांगूलेनप्रदीप्तेनसएषपरिणीयते ॥ श्रुत्वातद्वचनंक्रूरमात्मापहरणोपमम् ॥ २४ ॥ वैदेहीशोकसंतप्ताहुताशनमुपागमत् ॥ मंगलाभिमुखीतस्यसातदासीन्महाकपेः॥ २५ ॥

जडे हुये देखे, बहुत चौराहे घने बसेहुए बहुतसे घर और अनेक चौक ॥२०॥ राजमार्गकी बडे२सडकें, व छोटी२गलियें और दो घरोंके बीचकी भूमियें देखीं. इसप्रकार उन सब स्थानोंमें हनुमान्जी विचरण करते हुए ॥२१॥ जहां कहीं हनुमान्जी निकलतेथे उस समय वहीं सब राक्षस लोग इनको चार२ (गूढचारी) कहकर पुकारतेथे । इसप्रकार जब हनुमान्जीकी पूंछका अग्रभाग जलने लगा ॥२२॥ तब विरूप नेत्रोंवाली राक्षसियें सीताजीसे यह बुरा समाचार कहती हुई कि, हे सीते ! तुमने जिस लाल मुखवाले वानरसे कथा वार्त्ता कही थी॥२३॥राक्षस लोग उसकी पूंछमें आग लगायकरसब जगह उसको घुमाय रहेहैं। प्राणोंका नाश करनेवाले यह क्रूर वचन सुन ॥२४॥ शोकसे अतिसंतापित हो जानकीजी मनसे अग्निकी विनय करने लगीं । और हनुमानजीकी मंगलकामनासे ॥२५॥

पवित्र हो बार२अग्निका ध्यान करती हुई यह बोलीं कि;यदि हमने पतिकी सेवाकी है और जो कुछ तप कियाहै ॥२६॥ और जो हमने श्रीरामचन्द्रजीको ही अपना पति समझा है;तो हे हुताशन ! तुम हनुमानजीके लिये शीतल होजाओ इस विनय प्रार्थनाके पश्चात् तीक्ष्ण ज्वालायुक्त दक्षिणावर्त शिखा घुमाता अग्नि जानकीके सन्मुख॥२७॥हनुमान्‌जीके शुभसंवाद देनेकेही लिये मानों प्रज्वलित होने लगा । व उस समय हनुमानजीका पिता पवन भी हिमालय पर्वतके निकट बहनेवाले बर्फकण मिले पवनके समान देवी जानकीजीके सन्मुख शीतल और स्वास्थ्यकर होकर चलने लगा॥२८॥उधर पूंछको जलती हुई देखकर हनुमानजी चिन्ता करने लगे कि,अग्नि चारों ओरसे प्रदीप्त होकर भी हमको क्यों नहीं जलाती ?॥२९॥ यह महाज्वाला महालपटयुक्त होकर भी किस कारणसे हमको क्लेश नहीं देती है, बरन् हमारी पूंछके आगे तो यही जान पडता है कि,मानो हिमका पिंड पूछके अग्रभागमें धरा है॥३०॥अथवा यह वह दिव्य बात हो कि, समुद्रपार होनेके

उपतस्थेविशालाक्षीप्रयताहव्यवाहनम् ॥ यद्यस्तिपतिशुश्रूषायद्यस्तिचरितंतपः ॥२६॥ यदिवात्वेकपत्नीत्वंशीतोभवहनूमतः॥ ततस्तीक्ष्णार्चिरव्यग्रःप्रदक्षिणशिखोनलः ॥२७॥ जज्वालमृगशावाक्ष्याःशंसन्निवशुभंकपेः ॥ हनूमज्जनकश्चैवपुच्छानलयुतोनिलः ॥ ववौस्वास्थ्यकरोदेव्याःप्रालेयानिलशीतलः ॥ २८ ॥ दह्यमानेचलांगूलेचिंतयामासवानरः ॥ प्रदीप्तोग्निरयंकस्मान्नमांदहतिसर्वतः ॥२९॥ दृश्यतेचमहाज्वालःकरोतिचनमेरुजम्॥ शिशिरस्येवसंपातोलांगूलाग्रेप्रतिष्ठितः ॥३०॥ अथवातदिदंव्यक्तंयद्दृष्टंप्लवतामया ॥ रामप्रभावादाश्चर्यंपर्वतःसरितांपतौ ॥ ३१ ॥ यदितावत्समुद्रस्यमैनाकस्यचधीमतः ॥ रामार्थंसंभ्रमस्तादृक्किमग्निर्नकरिष्यति ॥ ३२ ॥ सीतायाश्चानृशंस्येनराघवस्यचतेजसा॥ पितुश्चममसख्येननमांदहतिपावकः ॥३३॥ भूयःसचिंतयामासमुहूर्तंकपिकुंजरः ॥ कथमस्मद्विधस्येहबंधनंराक्षसाधमैः ॥३४॥ प्रतिक्रियास्ययुक्तास्यात्सतिमह्यंपराक्रमे ॥ ततश्छित्त्वाचतान्पाशान्वेगवान्वैमहाकपिः ॥ ३५ ॥

समय श्रीरामचंद्रजीके प्रभावसे जब हमने समुद्रके मध्यमें पर्वतरूप आश्चर्य देखा था॥३१॥इसमें कोई संदेह नही कि,उस समय श्रीरामचंद्रजीकेही प्रभावसे हमने यह बात देखी थी । समुद्र और बुद्धिमान् मैनाक यदि श्रीरामचन्द्रजीको मान्य करते हैं फिर भला श्रीरामचन्द्रजीका हित करनेके लिये अग्नि हमारे लिये क्यों न शीतल होजायँगे ॥३२॥ या सीताजीके सौम्य स्वभावसे श्रीरामचन्द्रके तेज प्रभावसे और पिता पवनजीसे मित्रताई होनेके कारण इन तीन कारणोंसे यह अग्नि हमको नहीं जलाती है ॥३३॥ उसके पीछे वानर केसरी बलवान् हनुमान्‌जी फिर क्षणभरतका चिंता करते रहे कि; पराक्रम रहते नीच राक्षस लोग हम सरीखे पुरुषको किस प्रकारसे बाँध सकते हैं॥३४॥इसलिये इन बन्धनोंको छोडकर इन राक्षसोंसे इस बांधनेका बदला लेना चाहिये.इस प्रकार विचार वेगवान् हनुमान्‌जी उस सब

बन्धनोंको तोड ताड ॥३५॥ गर्जकर बडे वेगसे उछल गये उसके पीछे श्रीमान् कपिश्रेष्ठ हनुमान्जी पहाडके शिखरके समान ऊंचे नगरके द्वारपर ॥३६॥ अति वेगसे चढ गये कि; जहां बहुतसे राक्षस खड़े थे उसीपर आप चढकर क्षणमात्रमें पर्वताकार होगये॥३७॥ और फिर क्षणमात्रमें छोटा शरीर धारण कर लिया कि, जिससे सब बंधन ढीले होकर शरीरमेंसे निकल पड़े उसके पीछे वह श्रीमान् हनुमान्जी बन्धनोंसे छूटकर फिर पर्वतके समान आकार धारण करलेते हुए ॥३८॥तत्पश्चात् इधर उधर देख उस फाटकके ऊपर रक्खी काले लोहेसे बनी एक गदा देखकर उसको उठा लिया व उससे ही उन सब राक्षसों को मारडाला कि, जो रावणके भेजे इनको घेर रहे थे॥३९॥ संग्राममें प्रचंड विक्रमकारी हनुमानजी रखवालोंको मार चारों ओरसे देखने लगे उस कालमें पूँछमें लगी हुई

उत्पपाताथवेगेननर्नादचमहाकपिः ॥ पुरद्वारंततःश्रीमाञ्च्छैलशृंगमिवोन्नतम् ॥ ३६ ॥ विभक्तरक्षःसंबाधमाससादानिलात्मजः ॥ सभूत्वाशैलसंकाशःक्षणेनपुनरात्मवान्॥३७॥ ह्रस्वतांपरमांप्राप्तोबंधनान्यवशातयत् ॥ विमुक्तश्चाभवच्छ्रीमान्पुनःपर्वतसन्निभः ॥३८॥ वीक्षमाणश्च ददृशेपरिघंतोरणाश्रितम् ॥ सतंगृह्यमहाबाहुःकालायसपरिष्कृतम् ॥ रक्षिणस्तान्पुनःसर्वान्सूदयामासमारुतिः ॥३९॥ सतान्निहत्वारणचंडविक्रमःसमीक्षमाणःपुनरेवलंकाम् ॥ प्रदीप्तलांगूलकृतार्चिमालीप्रकाशितादित्यइवार्चिमाली ॥ ४० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच० सा० सुंदरकांडे त्रिपंचाशः सर्गः ॥५३॥ वीक्षमाणस्ततोलंकांकपिःकृतमनोरथः ॥ वर्धमानसमुत्साहःकार्यशेषमचिंतयत् ॥१॥ किंनुखल्ववशिष्टंमेकर्तव्यमिहसांप्रतम् ॥ यदेषांरक्षसांभूयःसंतापजननंभवेत् ॥ २ ॥ वनंतावत्प्रमथितंप्रकृष्टाराक्षसाहताः ॥ बलैकदेशःक्षपितःशेषंदुर्गविनाशनम् ॥ ३ ॥ दुर्गेविनाशितेकर्मभवेत्सुखपरिश्रमम् ॥ अल्पयत्नेनकार्येस्मिन्ममस्यात्सफलःश्रमः ॥ ४ ॥

आगकी लपटके प्रज्वलित होनेसे हनुमान्जी किरणजालसे युक्त दुपहरियाके सूर्यके समान प्रकाशित होने लगे ॥ ४० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि० सुं० भाषायां त्रिपंचाशः सर्गः ॥५३॥ मनोरथ सिद्ध होजानेके कारण हनुमान्जी उत्साहसे परिपूर्ण होगये वह लंकाकी ओर देख बचे बचाये कार्यके विषयमें चिन्ता करने लगे ॥१॥ इस समय हमको यहां पर कौनसा कार्य करना उचित है कि,जिससे इन समस्त राक्षसोंको बडी भारी संतापना प्राप्त हो ॥२॥ अशोक वनको पहले ही उजाड चुके हैं मुखिया २राक्षसोंको मारकर सेनाका कुछ अंश भी संहार कर चुके हैं; बस इस समय इस किलेका ही विनाश करना हमें शेष रहा है ॥३॥ इस किलेके विध्वंस होजानेपर हमारा कार्य भली भाँतिसे सिद्ध हो जायगा, अधिक क्या कहे कि, हमारा समुद्र पार होना, और

सीताजीको खोजनेके लिये परिश्रम करना यह सब सरलतासे सफल हो जायगा ॥ ४ ॥ हमारी पूँछमें जो यह अग्नि प्रज्वलित हो रहे हैं, सो उत्तम२गृहोंको भस्म करके इनको भी भली भाँति तृप्त करना हमको उचित हैं ॥५॥इस प्रकारसे कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जीने जलती हुई पूंछ लेकर बिजलीके सहितमेघके समान लंका नगरीके घरोंपर घूमना आरंभ किया ॥ ६ ॥ और इधर उधर राक्षस लोगोंके एक२गृहसे दूसरे घरपर फुलवाडी व मंदिरोंपर निडर हृदयसे घूमने लगे ॥७॥ उसके पीछे पवनके समान बलवान् महाकपि हनुमान्‌जीने छलांग मारकर सबसे प्रथम प्रहस्तके भवनमें आय उसमें अग्नि लगाई ॥८॥ फिर वीर्यवान् महाकपि हनुमान्‌जीने महापार्श्वके गृहपर कूद वहां भी कालाग्निके समानअग्नि लगाय दी ॥९॥ वहांसे वज्रदंष्ट्रके घरपर कूदे और आगलगाय फिर शुकनाम

योह्ययंममलांगूलेदीप्यतेहव्यवाहनः॥ अस्यसंतर्पणंन्याय्यंकर्तुमेभिर्गृहोत्तमैः ॥५॥ ततःप्रदीप्तलांगूलःसविद्युदिवतोयदः ॥ भव नाग्रेषुलंका याविचचारमहाकपिः ॥ ६ ॥ गृहाद्गृहंराक्षसानामुद्यानानिचवानरः ॥ वीक्षमाणोह्यसंत्रस्तःप्रासादांश्चचचारसः ॥७॥ अवप्लुत्यमहावेगःप्रह स्तस्यनिवेशनम्॥ अग्निंतत्रविनिक्षिप्यश्वसनेनसमोबली ॥८॥ ततोन्यत्पुप्लुवेवेश्ममहापार्श्वस्यवीर्यवान्॥ मुमोचहनुमानग्निंकालानलशिखो पमम् ॥९॥ वज्रदंष्ट्रस्यचतथापुप्लुवेसमहाकपिः ॥ शुकस्यचमहातेजाःसारणस्यचधीमतः ॥१०॥ तथाचेंद्रजितोवेश्मददाहहरियूथपः ॥ जंबु मालेःसुमालेश्चददाहभवनंततः ॥ ११ ॥ रश्मिकेतोश्चभवनंसूर्यशत्रोस्तथैवच ॥ ह्रस्वकर्णस्यदंष्ट्रस्यरोमशस्यचरक्षसः ॥ १२ ॥ युद्धोन्मत्त स्यमत्तस्यध्वजग्रीवस्यरक्षसः॥ विद्युज्जिह्वस्यघोरस्यतथाहस्तिमुखस्यच ॥१३॥ करालस्यविशालस्यशोणिताक्षस्यचैवहि ॥ कुंभकर्णस्यभव नंमकराक्षस्यचैवहि ॥ १४ ॥ नरांतकस्यकुंभस्यनिकुंभस्यमहात्मनः ॥ यज्ञशत्रोश्चभवनंब्रह्मशत्रोस्तथैवच ॥ १५ ॥ वर्जयित्वामहातेजा विभीषणगृहंप्रति ॥ क्रममाणःक्रमेणैवददाहहरिपुंगवः ॥ १६ ॥

तेजवान् राक्षसके गृहको भस्मकर फिर बुद्धिमान्‌सारणके घरको फूँक देते हुए ॥१०॥ इसी प्रकारसे वानरयूथप हनुमान्‌जीने इन्द्रजीका भवन जलाया। फिर जम्बु माली सुमालीके गृहोंको दाह किया॥११॥फिर रश्मिके घर; फिर सूर्यशत्रुका तत्पश्चात् ह्रस्वकर्ण, ह्रस्वदंष्ट्र और रोमश निशाचरका घर जलाया ॥१२॥ फिर युद्धोन्मत्त, मत्त ध्वजग्रीव; विद्युज्जिह्व, घोरहस्तिमुखका घर जलाया ॥१३॥ फिर कराल विशाल, शोणिताक्ष, मकराक्ष और कुंभकर्णके घर भस्म किये ॥१४॥ फिर नरांतक, कुम्भ, निकुंभके घर महात्मा हनुमान्‌जीने दग्ध किये, उसके पीछे यज्ञशत्रुका घर जलायकर फिर ब्रह्मशत्रुके गृहको दाह किया ॥१५॥ केवल महातेजस्वी

हनुमान्‌जीने युक्तिपूर्वक कूदकर विभीषणका गृह छोड दिया और कूद२कर सब घरोंको जलाया ॥१६॥ धनवानोंके भवनोंमें जो जो महामूल्यवान् धनसम्पत्ति थी कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जीने उस सबको जलादिया ॥१७॥ इस सब बडे२मंदिरोंको जलाय श्रीमान पवनंदन हनुमान्‌जी राक्षसपति रावणके भवनपर पहुँचे ॥१८॥ यह सर्वश्रेष्ठगृह विविधरत्न और मंगलमयद्रव्योंसे शोभित, देखनेमें मेरु व मन्दराचलके समान था ॥१९॥ वीर हनुमान्‌जी अपनी पूँछकी जलतीहुई आग इस रावणके स्थानमें लगाय युगक्षय होनेके समय गर्जनेवाले बादलके समान गंभीर शब्दसे गरजे ॥ २० ॥ उस समय वायुका वेग अतिप्रबल होनेके कारण यह अग्निकालाग्निके समान प्रज्वलित हो उठी ॥२१॥ उस प्रज्वलित अग्निको पवन अति प्रचंड करके एकगृहसे दूसरे गृहपर पहुँचाता था कांचन निर्मित झरोखोंसे युक्त

तेषुतेषुमहार्हेषुभवनेषुमहायशाः ॥ गृहेष्वृद्धिमतामृद्धिंददाहकपिकुंजरः ॥१७॥ सर्वेषांसमतिक्रम्यराक्षसेंद्रस्यवीर्यवान् ॥आससादाथलक्ष्मीवान्रावणस्यनिवेशनम् ॥ १८ ॥ ततस्तस्मिन्गृहेमुख्येनानारत्नविभूषिते ॥ मेरुमंदरसंकाशेनानामंगलशोभिते ॥ १९ ॥ प्रदीप्तमग्निमुत्सृज्य लांगूलाग्रेप्रतिष्ठितम् ॥ननादहनुमान्वीरोयुगांतजलदोयथा ॥२०॥ श्वसनेनचसंयोगादतिवेगोमहाबलः ॥ कालाग्निरिवजज्वालप्रावर्धतहुतासनः ॥ २१ ॥ प्रदीप्तमग्निंपवनस्तेषुवेश्मसुचारयन् ॥तानिकांचनजालानिमुक्तामणिमयानिच ॥२२॥ भवनान्यवशीर्यंतरत्नवंतिमहांतिच ॥ तानिभग्नविमानानिनिपेतुर्वसुधातले ॥ २३ ॥ भवनानीवसिद्धानामंबरात्पुण्यसंक्षये ॥ संजज्ञेतुमुलःशब्दोराक्षसानांप्रधावताम् ॥ २४ ॥ स्वेस्वेगृहपरित्राणेभग्नोत्साहोज्झितश्रियाम् ॥नूनमेषोग्निरायातःकपिरूपेणहाइति ॥ २५ ॥ क्रंदंत्यःसहसापेतुःस्तनंधयधराःस्त्रियः ॥ काश्चिदग्निपरीतांग्योहर्म्येभ्योमुक्तमूर्धजाः ॥ २६ ॥ पतंत्योरेजिरेऽभ्रेभ्यःसौदामन्यइवांबरात् ॥ वज्रविद्रुमवैदूर्यमुक्तारजतसंहतान् ॥ २७ ॥

रत्नोंकी राशिसे विभूषित मुक्तामणि लगे हुए ॥२२॥ बडे २भवन फट२कर भस्म होगये और बडे२भारी धवरहरे भी भस्म होकर पृथ्वीपर भहरायपडे ॥२३॥ पुण्य क्षय होजानेपर सिद्ध लोगोंके स्थान जिस प्रकार आकाशसे छूटकर पृथ्वीपर गिर पडते हैं, इसी प्रकार सब गृहभी टूट फूट कर गिरपड़े उस समय इधर उधर भागते हुयेराक्षसोंका बडा भारी शब्द हुआ ॥२४॥ कारण कि, निज२भवनोंकी रक्षा करनेमें सबका उत्साह टूट गया था; वह सब ही अपनी २ सम्पत्ति छोड कर कहनेलगे कि, अरे! यह अग्निही निश्चय वानरका रूप धारणकर यहां आया है ऐसा कह२कर रोने लगे ॥२५॥ राक्षसियें दूध पीते हुए अपने२बच्चोंको गोदमें लिये रोते २ सहसा पृथ्वीपर गिर पडीं. कोई सर्वांगमें आग लगानेसे बाल छोडे बडे२मंदिरोंके ऊपरसे ॥२६॥ गिरनेके समय आकाशसे गिरी हुई बिजलीके

समान शोभायमान होने लगीं । हीरा, मूंगा, वैदूर्यमणि, मोती, चांदी सहित॥२७॥ मन्दिरोंसे गल२कर बहते अनेक प्रकारके धातु समूह हनुमानजीने देखे। अग्नि जिस प्रकार ढेरके ढेर सूखे काठ और तिनकोंके भस्म करनेसे तृप्त नहीं होता वैसेही॥२८॥ राक्षसोंका वध करके हनुमानजी कुछ भी तृप्त न हुए बरन् इनकी यही इच्छा थी कि सबही इतिश्री करदें । हनुमानजीसे इतने राक्षस मारे गये थे कि लंकाकी भरकर भूमिमें गिरे हुए राक्षसोंको जगह नहीं मिलती थी एकके ऊपर एक गिरपडे थे ॥२९॥ जिस प्रकार महादेवजी ने त्रिपुरको भस्म किया था, वैसेही वेगवान् महात्मा वानर श्रेष्ठ हनुमान्‌जीने लंकापुरीको भस्म कर डाला॥३०॥ उसके पीछे वह अग्नि भयंकर वेगवान हनुमानजी करके छोडा जा कर लंकापुरीके पर्वत शिखर पर लपटों को फैलाय प्रज्वलित हो गया॥३१॥ और पवन की सहायतासे प्रलय के समय की अग्निसा शरीर धारण कर आकाश मंडल को स्पर्श करता हुवा बढने लगा निशाचर लोगोंके शरीरोंको घृतरूपमें पाय उस अग्निकी निर्धूम

विचित्रान्भवनाद्धातून्स्यंदमानान्ददर्शसः॥ नाग्निस्तृप्यतिकाष्ठानांतृणानांचयथातथा ॥२८॥ हनूमान्राक्षसेंद्राणांवधेकिंचिन्नतृप्यति ॥ नहनूमद्विशस्तानांराक्षसानांवसुंधरा ॥ २९ ॥ हनूमतावेगवतावानरेणमहात्मना ॥ लंकापुरंप्रदग्धंतद्रुद्रेणत्रिपुरंयथा ॥ ३० ॥ ततः स लंकापुरपर्वताग्रेसमुस्थितोभीमपराक्रमोग्निः ॥ प्रसार्यचूडावलयंप्रदीप्तोहनूमतावेगवतोपसृष्टः ॥३१॥ युगांतकालानलतुल्यरूपःसमारुतोग्निर्ववृधेदिवःस्पृक् ॥ विधूमरश्मिर्भवनेषुसक्तोरक्षःशरीराज्यसमर्पितार्चिः॥३२॥ आदित्यकोटीसदृशःसुतेजालंकांसमस्तांपरिवार्यतिष्ठन् ॥ शब्दैरनेकैरशनिप्ररूढैर्भिदन्निवांडंप्रबभौमहाग्निः ॥३३॥ तत्रांबरादग्निरतिप्रवृद्धोरूक्षप्रभःकिंशुकपुष्पचूडाः ॥ निर्वाणधूमाकुलराजयश्चनीलोत्पलाभाःप्रचकाशिरेऽभ्रा ॥ ३४ ॥ वज्रीमहेंद्रस्त्रिदशेश्वरोवासाक्षाद्यमोवावरुणोऽनिलोवा ॥ रौद्रोग्निरर्कोधनदश्चसोमोनवानरोयंस्वयमेवकालः ॥३५॥ किंब्रह्मणःसर्वपितामहस्यलोकस्यधातुश्चतुराननस्य ॥ इहागतोवानररूपधारीरक्षोपसंहारकरःप्रकोपः ॥ ३६ ॥

लपटैं निकलीं॥३२॥ उस बढती हुई अवस्थामें वह अग्नि भवन समूहोंको घेर धूम रहित किरणोंका विस्तार करने लगा इस प्रकारसे कोटि सूर्य के समान परमतेजस्वी प्रलय कलाका अग्नि वज्रतुल्य घोर नादसे ब्रह्माण्डको भेदकर समस्त लंकापुरीको घेर लेता हुआ ॥३३॥ टेसूके फूलके समान शिखावाला क्रूर कांति युक्त अग्नि इस भांतिसे आकाशतक में फैलकर बहुत ही बढ़ा, नीचेके भागमें सबही रूखे धूम राशिकी अनेक श्रेणियें नील कमलकी पखुरियोंके समान आकाशको प्रकाशित करने लगीं ॥३४॥ गृह, वृक्ष और प्राणी समूहोंके सहित लंका नगरीको भस्म होते हुए देखकर बहुत सारे बचे हुए राक्षस वहां इकट्ठे हो परस्पर कहने लगे कि, यह वानर नहीं साक्षात् काल है, यह देवताओंका स्वामी इन्द्र, यम, वरुण, पवन, रुद्र, अग्नि, सूर्य, कुबेर व चंद्रमा नहीं है, यह साक्षात् कालही है ॥३५॥ क्या सर्वके पितामह लोकोंके धारण करनेवाले चार मुखके ब्रह्माजीका साक्षात् कोप तो राक्षस कुल संहारकरी वानर रूप धारण करके यहां नहीं आया ?॥३६॥

किंवा अचिन्त्य समस्त का कारण रूप विष्णुजीका तेज राक्षस कुलका विनाश करनेके लिये इस समय अपनी मायाकी साहायतासे कपिका सुन्दर रूप धारण कर यहां आया है ॥ ३७ ॥ इस भाँतिकी बात परस्पर एकत्र हो होकर लंकापुरी को सब प्राणी और छोटे बडे मन्दिरों तथा वृक्षों समेत भस्म और क्षार खार निहार कर कहते थे ॥३८॥ उसके पीछे लंका नगरी, राक्षस; अश्व; रथ, हस्ती, पक्षी, मृग और वृक्षगणों के सहित सहसा महा भस्म होकर अति व्याकुल हो बडे शब्दसे रुदन करने लगे अर्थात् रोनेका हाहा कार शब्द मचगया ॥३९॥ राक्षस लोग भी हातात ! हापुत्र ! हाकान्त ! हामित्र ! हाजीवितेश ! हाय हमारे अति क्लेशसे बटोरे हुए सब पुण्य क्षीण हो गये । इस भाँति अनेक प्रकार के विलाप करते अतिशय भयंकर घोर शब्द करने लगे॥४०॥उस कालमें अग्निकी लप

किंवैष्णवंवाकपिरूपमेत्यरक्षोविनाशायपरंसुतेजः ॥ अचिंत्यमव्यक्तमनंतमेकंस्वमाययासांप्रतमागतंवा ॥ ३७ ॥ इत्येवमूचुर्बहवोविशिष्टारक्षोगणास्तत्रसमेत्यसर्वे ॥ सप्राणिसंघांसगृहांसवृक्षांदग्धांपुरींतांसहसासमीक्ष्य ॥ ३८ ॥ ततस्तुलंकासहसाप्रदग्धासराक्षसासाश्वरथासनागा ॥ सपक्षिसंघासमृगासवृक्षारुरोददीनातुमुलंसशब्दम् ॥३९॥ हाताताहापुत्रककांतमित्रहाजीवितेशांगहतंसुपुण्यम्॥रक्षोभिरेवंबहुधाब्रुवद्भिःशब्दःकृतोघोरतरःसुभीतः ॥४०॥ हुताशनज्वालसमावृतासाहतप्रवीरपरिवृत्तयोधा॥हनूमतःक्रोधबलाभिभूताबभूवशापोपहतेवलंका ॥ ४१ ॥ ससंभ्रमंत्रस्तविषण्णराक्षसांसमुज्ज्वलज्ज्वालहुताशनांकिताम्॥ददर्शलंकांहनुमान्महामनाः स्वयंभुरोषोपहतामिवावनिम् ॥४२॥ भंक्त्वावनंपादपरत्नसंकुलंहत्वातुरक्षांसिमहांतिसंयुगे ॥ दग्ध्वापुरींतांगृहरत्नमालिनींतस्थौहनूमान्पवनात्मजःकपिः ॥ ४३ ॥ सराक्षसांस्तान्सुबहूंश्चहत्वावनंचभंक्त्वाबहुपादपंतत् ॥ विसृज्यरक्षोभवनेषुचाग्निंजगाममरामंमनसामहात्मा ॥४४॥ ततस्तुतंवानरवीरमुख्यंमहाबलंमारुततुल्यवेगम् ॥ महामतिंवायुसुतंवरिष्ठंप्रतुष्टुवुर्देवगणाश्चसर्वे ॥ ४५ ॥

टसे चारों ओर व्याप्त और मुखिया२वीर व योधा लोगोंके मरजाने व हनुमानजीके क्रोधसे अनादर की हुई लंकानगरी शापसे हत हुईके समान जान पडने लगी ॥४१॥ महामनस्वी हनुमानजीने देखा कि, सब राक्षस घबडाये भीत शोकाकुल हैं और प्रदीप्त हुये अति लपटवाले अग्नि करके चारों ओर घिर जानेसे महादेवजी के क्रोधसे भस्म पृथ्वी के समान लंका नगरीकी शोचनीय दशा उपस्थित हुई है ॥ ४२ ॥ पवन कुमार हनुमानजी अतिश्रेष्ठ वृक्षोंसे युक्त अशोक वनको उजाड बडे २ राक्षसोंको युद्धमें संहार अत्युत्तम रत्न समूहोंसे बनी लंकापुरीको भस्म कर स्थित हुये॥४३॥ और बहुत राक्षसोंको मार उनके सहित वन उजाड राक्षसोंके भवनोंमें अग्नि लगाय वे महात्मा मनही मनमें श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण करने लगे ॥ ४४ ॥ उस समयमें समस्त ही देवता धन्य २ करके पवनके

समान वेगवान् महाबलवान् समस्त वीरोंमें श्रेष्ठ और बली, महामति पवनकुमार हनुमानजी की स्तुति करने लगे ॥४५॥समस्त देवगण, महर्षिगण, गन्धर्वगण, विद्याधरगण, पन्नग गण और समस्त प्रधान २ वीर गण अति अनुपम परमप्रीति प्राप्त करते हुए ॥ ४६ ॥ इस समयमें महातेजस्वी कपिश्रेष्ठ हनुमानजी वन उजाड राक्षस कुल विनाश कर भयंकर लंकापुरीको भस्म कर शोभायमान हुए ॥ ४७ ॥ और जलती हुई पूंछसे निकलती हुई अग्नि के किरणोंसे युक्त हो बडा भारी धवरहर मंडल के विचित्र भूमिके अग्र भाग पर बैठे किरण सहित सूर्य भगवान्के समान शोभा धारण करते हुए ॥४८॥ उसके पीछेवानरराज सिंह महाकपि हनुमान्जी समस्त लंका पुरीको पीडित करके समुद्रके जलमें, अपने पूंछमें लगी हुई आग बुझाते हुए ॥४९॥ समस्त लंकाको भस्म होते देखकर

देवाश्चसर्वेमुनिपुंगवाश्चगंधर्वविद्याधरपन्नगाश्च॥भूतानिसर्वाणिमहांतितत्रजग्मुःपरांप्रीतिमतुल्यरूपाम् ॥४६॥ भंक्तावनंमहातेजाहत्वारक्षांसिसंयुगे॥दग्ध्वालंकापुरींभीमांरराजसमहाकपिः ॥४७॥ गृहाग्र्यशृंगाग्रतलेविचित्रेप्रतिष्ठितोवानरराजसिंहः॥प्रदीप्तलांगूलकृतार्चिमालीव्यराजतादित्यइवार्चिमाली ॥ ४८ ॥ लंकांसमस्तांसंपीड्यलांगूलाग्निंमहाकपिः ॥ निर्वापयामासतदासमुद्रेहरिपुंगवः ॥४९॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ दृष्ट्वालंकांप्रदग्धांतांविस्मयंपरमंगताः ॥ ५० ॥ इत्यार्षेश्रीमद्रा० वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे चतुष्पंचाशः सर्गः ॥५४॥ संदीप्यमानांवित्रस्तांत्रस्तरक्षोगणांपुरीम्॥अवेक्ष्यहनुमाँल्लंकांचिंतयामासवानरः ॥ १ ॥ तस्याभूत्सुमहांस्त्रासःकुत्साचात्मन्यजायत ॥ लंकांप्रदहताकामंकिंस्वित्कृतमिदंमया ॥ २ ॥ धन्याःखलुमहात्मानोयेबुद्ध्याकोपमुत्थितम् ॥ निरुंधंतिमहात्मानोदीप्तमग्निमिवांभसा ॥३॥ क्रुद्धःपापंनकुर्यात्कःक्रुद्धोहन्याद्गुरूनपि॥ क्रुद्धःपरुषयावाचानरःसाधूनधिक्षिपेत् ॥४॥ वाच्यावाच्यंप्रकुपितोनविजानातिकर्हिचित् ॥ नाकार्यमस्तिक्रुद्धस्यनावाच्यंविद्यतेक्वचित् ॥ ५ ॥

देवगण, गन्धर्वगण और परमर्षिगण सबही अति विस्मित हुए ॥ ५० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चतुष्पंचाशः सर्गः ॥ ५४ ॥ लंका नगरीको भस्म विध्वंस और वहां के राक्षसोंको त्रासित हुआ देखकर वानर श्रेष्ठ हनुमानजी चिन्ता करने लगे ॥ १ ॥ चिन्ता करते २ हनुमान्जीको बडा भारी त्रास हुआ आप ही अपनी निन्दा करने लगे, हनुमान्जी बोले कि, हमने इच्छानुसार लंकाको जला कर कैसा बुरा कार्य किया ॥२॥ वह महात्मा लोग धन्य हैं, जो जलसे प्रज्वलित अग्नि के समान उपस्थित हुए क्रोधको अपनी बुद्धिसे रोकते हैं ॥३॥ मनुष्य क्रोधित होकर कौनसा पाप नहीं करता? मनुष्य क्रोधसे अन्धा होकर गुरुजन आदि बडे पुरुषोंको भी मार डालता है और कठोर वचन कहकर साधु लोगोंका भी निरादर करता है॥४॥क्रोधके वश हुए पुरुषको

कदापि ज्ञान नहीं रहता वह नहीं जानता कि,यह करने योग्य व यह करने अयोग्य है; ऐसा कोई अकार्य नहीं है कि जिसको क्रोधी पुरुष न कर सके ॥५॥ सर्प जिस प्रकार पुरानी केंचुलीको छोड देता है; वैसेही क्रोध आनेके कालमें जो पुरुष अपनी क्षमाके बलसे उसको त्याग देता है; वही यथार्थ पुरुष कहलाता है ॥६॥ हम पाप कारियोंके अगुए हैं और महा मूर्ख व निर्लज्ज हैं इसीसे तो सीताजी के लिये कुछ विचार न कर लंकामें अग्नि लगाय हमने स्वमीकी हत्या की ॥७॥ हमको धिक्कार है ! जब कि समस्त लंका भस्म होगई; तब तो आर्या जानकीजी भी निश्चय ही भस्म होगई होंगी, हाय ! हमने अज्ञानता के मारे अपने स्वामी का कार्य नष्ट कर दिया ॥८॥ जिसके लिये हमने यह सब कुछ किया था वही कार्य हमने अपने आप नष्ट कर दिया; हमने लंकाका दाह करनेके समय सर्व प्रकारसे सीताजीकी रक्षा नहीं की॥९॥इसलिये जिसके कारण हमने यह लंका जलाई उन्हीं श्रीरामचन्द्रजी के कार्यका नाश होगया हमने सीताजीके दर्शन

यःसमुत्पतितंक्रोधंक्षमयैवनिरस्यति ॥ यथोरगस्त्वचंजीर्णांसवैपुरुषउच्यते ॥६॥ धिगस्तुमांसुदुर्बुद्धिंनिर्लज्जंपापकृत्तमम् ॥ अचिंतयित्वातां सीतामग्निदंस्वामिघातकम् ॥७॥ यदिदग्धात्वियंसर्वानूनमार्यापिजानकी ॥दग्धातेनमयाभर्तुर्हतंकार्यमजानता ॥८॥ यदर्थमयमारंभस्तत्कार्यमवसादितम् ॥ मयाहिदहतालंकांनसीतापरिरक्षिता ॥ ९ ॥ ईषत्कार्यमिदंकार्यंकृतमासीन्नसंशयः ॥ तस्यक्रोधाभिभूतेनमयामूलक्षयः कृतः ॥१०॥ विनष्टाजानकीव्यक्तंनह्यदग्धःप्रदृश्यते ॥ लंकायाःकश्चिदुद्देशःसर्वाभस्मीकृतापुरी ॥११॥ यदितद्विहतंकार्यंमयाप्रज्ञाविपर्ययात् ॥ इहैवप्राणसंन्यासोममापिह्यद्यरोचते ॥ १२ ॥ किमग्नौनिपताम्यद्यआहोस्विद्बडवामुखे ॥ शरीरमिहसत्त्वानांदद्मिसागरवासिनाम् ॥ १३ ॥ कथंनुजीवताशक्योमयाद्रष्टुंहरीश्वरः॥तौवापुरुषशार्दूलौकार्यसर्वस्वघातिना ॥१४॥ मयाखलुतदेवेदंरोषदोषात्प्रदर्शितम् ॥ प्रथितंत्रिषुलोकेषुकपित्वमनवस्थितम् ॥ १५ ॥

तो पाये; परन्तु क्रोधसे ज्ञान रहित हो उस सीता दर्शन रूप कार्यकी जडही काट डाली ॥१०॥जानकीजी निश्चयही भस्म हो गई कारण कि सबही पुरी जब जली तो वह काहेको बची होंगी; लंकापुरीमें हम ऐसा स्थान नहीं देखते कि जो भस्म होनेसे बचा हो॥११॥जब की; हमने बुद्धिकी विपरीततासे ऐसा कार्य कर डाला तब यहीं पर आजही प्राण त्यागना हमको उचित जान पडता है ॥१२॥ आज हम बडे बडवानलमें गिरेंगे या अग्निमें गिर जलकर मरेंगे; नहीं तो समुद्रमें रहनेवाले जीवोंको अपना शरीर सौंप देंगे,अर्थात् समुद्र में गिर पडेंगे ॥१३॥ कारण कि जीवित रहनेसे सुग्रीवजीके साथ साक्षात् करना कभी हमसे नहीं होसकता; अथवा समस्त कार्यका विनाश करके पुरुष सिंह श्रीराम लक्ष्मणजीको भी हम किस प्रकारसे देख सकते हैं ॥१४॥ यह तीनों लोकोंमें विदित है

कि; वानरजातिके स्वभावका क्या ठिकाना; सो हमने क्रोधसे अन्धे बन निश्चय ही अपनी वानरता दिखाई ॥१५॥ जो कार्यको असमर्थ और अव्यवस्थ कर डालता है उस राजसिक भावको धिक्कार है; हमने समर्थ होकर भी रजोगुण मूलक क्रोधके वश हो कर सीताजीकी रक्षा नहीं की.॥१६॥ कारण कि; सीताजीकी मृत्यु होनेसे श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मण की मृत्यु हो जायगी, और श्रीराम व लक्ष्मणजी के मर जानेसे सुग्रीवजी भी बन्धु बान्धवों सहित मृतक हो जाँयगे॥१७॥ धर्मात्मा भ्रातृवत्सल भरत और शत्रुघ्नजी भी यह समाचार श्रवणकर किस प्रकारसे जीवन धारण कर सकेंगे॥१८॥ जब इस प्रकारसे धर्ममें रहता हुआ इक्ष्वाकुवंश नष्ट हो जायगा; तब इसमें कुछ संदेह नहीं कि; सब पृथ्वीपरकी प्रजा शोक संतापसे व्याकुल हो जायगी॥१९॥ इस लिये हतभागी हमने रोषके दोषसे ढक निश्चय ही सब लोगोंका विनाश किया ! हमारा बटोरा हुआ धर्म भी लोप हो गया ॥२०॥ इस प्रकारसे चिंता करते २ पूर्व समय के शुभ सूचक समस्त कारण हनुमान्

धिगस्तुराजसंभावमनीशमनवस्थितम् ॥ ईश्वरेणापियद्रागान्मयासीतानरक्षिता ॥१६॥ विनष्टायांतुसीतायांतावुभौविनशिष्यतः॥तयोर्विना
शेसुग्रीवःसबंधुर्विनशिष्यति॥१७॥ एतदेववचःश्रुत्वाभरतोभ्रातृवत्सलः॥धर्मात्मासहशत्रुघ्नःकथंशक्ष्यतिजीवितुम्॥१८॥इक्ष्वाकुवंशेधर्मिष्ठेगते
नाशमसंशयः॥ भविष्यंतिप्रजास्सर्वाःशोकसंतापपीडिताः ॥१९ ॥ तदहंभाग्यरहितोलुप्तधर्मार्थसंग्रहः ॥रोषदोषपरीतात्माव्यक्तंलोकविना
शनः॥२०॥ इतिचिंतयतस्तस्यनिमित्तान्युपपेदिरे॥पूर्वमप्युपलब्धानिसाक्षात्पुनरचिंतयत् ॥२१॥अथवाचारुसर्वांगीरक्षितास्वेनतेजसा॥ नन
शिष्यतिकल्याणीनाग्निरग्नौप्रवर्तते ॥ २२ ॥ नहिधर्मात्मनस्तस्यभार्याममिततेजसः ॥स्वचरित्राभिगुप्तांतां स्प्रष्टुमर्हतिपावकः ॥ २३ ॥ नूनं
रामप्रभावेणवैदेह्याःसुकृतेनच ॥ यन्मांदहनकर्मायंनादहद्धव्यवाहनः ॥ २४ ॥त्रयाणांभरतादीनांभ्रातॄणांदेवताचया॥ रामस्यचमनःकांतासा
कथंविनशिष्यति ॥ २५ ॥

जीको प्राप्त होने लगे। इन शुभ कारणोंको विचार कर हनुमान्‌जी फिर चिंताकरने लगे॥२१॥अथवा सर्वाङ्ग शोभायमान कल्याणी वह जानकीजी अपने तेज प्रभावसे सदा ही रक्षित रहती हैं वह कभी विनाशको प्राप्त न हुई होंगी, कारणकि अग्नि अग्निको कभी नहीं जला सकता ॥२२॥ उसपर विशेषता यह कि जानकीजी अमित तेजस्वी धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी की भार्या हैं वह अपने साधु चारित्रोंके गुणोंसे सदाही रक्षित रहती हैं; इस कारण अग्नि किस प्रकारसे उनको छू सकता है ॥२३॥ फिर एकबात यह भी तोप्रणामकी है कि दाहक स्वभाववाले इस अग्निने निश्चय ही श्रीरामचन्द्रजी के प्रभाव और सीताजी के पुण्य बलसे हमको दग्ध नहीं किया ॥२४॥श्रीरामचन्द्रजी को श्रीसीताजी प्राणोंसे भी अधिक प्यारी हैं और भरत, शत्रुघ्न; लक्ष्मणजीकी भी देवता हैं, इसलिये वह किस प्रकारसे विनष्ट होंगी॥२५॥

अथवा सब वस्तुओंको जलानेकी सामर्थ्य रखनेवाले अग्निने जब हमारी पूंछको नहीं जलाया, तब उन आर्या जानकीजीको वह किस प्रकारसे भस्म करेंगे ? ॥ २६ ॥ यह विचार फिर हनुमान्‌जी विस्मित हो देवी जानकीजीके प्रभावसे समुद्रके जलसे हिरण्यनाभ मैनाक पर्वतके दर्शनकी सुधिकर प्रसन्न चित्तसे कहने लगे ॥ २७ ॥ अधिक क्या कहे, जानकीजी तपस्या सत्यवाक्य और अपने पतिव्रत धर्मसे आपही अग्निको भस्म कर सकती हैं, इस कारण अग्नि उनको जलानेमें कभी समर्थ न होगा ॥ २८ ॥ जब इस प्रकार हनुमानजी देवी जानकीजीके धर्मनिष्ठाकी चिन्ता कर रहे थे कि, इतनेहीमें महात्मा चारणलोगोंके वचनउन्होंने सुने ॥२९॥ वह चारण गण यह कह रहे थे कि अहो हनुमानजीने जो कार्य किया, निश्चयही और कोई दूसरा उसको नहीं कर सकता जोकि

यद्वादहनकर्मायंसर्वत्रप्रभुरव्ययः ॥ नमेदहतिलांगूलंकथमार्यांप्रधक्ष्यति ॥२६॥ पुनश्चाचिंतयत्तत्रहनूमान्विस्मितस्तदा ॥ हिरण्यनाभस्यगिरेर्जलमध्येप्रदर्शनम् ॥ २७ ॥तपसासत्यवाक्येनअनन्यत्वाच्चभर्तरि ॥ असौविनिर्दहेदग्निंनतामग्निःप्रधक्ष्यति ॥ २८ ॥ सतथाचिंतयंस्तत्रदेव्याधर्मपरिग्रहम् ॥शुश्रावहनुमांस्तत्रचारणानांमहात्मनाम् ॥२९॥ अहोखलुकृतंकर्मदुर्विगाहंहनूमता ॥ अग्निंविसृजतातीक्ष्णंभीमंराक्षससद्मनि ॥ ३० ॥ प्रपलायितरक्षःस्त्रीबालवृद्धसमाकुला ॥ जनकोलाहलाध्माताक्रंदतीवाद्रिकंदरैः ॥ ३१ ॥ दग्धेयंनगरीलंकासाट्टप्राकारतोरणा ॥जानकीनचदग्धेतिविस्मयोद्भुतएवनः ॥३२॥ इतिशुश्रावहनुमान्वाचंताममृतोपमाम् ॥ बभूवचास्यमनसोहर्षस्तत्कालसंभवः ॥ ३३ ॥ सनिमित्तैश्चदृष्टार्थैःकारणैश्चमहागुणैः ॥ ऋषिवाक्यैश्चहनुमानभवत्प्रीतमानसः ॥ ३४ ॥

इन्होंने भयंकर लंकापुरीको जलाकर रावणका भवनभी भस्म किया ॥३०॥ बाल वृद्धोंकी राशियोंसे युक्त जनोंके शब्दसे पूर्णशब्द समन्वित पर्वतकीगुफाके समान शब्दायमान ॥ ३१ ॥ निशाचर लोगोंके गृहोंमें भयंकर तीक्ष्ण अग्नि लगाय अटारियें फाटक और धवरहरोंके साथ समस्त लंकापुरीको जलादिया, परन्तु जानकीजीको बचालिया, सो हमको बडे आश्चर्य और अद्भुतकी वार्ता यह जान पडती है ॥ ३२ ॥ चारलोगोंके मुखसे इस प्रकारके अमृततुल्य वचन सुनकर उस कालमें आनन्दसे अंजनीकुमार हनुमानजीका अन्तःकरण परिपूर्ण होगया ॥३३॥ जिनसे निश्चय होजाय ऐसे शुभ निमित्तोंको देख, जिनसे परम फलकी प्राप्ति होजाय ऐसे कारण समूह और ऋषिलोगोंके वचन इन सबसे हनुमानजीके मनमें प्रसन्नता उपजी ॥ ३४ ॥

उसके पीछे चारण लोगोंके वचनोंसे सीताजीके शरीरकी कुशल अवस्था जान हनुमानजीका मनोरथ सफल हुआ। परन्तु उन्होंने मनमें यह विचारा कि सीताजीके दर्शन करफिर चलना चाहिये ॥३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आ० सुन्दरकांडे भाषायां पंचपंचाशः सर्गः ॥ ५५ ॥ उसके पीछे शिंशपाके वृक्षके नीचे सीताजी निर्विघ्न कुशल शरीरसे बैठी थीं कि, इतनेमें हनुमानजीने वहां पहुंचकर सीताजीको प्रणाम करके कहाकि, हे देवि ! बडे भाग्यकी बात है कि हमने आपको यहां कुशल सहित बैठे हुए देखा इस स्थानमें आप पर कोई विपद तो नहीं आई ? ॥१॥ तब श्रीजानकीजीने जानेके लिये तैयार हनुमान्‌जीको बार २ निहार अपने पतिको स्नेहयुक्त वचन उनसे कहे ❀ ॥ २ ॥ हे वत्स ! यदि तुम्हारेभी मनभावे तो यहांसे किसी एकांत स्थानमें आजका दिन

ततःकपिःप्राप्तमनोरथार्थस्तामक्षतांराजसुतांविदित्वा॥प्रत्यक्षतस्तांपुनरेवदृष्ट्वाप्रतिप्रयाणायमतिंचकार॥३५॥इ०श्री०वा०आ०च०सा०सुं०पंचपंचाशःसर्गः ॥५५॥ ततस्तुशिंशपामूलेजानकींपर्यवस्थिताम्॥ अभिवाद्याब्रवीद्दिष्ट्यापश्यामित्वामिहाक्षताम् ॥१॥ ततस्तंप्रस्थितंसीतावीक्षमाणापुनःपुनः॥भर्तुःस्नेहान्वितावाक्यंहनूमंतमभाषत ॥२॥ यदित्वंमन्यसेतातवसैकाहमिहानघ॥क्वचित्सुसंवृतेदेशेविश्रांतःश्वोगमिष्यसि ॥३॥ ममचैवाल्पभाग्यायाःसान्निध्यात्तववानर ॥ शोकस्यास्याप्रमेयस्यमुहूर्तंस्यादपिक्षयः ॥४॥ गतेहिहरिशार्दूलपुनःसंप्राप्तयेत्वयि ॥ प्राणेष्वपिनविश्वासोममवानरपुंगव॥५॥ अदर्शनंचतेवीरभूयोमांदारयिष्यति ॥ दुःखाद्दुःखतरंप्राप्तांदुर्मनःशोककर्शिताम् ॥ ६ ॥ अयंचवीरसंदेहस्तिष्ठतीवममाग्रतः॥सुमहत्सुसहायेषुहर्यृक्षेषुमहाबलः॥७॥कथंनुखलुदुष्पारंसंतरिष्यंतिसागरम्॥तानिहर्यृक्षसैन्यानितौवानरवरात्मजौ ॥८॥

बिताकर चले जाना ॥ ३ ॥ हे पापरहित ! तुम्हारे निकट रहनेसे एक मुहूर्तके लिये इस मन्द भाग्यवालीका महाशोक कुछेक हलका हो जायगा ॥ ४ ॥ परन्तु हे कपिशार्दूल ! तुम इस समय जाओगे तो सही परन्तु फिर जबतक लौटोगे तबतक न जाने हमारा जीवन रहे या न रहे ॥ ५ ॥ हे वानरश्रेष्ठ हम मनके शोकसे महाव्याकुल होकर अतिशय दुःख पाय रही हैं, इस समय तुम्हारे अदर्शनसे हमको और भी अधिक दुःख विदारित करेगा ॥ ६ ॥ हे वीरश्रेष्ठ ! हमारे मनमें यह बडाभारी सन्देह होता है कि, यह बडेभारी सहायक ऋक्ष वानर ॥ ७ ॥ इस पार आनेके अयोग्य समुद्रके पार किस प्रकारसे होंगे ? यह वानर ऋक्षोंकी सेना व दोनों महाराजकुमार किस प्रकारसे इसके पार आवेंगे ॥ ८ ॥

❀ गुजरी ॥ पुंछ बुझाइ गँवाइ सो तनु श्रम सिय पहँ ठाढि भये कर जोरे।।चीन्ह कछुक मोंहि देहि यथा प्रभु शोक करहिं जननी जनि भोरे ॥ पहुचेइ जानि कृपालु खरारिहिं धीरजऔर धरहिदिन थोरे ॥ हरषि उतार दयउचूडामणि वारण दुसह विपति सब बोरे ॥ तात विलोकि जात निजनयनन करुणानिधि पहँ कहबनिहोरे ॥ धरि पद शीश चल्यो धुनि गर्जत रिपुमद भुजबल वारिधि बोरे ॥ आइ मिल्यो एहि पार कपिनसों को कह सूरज मोद जितोरे ॥

समुद्रके लांघनेकी इस लोकमें केवल गरुड, वायु और तुम बस इन तीन जनोंको सामर्थ्य है ॥ ९ ॥ इस कारण इस बडे कठिन कार्य संकटमें किस उपायको तुमने स्थिर किया है ? क्योंकि तुम कार्य करनेमें चतुर हो ॥ १० ॥ तुम कर्म करनेमें बडे प्रवीण हो ! हे शत्रुघातिन् ! तुम तो इस कार्यको अकेलेही कर सकते हो, तुम्हारे यशकी वृद्धि इस कार्यसे होगी ॥ ११ ॥ शत्रुओंकी सेनाको मर्दन करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी यदि सेना साथ लेकर लंकामें चढाईकर हमको लेजायँगे तब ही यह कार्य उनके योग्य होगा ॥ १२ ॥ इसलिये उन रणवीर महात्माका जिससे योग्य विक्रम प्रगटे, सो तुमको ऐसाही उपाय करना चाहिये ॥१३॥ सीताजीके वह अर्थयुक्त और हेतु सहित स्नेहसे सनेवचन श्रवणकर वीर हनुमान उनको उत्तर देते हुये ॥ १४ ॥ आर्ये ! वानर और रीछोंकी

त्रयाणामेवभूतानांसागरस्यातिलंघने ॥ शक्तिःस्याद्वैनतेयस्यतववामारुतस्यवा ॥९॥ तदत्रकार्यनिर्बन्धेसमुत्पन्नेदुरासदे ॥ किंपश्यसिसमाधानंत्वंहिकार्यविशारदः ॥१०॥ काममस्यत्वमेवैकःकार्यस्यपरिसाधने ॥ पर्याप्तःपरवीरघ्नयशस्यस्तेबलोदयः ॥ ११ ॥ बलैस्तुसंकुलांकृत्वा लंकांपरबलार्दनः ॥ मांनयेद्यदिकाकुत्स्थस्तत्तस्यसदृशंभवेत् ॥ १२ ॥ तद्यथातस्यविक्रांतमनुरूपंमहात्मनः ॥ भवत्याहवशूरस्यतथात्वमुपपादय॥ १३ ॥तदर्थोपहितंवाक्यंप्रश्रितंहेतुसंहितम् ॥ निशम्यहनुमान्वीरोवाक्यमुत्तरमब्रवीत्॥ १४ ॥ देविहर्यृक्षसैन्यानामीश्वरःप्लवतांवरः ॥ सुग्रीवःसत्त्वसंपन्नस्तवार्थेकृतनिश्चयः ॥ १५ ॥ सवानरसहस्राणांकोटीभिरभिसंवृतः ॥ क्षिप्रमेष्यतिवैदेहिसुग्रीवःप्लवतांवरः ॥ १६ ॥ तौचवीरौनरवरौसहितौरामलक्ष्मणौ ॥ आगम्यनगरींलंकांसायकैर्विधमिष्यतः ॥ १७ ॥ सगणंराक्षसंहत्वानचिराद्रघुनंदनः ॥ त्वमादाय वरारोहेस्वांपुरींप्रतियास्यति ॥ १८ ॥

सेनाके अधिपति सत्यवान् वानर श्रेष्ठ सुग्रीवजी आपका उद्धार करनेको कृत निश्चय हुए हैं ॥ १५ ॥ हे विदेहकुमारी सीते ! वानरराज वह सुग्रीवजी, हजारों लाखों, करोडों वानरोंको साथ लेकर बडी शीघ्रतासे यहां आवेंगे ॥ १६ ॥ नर श्रेष्ठ वह दोनों वीर श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी भी एकत्र हो यहां आयकर लंका नगरीको बाण जालसे छायदेगें ॥ १७॥ हे श्रेष्ठ मुखवाली ! वीर रघुनंदन रामचन्द्रजी बहुत शीघ्र रावण को बन्धु बान्धवों सहित मार तुमको अपनी अयोध्यापुरीमें ले जायँगे ॥ १८ ॥

यह मणि प्रभुको दीजो जाई ।। चरणकमल वंदन कर उनके तुम ऐसे कहियो समुझाई ।। १ ।। मन क्रम वचन चरणकी दासी प्रभुताको कैसे बिसराई ।। २ ।। नेक कियो बुधनाथ काकने ताको नहिं कोउ रहेउ सहाई ।। ३ ।। अधम निशाचरने अब घेरी अब क्यों नहीं छुडावत आई ।। ४ ।। मिश्रसद शरणागत पालक रक्षा करहु राम रघुराई ।। ५ ।।

सावधान होकर धीरज धारण करो, कुछ समय परखो हे भद्रे ! तुम बहुतही शीघ्रतासे देखोगी कि, श्रीरामचन्द्रजीने रणमें रावणको मार डाला ॥ १९ ॥ युद्धमें राक्षस राजरावणके मंत्री बन्धु बान्धवोंके सहित मारे जानेपर चन्द्रमाजीके साथ रोहिणीजी के समान आपका मिलना श्रीरामचन्द्रजीसेहोगा ॥ २० ॥ इस प्रकारसे राक्षसोंको जीतकर आपका शोक दूर करेंगे, वह काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी शीघ्र ही रींछ वानरोंकी सेनाके साथ यहां पर आवेंगे ॥ २१ ॥ आश्चर्यका अपना बल दिखाय पवन कुमार हनुमानूजी जानकीजीको समझाय बुझाय चलनेमें स्थिर बुद्धिकर जानकीजीको प्रणाम करते हुए ॥ २२ ॥ लंका पुरीको व्याकुल कर रावणको धोखा दे भयंकर बल प्रधान २राक्षसोंको संहार अपना नाम सबको सुनाय सीताजी को समझाय बुझाय ॥ २३ ॥ उसके पीछे शत्रुओंके मारनेवाले कपिश्रेष्ठ हनुमानूजी दिखाय और जानकीजी को प्रणाम कर॥२४॥हनुमानूजी समुद्रके ऊपर हो चलनेके लिये तैयार हुए

समाश्वसिहि भद्रं ते भवत्वं कालकांक्षिणी ॥ क्षिप्रंद्रक्ष्यसिरामेणनिहतंरावणंरणे ॥१९॥ निहतेराक्षसेंद्रेचसपुत्रामात्यबांधवे ॥ त्वंसमेष्यसिरामेणशशांकेनेवरोहिणी ॥२०॥ क्षिप्रमेष्यतिकाकुत्स्थोहर्यृक्षप्रवरैर्युतः ॥ यस्तेयुधिविनिर्जित्यशोकंव्यपनयिष्यति ॥ २१ ॥एवमाश्वास्यवैदेहींहनूमान्मारुतात्मजः ॥ गमनायमतिंकृत्वावैदेहीमभ्यवादयत् ॥२२॥ राक्षसान्प्रवरान्हत्वानामविश्राव्यचात्मनःसमाश्वास्यचवैदेहींदर्शयित्वापरंबलम् ॥२३॥ नगरीमाकुलांकृत्वावंचयित्वाचरावणम् ॥ दर्शयित्वाबलंघोरंवैदेहीमभिवाद्यच ॥२४ ॥ प्रतिगंतुंमनश्चक्रेपुनर्मध्येनसागरम् ॥ ततःसकपिशार्दूलःस्वामिसंदर्शनोत्सुकः ॥२५॥ आरुरोहगिरिश्रेष्ठमरिष्टमरिमर्दनः ॥ तुंगपद्मकजुष्टाभिर्नीलाभिर्वनराजिभिः ॥२६॥ सोत्तरीयमिवांभोदैःश्रृंगांतरविलंबिभिः ॥ बोध्यमानमिवप्रीत्यादिवाकरकरैःशुभैः॥ २७॥ उन्मिषंतमिवोद्धूतैर्लोचनैरिवधातुभिः ॥ तोयौघनिःस्वनैर्मंद्रैःप्राधीतमिवसर्वतः ॥ २८ ॥ प्रगीतमिवविष्पष्टैर्नानाप्रस्रवणस्वनैः ॥देवदारुभिरुद्धूतैरूर्ध्वबाहुमिवस्थितम् ॥ २९ ॥

अपने स्वामीके दर्शन की अतिइच्छा कर ॥ २५ ॥ अरिष्टनामक बडे ऊंचे पर्वत पर चढ गये । यह पर्वत विशाल भूर्जतरुओंसे शोभित नीलवर्ण वनराजिरूप ॥२६॥ वस्त्र पहर करके शिखरसे लगे हुए जल धर स्वरूप अपना दुपट्टा बनाये, प्रीतिसे दिवाकर रूप शुभकारी किरणोंके स्पर्शसे मानो वहांकी सब वस्तुओंको जगाय रहा था ॥२७॥ विविध भाँतिकी धातुओं से मानो वह सहस्र २ लोचन खोल रहा और मूँद रहाथा; चारों ओरही जलके गिरनेका शब्द होता हुवा ऐसा जान पडता था मानों पर्वत कुछ पढ रहा है ॥ २८ ॥ अनेक प्रकारके झरनोंका स्पष्ट शब्द ऐसा हो रहाथा कि; जिससे अनुमान होता था कि, मानों पर्वत श्रेष्ठ संगीत कर रहा है । बडे २ देवदारु वृक्षोंके ऊपर शोभित होनेसे ऐसा ज्ञात होता था मानों पर्वतराज हाथ उठाये खडा है ॥ २९ ॥

सब जगह जल गिरनेका शब्द ऐसा हो रहा था, मानों पर्वतराज आर्त नाद कर रहा है । वासन्तिक वृक्षोंके कंपायमान होनेसे ऐसा जान पडता था कि, मानों गिरिराज स्वयंही कंपायमान हो रहा था ॥ ३० ॥ पवनके आघातसे शब्द करते हुए छेदवाले बाँसोंसे शोभितहो मानों पर्वतराज वंशी बजाय रहा था भयंकर विषैले सर्पोंके गर्जनेसे मानों पर्वत राज क्रोधके मारे लंबे २श्वास ले रहाथा ॥ ३१ ॥ अंधकारसे ढककर कंदराओंने गम्भीर भाव धारण किया है, जिससे बोध होता है कि, मानों पर्वत श्रेष्ठ ध्यानमें मग्न हो रहा है । मेघ खंडके समान, किनारे २वाले पर्वतोंसे मानों यह पर्वत सब जगह विचरण कर रहा था ॥ ३२ ॥ बादलोंके छूनेवाले शिखर आकाशमें ऊंचे चले गये थे, मानों पर्वत अपने शरीरको ऐंठकर जँभाई लेता था, सब ओर अनेक शृङ्ग शोभित थे असंख्य गुफायें पर्वतकी शोभायमान होरही थीं ॥ ३३ ॥ अनेकानेक शाल ताल अश्वकर्ण व अनेक प्रकारसे बाँसोंने पर्वतको छाय लिया था. फूली फली फैली हुई लता

प्रपातजलनिर्घोषैःप्राकुष्टमिवसर्वतः ॥ वेपमानमिवश्यामःकंपमानैःशरद्वनैः ॥ ३० ॥वेणुभिर्मारुतोद्धूतःकूजंतमिवकीचकैः ॥ निःश्वसंतमिवामर्षाद्घोरैराशीविषोत्तमैः ॥ ३१ ॥ नीहारकृतगंभीरैर्ध्यायंतमिवगह्वरैः ॥ मेघपादनिभैःपादैःप्रक्रांतमिवसर्वतः ॥ ३२ ॥ जृंभमाणमिवाकाशेशिखरैरभ्रमालिभिः ॥ कूटैश्चबहुधाकीर्णंशोभितंबहुकंदरैः ॥ ३३ ॥सालतालैश्चकर्णैश्चवंशैश्चबहुभिर्वृतम् ॥ लतावितानैर्विततैःपुष्पवद्भिरलंकृतम् ॥ ३४ ॥ नानामृगगणैःकीर्णंधातुनिष्पंदभूषितम् ॥ बहुप्रस्रवणोपेतंशिलाशंचयसंकटम् ॥ ३५ ॥ महर्षियक्षगंधर्वकिन्नरोरगसेवितम् ॥ लतापादपसंबाधंसिंहाधिष्ठितकंदरम् ॥ ३६ ॥ व्याघ्रादिभिःसमाकीर्णंस्वादुमूलफलद्रुमम् ॥ आरुरोहानिलसुतःपर्वतंप्लवगोत्तमः ॥ ३७ ॥ रामदर्शनशीघ्रेणप्रहर्षेणाभिचोदितः ॥तेनपादतलक्रांतारम्येषुगिरिसानुषु ॥ ३८ ॥ सघोषाःसमशीर्यंतशिलाश्चूर्णीकृतास्ततः ॥ सतमारुह्यशैलेंद्रंव्यवर्धतमहाकपिः ॥ ३९ ॥

ओंकी कुंज पर्वतके स्थान २ में शोभायमान हो रहीथीं; ॥ ३४ ॥ विविध भाँतिके मृगोंके झुण्डके झुण्ड फिर रहे थे, और बहुत सारी धातुयें जगह २ से निकल कर पर्वत भूषित कर रही थीं; बहुत सारे झरने झर रहे थे; शिलाओंकी बहुत चट्टाने पडी थीं ॥ ३५ ॥ महर्षि, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर और उरग गण उस पर्वत पर बसते थे, लता वृक्ष प्राणियोंके आने जाने में बाधा डालते थे, गुफाओंमें सिंह विराज रहे थे ॥ ३६ ॥ उस पर्वत पर रहनेवाले व्याघ्रादि जन्तुओंकी गिनती करना कठिन था सब वृक्षों के मूल फल अति स्वाद युक्त थे, वानर श्रेष्ठ हनुमानजी इस पर्वत पर चढकर ॥ ३७ ॥ श्रीरामचन्द्रजी के दर्शन की इच्छासे शीघ्रता किये आनंदसे प्रेरित हो उस पर्वतके रमणीक शिखर पर पाँव धरते हुए ॥ ३८ ॥ इसप्रकार अति बलसे और धमकेसे उस पर्वतपर

पाँव धरा कि, उस पर्वतकी शिला चूर्ण हो गई, इसप्रकार पर्वत राजपर चढकर महाकपि हनुमानूजी बढ़े ॥ ३९॥ कारण कि, क्षार समुद्रके दक्षिण तीरसे उनको उत्तर किनारेपर आना था, इसकारण उसपर्वत परचढ पवनकुमार हनुमानूजी॥४०॥ भयंकर सर्प आदिकोंसे युक्त समुद्रको देखते हुये, वायु जिसप्रकार आकाश मार्गमें गमन करतीहै पवन कुमार वेगवान् हनुमान्जीभी ॥४१॥ मनके द्वारा वैसेही उसी समय दक्षिणसे उत्तर समुद्रके पार पहुँच गये, छलांग मारनेके समयउस पर्वतोत्तम को हनुमानूजीने चरणसे पीडित किया॥४२॥ऐसे धमकके साथ उस पर्वतपर चरण रक्खा कि, वह पर्वत पृथ्वीमें प्रवेश करने लगा, उसके शिखर काँपने लगे और पेड गिरने लगे ॥४३॥ हनुमानजीके वेगसे मर्दित हो फूलवाले पेड टूट २ कर पृथ्वीपर ऐसे गिर पडे मानों इन्द्रके वज्रसे मारेगये ॥४४॥ गुफाओंके मध्यमें टिके हुए महाविक्रम वाले

दक्षिणादुत्तरंपारंप्रार्थयँल्लवणांभषः॥अधिरुह्यततोवीरःपर्वतंपवनात्मजः ॥४०॥ ददर्शसागरंभीमंभीमोरगनिषेवितम् ॥ समारुतइवाकाशंमारु
तस्यात्मसंभवः ॥४१॥ प्रपेदेहरिशार्दूलोदक्षिणादुत्तरांदिशम् ॥ सतदापीडितस्तेनकपिनापर्वतोत्तमः ॥४२॥ ररासविविधैर्भूतैःप्राविशद्वसुधा
तलम् ॥ कंपमानैश्चशिखरैःपतद्भिरपिचद्रुमैः ॥ ४३ ॥ तस्योरुवेगोन्मथिताःपादपाःपुष्पशालिनः ॥ निपेतुर्भूतलेभग्नाःशक्रायुधहताइव
॥४४॥ कंदरोदरसंस्थानांपीडितानांमहौजसाम् ॥ सिंहानांनिनदोभीमोनभोभिंदन्हिशुश्रुवे ॥४५॥त्रस्तव्याविद्धवसनाव्याकुलीकृतभूषणाः॥
विद्याधर्यःसमुत्पेतुःसहसाधरणीधरात् ॥ ४६ ॥ अतिप्रमाणाबलिनोदीप्तजिह्वामहाविषाः ॥ निपीडितशिरोग्रीवाव्यवेष्टंतमहाहयः ॥ ४७ ॥
किन्नरोरगगंधर्वयक्षविद्याधरास्तथा ॥ पीडितंतंनगवरंत्यक्त्वागगनमास्थिताः ॥४८॥ सचभूमिधरःश्रीमान्बलिनातेनपीडितः ॥ सवृक्षशिखरो
दग्रःप्रविवेशरसातलम् ॥४९॥ दशयोजनविस्तारस्त्रिंशद्योजनमुच्छ्रितः ॥ धरण्यांसमतांयातःसबभूवधराधरः ॥ ५० ॥

सिंहगणोंके भयंकर शब्द आकाशको भेदकर लोकोंके कानोंमें सुनाई आये ॥ ४५ ॥ डरके मारे सब विद्याधरोंकी स्त्रियां अपने २ वस्त्र उठाय भूषणोंको चिपटाय अचानक पर्वतको छोडकर आकाशमार्गमें उडीं ॥४६॥ अति बडे २ बलवान्, बडी २ जीभवाले महाविषधर सर्पगण गर्दन और मस्तकके टूटनेसे पर्वतपर कुंडलाकारसे प्रगट होने लगे ॥ ४७ ॥ किंन्नर, उरग, गन्धर्व; यक्ष और विद्याधरगण पीडित हुए उस पर्वतश्रेष्ठको छोड़कर आकाशका आश्रय लेते हुए ॥४८॥ श्रीमान् वह अरिष्टपर्वत उन बलवान् करके पीडित हो ऊंचे २ वृक्ष और श्रृङ्गगणोंके सहित पातालमें बैठ गया ॥४९॥ उस पर्वतका विस्तार दश

योजन और ऊँचाई भी तीस योजनकी थी सो उससमय हनुमानजीकी धमकसे पृथ्वीमें पैठ वह पृथ्वीके साथ बराबर मिलगया ॥५०॥ हनुमानजी बडी २ लहरें आते हुए महासमुद्रको लीलापूर्वक लांघनेके लिये आकाशमार्गको उछलते हुए॥५१॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षट्पंचाशः सर्गः॥५६॥ बलवान् हनुमानजी उछलकर लीलापूर्वक आकाशरूप समुद्रको उतरने लगे भुजग,यक्ष और गन्धर्वगण यह इस समुद्रके खिले हुए कमल व उत्पल हैं ॥ १ ॥ चन्द्रमा जिसमें कुमुद,सूर्य उस समुद्रका मुखर कारण्डव(जलमुर्ग) पुष्प और श्रवण नक्षत्र जिसके हंस समस्त मेघ उसके नीलवर्ण शैवाल (शिवार) ॥ २ ॥ पुनर्वसु नक्षत्र जिसका महामत्स्य,महाग्रह मंगल उसका विशाल ऐरावत महाहस्ती स्वाती नक्षत्र जिसका हंस जिस करके शोभायमान ॥३॥ पवन ही जिसकी तरंगें

सलिलंघयिषुर्भीमंशलीलंलवणार्णवम् ॥ कल्लोलास्फालवेलांतमुत्पपातनभोहरिः ॥५१॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आदि० च० सा० सुं० षट्पंचाशः सर्गः ॥५६॥ आप्लुत्यचमहावेगःपक्षवानिवपर्वतः ॥ भुजंगयक्षगंधर्वप्रबुद्धकमलोत्पलम् ॥१॥ सचंद्रकुमुदंरम्यंसार्ककारंडवंशुभम् ॥ तिष्यश्रवणकादंबमभ्रशैवलशाद्वलम् ॥ २ ॥पुनर्वसुमहामीनंलोहितांगमहाग्रहम् ॥ ऐरावतमहाद्वीपंस्वातीहंसविलासितम् ॥३॥ वातसंघातजालोर्मिचंद्रांशुशिशिरांबुमत् ॥ हनुमानपरिश्रांतःपुप्लुवेगगनार्णवम् ॥ ४ ॥ ग्रसमानइवाकाशंताराधिपमिवोल्लिखन् ॥ हरन्निवसनक्षत्रंगगनंसार्कमंडलम् ॥ ५ ॥ अपारमपरिश्रांतश्चांबुधिसमगाहत ॥ हनुमान्मेघजालानिविकर्षन्निवगच्छति ॥ ६ ॥ पांडुरारुणवर्णानिनीलमांजिष्ठकानिच ॥ हरितारुणवर्णानिमहाभ्राणिचकाशिरे॥ ७ ॥प्रविशन्नभ्रजालानिनिष्क्रमंश्चपुनःपुनः ॥ प्रकाशश्चाप्रकाशश्चचंद्रमाइवदृश्यते॥ ८॥ विविधाभ्रघनापन्नगोचरोधवलांबरः ॥ दृश्यादृश्यतनुर्वीरस्तथाचंद्रायतेंबरे ॥ ९ ॥

जिसमें चन्द्रमा सूर्यकी शीतल किरणेंही शिशिर कालका शीतलनीर,ऐसे समुद्ररूप आकाशमें विना परिश्रमके हनुमानजी तैरने लगे॥४॥जानेके समय हनुमानजी मानों आकाशको ग्रसेही लेते थे,चन्द्रमाको मानों विलेख नहीं करते और नक्षत्र गण वा दिवाकर सहित आकाश मंडलको मानों हरणही किये लेते थे ॥५॥ और बादलोंके समूहोंको खैंचते हुए थकावट रहित हो श्रीहनुमानजी अपार आकाशसमुद्र पार होने लगे ॥६॥ उस समय; श्वेत, अरुण, नील मँजीठ और हरितरंगके बडे २ वारिद (मेघ) समूह खैंच जाकर शोभायमान होने लगे॥७॥ पवनकुमार हनुमानजी बार२मेघोंमें प्रवेशकर और प्रकाशित होकर चन्द्रमाके समान कभी निकल आते कभी छिप जातेथे ॥८॥ वह श्वेत वस्त्र धारण किये हुयेवीर हनुमानजी नाना प्रकारके बादलोंके बीचका मार्ग अवलंबन कर कभी

प्रकाशित कभी अप्रकाशित होकर आकाशमें चंद्रमाके समान जान पडने लगे ॥९॥ आकाशमें गरुडजीके समान मेघोंके चीरते फाडते व उनमेंसे निकलते पैठते हनुमानजी गमन करनेलगे ॥१०॥ और हनुमानजी चलते २ मेघके समान भयंकर स्वरसे नाद करने लगे महातेजस्वी हनुमानजी मुख्य २ राक्षसोंका संहार कर अपना नाम सबको सुनाय॥११॥लंकानगरीको व्याकुल और रावणको अत्यन्तव्यथित कर महावीर निशाचरोंको पीडित और जानकीजीको प्रणाम कर॥१२॥ महातेजस्वी वीर्यवान् हनुमानजी फिर समुद्रके बीचमें आय पहुँचे और क्रमसे पर्वतराज सुनाभ पर्वतको स्पर्श कर ॥१३॥ प्रत्यंचोंसे छोडे हुए बाणके समान अतिवेगसे गमन करने लगेऔर थोडेही दूरपर रहे हुए महापर्वतको देखते हुए ॥ १४ ॥ उस महेन्द्र पर्वतको देख महाकोप हनुमानजीने बडा नाद करके दशों

ताक्ष्यायमाणोगगनेसबभौवायुनंदनः ॥ दारयन्मेघवृन्दानिनिष्पतंश्चपुनःपुनः ॥ १० ॥नदन्नादेनमहतामेघस्वनमहास्वनः॥प्रवरान्राक्षसान्हत्वानामविश्राव्यचात्मनः ॥ ११ ॥ आकुलांनगरींकृत्वाव्यथयित्वाचरावणम् ॥ अर्दयित्वामहावीरान्वैदेहीमभिवाद्यच ॥१२॥ आजगाममहातेजाःपुनर्मध्येनसागरम् ॥ पर्वतेंद्रंसुनाभंचसमुपस्पृश्यवीर्यवान् ॥१३॥ ज्यामुक्तइवनाराचोमहावेगोऽभ्युपागमत्॥सकिंचिदारात्संप्राप्तःसमालोक्यमहागिरिम्॥ १४॥महेंद्रमेघसंकाशोननादसमहाकपिः ॥ सपूरयामासकपिर्दिशोदशसमंततः ॥ १५ ॥ नदन्नादेनमहतामेघस्वनमहास्वनः संतदेशमनुप्राप्तःसुहृद्दर्शनलालसः ॥ १६ ॥ ननादसुमहानादंलांगूलंचाप्यकंपयत् ॥ तस्यनानद्यमानस्यसुपर्णाचरितेपथि ॥ १७ ॥ फलतीवास्यघोषेणगगनंसार्कमंडलम् ॥ येतुतत्रोत्तरेकूलेसमुद्रस्यमहाबलाः ॥ १८ ॥ पूर्वंसंविष्टिताःशूरावायुपुत्रदिदृक्षवः ॥ महतोवायुनुन्नस्यतोयदस्येवनिःस्वनम्॥शुश्रुवुस्तेतदाघोषमूरुवेगंहनूमतः ॥१९॥ तेदीनमनसःसर्वेशुश्रुवुःकाननौकसः॥वानरेंद्रस्यनिर्घोषंपर्जन्यनिनदोपमम्॥२०॥

दिशाओंको पूर्ण कर दिया ॥१५॥ अपने सुहृद् लोगोंके दर्शनकी लालसा कर (कि जिनको हनुमानजी सीताजीकी सुध लेनेको जाते समय महेन्द्राचल पर बैठा गये थे) महाकपि हनुमानजी इस प्रकारसे महामेघके समान शब्द करते २ उस पर्वत महेन्द्रके निकट पहुँचने लगे ॥ १६ ॥ उस समय हनुमानजी बारंबार गर्जकर पूँछको कंपायमान करने लगे,आकाशमें गरुडजीके मार्गका आश्रय लिये हनुमानजीके घोर गर्जनसे ॥ १७ ॥ आकाशमंडल सूर्यमंडलके सहित मानों विदीर्ण होगया समुद्रके उत्तर किनारे जो महाबलवान् ॥ १८ ॥ रीछ वानरगण पहलेहीसे पवनकुमार हनुमानजीके देखनेकी आशा किये बैठे थे वह सब महामेघ के समान हनुमानजीके गर्जनेका घोर शब्द और उनके वेगका बडा भारी शब्द सुनते हुए ॥ १९ ॥ वह सब रीछ वानरगण उदास मन किये शोक

करते हुए बैठे थे, उस समय मेघके गर्जनेके समान इन सबोंने वानर श्रेष्ठ हनुमानजीका नाद सुना ॥ २० ॥ नाद करते हुए हनुमानजीका यह शब्द सुनकर अपने बन्धुका दर्शन करनेकी इच्छासे सबही वानर लोग चपटाये ॥ २१ ॥ तब वानरवर जाम्बवानजी प्रीतिके वश हर्षित चित्त हो सब वानरोंको पुकारकर बोले ॥२२॥ लो यह देखो ! हनुमानूजी सबप्रकारसे कार्य सिद्धकर आये । इसमें कोई सन्देह नहीं है; जो कार्य सिद्ध न होता तो यह कभी इसप्रकारका नाद न करते ॥ २३ ॥ हनुमानूजीकी बाँहोंका भयंकर वेगजनित शब्द सुनकर सब वानर लोगहर्षित होकर इधर उधर एक साथ खडे होगये ॥ २४ ॥ वह सब हनुमानूजीका दर्शन करनेके लिये एक पर्वतसे दूसरे पर्वतपर और एक शिखरसे दूसरे शिखरपर कूद २ कर जाने लगे ॥२५॥ वानरगण प्रसन्न चित्तसे वृक्षोंकी

निशम्यनदतोनादंवानरास्तेसमंततः॥ बभूवुरुत्सुकाःसर्वेसुहृद्दर्शनकांक्षिणः ॥२१॥ जांबवान्सहरिश्रेष्ठःप्रीतिसंहृष्टमानसः॥उपामंत्र्यहरीन्सर्वा निदंवचनमब्रवीत् ॥२२॥ सर्वथाकृतकार्योसौहनूमान्नात्रसंशयः ॥ नह्यस्याकृतकार्यस्यनादएवंविधोभवेत् ॥ २३ ॥ तस्यबाहूरुवेगंचनिना दंचमहात्मनः ॥ निशम्यहरयोहृष्टाःसमुत्पेतुर्यतस्ततः ॥२४॥ तेनगाग्रान्नगाग्राणिशिखराच्छिखराणिच ॥ प्रहृष्टाःसमपद्यंतहनूमंतंदिदृक्षवः ॥२५॥ तेप्रीताःपादपाग्रेषुगृह्यशाखामवस्थिताः ॥ वासांसिचप्रकाशानिसमाविध्यंतवानराः ॥२६॥ गिरिगह्वरसंलीनोयथागर्जतिमारुतः ॥ एवंजगर्जबलवान्हनूमान्मारुतात्मजः ॥ २७ ॥ तमभ्रघनसंकाशमापतंतंमहाकपिम् ॥ दृष्ट्वातेवानराःसर्वेतस्थुःप्रांजलयस्तदा ॥ २८ ॥ ततस्तुवेगवान्वीरोगिरेर्गिरिनिभःकपिः ॥निपपातगिरेस्तस्यशिखरेपादपाकुले ॥ २९ ॥ हर्षेणापूर्यमाणोसौरम्येपर्वतनिर्झरे ॥ छिन्नपक्षइवाकाशात्पपातधरणीधरः ॥ ३० ॥ ततस्तेप्रीतमनसस्सर्वेवानरपुंगवाः ॥ हनूमंतंमहात्मानंपरिवार्योपतस्थिरे ॥ ३१ ॥

डालें पकडकर सम्मुख खडे होगये। औ उनके श्वेत वसनोंसे कंपायमान होनेपर॥२६॥पवन जिस प्रकार पर्वतकी गुफामें प्रवेश कर गर्जता है,पवनकुमार बलवान् हनुमानूजी भी वैसे ही भयंकर गर्जना वहां आयकर करने लगे ॥ २७ ॥ हनुमानूजीको आकाशगामी मेघके समान वहां आतेहुए देखकर सब वानरगण हाथ जोडकर खडे होगये ॥२८॥ इसी अवसरमें पर्वताकार,वेगवान् महावीर पवनकुमार हनुमान् अरिष्टनाम पर्वतसे छलांग मारेहुए महेन्द्रपर्वतके वृक्षयुक्त शिखरपर कूदे ॥२९॥ हनुमानूजी हर्षसे पूरित अन्तकरण युक्त हो आकाशसे पंखकटे पर्वतके समान रमणीकपर्वतके झरना झरनेके स्थानमें गिरे ॥३०॥ समस्त वानरश्रेष्ठोंने प्रीतिपूर्ण हृदयसे महात्मा हनुमानूजीके समीप आय उनको चारोंओरसे घेरलिया ॥ ३१ ॥

हनुमान्‌जीको घेर वानरगण परमप्रसन्न हुए और उन सबका वदनमंडल खिलगया ॥ ३२ ॥ उसके पीछे वानरोंने कंद मूल फल और दूसरी भेंटकी वस्तुयें
लायकर वानरसिंह पवनसुत हनुमान्‌जीकी पूजा की ॥३३॥ यह सब वानर आनंदमें मग्नहो कोई ऊंचे शब्दसे गर्जने और कोई २ किलकारियें मारने लगे।
बडे २ वानर अतिहर्षित होकर हनुमान्‌जीके बैठनेको वृक्षके गुद्दे तोड लाये ॥ ३४ ॥ फिर महाकपि हनुमान्‌जी पूजा करनेके योग्य जाम्बवान् इत्यादि
वृद्ध वानरोंको और कुमार अंगदजीको प्रणाम करते हुए ॥३५॥ और अंगद व जाम्बवान्‌जीने भी इनकी पूजा की और दूसरे वानरोंने हनुमान्‌जीको प्रसन्न
किया, उन पूजनीय विक्रमवान् महाकपि हनुमान्‌जीने संक्षेपमें सबसे कहा कि हमसीताजीको देखआये ॥ ३६ ॥ उसके पीछे हनुमान्‌जी वालिके पुत्र अंगद
जीका हाथ पकड महेन्द्र पर्वतके रमणीक वनमें बैठे ॥ ३७ ॥ और पूँछेजानेपर हनुमान्‌जी वानरश्रेष्ठोंसे बोले कि, जानकीजी अशोक वनमें हैं; हम उनको

परिवार्यचतेसर्वेपरांप्रीतिमुपागताः ॥ प्रहृष्टवदनाःसर्वेतमागतमुपागमन् ॥ ३२ ॥ उपायनानिचादायमूलानिचफलानिच ॥ प्रत्यर्चयन्हरिश्रेष्ठं
हरयोमारुतात्मजम् ॥ ३३ ॥ विनेदुर्मुदिताःकेचित्केचित्किलकिलांतथा ॥ हृष्टाःपादपशाखाश्चआनीन्युर्वानरर्षभाः ॥ ३४ ॥ हनूमांस्तुगुरून्वृद्धा
ञ्जांबवत्प्रमुखांस्तदा ॥ कुमारमंगदंचैवसोवंदतमहाकपिः ॥ ३५ ॥ सताभ्यांपूजितःपूज्यःकपिभिश्चप्रसादितः ॥ दृष्टादेवीतिविक्रांतःसंक्षेपेण
न्यवेदयत् ॥ ३६ ॥ निषसादचहस्तेनगृहीत्वावालिनःसुतम् ॥ रमणीयेवनोद्देशेमहेंद्रस्यगिरेस्तदा ॥ ३७ ॥ हनूमानब्रवीत्पृष्टस्तदातान्वानरर्षभान्
अशोकवनिकासंस्थादृष्टासाजनकात्मजा ॥ ३८ ॥ रक्ष्यमाणासुघोराभीराक्षसीभिरनिंदिता ॥ एकवेणीधराबालारामदर्शनलालसा ॥ ३९ ॥
उपवासपरिश्रांतामलिनाजटिलाकृशा ॥ ततोदृष्टेतिवचनंमहार्थममृतोपमम् ॥ ४० ॥ निशम्यमारुतेःसर्वेमुदितावानराभवन् ॥ क्ष्वेडंत्यन्येनदं
त्यन्येगर्जंत्यन्येमहाबलाः ॥ ४१ ॥ चक्रुःकिलकिलामन्येप्रतिगर्जंतिचापरे ॥ केचिदुच्छ्रितलांगूलाःप्रहृष्टाःकपिकुंजराः ॥ ४२ ॥ आयतांचितदी
र्घाणिलांगूलानिप्रविव्यधुः ॥ अपरेतुहनूमंतंश्रीमंतवानरोत्तमम् ॥ ४३ ॥

देखआये हैं ॥३८॥ घोर रूपवाली राक्षसियें उन निन्दारहित सीताजीकी रक्षा करती हैं वहएक वेणीधारण किये हुए श्रीरामचन्द्रजीके देखनेको बहुतही चट
पटाय रही हैं ॥३९॥ उपवासोंके करनेसे थकित,दुर्बल,मलीन जटा धारण कियेहैं हनुमान्‌जीको देख औरउनके महाअर्थयुक्त अमृतके समान वचन ॥४०॥
सुनकर सर्ववानरगण बहुतही हर्षित हुए । उनवानरोंमेंसे कोई २ सिंहनाद करने लगे कोई २ साधारण गर्जने लगे और और कोई कोई शब्द करते हुए
॥ ४१ ॥ कोई २ किलकारी मारने लगे और कोई वानरश्रेष्ठ आनंदित होकर अपनी पूंछ उठाय २ नाचने लगे ॥ ४२ ॥ कोई २ अपनी तिरछी और
बडी पूंछको फटकारने लगे व और दूसरे श्रीमान् वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जीको ॥ ४३ ॥

पर्वतके शृंगोंपर हर्षित चित्तसे कूदकर छूने लगे। जब हनुमान्जी सीताके देखनेका समाचार सुनाचुके तब अंगदजी उनसे बोले॥ ४४॥ अगदजी सब वानरोंके मध्यमें उत्तम वचन हनुमान्जीसे बोले, बलवीर्यमें कोई भी वानर तुम्हारे समान नहींहै ॥४५॥ देखो ! तुम बिना किसीकी सहायताके बडे विस्तारवाला समुद्र लांघकर फिर यहांपर लौट आये, हे वानरश्रेष्ठ!बस एक मात्र तुमहीने हम लोगोंको जीवदान दियाहै॥४६॥तुम्हारे अनुग्रहसे हम लोगोंका मनोरथ सफल हुआ, अब हम फिर श्रीरामचन्द्रजीसे मिलेंगे; तुम्हारी प्रभुशक्ति, धीरता, वीरता सबही अतुलनीय हैं ॥४७॥ भाग्यसेही तुम यशस्विनी देवी रामप्यारी श्रीजानकीजीको देख आये हो अब सीताजीके वियोगसे उत्पन्न हुआ श्रीरामचन्द्रजीका दुःख छूट जायगा यह बडे भाग्यकी बातहै ॥ ४८ ॥ उसके पीछे वानरगण, अंगद, हनुमान् और

आप्लुत्यगिरिशृंगेषुसंस्पृशंतिस्महर्षिताः॥उक्तवाक्यंहनूमंतमंगदस्तुतदाब्रवीत् ॥४४॥ सर्वेषांहरिवीराणांमध्येवाचमनुत्तमाम्॥ सत्त्वेवीर्येनते कश्चित्समोवानरविद्यते ॥४५॥यदवप्लुत्यविस्तीर्णसागरंपुनरागतः ॥ जीवितस्यप्रदातानस्त्वमेकोवानरोत्तम ॥४६॥ त्वत्प्रसादात्समेष्यामः सिद्धार्थाराघवेणह ॥अहोस्वामिनितेभक्तिरहोवीर्यंमहोधृतिः॥४७॥ दिष्ट्याद्दृष्टात्वयादेवीरामपत्नीयशस्विनी ॥ दिष्ट्यात्यक्ष्यतिकाकुत्स्थः शोकंसीतावियोगजम् ॥४८॥ततोंगदंहनूमंतंजांबवंतंचवानराः ॥ परिवार्यप्रमुदिताभेजिरेविपुलाःशिलाः ॥४९॥ उपविष्टागिरेस्तस्यशिला सुविपुलासुते ॥ श्रोतुकामाःसमुद्रस्यलंघनंवानरोत्तमाः ॥ ५० ॥ दर्शनंचापिलंकायाःसीतायारावणस्यच ॥ तस्थुःप्रांजलयःसर्वेहमद्वदनो न्मुखाः ॥ ५१ ॥ तस्थौतत्रांगदःश्रीमान्वानरैर्बहुभिर्वृतः ॥ उपास्यमानोविबिधैर्दिविदेवपतिर्यथा ॥ ५२ ॥ हनूमताकीर्तिमतायशस्विनात थांगदेनांगदनद्धबाहुना ॥ मुदातदाध्यासितमुन्नतंमहन्महीधराग्रंज्वलितंश्रियाभवत् ॥५३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे सप्तपंचाशःसर्गः ॥ ५७ ॥ ततस्तस्यगिरेःशृंगंमहेंद्रस्यमहाबलाः ॥ हनूमत्प्रमुखाःप्रीतिंहरयोजग्मुरुत्तमाम् ॥ १ ॥

जाम्बवान्जीको चारों ओरसे घेर हर्षमें भर उनके बैठनेको विविध भाँतिके शिखंड लाये ॥४९॥ और पर्वतकी उन बडी २ शिलाओंपर समुद्र लांघनेका संवाद श्रवण करनेके लिये समस्त वानर इस तीन वानरोंको घेरकर बैठे ॥५०॥ लंका और रावणको भी देखाहै इन समस्त बातोंके श्रवण करनेकी इच्छासे सबही हनुमान्जीके मुखकी ओर मुख कर बैठे ॥५१॥ सुरराज इन्द्रजी जिस प्रकार देवता लोगों करके पूजे जातेहैं वैसेही श्रीमान् अंगदजी बहुतसारे वानरोंसे घेरे जाकर वहांपर बैठे ॥ ५२ ॥ कीर्तिमान् हनुमान्जी और यशस्वी अंगदजी, दो बाजुओंसे बाँह सजाये इस प्रकारके हर्षमें भरेहुए बैठे उनके बैठनेसे वह बहुत ऊंचा पर्वतका शिखर उनकी शोभासे अति शोभायमान हुआ ॥५३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुंदरकांडे भाषायां सप्तपंचाशः सर्गः ॥५७॥ उसके पीछे हनुमान्

इत्यादि महाबलवान् वानरगण महेन्द्राचल पर्वतके शिखरपरबैठकर परम प्रसन्न हुए॥१॥जब प्रसन्न होकर यह सब महात्मा वानर भली भाँति बैठे तब प्रसन्नचित्त हो प्रीतिसे बैठे हुए कपिराजासे॥२॥जाम्बवानने उन पवनकुमार महाकपि हनुमानजीसे पूछा किसप्रकार देवीको आपने वहाँ रहते देखा है॥३॥दुरात्मा रावण उनके प्रति किस प्रकारका व्यवहार किया करता है?महाकपे! यह सब वृत्तान्त ठीक२हमसे तुम वर्णन करो ॥४॥ हे हनुमन् ! तुमने किस प्रकारसे देवी जानकीजीको पाया और उन्होंने तुमसे क्या कहा इन सब बातोंका श्रवण कर फिर हम कर्तव्य स्थिर करेंगे ॥ ५ ॥ आत्माके जाननेवाले श्रीरामचन्द्रजीके निकट जायकर जिस वार्ताको कहना होगा,या जिसवार्ताको छिपाना होगा,सो तुम यह सब वार्ताठीक२कहो॥६॥ जबजाम्बवानजीने ऐसा कहा तो हनुमानजीके सर्वशरीरमेंरोमाञ्च

प्रीतिमत्सूपविष्टेषुवानरेषुमहात्मसु।।ततंततःप्रतिसंहृष्टःप्रीतियुक्तंमहाकपिम् ॥२॥ जांबवान्कार्यवृत्तांतमपृच्छदनिलात्मजम्॥ कथंदृष्टात्वया
देवीकथंवातत्रवर्तते ॥३ ॥ तस्यांचापिकथंवृत्तःक्रूरकर्मादशाननः ॥ तत्त्वतःसर्वमेतन्नःप्रब्रूहित्वंमहाकपे ॥ ४ ॥ संमार्गिताकथंदेवीकिंचसाप्र
त्यभाषत ॥ श्रुतार्थाश्चिंतयिष्यामोभूयःकार्यविनिश्चयम् ॥ ५ ॥ यश्चार्थस्तत्रवक्तव्योगतैरस्माभिरात्मवान् ॥ रक्षितव्यंचयत्तत्रतद्भवान्व्या
करोतुनः ॥६॥ सनियुक्तस्ततस्तेनसंप्रहृष्टतनूरुहः ॥ नमस्यञ्छिरसादेव्यैसीतायैप्रत्यभाषत ॥७॥ प्रत्यक्षमेवभवतांमहेंद्राग्रात्खमाप्लुतः ॥
उदधेर्दक्षिणंपारंकांक्षमाणःसमाहितः ॥८॥ गच्छतश्चहिमेघोरंविघ्नरूपमिवाभवत्॥कांचनंशिखरंदिव्यंपश्यामिसुमनोहरम् ॥९॥ स्थितंपंथा
नमावृत्यमेनेविघ्नंचतंनगम् ॥ उपसंगम्यतंदिव्यंकांचनंनगमुत्तमम् ॥ १० ॥ कृतामेमनसाबुद्धिर्भेत्तव्योयंमयेतिच ॥ प्रहतस्यमयातस्यलांगूले
नमहागिरेः ॥ ११ ॥ शिखरंसूर्यसंकाशंव्यशीर्यतसहस्रधा ॥ व्यवसायंचतंबुद्ध्वासहोवाचमहागिरिः ॥ १२ ॥ पुत्रेतिमधुरांवाणींमनःप्रह्लादय
न्निव ॥ पितृव्यंचापिमांविद्धिसखायंमातरिश्वनः ॥ १३ ॥

हो आया, वह शिर झुकाय देवी जानकीको प्रणाम कर कहने लगे ॥ ७ ॥ समुद्रके दक्षिणपार जानेकी इच्छासे सावधान होकर हम आप लोगोंके सामने ही महेंद्रपर्वतसे आकाशमें कूदे थे॥८॥थोडी दूर समुद्रके उसपार जाते दूसरे विघ्न रूप दिखलाई देता मनोहर काञ्चनमय एक दिव्य शिखर हमने देखा ॥९॥ उसको देख उस पर्वतको साक्षात् हमने अपना विघ्न माना । उसके पीछे उस सुवर्णमय पर्वतके निकटजाय ॥१०॥ मनही मनमें हमने कहा कि, इस पर्वतको भय दिख लाना चाहिये यह विचारकर अति जोरसे उस पर्वतके शृङ्गपर हमने अपनी पूंछ दे मारी ॥११॥ तब सूर्यके समान कांतियुक्त उस पर्वतका शिखर फटकरहजार टुकडे होगया, वह महापर्वत अपनी ऐसी अवस्था जानकर मनुष्यरूप हो हमसे बोला ॥ १२ ॥ 'पुत्र' यह सुन मधुर वचन कहकर हमारे हृदयमें अत्यानंद

संचार करता हुआ कहने लगा कि, हम पवनके सखा हैं, इसलिये तुम हमको पितृव्य (चचा) समझो॥१३॥हमारा विख्यात नाम मैनाक है, हम इस समुद्रमें वास करते हैं, समुद्रमें रहनेका यह कारण है कि, पहले सब पर्वतश्रेष्ठोंके पंख थे॥१४॥इस कारणसे यह पर्वत अनेक भाँतिके उत्पात आरंभ करके इच्छानुसार पृथ्वीपर विचरण किया करते थे भगवान् पाकशासन इन्द्रजीने पर्वतगणों का ऐसा चरित्र श्रवण कर॥१५॥वज्रसे मारकर सब पर्वतोंके पंख काटडाले। परन्तु तुम्हारे पिता पवनजीने उसकाल हमको इस विपदसे छुडालिया था॥१६॥ हे वत्स ! उस काल पवनजीने हमको उडायकर इस समुद्रमें ढकेल दिया। हे शत्रुओंके दमन करने वाले ! इससे हम श्रीरामचन्द्रजीकी सहायता करना चाहते हैं॥१७॥श्रीरामचन्द्रजी धर्मधारियोंमें प्रथम गिनेजानेके योग्य हैं और उनका विक्रम इन्द्रजीके समान है उन महात्मा मैनाकका यह वचन सुन॥१८॥हमने उनसे अपने सब कर्तव्य कार्यको निवेदन किया और यह भी कहा कि; विना इस कार्यको किये हम रुक नहीं सकते

मैनाकमितिविख्यातंनिवसंतंमहोदधौ ॥ पक्षवंतःपुरातत्रबभूवुःपर्वतोत्तमाः॥१४॥ छंदतःपृथिवींचेरुर्बाधमानाःसमंततः॥ श्रुत्वानगानांचरितं महेंद्रःपाकशासनः ॥ १५ ॥ वज्रेणभगवान्पक्षौचिच्छेदैषांसहस्रशः ॥ अहं तु मोचितस्तस्मात्तवपित्रामहात्मना ॥१६॥ मारुतेनतदावत्सप्र क्षिप्तोवरुणालये ॥ राघवस्यमयासाह्यवर्तितव्यमरिंदम ॥१७॥ रामोधर्मभृतांश्रेष्ठोमहेंद्रसमविक्रमः॥एतच्छ्रुत्वामयातस्यमैनाकस्यमहात्मनः ॥१८॥ कार्यमावेद्यचगिरेरुद्यतंवैमनोमम॥ तेनचाहमनुज्ञातोमैनाकेनमहात्मना ॥ १९ ॥ सचाप्यंतर्हितःशैलोमानुषेणवपुष्मता ॥ शरीरेण महाशैलःशैलेनचमहोदधौ ॥ २० ॥ उत्तमंजवमास्थायशेषमध्वानमास्थितः ॥ ततोहंसुचिरंकालंजवेनाभ्यगमंपथि ॥ २१ ॥ ततःपश्या म्यहंदेवींसुरसांनागमातरम् ॥ समुद्रमध्येसादेवीवचनंचेदमब्रवीत् ॥२२॥ ममभक्ष्यःप्रदिष्टस्त्वममरैर्हरिसत्तम ॥ ततस्त्वांभक्षयिष्यामिविहि तस्त्वंहिमेसुरैः ॥ २३ ॥ एवमुक्तःसुरसयाप्रांजलिःप्रणतःस्थितः ॥ विवर्णवदनोभूत्वावाक्यंचेदमुदीरयन् ॥ २४ ॥ रामोदाशरथिःश्रीमान्प्र विष्टोदंडकावनम् ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्रासीतयाचपरंतपः ॥ २५ ॥

और हमारा मनभी जानेके लिये चंचल हुआ, तब महात्मा मैनाकनेभी हमको आज्ञा दी॥१९॥मनुष्यका रूपधारण किये वह पर्वत अपने शिखरपर खडाहो अन्त र्हित होगया और शरीरके शहित समुद्रमें प्रवेश कर गया॥२०॥ तब हम उत्तम रूपसे वेगवान् होकर बचेहुए मार्गको लांघनेलगे और बहुत दूरतक ऐसेही वेगमें भरे चले ॥ २१ ॥ फिर हमने चलते २ सुरसा नाम नागमाताको देखा, वह देवी सुरसा बीच सागरमें हमारा मार्ग रोककर बोली ॥ २२ ॥ वानर श्रेष्ठ देवता लोगोंने तुमको हमारा भोजनरूप बताय कर हमको यहां भेजा है। इसलिये देवतालोगों करके बताये हुये भोजन तुमको हम भक्षण कर जायँगी॥२३॥ जब सुरसाने इस प्रकारसे कहा तब हमने हाथजोड खडे रहकर प्रणाम करके उदासमुख हो उससे कहा ॥ २४ ॥ शत्रुओंके दमन करनेवाले दशरथकुमार

श्रीरामचन्द्रजी भ्राता लक्ष्मण और सीताजीके सहित दंडकारण्यमें आये ॥ २५ ॥ तब वनकेवास करनेके समय दुरात्मा रावण उनकी भार्या जानकीजीको हरण करके ले आया इसलिये हम श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञासे दूत हो सीताजी के खोजनेको जा रहे हैं॥२६॥तुम श्रीरामचन्द्रजीके अधिकारमेंवास करतीहो, सो सीता जीके ढूँढनेमें तुमको भी श्रीरामचन्द्रजीकी सहायता करना उचित है; अथवा श्रीजानकी जीको देख और उनका वृत्तान्त अक्लिष्ट कर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीसे निवेदनकर ॥ २७ ॥ हम तुम्हारे मुखमें प्रवेश करेंगे, यह प्रतिज्ञा हम तुमसे सत्यही सत्य करते हैं. इस प्रकारसे हमने कहा परंतु कामरूपिणी सुरसा ॥२८॥ हमको उत्तर देती हुई कि, कोई भी पुरुष हमको लंघन करके नहीं जाय सकता कारणकि, हमको वरदान ही ऐसा दिया है जब सुरसाने ऐसा कहा तो हम दश योजनके बडे होगये॥२९॥और फिर क्षणभरके ही मध्यमें हमने अपने शरीरको और भी पांच योजन बढाया। परंतु सुरसाने हमारी देहके प्रमाणसे अपना मुख और भी अधिक

तस्यसीताहृताभार्यारावणेनदुरात्मना ॥ तस्याःसकाशंदूतोहंगमिष्येरामशासनात् ॥ २६ ॥ कर्तुमर्हसिरामस्यसाहाय्यंविषयेसति अथवा मैथिलींदृष्ट्वारामंचाक्लिष्टकारिणम् ॥२७॥ आगमिष्यामितेवक्रंसत्यंप्रतिशृणोमिते ॥ एवमुक्त्वामयासातुसुरसाकामरूपिणी ॥ २८ ॥ अब्रवी न्नातिवर्तेतकश्चिदेषवरोमम ॥ एवमुक्तःसुरसयादशयोजनमायतः ॥ २९ ॥ ततोर्धगुणविस्तारोबभूवाहंक्षणेनतु ॥ मत्प्रमाणाधिकंचैवव्यादितंतु मुखंतया ॥ ३० ॥ तदृष्ट्वाव्यादितंत्वास्यंह्रस्वंह्यकरवंपुनः ॥ तस्मिन्मुहूर्तेचपुनर्बभूवांगुष्ठसंमितः ॥ ३१ ॥ अभिपत्याशुतद्वक्रंनिर्गतोहंततः क्षणात् ॥ अब्रवीत्सुरसादेवीस्वेनरूपेणमापुनः ॥३२॥ अर्थसिद्ध्यैहरिश्रेष्ठगच्छसौम्ययथासुखम् ॥ समानयचवैदेहींराघवेणमहात्मना ॥३३॥ सुखीभवमहाबाहोप्रीतास्मितववानर ॥ ततोहंसाधुसाध्वीतिसर्वभूतैःप्रसंसितः ॥ ३४ ॥ ततोंतरिक्षंविपुलंप्लुतोहंगरुडोयथा ॥ छायामेनिगृ हीताचनपश्यामिकिंचन ॥ ३५ ॥

फैलाया ॥ ३० ॥ उसको बडा भारी मुख फैलाये देख हमने अपने शरीरको बहुतही संकुचित किया हम उसी समय अंगूठेके समान छोटा रूप बनाया ॥ ॥३१॥ उसके बदनमें बडी शीघ्रतासे प्रवेश कर और फिर तत्क्षण ही बाहर आ गये यह देख देवी सुरसा फिर अपना रूप धारण करके फिर हमको पुकारकर बोली॥३२॥हे सौम्य ! तुम सुख पूर्वक चले जाओ और महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके सहित सीताजीको मिलाओ। और अर्थ सिद्ध करनेके लिये निर्द्वन्द्व होकर जाओ॥३३॥ हे वानर ! तुम सुखी हो ! हम तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हैं जब सुरसाने ऐसा कहा तो सबही प्राणी "धन्य२" कह कर हमारी प्रशंसा करने लगे ॥३४॥उसके पीछे हम गरुडजीके समान बडे भारी आकाश मंडल में प्रवेश करने लगे पर हमारी छाया खिंचने लगी; तब हमने इधर उधर देखा परंतु हमको

कोई भी देखनेमें न आया ॥३५॥ इसप्रकार हमारी गति रुकजाने से हम दशों दिशाओंकी ओर देखने लगे तथापि हमने कुछ भी न देखपायाकि किसने हमारी गतिको रोकाहै ॥३६॥ तब हम विचारने लगेकि किसकारणसे हमारी गति रोकनेको यह विघ्न उपस्थित हुआ और कोई रूप दिखाई नहीं देता ॥३७॥ उसके पीछे शोक करते २ हमने नीचेको दृष्टि डाली तो हमने देखाकि;एक घोर रूपवाली राक्षसी समुद्रके जलमें पडी हुईहै ॥३८॥ हमारी गति यद्यपि रुक गईथी परंतु हमारे मनमें इससे कुछ भी भय उत्पन्न नहीं हुआ यह देख कर वह भयंकर राक्षसी विकट शब्दसे हँसकर घोर शोर करती हुई अशुभ वचन हमसे बोली ॥३९॥ उसने कहा कि,हे महाकाय!हम बहुत कालसे भोजन न पायकर अतिशय क्षुधित हो तुमको भोजन करनेकी अभिलाषा करतीहैं तुम कहां जाओगे! इस लिये तुम हमारे इस शरीरकी तृप्ति कराओ ॥४०॥ हमने "बहुत अच्छा" कह कर उसके वचनोंको अंगीकार किया उसके पीछे उसके मुखके प्रमाणसे

सोहंविगतवेगस्तुदिशोदशविलोकयन् ॥ नकिंचित्तत्रपश्यामियेनमेविंहतागतिः ॥ ३६ ॥ अथमेबुद्धिरुत्पन्नाकिन्नामगमनेमम ॥ ईदृशोविघ्न उत्पन्नोरूपमत्रनदृश्यते ॥ ३७॥ अधोभागेतुमेदृष्टिःशोचतःपतितातदा ॥ तत्राद्राक्षमहंभीमांराक्षसींसलिलेशयाम् ॥३८॥ प्रहस्यचमहनादमुक्तोहंभीमयातया ॥ अवस्थितमसंभ्रांतमिदंवाक्यमशोभनम् ॥३९॥ क्वासिगंतामहाकायक्षुधितायाममेप्सितः ॥भक्षःप्रीणय मेदेहंचिरमाहारवर्जितम् ॥ ४० ॥ बाढमित्येवतांवाणींप्रत्यगृह्णाम्यहंततः ॥ आस्यप्रमाणादधिकंतस्याःकायमपूरयम्॥४१॥ तस्याश्चास्यंमहद्भीमंवर्धतेमम भक्षणे ॥ नतुमांसातुबुबुधेममवाविकृतंकृतम् ॥४२॥ ततोहंविपुलंरूपंसंक्षिप्यनिमिषांतरात् ॥ तस्याहृदयमादायप्रपतामिनभस्थलम् ॥४३॥ साविसृष्टभुजाभीमापपातलवणांभसि ॥ मायापर्वतसंकाशानिकृत्तहृदयासती ॥४४ ॥ शृणोमिखगतानांचवाचःसौम्यामहात्मनाम् ॥ राक्षसीसिंहिकाभीमाक्षिप्रंहनुमताहता ॥ ४५ ॥ तांहत्वापुनरेवाहंकृत्यमात्ययिकंस्मरन् ॥गत्वाचमहदध्वानंपश्यामिनगमंडितम् ॥ ४६ ॥

बहुत बडा हमने अपने शरीरको किया ॥४१॥ उस राक्षसीने हमको भोजन करनेके लिये बडा भारी भयंकर मुख फैलाया उसने उस बात को नहीं जाना कि हमकाम रूप धारीने दूसराही रूप धारण किया है ॥४२॥ परन्तु फिर हम पलकमारते ही अपने बडे शरीरको छोटा बनाय उसके मुखमें प्रवेशकर उसके कलेजेको ग्रहण कर आकाशको उछल गये ॥४३॥ हम करके हृदय कट जानेपर वह भयंकर पर्वता कार राक्षसी दोनों बाँहोंको फैलाय लवण समुद्रमें गिर पडी॥४४॥ उसी समय महात्मा आकाशचरियोंका मधुर वचन हमने सुन पाया कि "हनुमानजीने भयंकर राक्षसीको बडी शीघ्रतासे मार डाला" ॥४५॥ इसप्रकार उस राक्षसीको संहार कर हमने फिर चिन्ताकी कि;सीताजीके देखनेमें कुछ विलम्ब हुआ ऐसे चिन्ता करते २ अपने कार्यको याद करते चले और बहुत दूरचल पर्वतयुक्त ॥४६॥

समुद्रका दक्षिणतीर देखा जहां लंका नामक पुरीहै सूर्यभगवान्के छिपनेकेसमय हम राक्षसोंके रहनेकी पुरीमें ॥४७॥ प्रवेश करते हुए परन्तु भयंकर विक्रमकारी राक्षसलोग हमको नहीं जानते थे परन्तु वहां भी प्रवेश करते हुए हमारे सम्मुख प्रलयकालीन मेघके समान ॥४८॥ रूप धारण किये अट्टहास करती हुई कोई राक्षसी उठ खडी हुई और हमको मारनेकी इच्छा करती हुई, तब हम अग्निके समान लाल केशवाली उसके ऊपर ॥४९॥ अपने बांयें हाथका मूका मारके उसभयंकर राक्षसीको पराजित करके सन्ध्याके समय पुरीमें प्रवेश करते हुए, तब उसने डरकर हमसे कहा कि ॥५०॥ हे वीर ! हमही साक्षात् इस लंकापुरीकी अधिष्ठात्री हैं, जब कि तुमने पराक्रम प्रगट करके हमको पराजित किया इससे तुम सबही राक्षसोंको निःसन्देह जीत लोगे ॥ ५१ ॥ उसके पीछे हम जानकीजीका खोज करनेके लिये समस्त रात्रिमें लंकापुरीमें घूमते घामते रावणके रनवासमें बैठे; परन्तु वहां भी हमने सुमध्यमा जानकीजीको न देख पाया

दक्षिणंतीरमुदधेर्लंकायत्रगतापुरी ॥ अस्तंदिनकरेयातेरक्षसांनिलयंपुरीम् ॥४७॥प्रविष्टोहमविज्ञातोरक्षोभिर्भीमविक्रमैः ॥ तत्रप्रविशतश्चापि कल्पांतघनसप्रभा ॥ ४८ ॥ अट्टहासंविमुंचंतीनारीकाप्युत्थितापुरः ॥जिघांसंतींततस्तांतुज्वलदग्निशिरोरुहाम् ॥४९॥ सव्यमुष्टिप्रहारेणपरा जित्यसुभैरवाम् ॥ प्रदोषकालेप्रविशंभीतयाहंतयोदितः ॥५०॥अहंलंकापुरीवीरनिर्जिताविक्रमेणते॥ यस्मात्तस्माद्विजेतासिसर्वरक्षांस्यशेषतः ॥ ५१ ॥ तत्राहंसर्वरात्रंतुविचरञ्जनकात्मजाम् ॥ रावणांतःपुरगतोनचापश्यंसुमध्यमाम् ॥५२॥ ततः सीतामपश्यंस्तुरावणस्यनिवेशने ॥ शोकसागरमासाद्यनपारमुपलक्षये ॥ ५३ ॥ शोचताचमयादृष्टंप्राकारेणाभिसंवृतम् ॥ कांचनेनविकृष्टेनगृहोपवनमुत्तमम् ॥ ५४ ॥ सप्राकार मवप्लुत्यपश्यामिबहुपादपम् ॥ अशोकवनिकामध्येशिंशपापादपोमहान् ॥५५॥ तमारुह्यचपश्यामिकांचनंकदलीवनम् ॥अदूराच्छिंशपावृक्षा त्पश्यामिवरवर्णिनीम्॥५६॥ श्यामांकमलपत्राक्षीमुपवासकृशाननाम् ॥ तदेकवासःसंवीतांरजोध्वस्तशिरोरुहाम् ॥ ५७ ॥

॥ ५२ ॥ रावणके स्थानमें सीताजीको न देख पायकर हम शोकसागरमें डूब गये; कि जिसका पार हम न पासके ॥ ५३ ॥ जब कि हम इस प्रकारसे शोक कर रहे थे तब रावणके स्थानसे अति निकट अति मनोहर उपवन हमने देखा यह उपवन अति ऊंची सुवर्णमय प्राकारोंसे घिरा था ॥ ५४ ॥ हमइस छहर दीवारीकी भीतपर चढकर उस बागके लगे हुए अनेक भाँतिके वृक्षोंकी शोभा देखते२उस अशोकवनके मध्य एक बडा भारी शिंशपाका वृक्षदेखते हुए ॥ ५५ ॥ उस वृक्षपर चढतेही बहुतही निकट कांचनवर्ण कदलीवन और वरवर्णिनी जानकीजीको हमने देखा ॥ ५६ ॥ उपवास करनेसे उन श्यामा और कमलदलनेत्रवाली रामकी प्यारी श्रीजानकीजीका चन्द्रमुख शोकसंतापसे अति मलीन हो गया है, केवल एक मलीन साडी पहरे हैं, केशोंमें धूरि छायरही है ॥५७॥

और अंगका गठन भी शोक संतापसे क्षीण होगया है वह सदाही अपने स्वामीके हितमें लगी हुई हैं क्रूर स्वभाववाली विकटाकार राक्षसियें जानकीजीको घेरे हुए हैं ॥५८॥ कि जैसे मांस रुधिरकी खानेपीनेवाली शेरनियें हारिणीको घेर लेती हैं. इस प्रकारसे वे राक्षसियें वारंवार उनको धमकाकर डरा रही हैं ॥५९॥ शीतकालके आजानेसे कमलिनी जिस प्रकार सूख जाती है; वैसेही उन जानकीजीका शरीर श्रीरामचन्द्रजीकी चिन्तासे मलिन होगया है; वह एक वेणी धारण किये अत्यन्त दीनभाव युक्त और श्रीरामचन्द्रजीकी चिन्तामें मग्न हो राक्षसियोंके बीचमें पृथ्वीपर पडी हैं ॥ ६० ॥ अधिक क्या कहें वह रावणकी ओरसे संपूर्णतः निवृत्त हो मरनेका निश्चय किये हुए हैं। क्योंकि रावण उनको छलसे हर लाया है, सो हम किसी प्रकारसे उन मृगछौनाकेसे नेत्रवाली रामप्रिया श्रीजानकी

शोकसंतापदीनांगींसीतांभर्तृहितेस्थिताम् ॥राक्षसीभिर्विरूपाभिःक्रूराभिरभिसंवृताम् ॥ ५८ ॥ मांसशोणितभक्ष्याभिर्व्याघ्रीभिर्हरिणींयथा॥ सामयाराक्षसीमध्येतर्ज्यमानामुहुर्मुहुः ॥५९ ॥ एकवेणीधरादीनाभर्तृचिंतापरायणा ॥ भूमिशय्याविवर्णांगीपद्मिनीवहिमागमे ॥ ६० ॥ रावणाद्विनिवृत्तार्थामर्तव्येकृतनिश्चया ॥ कथंचिन्मृगशावाक्षीतूर्णमासादितामया ॥ ६१ ॥ तांदृष्ट्वाताहशींनारींरामपत्नींयशस्विनीम् ॥ तत्रै वशिंशपावृक्षेपश्यन्नहमवस्थितः ॥ ६२ ॥ ततोहलहलाशब्दंकांचीनूपुरमिश्रितम् ॥ शृणोम्यधिकगंभीरंरावणस्यनिवेशने ॥ ६३ ॥ ततोहं परमोद्विग्नःस्वरूपप्रत्यसंहरम् ॥ अहंचशिंशपावृक्षेपक्षीवगहनेस्थितः ॥ ६४ ॥ ततोरावणदाराश्चरावणश्चमहाबलः ॥ तंदेशमनुसंप्राप्तोयत्रसी ताऽभवत्स्थिता ॥ ६५ ॥ तंदृष्ट्वाथवरारोहासीतारक्षोगणेश्वरम् ॥ संकुच्योरूस्तनौपीनौबाहुभ्यांपरिरभ्यच ॥ ६६ ॥ वित्रस्तांपरमोद्विग्नां वीक्षमाणामितस्ततः ॥ त्राणंकंचिदपश्यंतींवेपमानांतपस्विनीम् ॥ ६७ ॥

जीके निकट अति शीघ्रतासे पहुँचे ॥६१॥ और उन श्रीरामचन्द्रजीकी परम यशस्विनी श्रीजानकीजीकी यह अवस्था देख हम उसी शिंशपाके वृक्षपर चढगये ॥ ६२ ॥ उसके पीछे रावणके स्थानके निकटही क्षुद्रघंटिका और नूपुरादिका अतिगंभीर शब्द हमने सुना ॥ ६३ ॥ तब हमने बहुत अकुलाय अपना बडा वह रूप भी त्याग दिया, और छोटा रूप बनाय पक्षीके समान शिंशपावृक्षके सघनपत्तोंमें बैठे ॥ ६४ ॥ इसी अवसरमें महाबलवान् रावण और उसकी स्त्रियें जहां सीताजी थीं वहांपर आय पहुँचीं ॥६५॥ उस समय श्रेष्ठ मुखवाली श्रीजानकीजी राक्षसपति रावणको देखते ही बहुत त्रासित हो गईं और अपने अंगोंको संकुचित कर अपनी बाँहोंसे स्तनोंको ढांपकर थरथराने लगीं॥६६॥ और इधर उधर निहार किसीको भी अपना रक्षा करनेवाला न देखकर कंपायमान होने

लगीं ॥६७॥ तब रावण महादुःखित श्रीरामचन्द्रजीका परमप्यारी श्रीजानकीजीसे कहने लगा कि, हम शिर झुकाय कर तुम्हारे चरणोंमें गिरे, सो तुम हमारा आदर करो ॥६८॥ हे गर्वकरनेवाली जानकी ! यदि तुम घमंड करके हमको प्रसन्न न करोगी तो हे जानकी ! दो मासके बीतने पर हम तुम्हारा रुधिर पी जायँगे ॥ ६९ ॥ दुराचारी रावणके यह वचन सुन सीताजी अत्यन्त क्रोधित हो रावणसे उत्तम वचन बोलीं ॥७०॥ रे राक्षस नीच ! हम अतुलप्रभाववाले श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्री हैं और इक्ष्वाकुकुल तिलक महाराज दशरथजीकी पुत्रवधू हैं॥७१॥हमारे लिये अनुचित वचन कहकर तुम्हारी जीभ क्यों नहींगिर जाती ? रे अनार्य ! रे पापी तुम्हारे वीर्यको धिक्कार है, कि तुम श्रीरामचन्द्रजीके निकट रहते हमको नहीं लाय सके ॥७२॥बरन् जब वह आश्रममें नहीं थे उस समय तू

तामुवाचदशग्रीवःसीतांपरमदुःखिताम् ॥ अवाक्शिराःप्रपतितोबहुमन्यस्वभामिनि ॥६८॥ यदिचेत्त्वंतुमांदर्पान्नाभिनंदसिगर्विते ॥ द्विमासानंतरंसीतेपास्यामिरुधिरंतव ॥६९॥ एतच्छ्रुत्वावचस्तस्यरावणस्यदुरात्मनः ॥ उवाचपरमक्रुद्धासीतावचनमुत्तमम् ॥ ७० ॥ राक्षसाधमरामस्य भार्याममिततेजसः ॥ इक्ष्वाकुवंशनाथस्यस्नुषांदशरथस्थच ॥ ७१ ॥ अवाच्यंवदतोजिह्वाकथंनपतितातव किंस्विद्वीर्यंतवानार्ययोमांभर्तुरसन्निधौ॥७२॥ अपहृत्यागतःपापतेनादृष्टोमहात्मना॥नत्वंरामस्यसदृशोदास्येप्यस्यनयुज्यसे ॥ ७३॥ अजेयःसत्यवाक्शूरोरणश्लाघीचराघवः॥ जानक्यापरुषंवाक्यमेवमुक्तोदशाननः॥ ७४ ॥ जज्वालसहसाकोपाच्चितास्थइवपावकः॥ विवृत्यनयनेक्रूरेमुष्टिमुद्यम्यदक्षिणम्॥७५ ॥ मैथिलींहंतुमारब्धःस्त्रीभिर्हाहाकृतंतदा ॥ स्त्रीणांमध्यात्समुत्पत्यतस्यभार्यादुरात्मनः ॥७६॥ वरामंदोदरीनामतयासप्रतिषेधितः ॥उक्तश्चमधुरांवाणींतयासमदनार्दितः ॥ ७७ ॥ सीतयातवकिंकार्यंमहेंद्रसमविक्रम ॥ मयासहरमस्वाद्यमद्विशिष्टानजानकी ॥ ७८ ॥

हमको हरण करके लाया; तू श्रीरामचन्द्रजीके बराबर नहीं है, अथवा तू तो उनका दास होनेके योग्य भी नहीं है ॥७३॥ कारण कि,श्रीरामचन्द्रजी सत्य बोलनेवाले शूर, रणमें प्रशंसा करनेके योग्य और अजेय हैं। श्रीजानकीजीके ऐसे कठोर वचन श्रवण करके ॥७४॥ रावण उसी समय क्रोधके वश होकर चिताकी अग्निके समान जलबल गया, औरदोनों क्रूर नेत्रोंको घुमाय दाहिना मुष्टिक उठाय॥७५॥श्रीजानकीजीका संहार करनेको तैयार हुआ । उस समय रावणकी सब स्त्रियें हाहाकार कर उठीं, तब उस दुष्टात्माकी स्त्रियोंके मध्यसे उठकर उसकी भार्या ॥७६॥ पटरानी मन्दोदरी नामकने उस कामातुर रावणको मीठे वचनोंसे रोक कर कहा कि॥७७॥तुम्हारा विक्रम इन्द्रके समान है, और जानकीजी भी किसी बातमें कुछ भी हमसे अधिक सुन्दरी नहीं हैं, इस लिये सीतासे तुम्हारा क्या

प्रयोजन है ? आप अब हमारे साथ विहार कीजिये ॥७८॥ अथवा हे प्रभो ! देव गन्धर्व और यक्षोंकी कन्याओंके साथ आप विहार करें, इस सीताको लेकर आप क्या करेंगे ? ॥७९॥ जब मन्दोदरीने ऐसा कहा तब वह समस्त स्त्रियें इकट्ठीहो मिलकर महाबल रावणको उसीकाल वहांसे अपने गृहको लेगईं॥८०॥ रावण जब चला गया तब विकट मुखवाली राक्षसी सीताजीको अति दारुण निठुर वचन कह२कर बहुतही धमकाने लगीं ॥८१॥ परन्तु श्रीजानकीनेउन राक्षसियोंके वचनोंको तृणके समान समझा। इसलिये जानकीजीके निकट उन राक्षसियोंका तर्जना गर्जना सबही विफल हो गया ॥८२॥ मांस भोजन करनेवाली राक्षसियें वृथा गर्जन और वृथा चेष्टा करके फिर रावणके निकट जाय सीताजीका यह बडा विचार कहती हुईं ॥८३॥ इसप्रकार राक्षसपतिकी अनुकूलताका

देवगंधर्वकन्याभिर्यक्षकन्याभिरेवच॥सार्धंप्रभोरमस्वेतिसीतयाकिंकरिष्यसि॥७९॥ततस्ताभिःसमेताभिर्नारीभिःसमहाबलः॥उत्थाप्यसहसा नीतोभवनंस्वंनिशाचरः॥८०॥यातेतस्मिन्दशग्रीवेराक्षस्योविकृताननाः॥सीतांनिर्भर्त्सयामासुर्वाक्यैःक्रूरैःसुदारुणैः॥८१॥ तृणवद्भाषितंतासां गणयामासजानकी॥ गर्जितंचतथातासांसीतांप्राप्यनिरर्थकम् ॥८२॥ वृथागर्जितनिश्चेष्टाराक्षस्यःपिशिताशनाः ॥ रावणायशशंसुस्ताःसीताव्यवसितंमहत् ॥ ८३ ॥ ततस्ताःसहिताःसर्वाविहताशानिरुद्यमाः ॥ परिक्लिश्यसमस्तास्तानिद्रावशमुपागताः ॥ ८४ ॥ तासुचैवप्रसुप्तासु सीताभर्तृहितेरता ॥ विलप्यकरुणंदीनाप्रशुशोचसुदुःखिता ॥८५॥ तासांमध्यात्समुत्थायत्रिजटावाक्यमब्रवीत् ॥आत्मानंखादतक्षिप्रंनसीता मलितेक्षणाम् ॥ ८६ ॥ जनकस्यात्मजांसाध्वींस्नुषांदशरथस्यच ॥स्वप्नोह्यद्यमयादृष्टोदारुणोरोमहर्षणः ॥८७॥ रक्षसांचविनाशायभर्तुरस्या जयायच॥अलमस्मान्परित्रातुंराघवाद्राक्षसीगणम्॥८८॥ अभियाचामवैदेहीमेतद्धिममरोचते॥यदिह्येवंविधःस्वप्नोदुःखितायाःप्रदृश्यते॥८९॥

कार्यसिद्ध करने और राक्षसोंकी आशा व उद्यम विफल होनेपर वह राक्षसियें अतिशय थककर सोयगईं ॥८४॥ जब राक्षसियें नींदके वश हुईं, तब पतिका हित चाहनेवाली जनकलडैती जानकीजी अतिशय दुःखित और दीनभावयुक्त हो करुणा सहित विलाप और शोक करने लगी ॥८५॥ कि इसी अवसरमें त्रिजटानामक राक्षसी उन सब निशाचरियोंके बीचमेंसे उठकर बोली, तुम सब सीताजीको न खाय सकोगी वरन् अपनेहीआप अपना २ मांस खालो॥८६॥राजा जनकजीकी कन्या दशरथजीकीपुत्रवधू पतिव्रता कृष्णनेत्रवाली सीताजीको तुम न खानेपाओगी आज हमने रोमाञ्चकारी दारुण स्वप्न देखाहै ॥८७॥ जिससे कि, राक्षस लोगोंका विनाश और हमारे राजाका पराजय होता हमने देखा है; उस कालमें यह जानकीजीही श्रीरामचन्द्रजीसे हम लोगोंका उद्धार करनेमें समर्थ होंगी ॥८८॥ इस

कारण हमारी बडी अभिलाषा है कि, इस सीताजीसे हम अपनी रक्षाके लिये प्रार्थना करें; क्योंकि जानकीजी दुःखित हुई हैं ॥८९॥ यदि इस स्वप्नका वृत्तांत हम इनसे कहदें तब सब दुःख दूर होकर उनको अतिशय सुख उत्पन्न होगा, इसलिये जनकनंदिनी सीताजीको प्रणाम करके हमलोग प्रसन्न करें ॥९०॥ तब यह हम सबकी महाविपदसे रक्षा कर लेंगी. लजीली बाला श्रीजानकीजी इस बातसे स्वामीकी विजयसूचक जान प्रसन्न हो ॥ ९१ ॥ बोलीं कि, यदि त्रिजटाका कहना सत्य होया तब हम तुम सबकी रक्षा करेंगी । हे वानरगण ! सीताजीकी ऐसी दारुण अवस्था देखकर कुछ समय तक हम चिन्ता करते रहे ॥ ९२ ॥ परन्तु किसी प्रकारसे भी हमारा मन सुख प्राप्त करनेको समर्थ न हुआ । तो फिर हम यह उपाय खोजने लगे कि, शान्ति न पाई हुई जानकीजीसे हम किसप्रकार वार्त्ता करें ॥९३॥ विचारते २ उपाय स्थिरकर फिर हम उनके सन्मुख इक्ष्वाकुवंशकी स्तुति करने लगे । राजर्षिगुणकीर्त्तनयुक्त हमारे वचन सुनकर ॥९४॥

साडुःखैर्विविधैर्मुक्तासुखमाप्नोत्यनुत्तमम् ॥ प्रणिपातप्रसन्नाहिमैथिलीजनकात्मजा ॥९०॥ अलमेषापरित्रातुंराक्षस्योमहतोभयात् ॥ ततःसाह्रीमतीबालाभर्तुर्विजयहर्षिता ॥९१॥ अवोचद्यदितत्तथ्यंभवेयंशरणंहिवः ॥ तांचाहंतादृशींदृष्ट्वासीतायादारुणांदशाम् ॥ ९२ ॥ चिंतयामासविश्रांतोनचमेनिर्वृतंमनः ॥ संभाषणार्थंचमयाजानक्याश्चिंतितोविधिः ॥ ९३ ॥ इक्ष्वाकुकुलवंशस्तुस्तुतोममपुरस्कृतः ॥ श्रुत्वातुगदितांवाचंराजर्षिगणभूषिताम् ॥९४॥ प्रत्यभाषतमांदेवीबाष्पैःपिहितलोचना ॥ कस्त्वंकेनकथंचेहप्राप्तोवानरपुंगव ॥९५॥ काचरामेणतेप्रीतिस्तन्मेशंसितुमर्हसि ॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाअहमप्यब्रुवंवचः ॥९६॥ देविरामस्यभर्तुस्तेसहायोभीमविक्रमः ॥ सुग्रीवोनामविक्रांतोवानरेंद्रोमहाबलः ॥ ॥९७॥ तस्यमाविद्धिभृत्यंत्वंहनूमंतमिहागतम् ॥ भर्त्रासंप्रहितस्तुभ्यंरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥९८॥ इदंतुपुरुषव्याघ्रःश्रीमान्दाशरथिःस्वयम् ॥ अंगुलीयमभिज्ञानमदात्तुभ्यंयशस्विनि ॥९९॥ तदिच्छामित्वाज्ञप्तंदेविकिंकरवाण्यहम् ॥ रामलक्ष्मणयोःपार्श्वंनयामित्वांकिमुत्तरम् ॥१००॥

देवी जानकीजी आंसू भरकर नेत्र डबडबाये हमसे बोलीं कि हे वानरश्रेष्ठ ! तुम कौन हो ? और किसके पठाये यहांपर आये हो ? ॥९५॥ और श्रीरामचन्द्रजीके साथ किसप्रकारसे तुम्हारी मित्रता हुई यह सब वार्त्ता तुम हमसे कहो हमने उनके यह वचन सुनकर कहा ॥९६॥ हे देवि ! भीमविक्रम प्रबल प्रतापयुक्त वानरोंके नाथ सुग्रीव नाम वानर तुम्हारे स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके सहायक हुए हैं ॥९७॥ हम हनुमान् नाम वानर उन्हीं सुग्रीवजीके दास हैं । अक्लिष्ट कर्म करनेवाले तुम्हारे स्वामी श्रीरामचन्द्रजीने हमको आपके पास भेजा है, इसी कारणसे हम यहांपर आये हैं ॥९८॥ हे यशस्विनी ! पुरुषसिंह श्रीरामचन्द्रजीने चिह्नस्वरूप आपको यह अंगूठी दी है ॥९९॥ इससमय हमको आपकी कौनसी आज्ञाका पालन करना होगा सो हम जानना चाहते हैं । अथवा क्या हम आपको श्रीरामचन्द्रजी

व लक्ष्मणजीके निकट समुद्रके उत्तर किनारे पर लेजायँ ? ॥१००॥ जनकलडैती सीताजी यह वार्त्ता सुनकर हमें उत्तर देती हुई कि हमारी यह कामना है कि, श्रीरामचन्द्रजी स्वयंरावणको वंशसहित ध्वंस करके हमको अपने स्थानपर ले जाँय॥१०१॥तब हमने निन्दारहित आर्या देवी जानकीजीको शिर नवाय प्रणाम कर एक ऐसा चिह्न मांगा कि जिसे देखकर श्रीरामचन्द्रजीको आनंद होवे ॥१०२॥फिर वह श्रेष्ठ मुखवाली सीताजी हमसे बोलीं कि, तुम यह श्रेष्ठ चूडामणि ग्रहण करो महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी इसको पायकर तुमको अधिक सन्मानित करेंगे ॥१०३॥ श्रीजानकीने यह कहकर हमको वह श्रेष्ठ चूडामणि दे दी और महाव्याकुल होकर श्रीरामचन्द्रजीके निकट कहनेके लिये हमसे काक इत्यादिका इतिहास वर्णन करती हुई ॥१०४॥ उसके पीछे हमने यहकहकर कि "हम फिर यहां पर आवेंगे" कृतचित्त और सावधान होकर राजपुत्री जानकीजीकी प्रदक्षिणा करके उनको प्रणाम किया ॥ १०५ ॥ तब वह गद्गद वाणीसे फिर

एतच्छ्रुत्वाविदित्वाचसीताजनकनंदिनी ॥ आहरावणमुत्पाट्यराघवोमानयत्विति ॥ १ ॥ प्रणम्यशिरसादेवीमहमार्यामनिंदिताम् ॥ राघवस्यमनोह्लादमभिज्ञानमयाचिषम् ॥ २ ॥ अथमामब्रवीत्सीतागृह्यतामयमुत्तमः ॥ मणिर्येनमहाबाहूरामत्वांबहुमन्यते ॥ ३ ॥ इत्युक्त्वातुवरारोहामणिप्रवरमुत्तमम् ॥ प्रायच्छत्परमोद्विग्नावाचामांसंदिदेशह ॥ ४ ॥ ततस्तस्यैप्रणम्याहंराजपुत्र्यैसमाहितः ॥ प्रदक्षिणंपरिक्रामममिहाभ्युद्गतमानसः॥५॥उत्तरंपुनरेवाहनिश्चित्यमनसातदा ॥हनूमन्ममवृत्तांतंवक्तुमर्हसिराघवे॥६॥ यथाश्रुत्वैवनचिरात्तावुभौरामलक्ष्मणौ ॥ सुग्रीवसहितौवीरावुपेयातांतथाकुरु ॥७॥ यदन्यथाभवेदेतद्द्वौमासौजीवितंमम ॥ नमांद्रक्ष्यतिकाकुत्स्थोम्रियेसाहमनाथवत्॥८॥तच्छ्रुत्वाकरुणंवाक्यंक्रोधोमामभ्यवर्तत॥ उत्तरं चमयादृष्टंकार्यशेषमनंतरम् ॥ ९ ॥ ततोऽवर्धतमेकायस्तदापर्वतसन्निभः ॥ युद्धाकांक्षीवनंतस्यविनाशयितुमारभे ॥ ११० ॥

हमें कहती हुई कि हे हनुमन् ! हमारा वृत्तांत तुम श्रीरामचन्द्रजीसे इस प्रकार निवेदन करना ॥ १०६॥ कि जिससे वह वीर श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मण उस वृत्तांतको सुनकर सुग्रीवजीके साथ बहुतही शीघ्र यहांपर आवें सो करना ॥१०७॥रावणने हमारे जीनेकी दो मासकी अवधि नियत की है सो हमारा जीवन दोहीमास है, इस कारण जो दो मासके मध्यमें श्रीरामचंद्रजी यहांपर न आय पहुँचेंगे तो हमको नाथ हीनके समान जीवन त्यागना पडेगा फिर श्रीरामचन्द्रजी हमको न देख पावेंगे॥१०८॥ उनके करुणा भरे वचन सुनतेही हमको क्रोध उत्पन्न हुआ और अब क्या करना. कर्त्तव्य है इस प्रकारकी चिन्ता हम कार्यके अन्तमें करने लगे ॥ १०९ ॥ उस समय मारे क्रोधके हमारा शरीर पर्वतके समान बढगया, तब हमने युद्ध करनेकी आशासे अशोक वनका उजाडना

आरम्भ किया ॥११०॥ जब वन उजाडकर नष्ट हो गया और वहांके समस्त मृग पक्षी त्रासित होकर इधर उधर घूमने लगे तब विकटमुखवाली राक्षसियें जागकर बनकी इस अवस्थाको देखने लगीं ॥ १११ ॥ और हमको बनमें खडे देखकर सबने एकत्र हो शीघ्रतासे रावणके निकट जाय उससे यह सब वृत्तान्त निवेदन किया कि ॥ ११२ ॥ हे राजन् ! एक दुरात्मा वानरने आपका महाबल और वीर्य न जानकर आपका परमप्यारा किसीके न जाने योग्य अशोकवन उजाड डाला ॥ ११३ ॥ उसमें अति कुबुद्धि आई है; इसीसे तो उसने आपका कुप्यारा आचरण किया है इस कारण कि, जिससे वह यहांसे फिर लौटकर न जाय सके आप उससे प्राणवधकी आज्ञा दीजिये ॥ ११४ ॥ राक्षसपति रावणने यह सुनकर अपने मनमाने किंकर नाम अतिअजीत अस्सीहजार राक्ष

तद्भग्नंवनखंडंतुभ्रांतत्रस्तमृगद्विजम् ॥ प्रतिबुध्यनिरीक्षंतेराक्षस्योविकृताननाः ॥ ११ ॥ मांचदृष्ट्वावनेतस्मिन्समागम्यततस्ततः॥ताःसमभ्ययागताःक्षिप्रंरावणायाचचक्षिरे ॥१२॥ राजन्वनमिदंदुर्गंतवभग्नंदुरात्मना ॥ वानरेणह्यविज्ञायतववीर्यंमहाबलः ॥१३॥ तस्यदुर्बुद्धिताराजंस्तवविप्रियकारिणः ॥ वधमाज्ञापयक्षिप्रंयथासौनपुनर्व्रजेत् ॥ १४ ॥ तच्छ्रुत्वाराक्षसेंद्रेणविसृष्टाबहुदुर्जयाः ॥ राक्षसाःकिंकरानामरावणस्यमनोनुगाः॥ १५ ॥ तेषामशीतिसाहस्रंशूलमुद्गरपाणिनाम् ॥ मयातस्मिन्वनोद्देशेपरिघेणनिषूदितम् ॥ १६ ॥ तेषांतुहतशिष्टायेतेगतालघुविक्रमाः ॥ निहतंचमयासैन्यंरावणयाचचक्षिरे ॥१७॥ततोमेबुद्धिरुत्पन्नाचैत्यप्रासादमुत्तमम् ॥ तत्रस्थान्राक्षसान्हत्वाशतंस्तंभेनवैपुनः ॥१८॥ ललामभूतोलंकायामयाविध्वंषितोरुषा ॥ ततःप्रहस्तस्यसुतंजंबुमालिनमादिशत् ॥ १९ ॥ राक्षसैर्बहुभिःसार्धंघोररूपैर्भयानकैः ॥ तमहंबलसम्पन्नंराक्षसंरणकोविदम् ॥ १२० ॥ परिघेणातिघोरेणसूदयामिसहानुगम् ॥ तच्छ्रुत्वाराक्षसेंद्रस्तुमंत्रिपुत्रान्महाबलान् ॥ २१ ॥

सोंको भेजा ॥११५॥ उन अस्सीहजार राक्षसोंके शूल और मुद्गर धारण करके अशोकवनमें आतेही गदाप्रहारसे हमने उन सबका संहार किया ॥११६॥ उन राक्षसोंमेंसे जो किसीप्रकारसे बचे बचाये उन लोगोंने बडी शीघ्रताकेसाथ रावणके निकट जायकर उस अस्सीहजार सेनाके नाशहोनेका वृत्तान्त निवेदन किया ॥११७॥ फिर हमने अत्युत्तम लंकाके अधिष्ठाता देवताके मन्दिरके विनाशकरनेका संकल्प करके एक थंभके आघातसे उस मंदिरके रखवाले राक्षसोंको मार डाला ॥ ११८ ॥ और महाक्रोध करके लंकाके अलंकाररूप उस मंदिरको सम्पूर्ण तोड फोड डाला । तब रावणने प्रहस्तके बेटे जम्बुमालीको लडनेके लिये भेजा ॥११९॥ हमने विकटाकार भयानक निशाचरगणोंसे वेष्टित बलसम्पन्न समरविशारद उस राक्षसको ॥ १२० ॥ लोहेके परिघसे उसके साथियों समेत

मारडाला । राक्षस रावणने॥ यह वृत्तान्त श्रवण कर महाबली मन्त्रीके पुत्रोंको हम ॥१२१॥ पैदलोंकी बडी भारीसेनाके सहित युद्ध करनेको भेजा हमने उनसब को भी परिघके प्रहारसे यमपुरको भेज दिया ॥१२२॥ लंकापति रावणने संग्राममें लघु विक्रम प्रगट करनेवाले मंत्रिपुत्रोंको हतहुआ श्रवणकरके पांच महाशूर सेनापतियोंको भेजा ॥१२३॥ हमने सेनासहित उन पांचोंको मार डाला उसके पीछे रावणने फिर अपने महाबली पुत्र अक्षको ॥ १२४ ॥ बहुत सारे राक्षसोंके साथ युद्ध करनेके लिये भेजा । मन्दोदरीनंदन रणपंडित महावीर वह कुमार ॥ १२५ ॥ असि चर्म धारण करके आकाशमार्गमें कूदता हुआ, तब हमने उसके दोनों चरण पकड शतवार घुमाय कर फेंक दिया ॥१२६॥ अपने पुत्र अक्षको मरा हुआ सुन रावणने अपने दूसरे पुत्र इन्द्रजीत (मेघनाद) को रणकरनेके

पदातिबलसंपन्नान्प्रेषयामासरावणः ॥ परिघेणैवतान्सर्वान्नियामियमसादनम् ॥ २२ ॥ मंत्रिपुत्रान्हतान्छ्रुत्वासमरेलघुविक्रमान् ॥ पंचसे नाग्रगान्छूरान्प्रेषयामासरावणः ॥ २३ ॥ तानहंसहसैन्यावैसर्वानेवाभ्यसूदयम् ॥ ततःपुनर्दशग्रीवःपुत्रमक्षंमहाबलम् ॥ २४ ॥ बहुभीराक्ष सैःसार्धंप्रेषयामाससंयुगे ॥ तंतुमंदोदरीपुत्रंकुमारंरणपंडितम् ॥२५॥ सहसाखंसमुद्यंतंपादयोश्चगृहीतवान् ॥ तमासीनंशतगुणंभ्रामयित्वाव्य पेषयम् ॥२६॥ तमक्षमागतंभग्नंनिशम्यसदशाननः ॥ ततश्चेंद्रजितंनामद्वितीयंरावणःसुतम् ॥ २७ ॥ व्यादिदेशसुसंक्रुद्धोबलिनंयुद्धदुर्मदम् तच्चाप्यहंबलंसर्वंतंचराक्षसपुंगवम् ॥ २८ ॥ नष्टौजसंरणेकृत्वापरंहर्षमुपागतः ॥ महतापिमहाबाहुःप्रत्ययेनमहाबलः ॥ २९ ॥ प्रहितो रावणेनैषसहवीरैर्मदोद्धतैः ॥ सोऽविषह्यंहिमांबुद्ध्वास्वसैन्यंचावमर्दितम् ॥ १३० ॥ ब्रह्मणोस्त्रेणसतुमांप्रबद्धाचातिवेगिनः ॥ रज्जुभि श्चापिबध्नंतिततोमांतत्रराक्षसाः ॥३१॥ रावणस्यसमीपंचगृहीत्वामामुपागमन् ॥ दृष्ट्वासंभाषितश्चाहंरावणेनदुरात्मना ॥ ३२ ॥ पृष्टश्चलंका गमनंराक्षसानांचतंवधम् ॥ तत्सर्वंचरणेतत्रसीतार्थमुपजल्पितम् ॥ ३३ ॥

लिये भेजा ॥ १२७ ॥ यह मेघनाद रणदुर्मद और बडा भारी बलवान् है परन्तु उसके संग आई हुई समस्त सेनाका हमने ॥१२८॥ संहार कर डाला और संग्राममें उसका भी पराक्रम नष्ट कर दिया । यह कार्य कर हम अपने मनमें अत्यन्त प्रसन्न हुए कारण कि, महाबलवान् महाबाहु मेघनादको रावणने अति विश्वाससे युद्धमें भेजा था॥१२९॥परन्तु मदोद्धतवीरोंके साथ इन्द्रजीत हमारे सहनेके आयोग्य पराक्रमको जानकरकि,हम इनको नहीं जीत सके । और अपनी सेनाको विध्वंसित देख ॥ १३० ॥ हमको ब्रह्मास्त्रसे बांधकर अतिवेगसे चला गया उसके पीछे वहां फिर राक्षसोंने हमको रस्सियोंसे बांधा ॥ १३१ ॥ और रावणके निकट वह लोग हमको पकड कर लेगये दुरात्मा रावणने हमको देखकर पूँछा कि ॥ १३२ ॥ तू किस कारणसे लंकामें आया है और राक्षसोंके मार

नेका तेरा क्या प्रयोजन ? तब हमने कहा कि, हमने यह समस्तकार्य श्रीजानकीजीके लिये किये हैं ॥ १३३ ॥ हे रावण ! हम सीताजीके दर्शन करनेकी अभिलाषासे ही आपकेस्थानपर आये हैंहम पवनजीके औरस पुत्र हनुमान् नाम वानर हैं॥१३४॥हम श्रीरामचन्द्रजीके दूत और वानरराज सुग्रीवजीके मंत्री हैं। और हम श्रीरामचन्द्रजीके दूत होकर तुम्हारे पास आये हैं॥१३५॥उस समय सुग्रीवजीने आपके निकट जो कुछ हमें कहनेकी आज्ञा दी है, सो कहते हैं तुम सुनो॥१३६॥हे राक्षसराज ! वानरपति महाभाग सुग्रीवजीने अपनी कुशल कहकर फिर आपकी कुशल पूँछी है और धर्मार्थकामयुक्त परममंगलमय हितकारी वचन कहे हैं॥१३७॥उन्होंने कहा है कि, जब हम विशालवृक्ष राजिशोभित ऋष्यमूकपर्वतपर वास करते थे उससमय रणमें असह्य श्रीरामचन्द्रजीके साथ हमारी

तस्यास्तुदर्शनाकांक्षीप्राप्तस्त्वद्भवनंविभो ॥ मारुतस्यौरसःपुत्रोवानरोहनुमानहम् ॥३४॥ रामदूतंचमांविद्धिसुग्रीवसचिवंकपिम् ॥ सोहंदौत्ये नरामस्यत्वत्सकाशमिहागतः ॥ ३५ ॥ शृणुचापिसमादेशंयदहंप्रब्रवीमिते ॥ राक्षसेशहरीशस्त्वांवाक्यमाहसमाहितम् ॥३६॥ सुग्रीवश्चमहा भागसत्वांकौशलमब्रवीत् ॥ धर्मार्थकामसहितंहितंपथ्यमुवाचह ॥३७॥ वसतोऋष्यमूकेमेपर्वतेविपुलद्रुमे ॥ राघवोरणविक्रांतोमित्रत्वंसमु पागतः ॥३८॥ तेनमेकथितंराजन्भार्यामेरक्षसाहृता ॥ तत्रसाहाय्यहेतोर्मेसमयंकर्तुमर्हसि ॥३९॥ वालिनाहृतराज्येनसुग्रीवेणसहप्रभुः ॥ चक्रे ग्निसाक्षिकंसख्यंराघवःसहलक्ष्मणः ॥ १४० ॥ तेनवालिनमाहत्यशरेणैकेनसंयुगे ॥ वानराणांमहाराजःकृतःसंप्लवतांप्रभुः ॥४१॥ तस्यसाहा य्यमस्माभिःकार्यंसर्वात्मनात्विह ॥ तेनप्रस्थापितस्तुभ्यंसमीपमिहधर्मतः ॥४२॥ क्षिप्रमानीयतांसीतादीयतांराघवस्यच ॥ यावन्नहरयोवीरा विधमंतिबलंतव ॥४३॥ वानराणांप्रभावोयंनकेनविदितःपुरा ॥ देवतानांसकाशंचयेगच्छंतिनिमंत्रिताः ॥ ४४ ॥

मित्रता होगई है ॥१३८॥ हे राजन् ! तब श्रीरामचन्द्रजीने हमसे कहा कि, "राक्षस हमारी भार्याको हरण करके लेगया है । सो उसके ढूँढनेमें सहायता देनेके लिये तुमको प्रतिज्ञा करनी पडेगी"॥१३९॥ यह कह कर उन्होंने लक्ष्मणजीके साथ अग्निको साक्षीकरके हमसे मित्रताकी (क्योंकिबालिनेभी उनका राज्य व स्त्री हरण करली थी)॥१४०॥और उन्होंने केवल एकही बाणसे युद्धमें वालिको मारकर हमको वानरगणोंके महाराजपद पर प्रतिष्ठित किया॥१४१॥इस कारण समस्त अन्तःकरणसे उनकी सहायता करना हमारा अवश्यकर्त्तव्य है । इसलिये उन हनुमानको दूतस्वरूप हमने धर्मानुसार तुम्हारे निकट भेजा है ॥ १४२ ॥ अब वानरवीर लोगोंसे लंकाका विनाश न होते २ तुम बड़ी शीघ्रताके साथ सीताजीको श्रीरामचन्द्रजीको सौंप दो ॥१४३॥ वानरवीरोंके वीर्यप्रभावको कौन नहीं

जानता है ? इन वानरोंको देवतालोग अपने शत्रुओंको मारनेके लिये स्वर्गमें बुलायकर ले जाते हैं ॥१४४॥ वानरराज सुग्रीवने यही सब बातेंकहला भेजी थीं, सो हमने तुमसे कहीं । यह सुन नेत्रोंसे भस्म करते हुए हमको रावणने देखा ॥ १४५ ॥ उस भयंकर कर्मकारी राक्षस रावणने हमारा बल प्रभाव न जानकर आज्ञा दी कि, इस वानरको मारडालो ॥१४६॥ उसके पीछे बिभीषण नामक उनके महामतिवाले छोटे भाईने हमारे अर्थ राक्षसराज रावणके निकट प्रार्थना करके कहा ॥ १४७ हे राक्षस शार्दूल ! इसका वध करना उचित नहीं है, इस संकल्पको आप छोड दीजिये ! आपने जो स्थिर किया है, वह मार्ग राज शास्त्रसे बाहर है ॥१४८॥ हे राक्षस ! राजनीतिमें कहीं भी दूतका वध नहीं कहा गया है; विशेषतः दूत जो जैसा अपने स्वामी के निकट सुनकर आता है वैसा ही कहता है इसमें दूत का क्या दोष ? ॥१४९॥हे अतुलविक्रम ! चाहे बडा भारी अपराधही क्यों न किया हो, परन्तु शास्त्रमें कहीं भी दूतकेवधकी व्यवस्था

इतिवानरराजस्त्वामाहेत्यभिहितोमया॥मामैक्षततततोरुष्टश्चक्षुषाप्रदहन्निव।४५।तेनवध्योहमाज्ञप्तोरक्षसारौद्रकर्मणा॥मत्प्रभावमविज्ञायरावणेन दुरात्मना॥४६॥ततोविभीषणोनामभ्रातातस्यमहामतिः॥तेनराक्षसराजश्चयाचितोममकारणात्॥४७॥ नैवंराक्षसशार्दूलत्यज्यतामेषनिश्चयः॥ राजशास्त्रव्यपेतोहिमार्गःसँल्लक्ष्यतेत्वया॥४८॥दूतवध्यानदृष्टाहिराजशास्त्रेषुराक्षस॥दूतेनवेदितव्यंचयथाभिहितवादिना॥४९॥सुमहत्यपराधे पिदूतस्यातुलविक्रम॥विरूपकरणंदृष्टंनवधोस्तिहिशास्त्रतः॥५०॥विभीषणेनैवमुक्तोरावणःसंदिदेशतान्॥राक्षसानेतदेवाद्यलांगूलंदह्यतामिति ॥५१॥ततस्तस्यवचःश्रुत्वाममपुच्छंसमंततः॥वेष्टितंशणवल्कैश्चपट्टैःकार्पासकैस्तथा॥५२॥राक्षसाःसिद्धसंनाहास्ततस्तेचंडविक्रमाः॥तदादीप्यं तमेपुच्छंहनंतःकाष्ठमुष्टिभिः॥५३॥बद्धस्यबहुभिःपाशैर्यंत्रितस्यचराक्षसैः॥नमेपीडाभवेत्काचिद्दिदृक्षोर्नगरींदिवा॥५४॥ ततस्तेराक्षसाःशूराबद्धं मामग्निसंवृतम्॥अघोषयन्राजमार्गेनगरद्वारमागताः॥५५॥ततोहंसुमहद्रूपंसंक्षिप्यपुनरात्मनः॥विमोचयित्वातंबंधंप्रकृतिस्थःस्थितःपुनः॥५६॥

नहीं; हां केवल नाक, कान आदि काटकर विरूप करना लिखा है॥१५०॥ जब विभीषणजीने इस प्रकारसे कहा, तब रावणने राक्षस लोगोंको आज्ञादी कि, इसकी पूँछको भस्म कर दो ॥१५१॥रावणकी यह आज्ञा पाय राक्षस लोगोंने हमारी पूँछमें सन, वृक्षोंकी छाल और वस्त्र इत्यादि लपेटे ॥१५२॥कवच शस्त्र आदि धारण किये प्रचण्ड विक्रमकारी राक्षसोंने हमको काठकेडंडों और मूकोंसे मारकर हमारी पूँछमें आग लगा दी॥ १५३ ॥ हमने राक्षसों करके विविध भाँतिसे बांधे और यंत्रित किये जाकर भी कुछ पीडा न पाई; क्योंकि हमको तो लंका देखनेकी इच्छा थी ॥१५४॥तब उन शूर बलीराक्षसों ने हमको बांध और पूंछमें अग्नि लगाय सारी नगरीमें पुकारा कि, देखो इस वानर दूतकी पूँछ जलाई जाती है ॥१५५॥ तब हमने उस अपने बडे भारी शरीरको छोटासा

करके सब बन्धनोंको तोड डाला, हमारा रूप छोटा होते ही वह सब ढीले पड गये थे, उनको दूर बहाय अपना स्वाभाविक रूप धारण किया ॥१५६॥ और तब हम लोहेका एक बडा भारी परिघ उठाय उससे राक्षसोंका संहार करने लगे; उन समस्तको मार फिर हम नगरके द्वारपर उछलकर चढ गये ॥१५७॥ उस प्रदीप्त पूंछकी अग्निसे प्रजाको जलाते हुए प्रलयकालके अग्निके समान राजभवनसे लेकर नगरके फाटकतक हमने समस्त लंकापुरीको भस्म कर दिया; सब पुरीको जला कर भी हमें कुछ भ्रम नहीं प्राप्त हुआ॥१५८॥ जब सब पुरी भस्म होगई तो हम विचार करने लगे कि, लंकामें ऐसा स्थान नहीं जो भस्म न हुआ हो; इस कारण समस्त पुरीके जलजानेपर जानकीजी भी इसके संगही भस्म हो गई इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ॥१५९॥ लंकाको जलाते हुए हमने जानकीजीको भस्म कर डाला इसकारण हमने श्रीरामचन्द्रजी का बडा भारी कार्य नष्ट कर डाला॥१६०॥ इसप्रकार शोकसे व्याकुल होकर चिन्ता कर रहे थे कि, इतनेमेंही चारण लोगोंका यह मधुर

आयसंपरिघंगृह्यतानिरक्षांस्यसूदयम् ॥ ततस्तन्नगरद्वारंवेगेनप्लुतवानहम् ॥ ५७॥ पुच्छेनचप्रदीप्तेनतांपुरींसाट्टगोपुराम् ॥ दहाम्यहमसंभ्रांतो युगांताग्निरिवप्रजाः ॥५८॥ विनष्टाजानकीव्यक्तंनह्यदग्धः प्रदृश्यते ॥ लंकायाःकश्चिदुद्देशःसर्वाभस्मीकृतापुरी ॥५९॥ दहताचमयालंकांदग्धा सीतानसंशयः॥रामस्यचमहत्कार्यंमयेदंविफलीकृतम् ॥१६०॥इतिशोकसमाविष्टश्चितामहमुपागतः॥ततोहंवाचमश्रौषंचारणानांशुभाक्षराम् ॥६१॥ जानकीनचदग्धेतिविस्मयोदंतभाषिणाम् ॥ ततोमेबुद्धिरुत्पन्ना श्रुत्वातामद्भुतांगिरम् ॥६२॥ अदग्धाजानकीत्येवनिमित्तैश्चोपलक्षितम् ॥ दीप्यमानेतुलांगूलेनमांदहतिपावकः ॥६३॥हृदयंचप्रहृष्टंमेवाताःसुरभिगंधिनः॥तैर्निमित्तैश्चदृष्टार्थैःकारणैश्चमहागुणैः ॥६४॥ ऋषिवाक्यैश्चदृष्टार्थैरभवंहृष्टमानसः॥पुनर्दृष्टाचवैदेहीविसृष्टश्चतयापुनः ॥६५॥ ततःपर्वतमासाद्यतत्रारिष्टमहंपुनः ॥ प्रतिप्लवनमारेभेयुष्मद्दर्शनकांक्षया ॥ ६६ ॥ ततःश्वसनचंद्रार्कसिद्धगंधर्वसेवितम् ॥ पंथानमहमाक्रम्यभवतोदृष्टवानिह ॥ ६७ ॥

वचन हमने सुना ॥१६१॥ कि इस वानर श्रेष्ठने बडा अद्भुत कार्य किया कि; समस्त लंकापुरी को जलाय जानकीको बचा लिया, तब हमने उनकी वाणी सुन व और भी ॥१६२॥ शुभ निमित्तोंके होनेसे जाना कि, जानकीजी भस्म नहीं हुई, कारणकि पूंछके ऊपर का वस्त्र तो सब जलगया, परन्तु अग्निने हमको नहीं जलाया ॥१६३॥ हमारा हृदय भी प्रफुल्ल हो गया है और सुगंधियुक्त पवन भी चलरही है इन शुभ लक्षण और महा गुणकारक समूहोंसे॥१६४॥और ऋषि लोगोंके वचनों का मर्म जानकर उसकाल हमारे हृदयमें हर्ष उत्पन्न हुआ, तब हमने फिर जानकीजी का दर्शन कर उनके निकटसे बिदा पाय॥१६५॥ अरिष्टपर्वतपर आरोहण (चढ) कर आप सब लोगोंका दर्शन पानेकी अभिलाषासे फिर समुद्रको उतरनेलगे ॥१६६॥ और वायु, सूर्य, चन्द्र, गन्धर्व व सिद्धगण सेवित

मार्गका आश्रय ले गमन करते २ हमने आप लोगोंका दर्शन किया॥ १६७॥ श्रीरामचन्द्रजी के प्रसाद और आप सबके तेज प्रभावसे सुग्रीवजीके समस्तही कार्य हमने सिद्ध किये॥ १६८॥ हमने लंकामें जो कुछ किया है वह सबही आप सबसे कहा, इस समय जो कार्य नहीं किया गया और बाकी हो उसको आपलोग पूरा कीजिये ॥१६९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामष्टपंचाशः सर्गः॥ ५८॥ पवनकुमार हनुमानूजी समस्त वृत्तांत इस प्रकार वर्णन करके फिर और कहने लगे॥ १॥ जनकनंदिनी सीताजी का स्वभाव देखकर हमारा मन अत्यन्त प्रसन्न हुआ और इससे श्रीरामचन्द्रजी का उद्योग और सुग्रीवजी का उत्साह भी सफल हो गया॥ ॥२॥ हे वानर गण ! पतिव्रता साध्वी स्त्रियोंका चरित्र जिस प्रकार का होना चाहिये, आर्या सीताजी सर्व प्रकारसे वैसेही श्रेष्ठ चरित्र की रक्षा करती हैं, वह अपने तपके प्रभावसे सब लोकोंको धारण और क्रोधमें भर कर समस्त लोकोंको भस्म कर सकती है ॥३॥ राक्षस पति रावण भी सर्वथा अतिशय तप करके

राघवस्यप्रसादेनभवतांचैवतेजसा॥सुग्रीवस्यचकार्यार्थंमयासर्वमनुष्ठितम् ॥ ६८॥ एतत्सर्वंमयातत्रयथावदुपपादितम् ॥ तत्रयन्नकृतंशेषंतत्सर्वं क्रियतामिति ॥१६९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० च० सा० सुंदरकांडेऽष्टपंचाशः सर्गः ॥५८॥ एतदाख्यायतत्सर्वंहनूमान्मा रुतात्मजः ॥ भूयःसमुपचक्रामवचनंवक्तुमुत्तरम् ॥ १॥ सफलोराघवोद्योगःसुग्रीवस्यचसंभ्रमः ॥ शीलमासाद्यसीतायाममचप्रीणितंमनः ॥२॥ आर्यायाःसदृशंशीलंसीतायाःप्लवगर्षभाः ॥ तपसाधारयेल्लोकान्क्रुद्धावानिर्दहेदपि ॥३॥सर्वथातिप्रकृष्टोसौरावणोराक्षसेश्वरः॥यस्यतांस्पृश तोगात्रंतपसानविनाशितम् ॥४॥ नतदग्निशिखाकुर्यात्संस्पृष्टापाणिनासती ॥ जनकस्यसुताकुर्याद्यत्क्रोधकलुषीकृता ॥ ५ ॥ जांबवत्प्रमुखा न्सर्वाननुज्ञाप्यमहाकपीन् ॥ अस्मिन्नेवंगतेकार्येभवतांचनिवेदिते ॥ न्याय्यंस्मसहवैदेह्याद्रष्टुंतौपार्थिवात्मजौ ॥६॥ अहमेकोपिपर्याप्तः सराक्ष सगणांपुरीम् ॥ तांलंकांतरसाहंतुंरावणंचसराक्षसम् ॥ ७ ॥

युक्त है, बस इसी लिये हरण समयमें सीताजी का अंग छूनेपर भी वह नहीं भस्म होगया, वह तपका ही प्रभाव है कि इसका शरीर भस्म नहीं हुआ ॥४॥ पतिव्रता जनकलडैती जानकीजी क्रोधके वश होकर जो कुछ कर सकती हैं, वह हाथसे छूने पर भी अग्निकी शिखा नहीं कर सकती। जो हो जिस प्रकारका कार्य हुआ, वह तो सबही हमने आप लोगोंसे कहा ॥ ५ ॥ अब हम चाहते हैं कि जाम्बवान् इत्यादि मुख्य २ वानर लोगोंकी आज्ञा लेकर राजकुमार श्रीरामचन्द्रजीसे जानकीजीको लंकासे लायकर मिलाय देना हमें उचित ज्ञात होता है ॥६॥ जो तुम यह शंका करो कि, बिना श्रीरामचन्द्र, लक्ष्मण, सुग्री वके लंकामें गये यह कार्य कैसे हो सकता है तो सुनो कि, हम इकलेही समस्त राक्षसोंके सहित लंकापुरी व रावणको नष्ट कर सकते हैं, इसमें किसी दूसरेसे

सहायता लेनेकी क्या आवश्यकता है ? ॥७॥ उसपर आप सरीखे परम ज्ञानी, सब अस्त्र शस्त्रके जाननेवाले, बलवान्, विजयकी अभिलाषा किये और समर्थ वीरगण संग २ लंकाको चलें तब तो फिर कहना ही क्या ? ॥ ८ ॥ हम रावणको उसके भ्राता, पुत्र; नौकर, चाकर, मंत्री आदि व सेनाके सहित युद्धमें मार डालेंगे॥९॥ ब्रह्मास्त्र; रौद्रास्त्र, वायवास्त्र और वरुणास्त्र भी इत्यादि॥१०॥संग्राममें बडे दुर्निरीक्ष्य अस्त्र शस्त्र भी इन्द्रजीत चलावेगा, तथापि हम उन सबका नाशकर राक्षसोंका मूलसहित विनाशकर डालेंगे ॥११॥ आप लोगोंकी आज्ञाके बिना हमारा विक्रम रुक रहा है। पर्वतोंकी समस्त वर्षा हमारी बाँहोंके बलसे निरन्तर चलाये जाकर॥१२॥निशाचरोंकी तो चलाई क्या हम देवतालोगोंको भी युद्धमें नष्टकर सकते हैं। आप लोगोंकी आज्ञा न पानेसे हमारी राक्षस राव

किंपुनःसहितोवीरैर्बलवद्भिःकृतात्मभिः ॥कृतास्त्रैःप्लवगैःशक्तैर्भवद्भिर्विजयैषिभिः॥८॥अहंतुरावणंयुद्धेससैन्यंसपुरःसरम् ॥ सहपुत्रंवधिष्या
मिसहोदरयुतंयुधि ॥ ९ ॥ ब्राह्ममस्त्रंचरौद्रंचवायव्यंवारुणंतथा ॥१०॥ यदिशक्रजितोस्त्राणिदुर्निरीक्ष्याणिसंयुगे ॥तान्यहंनिहनिष्यामिविध
मिष्यामिराक्षसान् ॥ ११ ॥ भवतामभ्यनुज्ञातोविक्रमोमेरुणद्धितम् ॥ मयाऽतुलाविसृष्टाहिशैलवृष्टिर्निरंतरा ॥१२॥ देवानपिरणेहन्यात्किं
पुनस्तान्निशाचरान् ॥ भवतामननुज्ञातोविक्रमोमेरुणद्धिमाम्॥ १३ ॥ सागरोप्यतियाद्वेलांमंदरःप्रचलेदपि॥ नजांबवंतंसमरेकंपयेदरिवाहिनी
॥ १४ ॥ सर्वराक्षससंघानांराक्षसायेचपूर्वजाः ॥अलमेकोपिनाशायवीरोवालिसुतःकपिः ॥१५॥ प्लवगस्योरुवेगेननीलस्यचमहात्मनः ॥मंद
रोप्यवशीर्येतकिंपुनर्युधिराक्षसाः॥१६॥सदेवासुरयक्षेषुगंधर्वोरगपक्षिषु ॥ मैंदस्यप्रतियोद्धारंशंसतद्विविदस्यवा ॥१७॥ अश्विपुत्रौमहावेगावे
तौप्लवगसत्तमौ॥एतयोःप्रतियोद्धारंनपश्यामिरणाजिरे॥१८मयैवनिहतालंकादग्धाभस्मीकृतापुरी॥राजमार्गेषुसर्वेषुनामविश्रावितंमया १९॥

णके मार डालनेकी प्रवृत्ति निवृत्त होगई है ॥१३॥ समुद्र चाहे वेला भूमिको लांघ जाय, और मन्दराचल भी चाहे अपने स्थानसे चलायमान होजाय तथापि शत्रुकी सेना संग्राममें जाम्बवान्को नहीं कंपायमान कर सकती ॥ १४ ॥ और विशेषतः वालिकुमार वीर अंगदजीही इकले राक्षसोंमें प्रधान २ राक्षसोंके मार नेको समर्थ हैं॥१५॥ महातमा नीलके बडे भारी ऊरुवेगसे आहत होकर मन्दराचल पर्वत भी विदीर्ण हो सकता है, फिर विचित्रता क्या है कि; जो राक्षसलोग समरमें उनको पाय कर व्याकुल हो जायँगे॥१६॥समस्त सुर, असुर, गन्धर्व, उरग, विहग इनके बीचमें मयन्द या द्विविदके समान कौन वीर है ? सो आप बतावें॥१७॥वानरश्रेष्ठ जो कि, अश्विनीकुमारके यह तो पुत्र हैं; और अति बलवान् हैं, इनके विरुद्ध युद्ध करनेवाला हम किसीकोभी नहीं देखते ॥१८॥और हमने

भी अकेलेही लंकापुरीको विध्वंस और भस्म करके समस्त राजमार्गोंमें इस प्रकार पुकार २ कर सबको अपना नाम सुनाया ॥ १९ ॥ अतिबलवान् श्रीराम चन्द्रजीकी जय ! महाबलवान् श्रीलक्ष्मणजीकी जय ! राघवपालित सुग्रीवजीकी जय ! ॥ २० ॥ हम कोशलराज श्रीरामचन्द्रजीके दास पवनके पुत्र हमारा नाम हनुमान् है इसप्रकारसे सब कहीं हमने सबके नामका कीर्त्तन कियाहै ॥२१॥ उसके पीछे हमने दुराचारी रावणकी अशोकवाटिकामें प्रवेश करके देखा कि, पतिव्रता जानकीजी शिंशपाके वृक्षके नीचे दीनभावसे बैठी हैं ॥ २२ ॥ शोक संतापसे पीडित और राक्षसियोंके घेरे रहनेसे जानकीजीके देहकी कांति मेघरे खासे ढकी हुई चंद्ररेखाके समान प्रभाहीन हो गई है ॥ २३ ॥ श्रेष्ठ मुखवाली जनककुमारी सीताजी पतिव्रता हैं;इस कारण रावणको तो वह कुछ गिनतीही

जयत्यतिबलोरामोलक्ष्मणश्चमहाबलः ॥ राजाजयतिसुग्रीवोराघवेणाभिपालितः ॥ २० ॥ अहंकोसलराजस्यदासःपवनसंभवः ॥ हनूमानि तिसर्वत्रनामविश्रावितंमया ॥ २१ ॥ अशोकवनिकामध्येरावणस्यदुरात्मनः ॥ अधस्ताच्छिंशपामूलेसाध्वीकरुणमास्थिता ॥ २२ ॥ राक्ष सीभिःपरिवृताशोकसंतापकर्शिता ॥ मेघरेखापरिवृताचंद्ररेखेवनिष्प्रभा ॥ २३ ॥ अचिंतयंतीवैदेहीरावणंबलदर्पितम् ॥ पतिव्रताचसुश्रोणी अवष्टब्धाचजानकी ॥ २४ ॥ अनुरक्ताहिवैदेहीरामेसर्वात्मनाशुभा ॥ अनन्यचितारामेणपौलोमीवपुरंदरे ॥ २५ ॥ तदेकवासःसंवीतारजोध्व स्तातथैवच ॥ सामयाराक्षसीमध्येतर्ज्यमानामुहुर्मुहुः ॥ २६ ॥ राक्षसीभिर्विरूपाभिर्दृष्टाहिप्रमदावने ॥ एकवेणीधरादीनाभर्तृचिंतापरायणा ॥ २७ ॥ अधःशय्याविवर्णांगीपद्मिनीवहिमोदये ॥ रावणाद्विनिवृत्तार्थामर्तव्येकृतनिश्चया ॥ २८ ॥ कथंचिन्मृगशावाक्षीविश्वासमुपपादिता ॥ ततःसंभाषिताचैवसर्वमर्थप्रकाशिता ॥ २९ ॥

नहीं,उस दुरात्मा रावणने केवल बलसे गर्वित होकर उनको रोक रक्खाहै ॥ २४ ॥ वह शोभायमान,जनककुमारी सीताजी जिसप्रकार इन्द्राणी इन्द्रसे व्यवहारकरती हैं ऐसे और चिंताओंका त्याग करके केवल एक श्रीरामचन्द्रजीकी ही चिंतामें मग्न रहतीहै ॥ २५ ॥ सीताजी बदनमें धूरि लगाये केवल एक सारी धारण किये राक्षसियोंके बीचमें बैठीहैं और वह विकट रूपवाली राक्षसियें वारंवार उनको धमका रहीहैं ॥ २६ ॥ जानकीजी दीनभावसे उन राक्षसियोंके मध्यकेवल एक अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीकी चिंता करती हुई केवल एक वेणी धारण किये ॥ २७ ॥ खुली भूमिमें शयन करती हुई हिमके आगमनसे कमलिनीके समान विवर्ण होगई हैं, मरणका उन्होंने निश्चय कर लिया है, रावणमेंउनकी कुछ भी प्रवृत्ति या अभिलाषा नहीं ॥ २८ ॥ हमने किसी प्रकारसे उन मृग छौनाकेसे

नेत्रवाली श्रीरामचन्द्रकी प्यारी जानकीजीको अपना विश्वास उत्पन्न कराय संभाषण कर उनसे सब वृत्तान्त प्रगट किया ॥२९॥ वह श्रीरामचन्द्रजीके साथ सुग्रीवजीकी मित्रता सुनकर अत्यन्त सन्तुष्ट हुई श्रीरामचन्द्रजीमें अत्यन्त अनुरागिणी और पतिव्रता गुणकी आधार हैं; उन्होंने जो अब तक रावणको नहीं मार डाला, सो इसमें एक रावणके तपका बलही हेतु है ॥ ३० ॥ तथापि सीताजीको रोककरके रावण मृतकसा होगया है, श्रीरामचन्द्रजीका उसको मारना तो केवल निमित्त मात्र होगा ॥ ३१ ॥ पडवा तिथिको पढनेसे जिस प्रकार विद्याका क्षय होजाता है वैसेही स्वभावसे कृश सीता और कृश होगई हैं ॥ ३२ ॥ जनककुमारी सीताजी शोकपरायण हो इसप्रकारसे समयको बिताय रहीहैं सो इस समय जो कुछ करना उचितहै उसकासर्वप्रकारसे आपलोगविचार कीजिये ॥३३॥

रामसुग्रीवसख्यंचश्रुत्वाप्रीतिमुपागता ॥ नियतःसमुदाचारोभक्तिर्भर्तरिचोत्तमा ॥ ३० ॥ यन्नहंतिदशग्रीवंसमहात्मादशाननः ॥ निमित्तमात्रं रामस्तुवधेतस्यभविष्यति ॥ ३१ ॥ साप्रकृत्यैवतन्वंगीतद्वियोगाच्चकर्शिता ॥ प्रतिपत्पाठशीलस्यविद्येवतनुतांगता ॥ ३२ ॥ एवमास्तेमहाभागासीताशोकपरायणा ॥ यदत्रप्रतिकर्तव्यंतत्सर्वमुपकल्प्यताम् ॥३३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे एकोनषष्टितमः सर्गः ॥५९॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वावालिसूनुरभाषत ॥ अश्विपुत्रौमहावेगौबलवंतौप्लवंगमौ ॥१॥ पितामहवरोत्सेकात्परमं दर्पमास्थितौ ॥ अश्विनोर्माननार्थंहिसर्वलोकपितामहः ॥ २ ॥ सर्वावध्यत्वमतुलमनयोर्दत्तवान्पुरा ॥ वरोत्सेकेनमत्तौचप्रमथ्यमहतींचमूम् ॥ ३ ॥ सुराणाममृतंवीरौपीतवंतौमहबालौ ॥ एतावेवहिसंक्रुद्धौसवाजिरथकुंजराम् ॥ ४ ॥ लंकांनाशयितुंशक्तौसर्वेतिष्ठतुवानराः ॥ अहमेकोपिपर्याप्तःसराक्षसगणांपुरीम् ॥ ५ ॥ तांलंकांतरसाहंतुरावणं चमहाबलम् ॥ किंपुनःसहितोवीरैर्बलवद्भिःकृतात्मभिः ॥ ६ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रामा० वा० आ० सुंदरकांडे भाषायामेकोनषष्टितमः सर्गः ॥५९॥ वालिके पुत्र अंगदजी हनुमान्जीके यह वचन सुनकर बोले कि, हे वानरश्रेष्ठ! अश्विनीकुमारके यह दोनों पुत्र महाबलवान हैं ॥१॥ विशेष करके ब्रह्माजीके वरदानदेनेसे वह अत्यन्त वीर्ययुक्त हैं । प्राचीनकालमें सर्व लोकके पितामह कमलयोनि ब्रह्माजीने अश्विनीकुमारका सन्मान करनेके लिये ॥२॥ इन दोनों वानरोंको वरदान दिया कि, तुमको कोई नहीं मार सकेगा इस प्रकार वरदानपानेसे उन्मत्त हो इन महाबलवान् दोनों वीरोंने देवताओंकी बडी भारी सेनाको मथकर ॥३॥ अमृत पान किया था, इसकारण यह दोनों क्रोध करके अश्व; रथ और हस्ती समस्त लंकापुरीका नाश करनेको अवश्य समर्थहैं ॥४॥ इसकारण और सब वानरोंकी बात तो दूर रहे हम अकेले ही घोर पराक्रमसे महाबलवान् राक्षसोंके सहित समस्त लंका और दुरात्मा रावणका संहार कर सकतेहैं ॥५॥ तुम सरीखे बलवान् और वानर वीरगणोंके साथ मिलकर जो हम इस कार्यको पूरा

करें तो इसमें विचित्रता ही क्या है ? ॥६॥ तुम लोग तो सबही विजयकी इच्छा किये और शक्तियुक्त हो, तुम करके तो लंका जीतही लीजायगी परन्तु हमने तो यह सुना है कि केवल एक पवनकुमार हनुमानजीके ही बलसे लंका भस्म होगई ॥ ७ ॥ जो कुछ हो तुम सबही विख्यात बल पौरुषवाले हो इस कारणही सीताजीको देखा है परन्तु साथ नहीं लेते आये ऐसा श्रीरामचंद्रजीके निकट निवेदन करना तुम्हारे लिये हम युक्तियुक्त नहीं विचारते ॥८॥ हे वानर श्रेष्ठगण ! क्या तडकनेमें क्या पराक्रममें बरन किसी बातमें भी सुरासुर सहित समस्त लोकोंमें कोई पुरुष तुम्हारे समान नहीं है ॥ ९ ॥ इसलिये समस्त राक्षसोंके साथ लंकाको जीत रावणको संहार और सीताजीको ले कार्य सिद्ध कर हर्षितचित्तसे फिरश्रीरामचंद्रजीके पास चलें ॥१०॥ हनुमानजीने बहुत राक्षसोंको मारही डाला अब बचे बचायोंको मारकर एक जानकीजीको यहांपर ले आनेके सिवाय और कौनसा कार्य हमको शेष रहा है ? ॥११॥ हे वानरश्रेष्ठ गण !

कृतास्त्रैःप्लवगैःशक्तैर्भवद्भिर्विजयैषिभिः ॥ वायुसूनोर्बलेनैवदग्धालंकेतिनःश्रुतम् ॥ ७ ॥ दृष्टादेवीनचानीताइतितत्रनिवेदितुम् ॥ नयुक्तमिव पश्यामिभवद्भिःख्यातपौरुषैः ॥८॥ नहिवःप्लवनेकश्चिन्नापिकश्चित्पराक्रमे ॥ तुल्यःसामरदैत्येषुलोकेषुहरिसत्तमाः ॥९॥ जित्वालंकांसरक्षौघां हत्वातंरावणंरणे ॥ सीतामादायगच्छामःसिद्धार्थाहृष्टमानसाः ॥ १० ॥ तेष्वेवंहतशेषेषुराक्षसेषुहनूमता ॥ किमन्यदत्रकर्तव्यंगृहीत्वायाम जानकीम् ॥ ११ ॥ रामलक्ष्मणयोर्मध्येन्यस्यामजनकात्मजाम् किंव्यलीकैस्तुतान्सर्वान्वानरान्वानरर्षभान् ॥ १२ ॥ वयमेवहिगत्वाता न्हत्वाराक्षसपुंगवान् ॥ राघवंद्रष्टुमर्हामःसुग्रीवंसहलक्ष्मणम् ॥ १३ ॥ तमेवंकृतसंकल्पंजांबवान्हरिसत्तमः ॥ उवाचपरमप्रीतोवाक्यमर्थवद र्थवित् ॥ १४ ॥ नैषाबुद्धिर्महाबुद्धेयद्ब्रवीषिमहाकपे ॥ विचेतुंवयमाज्ञप्तादक्षिणांदिशमुत्तमाम् ॥१५॥ नानेतुंकपिराजेननैवरामेणधीमता ॥ कथं चिन्निर्जितांसीतामस्माभिर्नाभिरोचयेत् ॥ १६ ॥

इसलिये हमलोग जानकीजीको ले श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके पास पहुँचाय देंगे। अब उन किष्किन्धाके रहने वाले समस्त वानरोंको दुःखभागी करनेकी क्या आवश्यकता है ? ॥ १२ ॥ इस कारणसे हमही लंकामें जायँ प्रधान २ राक्षसोंका संहार करके फिर राम लक्ष्मण और सुग्रीवजीके दर्शन करेंगे ॥१३॥ जब अंगदजीने ऐसा विचार किया तो कार्यके जाननेवाले वानरश्रेष्ठ जाम्बवानजी परमप्रसन्न होकर अर्थयुक्त वचन कहने लगे ॥१४॥ हे महाबुद्धे ! इस प्रकारकी बुद्धि युक्तिसिद्ध नहीं है; क्योंकि हम तो दक्षिण दिशामें जानकीके खोजनेहीको केवल भेजे गये हैं ॥१५॥ कुछ सीताजीको संग ले आनेके लिये न कपिराज सुग्रीवजीने न बुद्धिमान् श्रीरामचन्द्रजीने हमको आज्ञा दी है। सो यदि हम जानकीजीका उद्धार करकेभी गये तो यह कार्य किसीप्रकार श्रीरामचन्द्रजीको

न रुचेगा ॥१६॥कारण कि उन राजशार्दूल श्रीरामचन्द्रजीने अपनी कुलमर्यादाके अनुसार यह प्रतिज्ञा की है कि हम स्वयंही सीताका उद्धार करेंगे ॥१७॥ सो वह किस प्रकारसे उन मुख्यवानरोंके आगे की हुई उस प्रतिज्ञाको मिथ्या करेंगे ? इस कारण सीताजीके लेजानेपर जब कि वह प्रसन्न न होंगे फिर भला वह निष्फल कार्यके करने की क्या आवश्यकता है ॥१८॥हे वानरश्रेष्ठो ! बल वीर्यका दिखलाना सब वृथा जायगा इस कारण हम सबको वहां चलना चाहिये जहां कि श्रीरामचंद्रजी हैं; और वहां चलकर महातेजस्वी सुग्रीवजीसे इस कार्यको निवेदन करें ॥१९॥वह जैसा कुछ कहेंगे वैसाही किया जायगा । हे राजपुत्र ! आपने जो विचार किया इसको हम भी भलीभाँति मानते हैंतथापि श्रीरामचन्द्रजीने जो संकल्प किया है उसके अनुसार उनके कार्यकी सिद्धि तो देखना चाहिये ॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा आदि० सुन्दरकांडेभाषायां षष्टितमः सर्गः ॥६०॥ अंगदादि वीर वानर लोगोंने और महाकपि हनुमानजीने जाम्बवानजीके इन

राघवोनृपशार्दूलःकुलंव्यपदिशन्स्वकम् ॥ प्रतिज्ञायस्वयंराजासीताविजयमग्रतः ॥१७॥ सर्वेषांकपिमुख्यानांकथंमिथ्याकरिष्यति॥ विफलं कर्मंचकृतंभवेत्तुष्टिर्नतस्यच ॥१८॥ वृथाचदर्शितंवीर्यंभवेद्वानरपुंगवाः॥तस्माद्गच्छामवैसर्वेयत्ररामःसलक्ष्मणः॥सुग्रीवश्चमहातेजाःकार्यस्या स्यनिवेदने ॥१९ ॥ नतावदेषामतिरक्षमानोयथाभवान्पश्यतिराजपुत्र ॥ यथातुरामस्यमतिर्निविष्टातथाभवान्पश्यतुकार्यसिद्धिम् ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडेषष्टितमःसर्गः ॥ ६० ॥ ततोजांबवतोवाक्यमगृह्णन्तवनौकसः ॥ अंगदप्र मुखावीराहनूमांश्चमहाकपिः ॥ १ ॥ प्रीतिमंतस्ततःसर्वेवायुपुत्रपुरःसराः ॥ महेंद्राग्रात्समुत्पत्यपुप्लुवुःप्लवगर्षभाः ॥२॥ मेरुमंदरसंकाशाम त्ताइवमहागजाः ॥ छादयंतइवाकाशंमहाकायामहाबलाः ॥ ३ ॥ सभाज्यमानंभूतैस्तमात्मवंतंमहाबलम् ॥ हनूमंतंमहावेगंवहंतइवदृष्टिभिः ॥४॥ राघवेचार्थनिर्वृत्तिंकर्तुंचपरमंयशः ॥ समाधायसमृद्धार्थाःकर्मसिद्धिभिरुन्नताः ॥ ५ ॥ प्रियाख्यानोन्मुखाःसर्वेसर्वेयुद्धाभिनंदिनः ॥ सर्वेरामप्रतीकारेनिश्चितार्थामनस्विनः ॥ ६ ॥

वचनोंको ग्रहण किया ॥१॥ उसके पीछे वह वानरश्रेष्ठगण हनुमानजीको आगे करके प्रसन्न होकर महेन्द्राचलसे उछल छलांग भर २ कर चलने लगे ॥ २ ॥ मेरु मन्दरके समान वह बडे आकारवाले समस्त वानरगण महामतवाले हाथीके समान मानो आकाश मंडलको व्याप्त करते चले ॥३॥और सिद्ध इत्यादि प्राणियोंसे सम्मानित होकर आत्मज्ञान सम्पन्न महाबली अति वेगवान् हनुमानजी को मानों दृष्टिसे निहारते हुएसे चले जाते थे ॥४॥ वह सबही वानर गण श्रीरामचन्द्रजी के कार्यकी सिद्धि और हनुमानजीके अपने यशलाभ करनेको संकल्प किये हुए थे, सीताजीके देखने और लंकाके भस्म होनेसे सबकेही मनोरथ पूर्ण और मन उत्साह युक्त हो रहे थे॥५॥सबही प्रियसंवाद देनेके लिये तैयार थे सबही संग्राम करनेके लिये उत्साही और सबही हर्षित अंतःकरण युक्त हो रावणसे श्रीरा

मचन्द्रजी का वैर लेनेको संकल्प ठाने हुए थे ॥६॥ इस प्रकारसे वह मनस्वी वानर वृन्द आकाशमें उछलते कूदते गमन करते हुए नंदन वनके समान सैकड़ों हजारों वृक्षोंसे शोभित ॥ ७ ॥ मधुवन नामक सुग्रीवजीसे रखाये जाते हुए वनमें पहुँचे, इस वनमें कोई जीव नहीं जाने पाते, यह सबका मन मोहन कारी था ॥ ८ ॥ अधिक करके महात्मा वानरराज सुग्रीवजी के मामा दधिमुख नामक महावीर वानर सदा इस वनकी रक्षा करते थे ॥९॥ वानरेन्द्र सुग्रीवजीके प्यारे उस महावनमें पहुँच कर सबही वानर गण बहुत हर्षित हुए ॥ १० ॥ मधु युक्त उस अति रमणीक वनको देख सब वानर गणोंने अत्यन्त प्रसन्न हो उसके मधुर फल खाने और वहांका मधुपान करनेके लिये अंगदजीसे पूँछा ॥ ११ ॥ उसके पीछे जाम्बवान् आदि वानर श्रेष्ठोंके वचन मान उसका आदर कर कुमार अंग

प्लवमानाःखमाप्लुत्यततस्तेकाननौकसः ॥ नंदनोपममासेदुर्वनंद्रुमशतायुतम् ॥ ७ ॥ यत्तन्मधुवनंनामसुग्रीवस्याभिरक्षितम् ॥ अधृष्यंसर्वभूतानांसर्वभूतमनोहरम् ॥ ८ ॥ यद्रक्ष्यतिमहावीरःसदादधिमुखःकपिः ॥ मातुलःकपिमुख्यस्यसुग्रीवस्यमहात्मनः ॥ ९ ॥ तेतद्वनमुपागम्य बभूवुःपरमोत्कटाः ॥ वानरावानरेंद्रस्यमनःकांतमहावनम् ॥ १० ॥ ततस्तेवानराहृष्टादृष्ट्वामधुवनंमहत् ॥ कुमारमभ्ययाचंतमधूनिमधुपिंगलाः ॥ ११ ॥ ततःकुमारस्तान्वृद्धाञ्जांबवत्प्रमुखान्कपीन् ॥ अनुमान्यददौतेषांनिसर्गंमधुभक्षणे ॥ १२ ॥ तेनिसृष्टाःकुमारेणधीमतावालिसूनुना ॥ हरयःसमपद्यंतद्रुमान्मधुकराकुलान् ॥१३॥ भक्षयंतःसुगंधीनिमूलानिचफलानिच जग्मुःप्रहर्षंतेसर्वेबभूवुश्चमदोत्कटाः ॥ १४ ॥ ततश्चानुमताःसर्वेसुसंहृष्टावनौकसः ॥ मुदिताश्चततस्तेचप्रनृत्यंतितिततस्ततः ॥ १५ ॥ गायंतिकेचित्प्रहसंतिकेचिन्नृत्यंतिकेचित्प्रणमंतिकेचित् ॥ पठंतिकेचित्प्रचरंतिकेचित्प्लवंतिकेचित्प्रलपंतिकेचित् ॥ १६ ॥ परस्परंकेचिदुपाश्रयंतिपरस्परंकेचिदतिब्रुवंति ॥ द्रुमाद्द्रुमंकेचिदभिद्रवंतिक्षितौनगाग्रान्निपतंतिकेचित् ॥ १७ ॥

दजीने वहां के फल खाने और मधुपान करनेके लिये वानरोंको आज्ञा दी ॥ १२ ॥ बुद्धिमान् वालिकुमार अंगदजी की आज्ञा पाय समस्त वानर गण ऐसे वृक्षोंपर चढ गये कि; जिनपर भ्रमर गुंजार कर रहे थे ॥ १३ ॥ उनपर चढ सुगन्धियुक्त फल मूल खाय सबही अत्यन्त हर्षित हो मधु पी पीकर मतवाले होगये ॥ १४ ॥ कुमार की आज्ञासे मधुपान करके सबही वानरगणसम्मतकर मुदित मनसे नांचने लगे ॥ १५ ॥ उसके पीछे कोई नांचने लगे प्रणाम करने लगे, कोई कुछ पढनेलगे, कोई इधर उधर घूमने लगे, कोई ऊपर को उछलने लगे, व कोई २ योंही निरर्थक वचन कहने लगे ॥ १६ ॥ कोई एक दूसरेको चिपटाने लगे; और किसी २ ने परस्पर लडाई झगडा आरंभ किया कोई २ एक वृक्षसे दूसरे, पर कूदने और कोई २ वृपराक्षोंपरसे पृथ्वीपर कूदने लगे ॥ १७ ॥

और कोई २ पृथ्वीसे उछल कर अतिवेगके साथ बडे भारी २ वृक्षोंकी फुलंचियोंपर चढनेलगे कोई गानेलगे, कोई हँसीठट्ठाकरके किसीके पास जाने लगे कोई रोदन करनेलगे, कोई किसीके रोनेकी नकल करते हुए ॥१८॥ उसकी ओरको दौडे कोई २ किसीको पीडादेनेलगे और कोई २ किसीको अतिशय व्यथित करते हुए उसके निकट जाने लगे, इस प्रकारसे समस्त वानरगण समाकुल हो गये उस सेनामें ऐसा कोई वानर नहीं था जो मत्त या अतिशय प्रमत्त न हुआ हो ॥१९॥ उसके पीछे समस्त मधुवनके फल खाये हुए और वृक्षोंकेपत्तेतक नष्ट हुए देखकर दधिमुख क्रोधित उन वानरोंको रोकने लगा परंतु मदमत्त वानरोंने शान्त न होकर ॥२०॥ उस वनके रखवालेको बुरा भला कहना आरंभ किया यह देख कर अतितेजस्वी वनरक्षक प्रधान वानरवीर दधिमुख फिर वानर

महीतलात्केचिदुदीर्णवेगामहाद्रुमाग्राण्यभिसंपतंति ॥ गायंतमन्यः प्रहसन्नुपैतिरुदंतमन्यः प्ररुदन्नुपैति ॥१८॥ तुदंतमन्यः प्रणुदन्नुपैतिसमाकुलंतत्कपिसैन्यमासीत् ॥ नचात्रकश्चिन्नबभूवमत्तोनचात्रकश्चिन्नबभूवदृप्तः ॥१९॥ ततोवनंतत्परिभक्ष्यमाणंद्रुमांश्चविध्वंसितपत्रपुष्पान् ॥ समीक्ष्यकोपाद्दधिवक्त्रनामानिवारयामासकपिःकपींस्तान् ॥२०॥ सतैःप्रवृद्धैःपरिभर्त्स्यमानोवनस्यगोप्ताहरिवृद्धवीरः ॥ चकारभूयोमतिमुग्रतेजावनस्यरक्षांप्रतिवानरेभ्यः ॥ २१ ॥ उवाचकांश्चित्परुषाण्यभीतमसक्तमन्यांश्चतलैर्जघान ॥ समेत्यकैश्चित्कलहंचकारतथैवसाम्नोपजगामकांश्चित् ॥ २२ ॥ सतैर्मदादप्रतिवार्यवेगैर्बलाच्चतेनप्रतिवार्यमाणैः ॥ प्रधर्षणेत्यक्तभयैःसमेत्यप्रकृष्यतेचाप्यनवेक्ष्यदोषम् ॥ २३ ॥ नखैस्तुदंतोदशनैर्दशंतस्तलैश्चपादैश्चसमापयंतः ॥ मदात्कपिंतेकपयःसमंतान्महावनंनिर्विषयंचचक्रुः ॥२४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० सुंदरकांडेएकषष्टितमः सर्गः ॥ ६१ ॥

लोगोंके उपद्रवसे वनकी रक्षा करनेकी मति कर ॥२१॥ किसी २ वानरको भयरहित हो कठोर वचन कहे; किसी २ को बराबरलातोंकी मार दी किसीके साथ क्लेश किया और किसी २ को मीठे वचनोंसे समझाने बुझाने लगा ॥२२॥ परन्तु मदसे मतवाले होनेके कारण वानरोंका वेग रोकनेको वह असमर्थ होगया। तब दधिमुखनेबलपूर्वक निवारण किया तब वानर लोगोंने (इसके पीडन करनेसे कुछ राजदंडभी न होगा, क्योंकि हम संवादही ऐसा लाये हैं, यह विचार) मिलकर निःशंकचित्तसे दधिमुखको इधर उधरसे पकडकर घसीटने लगे ॥ २३ ॥ नखोंसे नोंचनांच दांतोंसे काट कूट;लातें लगाय पृथ्वीमें गिराय दधिमुखको मृतप्राय करके मधुवनको एकबारही नष्ट कर डाला ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामेकषष्टितमः सर्गः ॥ ६१ ॥

यह देखकर वानरश्रेष्ठ हनुमानजी उन सब वानरोंसे बोले कि, हे वानरगण तुम लोग निःशंकचित्त होकर मधुपान करो ॥१॥ जो कोई, इस मधुपान करने या फल खानेमें तुम्हारा विरोधकरेंगे हम स्वयं उनको रोकेंगे, वानरश्रेष्ठ अंगदजी हनुमान्‌जीके यह वचन सुन ॥२॥ प्रसन्न चित्तसे उत्तर देते हुए कि, हे वानरगणो! तुमप्रसन्नतासे मधुपान करो क्योंकि हनुमानजी कार्यकी सिद्धि करके आये हैं ॥ ३ ॥ अकृतकार्य होनेपर भी जब कि इनकेवचनोंका पालन करना अवश्य कर्तव्य है तब इस प्रकारके न्याययुक्त वचनोंको पालन करनेमें कुछ अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं॥४॥ बडे२वानरगण कुमार अंगदजीके मुखसे यह वचन सुन अति प्रफुल्लित होकर वारंवार धन्य२कहकर उनकी पूजा करते हुए और महावीरजीकी बडाई करने लगे॥५॥ उसके पीछे नदी वेगसे जिसप्रकार वृक्षोंमें प्रवेश करती है

तानुवाचहरिश्रेष्ठोहनूमान्वानरर्षभः ॥ अव्यग्रमनसोयूयंमधुसेवतवानराः ॥ १ ॥ अहमावर्जयिष्यामियुष्माकंपरिपंथिनः ॥ श्रुत्वाहनुमतो वाक्यंहरीणांप्रवरोंगदः ॥२॥ प्रत्युवाचप्रसन्नात्मापिबंतुहरयोमधु ॥ अवश्यंकृतकार्यस्यवाक्यंहनुमतोमया ॥३॥ अकार्यमपिकर्तव्यंकिमंगपुनरीदृशम् ॥ अंगदस्यमुखाच्छ्रुत्वावचनंवानरर्षभाः ॥४॥ साधुसाध्विितिसंहृष्टावानराःप्रत्यपूजयन् ॥ पूजयित्वांगदंसर्वेवानरावानरर्षभम् ॥५॥ जग्मुर्मधुवनंयत्रनदीवेगइवद्रुमम् ॥ तेप्रविष्टामधुवनंपालानाक्रम्यशक्तितः ॥६॥ अतिसर्गाच्चपटवोदृष्ट्वाश्रुत्वाचमैथिलीम् ॥ पपुःसर्वेमधु तदारसवत्फलमाददुः ॥७॥ उत्पत्यचततःसर्वेवनपालान्समागतान् ॥ तेताडयंतःशतशःसक्तामधुवनेतदा ॥८॥ मधूनिद्रोणमात्राणिबाहुभिः परिगृह्यते ॥ पिबंतिकपयःकेचित्संघशस्तत्रहृष्टवत् ॥ ९ ॥ घ्नंतिस्मसहिताःसर्वेभक्षयंतितथापरे ॥ केचित्पीत्वापविध्यंतिमधूनिमधुपिंगलाः ॥१०॥ मधूच्छिष्टेनकेचिच्चजघ्नुरन्योन्यमुत्कटाः॥अपरेवृक्षमूलेषुशाखांगृह्यव्यवस्थिताः ॥११॥ अत्यर्थंचमदग्लानाःपर्णान्यास्तीर्यशेरते ॥ उन्मत्तवेगःप्लवगामधुमत्ताश्चहृष्टवत् ॥ १२ ॥

वैसेही उन वानरोंने मधुवनमें प्रवेश करकेबलात्कारसे बनके रखवालेको पकड॥६॥ जानकीजीको देखने और उनका वृत्तान्त श्रवण करनेसे और अंगदजीकी आज्ञा पानेसे वानरलोग भयरहित हो मधु पीपीकर सुरस फल भोजन करनेलगे॥७॥ इसप्रकारसे सबही मधु पीकर मत्तहो जो रक्षक निवारण करने आये थे उन सबको भलीभाँति मार लगाय धमकाने डराने लगे ॥८॥ वे वानर हाथोंकी अंजलियोंमें भर२कर मधुपान करने लगे। कोई२हर्षित चित्तसे झुण्डके झुण्ड मिलकर॥९॥ ढेर२मधु नष्ट करने लगे कोई भक्षण करने लगे, कोई पीने लगे, कोई२ इधर उधर फेंकने लगे ॥१०॥ कोई२मधु पीनेसे अत्यन्त उन्मत्त होकर मधुके छत्तोंसे एक दूसरेको मारने लगे और अनेक वृक्षोंके डुग्गोंका पकडे हुए झूलते थे ॥११॥ कोई२मधुपान करनेसे अति शय ग्लानिके मारे पत्तोंको बिछाय कर उसपर शयन

करने लगे, कोई२मधुपान करके मत्त और हर्षित होकर ॥१२॥ उन्मत्तके समान परस्पर लिपट झपट करने लगे; कोई २ खसकते कोई २ इधर उधर मत वालापन करते कोई हर्षित हो पक्षियोंके समान शब्द करते ॥१३॥ कोई२मधुपान करनेसे मत्त हो पृथ्वीपर शयन कर रहे हैं. कोई२ढिठाईसे किसी दूसरेको देखकर हँसी करनेलगे और कोई कुछ औरही रोदनादि करतेथे॥१४॥कोई२रोने लगे,कोई२ऐसा कार्य करने लगे जो दूसरेकी समझमें न आवे. कोई२वाक्य कायथार्थ अर्थ परित्याग करके अपरार्थ ग्रहणकर लेते वहांपर जो कि रखवालेऔर दधिमुखके नौकर चाकरथे॥१५॥उनको इन मतवाले भयंकराकार वीरवानर लोगोंने चरण पकड२कर फेंक दिया,किसीको उलटा कर ऊपरको उछाल दिया इसकारण वह रखवाले और नौकर चाकर भीत होकर दशों दिशाओंको भागगये

क्षिपंत्यपितथान्योन्यंस्खलंतिचतथापरे ॥ केचित्क्ष्वेडान्प्रकुर्वंतिकेचित्कूजंतिहृष्टवत् ॥१३॥ हरयोमधुनामत्ताःकेचित्सुप्तामहीतले ॥ धृष्टाः केचिद्धसंत्यन्येकेचित्कुर्वंतिचेतरत् ॥१४॥ कृत्वाकेचिद्वदंत्यन्येकेचिद्बुध्यंतिचेतरत् ॥ येप्यत्रमधुपालाःस्युःप्रेष्यादधिमुखस्यतु ॥ १५ ॥ तेपितैर्वानरैर्भीमैःप्रतिषिद्धादिशोगताः॥ जानुभिश्चप्रघृष्टाश्चदेवमार्गंचदर्शिताः ॥ १६ ॥ अब्रुवन्परमोद्विग्नागत्वादधिमुखंवचः ॥ हनूमताद त्तवरैर्हतंमधुवनंबलात् ॥ १७ ॥ वयंचजानुभिर्घृष्टादेवमार्गंचदर्शिताः ॥ १८ ॥ तदादधिमुखःक्रुद्धोवनपस्तत्रवानरः ॥ हतंमधुवनंदृष्ट्वासांत्व यामासतान्हरीन् ॥ १९ ॥ एतागच्छतगच्छामोवानरानतिदर्पितान् ॥ बलेनावारयिष्यामिप्रभुंजानान्मधूत्तमम् ॥२०॥ श्रुत्वादधिमुखस्ये दंवचनंवानरर्षभाः ॥ पुनर्वीरामधुवनंतेनैवसहिताययुः ॥२१॥ मध्येचैषांदधिमुखःसुप्रगृह्यमहातरुम् ॥ समभ्यधावन्वेगेनसर्वेतेचप्लवंगमाः ॥ २२ ॥ तेशिलाःपादपांश्चैवपाषाणानपिवानराः ॥ गृहीत्वाभ्यागमन्क्रुद्धायत्रतेकपिकुंजराः ॥ २३ ॥

॥१६॥उन सबने अतिशय उत्कंठित मनसे दधिमुखके पास गमन करके कहा कि हनुमान्जीकी सम्मतिसे वानरलोगोंने बलपूर्वकमधुवनका नाश करदिया॥१७॥ और हम लोगोंके पाँव पकड२कर उठाय२आकाशमें फेंक दिया ॥१८॥ दधिमुख वानरोंके वचन सुन और मधुवनको नष्ट हुआ देख क्रोध कर उन रखवालोंको समझाने बुझाने लगा ॥१९॥ कि तुम लोग आगे २ चलो और हम भी तुम्हारेपीछेहीपीछे आयकर बलसहित उन वानरोंको रोकेंगे;फिर देखेंगे कि वह किस प्रकार मधुपान करते और फलोंको खाते हैं ॥ २० ॥ वानरश्रेष्ठ गण दधिमुखके यह वचन सुनकर फिर उसके सहित मधुवनकी ओर चले ॥२१॥ इन वानरों मेंसे दधिमुख एक बडे भारी वृक्षको उठाय कर अतिवेगसे अपनेसाथियोंके सहित मधुवनवाले वानरों पर धाया ॥२२॥ उसके पीछे शिला,पाषाण और वृक्षोंको

ग्रहण करके रोषमें भर सबही वहां जाय पहुँचे जहां हनुमान्‌जी इत्यादि वानरगण टिके हुए थे ॥२३॥वहां गमन करके वह लोग क्रोधके मारे दाँतोंसे होठोंको चबाय२वारंवार तिरस्कार करके बल सहित उन फल खाते मधुपीते वानरोंको रोकने लगे ॥ २४ ॥ उसके पीछे हनुमान् इत्यादि कपिकुंजरगण दधिमुखको क्रोधित देख कर अतिवेगसे उसके सन्मुख दौडे ॥२५॥ और महाबलवान् महाबाहु दधिमुख वृक्ष हाथमें लिये अतिवेगसे जैसेही आया कि वैसेही अंगदजीने क्रोध कर उसके दोनों हाथ पकड लिये ॥२६॥ वह मधुपीनेसे ज्ञानरहित हो रहे थे; इस कारण दधिमुखको श्रेष्ठ विचार कर अपना बडा जानकर भी अंगदजीने उसके ऊपर कृपा की, बरन् उसको पकड कर बलपूर्वक पृथ्वीपर पटक दिया ॥ २७ ॥ पटकतेही दधिमुखके हाथ, जांघ, मुख आदि सब अंगटूट गये ! महावीर दधिमुख लोहूलुहान हो एक मुहूर्ततक विह्वलऔरमूर्च्छित हो गया ॥२८॥उसके पीछेवानरवीर दधिमुख कुछ एक सावधान हो उन वानरोंसेकिसी प्रकार

बलान्निवारयंतश्चआसेदुर्हरयोहरीन् ॥ संदष्टोष्ठपुटाःक्रुद्धाभर्त्सयंतोमुहुर्मुहुः ॥२४॥ अथदृष्ट्वादधिमुखंक्रुद्धंवानरपुंगवाः ॥ अभ्यधावंतवेगेन हनुमत्प्रमुखास्तदा ॥ २५ ॥ सवृक्षंतंमहाबाहुमापतंतंमहाबलम् ॥ वेगवंतंनिजग्राहबाहुभ्यांकुपितोंगदः ॥२६॥ मदांधोनकृपांचक्रेआर्यकोयं ममेतिसः ॥ अथैनंनिष्पिपेषाशुवेगेनवसुधातले ॥२७॥ सभग्नबाहूरुमुखोविह्वलःशोणितोक्षितः ॥ प्रमुमोहमहावीरोमुहूर्तंकपिकुंजरः ॥२८॥ सकथंचिद्विमुक्तस्तैर्वानरैर्वानरर्षभः ॥ उवाचैकांतमागत्यस्वान्भृत्यान्समुपागतान् ॥२९॥ एतागच्छतगच्छामोभर्तानोयत्रवानरः ॥ सुग्रीवो विपुलग्रीवःसहरामेणतिष्ठति ॥ ३० ॥ सर्वंचैवांगदेदोषंश्रावयिष्यामिपार्थिवे ॥ अमर्षीवचनंश्रुत्वाघातयिष्यतिवानरान् ॥ ३१ ॥ इष्टंमधुवनंह्येतत्सुग्रीवस्यमहात्मनः ॥ पितृपैतामहंदिव्यंदेवैरपिदुरासदम् ॥३२॥ सवानरानिमान्सर्वान्मधुलुब्धान्गतायुषः ॥ घातयिष्यतिदंडेनसुग्रीवःससुहृज्जनान् ॥३३॥ वध्या ह्येतेदुरात्मानोनृपाज्ञापरिपंथिनः ॥ अमर्षप्रभवोरोषःसफलोमेभविष्यति ॥ ३४ ॥

अपनी जान बचाकर चुपकेसे एकान्तमें आय निकट आये हुए अपने नौकरों चाकरोंसे बोले ॥ २९ ॥ कि भाई जहांपर हमारे राजा विपुलग्रीव सुग्रीवजी श्रीरामचन्द्रजीके सहित विराजमान हैं आओ हम सबजने उसी स्थानपर चलें ॥३०॥ फिर उन राजाके निकट पहुँचकर अंगदजीके समस्त दोष हम उनसे निवेदन करेंगे वह क्रोधपरायण राजा यह वृत्तान्त श्रवण करतेही समस्त वानरोंका नाश कर देंगे ॥३१॥क्योंकि मनोहर मधुवन महात्मा सुग्रीवजीको अत्यन्त प्यारा है अधिक करके इस वनको उनके बाप दादे, परदादेतक भोग कर गये हैं देवता लोग भी तो इस वनकी सीमा पर नहीं आसकते,फिर दूसरेकी तो बातही क्या है ? ॥ ३२ ॥ राजा सुग्रीवजी इन मधुके लालची मरणके निकट पहुँचे वानर लोगोंको दंड देकर बन्धु बान्धवोंके सहित मार डालेंगे ॥३३॥ विशेष करके

राजाके न माननेवाले यह दुरात्मा वानर अवश्यही मार डालनेके योग्य हैं, जब यह मारडाले जायँगे, तब हमारा यह सबेरेसे उत्पन्न हुआ क्रोध सार्थक हो जायगा॥३४॥ महाबलवान् दधिमुख मधुवनके रखवालोंसे ऐसा कह कर तत्क्षण उन नौकरचाकरोंके सहित आकाशमें कूद झटपट सुग्रीवजीके पास चला ॥ ३५ ॥ और सूर्यके पुत्र बुद्धिमान् सुग्रीवजी जहांपर विराजमान हो रहे थे एक पलक मारतेही वहां पर पहुँचे॥३६॥ श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी, व सुग्रीवजीके दर्शन कर एकसार भूमिको निहार दधिमुख आकाशसे पृथ्वीमें उतरा॥३७॥ मधुवनके रखवालोंका जमादार महावीर दधिमुख इस प्रकारसे उन सब वानरोंके साथ नीचे उतर कर॥३८॥ शिरसे हाथ जोडे दीनवदन किये उसी समय सुग्रीवजीके दोनों चरणोंपर गिरा॥३९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां द्विषष्टितमः सर्गः ॥६२॥

एवमुक्त्वादधिमुखोवनपालान्महाबलः॥ जगामसहसोत्पत्यवनपालैःसमन्वितः ॥३५॥ निमेषांतरमात्रेणसहिप्राप्तोवनालयः ॥ सहस्रांशुसुतो धीमान्सुग्रीवोयत्रवानरः ॥३६॥ रामंचलक्ष्मणंचैवदृष्ट्वासुग्रीवमेवच॥ समप्रतिष्ठांजगतीमाकाशान्निपपातह ॥३७॥ सनिपत्यमहावीरःसर्वैस्तैः परिवारितः ॥ हरिर्दधिमुखःपालैःपालानांपरमेश्वरः ॥३८॥ सदीनवदनोभूत्वाकृत्वाशिरसिचांजलिम् ॥ सुग्रीवस्याशुतौमूर्ध्नाचरणौप्रत्यपीडयत् ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे द्विषष्टितमः सर्गः ॥६२॥ ततोमूर्ध्नानिपतितंवानरंवानरर्षभः ॥ दृष्ट्वैवोद्विग्नहृदयोवाक्यमेतदुवाचह ॥ १ ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठकस्मात्त्वंपादयोःपतितोमम ॥ अभयंतेप्रदास्यामिसत्यमेवाभिधीयताम् ॥२॥ किसंभ्रमाद्धितंकृत्स्नंब्रूहियद्वक्तुमर्हसि॥ कच्चिन्मधुवनेस्वस्तिश्रोतुमिच्छामिवानर ॥३॥ ससमाश्वासितस्तेनसुग्रीवेणमहात्मना॥ उत्थायसमहाप्राज्ञोवाक्यंदधिमुखोब्रवीत् ॥४॥ नैवर्क्षंजरसाराजन्नत्वयानचवालिना ॥ वनंनिसृष्टपूर्वंतेनाशितंतत्तुवानरैः ॥ ५ ॥

दधिमुखको शिर झुकाये चरणोंपर पडे हुये देखकर वानरराज सुग्रीवजी उत्कंठितचित्त होकर कहने लगे ॥ १ ॥ उठो ! उठो ! आप किस कारणसे हमारे चरणोंमें गिरे ? सत्य २ कहिये हम आपको अभय देते हैं ॥२॥ आप किसके भयसे भीत होकरयहां पर आये हैं ? जिसका अनुष्ठान करनेसे सब प्रकारसे मंगल होनेकी सम्भावना है; आप उसकाही वर्णन कीजिये। हे वानरप्रधान ! मधुवनपर तो किसी प्रकारकी विपद नहीं आई ? सो सब वृत्तान्त सुननेकी हमारी इच्छा होती है ॥३॥ महात्मा सुग्रीवजीने जब इस प्रकारसे धीरज बँधाया तब महाप्राज्ञ दधिमुख उनके चरणोंपरसे उठ कर बोला ॥ ४ ॥ हे राजन् ! आपने यावालीने या ऋक्षराजने पहले जिस वनको कभी किसीको इच्छानुसार भोग करने नहीं दिया हनुमान् इत्यादि वानरोंने उसही मधुवनको एक बारही नष्ट कर डाला ॥५॥

हमने इन समस्त वनचारियोंके साथ उनको निवारण किया, परन्तु उन वानरोंने हमारा निरादर करके इच्छानुसार फल खाये और मधुपान किये ॥ ६ ॥ हे देव ! जब वह उस मधुवनका नाश करने लगे तब इन समस्त वनपालोंने इनको रोका था परन्तु उन्होंने कुछ कहा न मानकर अपनी इच्छानुसार सब कुछ खाया पिया ॥७॥ उन लोगोंने हम सबका निरादर कर मनमाने फल खाये, मधु पिये; बचे बचाये फल और मधुको फेंका, फिर निवारण करनेपर भ्रुकुटी टेढी कर दिखाई ॥ ८ ॥ जब इसप्रकारसे अपमान हुआ तो यह सब अत्यन्त क्रोधित हुए और उन वानरश्रेष्ठोंने भी क्रोध करके इन्हें रोकामारा, पीटा व यथोचित अपमान किया ॥ ९ ॥ तदनन्तर महाक्रोध कर झकझोर उन वानरवीरोंने इन दीनोंको उपवनसे निकाल कर पीछेसे लाल नेत्र दिखाय धमकाया ॥ १० ॥ और किसीको चनपटे लगाये, किसी २ को जांघोंसे मारा व अनेकोंको उठाय आकाशमें फेंक दिया ॥ ११ ॥ आप सबके स्वामीके रहते हुए भी

न्यवारय महसर्वान्सहैभिर्वनचारिभिः ॥ अचिंतयित्वामांहृष्टाभक्षयंतिपिबंतिच ॥ ६ ॥ एभिःप्रधर्षणायांचवारितंवनपालकैः ॥ मामप्यचिंतयन्देवभक्षयंतिवनौकसः ॥ ७ ॥ शिष्टमत्रापविध्यंतिभक्षयंतितथापरैः ॥ निवार्यमाणास्तेसर्वेभ्रुकुटिंदर्शयंतिहि ॥ ८ ॥ इमेहिसंरब्धतरास्तदातैःसंप्रधर्षिताः ॥ निवार्यंतेवनात्तस्मात्क्रुद्धैर्वानरपुंगवैः ॥ ९ ॥ ततस्तैर्बहुभिर्वीरैर्वानरैर्वानरर्षभाः ॥ संरक्तनयनैःक्रोधाद्धरयःसंप्रधर्षिताः ॥ १० ॥ पाणिभिर्निहताःकेचित्केचिज्जानुभिराहताः ॥ प्रकृष्टाश्चतदाकामंदेवमार्गंचदर्शिताः ॥११॥ एवमेतेहताःशूरास्त्वयितिष्ठतिभर्तरि ॥ कृत्स्नंमधुवनंचैवप्रकामंतैश्चभक्ष्यते ॥ १२ ॥ एवंविज्ञाप्यमानंतंसुग्रीवंवानरर्षभम् ॥ अपृच्छत्तंमहाप्राज्ञोलक्ष्मणःपरवीरहा ॥ १३ ॥ किमयंवानरोराजन्वनपःप्रत्युपस्थितः ॥ किंचार्थमभिनिर्दिश्यदुःखितोवाक्यमब्रवीत् ॥ १४ ॥ एवमुक्तस्तुसुग्रीवोलक्ष्मणेनमहात्मना ॥ लक्ष्मणंप्रत्युवाचेदंवाक्यंवाक्यविशारदः ॥ १५ ॥ आर्यलक्ष्मणसंप्राहवीरोदधिमुखःकपिः ॥ अंगदप्रमुखैर्वीरैर्भक्षितंमधुवानरैः ॥ १६ ॥ नैषामकृतकार्याणामीदृशःस्याद्व्यतिक्रमः ॥ वनंयदभिपन्नास्तेसाधितंकर्मतद्ध्रुवम् ॥ १७ ॥

यह सब वीर इसप्रकारसे मारे पीटे गये हैं और वह समस्त वानर भी मधुवनमें मनमाना खाय पी रहे हैं॥ १२ ॥ दधिमुख वानर सुग्रीवजीके निकट इसप्रकारसे समस्त वृत्तान्त वर्णन कर रहे थे कि इतनेमें परवीरघाती प्राज्ञ लक्ष्मणजी सुग्रीवजीसे बूझते हुए ॥ १३ ॥ हे राजन् ! यह वनपाल वानर किस कारणसे तुम्हारे निकट आया है और किस प्रयोजनको दुःखित भावसे यह निवेदन कर रहा है॥१४॥ जब महात्मा लक्ष्मणजीने इस प्रकारसे बचन कह कर सुग्रीवजीसे बूझा तो वाक्यविशारद सुग्रीवजी उनको उत्तर देते हुए ॥१५॥ हे आर्य ! वानरवीर दधिमुखने हमसे यह कहाकि अंगदादि महाबलवान् वानरलोगोंने मधुवनके फल खाय २ वहांका मधु पी डाला॥१६॥सो ऐसा करनेसे जान पडता है कि वह लोग कार्य कर आये, कार्य सिद्ध न होनेपर कदापि वहऐसा व्यतिक्रम न करते जब

कि, वह लोग वनके फल मूल खाय मधु पी रहे हैं तब निश्चयही उन्होंने कार्य सिद्ध कर लिया ॥१७॥ और इसीलिये इस बलशाली दधिमुखका निरादर करके उन लोगोंने रक्षकोंके ऊपर जांघोंका प्रहार किया. जब कि, लोग उन्हें रोकते थे ॥ १८ ॥ यह बलवान् दधिमुख नाम वानर मधुवनके व हमारे स्वामी हैं, हमने स्वयं इनको वहां स्थापित किया है. और किसीने नहीं बरन् हनुमान्जीने ही देवी जानकीजीको देखा है॥१९॥इस बातमें कोईभी संदेह नहीं है। कारण कि हनुमान्जीके सिवाय और कोईभी इस कार्यमें कारण नहीं होसकता, क्योंकि कार्यकी सिद्धि और बुद्धि हनुमान्जीमेंही है॥२०॥व्यवसाय, वीर्य और पंडिताई यह सबही गुण एक वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीमेंही हैं. उसपर जिस समाजके प्रेरक जाम्बवान् व अंगदजी हैं ॥ २१ ॥ और अधिष्ठाता हनुमान्जी वहां पर किसी कार्यका विपरीत आचरण नहीं हो सकता, इसी कारण अंगदादि वीरोंने हर्षित होकर मधुवनका विध्वंस किया ॥२२॥ हम जानते हैं कि, दक्षिण दिशाको

वारयंतोभृशंप्राप्ताःपालाजानुभिराहताः ॥ तथानगणितश्चायंकपिर्दधिमुखोबली ॥१८॥ पतिर्ममवनस्यायमस्माभिःस्थापितःस्वयम् ॥ दृष्टा देवीनसंदेहोनचान्येनहनूमता॥१९॥ नह्यन्यःसाधनेहेतुःकर्मणोस्यहनूमतः ॥ कार्यसिद्धिर्हनुमतिमतिश्चहरिपुंगवे ॥ २० ॥ व्यवसायश्चवीर्यं चश्रुतंचापिप्रतिष्ठितम् ॥ जांबवान्यत्रनेतास्यादंगदश्चमहाबलः ॥ २१ ॥ हनूमांश्चाप्यधिष्ठातानतत्रगतिरन्यथा ॥ अङ्गदप्रमुखैर्वीरैर्हतंमधु वनंकिल ॥ २२ ॥ विचित्यदक्षिणामाशामागतैर्हरिपुंगवैः ॥ आगतैश्चप्रहृष्टंतद्यथामधुवनंहितैः ॥२३॥ धर्षितंवचनंकृत्स्नमुपयुक्तंतुवानरैः ॥ पातितावनपालास्तेतदाजानुभिराहताः ॥ २४ ॥ एतदर्थमयंप्राप्तोवक्तुंमधुरवागिह ॥ नाम्नादधिमुखोनामहरिःप्रख्यातविक्रमः ॥ २५ ॥ दृष्टासीतामहाबाहोसौमित्रेपश्यतत्त्वतः ॥ अभिगम्ययथासर्वेपिबंतिमधुवानराः ॥ २६ ॥ नचाप्यदृष्ट्वावैदेहींविश्रुताः पुरुषर्षभ ॥ वनंदत्तवरं दिव्यंधर्षयेयुर्वनौकसः ॥ २७ ॥ ततःप्रहृष्टोधर्मात्मालक्ष्मणःसहराघवः ॥ श्रुत्वाकर्णसुखांवाणींसुग्रीववदनाच्च्युताम् ॥ २८ ॥

जो वानरश्रेष्ठ गये थे उन्होंने ही उस दिशाको खोज जानकीजीका खोज लगाय प्रसन्नतामें उस वनके फलादि खाय उसको विध्वंस किया ॥२३॥ उन वानरोंने समस्त वनका विनाश किया, फल मधु खा पीकर वनके रखवालोंको लातोंके आघातोंसे मारडाला ॥ २४ ॥ दधिमुखनामक प्रख्यात पराक्रम मधुरभाषी यह वानर यही वृत्तान्त कहनेके अर्थ हमारे पास आया है॥२५॥हे महाबाहु सुमित्रा-नंदन! जब कि उन लोगोंने आतेही मधुपान करना आरंभ किया है तब निश्च यही यह वानर सीताजीका पता लगा आये, सो वह अतिशय यशके भागी हैं॥ ॥ २६ ॥ इस लिये बिना सीताजीके देखे वह लोग देवतासे प्राप्त हमारा, यह दिव्य मधुवन कभी नहीं उजाडते ॥ २७ ॥ परमयशस्वी धर्मात्मा राम; लक्ष्मणजी सुग्रीवजीके मुखसे निकले हुए यह शुभकारी वचन सुन बहुत प्रसन्न

और ॥ २८ ॥ हर्षित हुए और वारंवार प्रसन्नचित्त हुए, दधिमुखके वचन सुन हर्षित हो सुग्रीवजी ॥२९॥ दधिमुख वनपालसे फिर बोले कि, हम सन्तुष्ट हैं जो इतना बडा कार्य करके उन्होंने मधुवनको उजाडकर उसके फल खाये व मधु पिये ॥३०॥ इससे उन कार्य किये हुए वानरलोगोंका किया हुआ वनका उजाडना. मारना पीटना भक्षण पान और अपमान भी क्षमा करना पडेगा । इस लिये आप शीघ्र वहां जायकर मधुवनकी रक्षा करो और हनुमानादि समस्तही वानर लोगोंको अति शीघ्र हमारे पास भेज दो ॥३१॥ हम श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीके साथ मिलकर उनसे यह वृत्तान्त स्वयंही बूझेंगे कि उन लोगोंने जानकीजीके देखनेका यत्न किया. इन सब बातोंके सुननेकी हमें बहुत इच्छा हुई है ॥३२॥ श्रीरामचंद्रजी व लक्ष्मणजी यह वार्त्ता सुन कर अतिशय पुलकित हुए

प्राहृष्यतभृशंरामोलक्ष्मणश्चमहायशाः ॥ श्रुत्वादधिमुखस्यैवंसुग्रीवस्तुप्रहृष्यच ॥२९॥ वनपालंपुनर्वाक्यंसुग्रीवःप्रत्यभाषत ॥ प्रीतोस्मिसोहंयद्भुक्तंवनंतैःकृतकर्मभिः ॥३०॥ धर्षितंमर्षणीयंचचेष्टितंकृतकर्मणाम् ॥ गच्छशीघ्रंमधुवनंसंरक्षस्वत्वमेवहि ॥ शीघ्रंप्रेषयसर्वांस्तान्हनूमत्प्रमुखान्कपीन् ॥३१॥ इच्छामिशीघ्रंहनुमत्प्रधानाञ्छाखामृगांस्तान्मृगराजदर्पान् ॥ प्रष्टुंकृतार्थान्सहराघवाभ्यांश्रोतुंचसीताधिगमेप्रयत्नम् ॥३२॥ प्रीतिस्फीताक्षौसंप्रहृष्टौकुमारौदृष्ट्वासिद्धार्थौवानराणांचराजा ॥ अंगैःप्रहृष्टैःकार्यसिद्धिंविदित्वाबाह्वोरासन्नामतिमात्रंननन्द ॥ ३३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० सुंदरकांडे त्रिषष्टितमः सर्गः ॥६३॥ ग्रीवेणैवमुक्तस्तुहृष्टोदधिमुखःकपिः ॥ राघवंलक्ष्मणंचैवसुग्रीवंचाभ्यवादयत् ॥१॥ सप्रणम्यचसुग्रीवंराघवौचमहाबलौ ॥ वानरैःसहितःशूरैर्दिवमेवोत्पपातह ॥२॥ सतथैवागतःपूर्वंतथैवत्वरितंगतः ॥ निपत्यगगनाद्भूमौतद्वनंप्रविवेशह ॥ ३ ॥ सप्रविष्टोमधुवनंददर्शहरियूथपान् ॥ विमदानुद्धतान्सर्वान्मेहमानान्मधूदकम् ॥ ४ ॥

और प्रीतिके मारे उनके दोनों नेत्र फडकने लगे और इसी समय वानरराज सुग्रीवजीकेभी सर्वाङ्गमें रोमाञ्च हो आया, इन शुभ लक्षणोंको देख कार्यकी सिद्धि विचार सुग्रीवजी अति पुलकित हुए ❀ ॥ ३३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां त्रिषष्टितमः ॥ ६३ ॥ सुग्रीवजीके वचन सुन दधिमुखने हर्षितहो श्रीरामचंद्रजी और सुग्रीवजीको प्रणाम किया ॥ १ ॥ इस प्रकार सुग्रीवजी तथा रामलक्ष्मणजीको प्रणाम कर उन समस्त शूरतासम्पन्न वानरोंके साथ आकाशमार्गको उछला ॥ २ ॥ वह जिस मार्गसे होकर आया था, उसी मार्गमें शीघ्रतासे गमन करके आकाश मार्गसे पृथ्वी पर कूदकर मधुवनमें प्रवेश करता हुआ ॥ ३ ॥ वहां प्रवेश करके उसने देखा कि वह उद्धत समस्त वानर यूथपति मधुका परिणाम भूत मलमूत्र करते हुए हर्षित

❀ दोहा ॥ सुनत आगमन कपिनको, रघुपति करुणा ऐन ॥ मन प्रसन्न तनु पुलक हो, भरि आये जल नैन ॥

चित्तसे समय बिताय रहेथे ॥ ४ ॥ वीर दधिमुख उन वानरोंके निकट जाय शिरसे हाथ जोडकर हर्षित चित्तसे यह मधुर वचन अंगदजीसे बोला ॥५॥ हे सौम्य ! इन वनपाल वानरलोगोंने न जानकर रोषमें भर आप लोगोंको रोका है,सो इस रोकनेसे आप क्रोध न कीजिये ॥६॥ आप बहुत दूरसे आयकर इस समय थक गये होंगे; विशेष करके आप हमारे युवराज हैं और इस वनके स्वामी हैं, इसलिये आनंद सहित अपना मधु पियो व फल खाओ ॥ ७ ॥ हे महाबलवान् ! हमारा यह अज्ञानसे किया हुआ रोष आपको क्षमा करना पडेगा। आपके पिता वाली जिस प्रकार पहले वानरोंके राजा थे ॥८॥ इस समय वैसेही सुग्रीवजी व आप वानरोंके स्वामी हैं। हे वानरश्रेष्ठ ! और कोई वानरोंका राजा नहीं है,हमने आपके चचा सुग्रीवजीके निकट गमन करके ॥ ९ ॥ आप

सतानुपागमद्वीरोबद्धाकरपुटांजलिम् ॥ उवाचवचनंश्लक्ष्णमिदंहृष्टवदङ्गदम् ॥ ५ ॥ सौम्यरोषोनकर्तव्योयदेभिःपरिवारणम् ॥ अज्ञानाद्रक्षिभिःक्रोधाद्भवंतःप्रतिषेधिताः ॥ ६ ॥ श्रांतोदूरादनुप्राप्तोभक्षयस्वस्वकंमधु ॥ युवराजस्त्वमीशश्चवनस्यास्यमहाबल ॥ ७ ॥ मौर्ख्यात्पूर्वंकृतोरोषस्तद्भवान्क्षंतुमर्हति ॥ यथैवहिपितातेभूत्पूर्वंहरिगणेश्वरः ॥ ८॥ तथात्वमपिसुग्रीवोनान्यस्तुहरिसत्तम ॥ आख्यातंहिमयागत्वापितृव्यस्यतवानघ ॥ ९ ॥ इहोपयानंसर्वेषामेतेषांवनचारिणाम् ॥ भवदागमनंश्रुत्वासहैभिर्वनचारिभिः ॥ १० ॥ प्रहृष्टोनतुरुष्टोसौवनंश्रुत्वाप्रधर्षितम् ॥ प्रहृष्टोमांपितृव्यस्तेसुग्रीवोवानरेश्वरः ॥ ११ ॥ शीघ्रंप्रेषयसर्वांस्तानितिहोवाचपार्थिवः ॥ श्रुत्वादधिमुखस्यैतद्वचनंश्लक्ष्णमंगदः ॥ १२ ॥ अब्रवीत्तान्हरिश्रेष्ठोवाक्यंवाक्यविशारदः ॥ शंकेश्रुतोयंवृत्तांतोरामेणहरियूथपाः ॥१३॥ अयंचहर्षादाख्यातितेनजानामिहेतुना ॥ तत्क्षमंनेहनःस्थातुंकृतेकार्येपरंतपाः ॥ १४ ॥

सबके आनेका संवाद निवेदन किया कि मधुवनमें सब अंगदादि आगये सो इन सब वानरोंके साथ आपका आना श्रवण कर ॥ १० ॥ मधुवनके उजाड होनेके सुनकर कुछ कोप न करते हुए; और बहुत प्रसन्न हो हर्षित चित्तसे तुम्हारे चचा बानरराज सुग्रीवजीने हमसे कहा ॥ ११ ॥ कि, बडी शीघ्रतासे उन सब वानरोंको यहांपर भेज दो। अंगदजी दधिमुखके यह मधुर वचन सुनकर ॥१२॥ सब वीर वानरोंको पुकार कर यह वचन बोले कारण कि वचन बोलनेमें बडे चतुर थे अंगदजी बोले हे वानरयूथपगण ! हमको शंका होती है कि; यह वृत्तान्त श्रीरामचन्द्रजीने सुन लिया है ॥ १३ ॥ जब कि; दधिमुख बडे हर्षसे यह वचन कह रहा है; तब हमने जानाकि; यह वृत्तान्त श्रीरामचन्द्रजीने सुन लिया है इसकारण अब हमारा यहां पर अधिक देर रहना उचित नहीं है॥ १४ ॥

देखो ! आप सबने जितना चाहा उतना मधु भी पान कर लिया है सो अब तो कुछ बचाभी नहीं है, इस कारण इस समय सुग्रीवजीके निकट जाना ही कर्त्तव्य है अब यहां रहना ठीक नहीं ॥ १५ ॥ आप सब वानर श्रेष्ठ मिल कर जैसा हमसे कहेंगे वैसाही करेंगे । कारण कि, कार्य करनेके विषयमें हम आप लोगोंके आधीन हैं ॥ १६ ॥ यद्यपि हम युवराज हैं तथापि हममें इतनी सामर्थ्य नहीं है कि आपलोगोंको आज्ञादेसकें कारण कि; आप सब कार्य किये हुए हैं सो आपलोगोंको बलसे पीडा पहुँचाना उचित नहीं है ॥१७॥ वनवासी वानर गण युवराज अंगदजीके यह वचन सुन कर हर्षितचित्तसे उत्तर देते हुए ॥१८॥ हेराजन् ! प्रभु होकर कौन पुरुष ऐसे दीन वचन कह सकता है। बरन् प्रभुतो ऐश्व र्यके मदसे मत्त होकर यह कहा करता है कि, जो कुछ हैं सो हम हैं ॥१९॥

पीत्वामधुयथाकामंविक्रांतावनचारिणः ॥ किंशेषंगमनंतत्रसुग्रीवोयत्रवानरः ॥१५॥ सर्वेयथामांवक्ष्यंतिसमेत्यहरिपुंगवाः ॥ तथास्मिकर्ता कर्तव्येभवद्भिःपरवानहम् ॥१६॥ नाज्ञापयितुमीशोहंयुवराजोस्मियद्यपि ॥ अयुक्तंकृतकर्माणोयूयंधर्षयितुंबलात् ॥१७॥ ब्रुवतश्चांगदस्यैवं श्रुत्वावचनमुत्तमम् ॥ प्रहृष्टमनसोवाक्यमिदमूचुर्वनौकसः ॥ १८ ॥ एवंवक्ष्यतिकोराजन्प्रभुःसन्वानरर्षभः ॥ ऐश्वर्यमदमत्तोहिसर्वोहमिति मन्यते ॥ १९ ॥ तवचेदंसुसदृशंवाक्यंनान्यस्यकस्यचित् ॥ सन्नतिर्हितवाख्यातिभविष्यच्छुभयोग्यताम् ॥ २० ॥ सर्वेवयमपिप्राप्तास्तत्र गंतुंकृतक्षणाः ॥ सयत्रहरिवीराणांसुग्रीवःपतिरव्ययः ॥ २१ ॥ त्वयाह्यनुक्तैर्हरिभिर्नैवशक्यंपदात्पदम् ॥ क्वचिद्गंतुंहरिश्रेष्ठब्रूमःसत्यमिदंतुते ॥ २२ ॥ एवंतुवदतांतेषामंगदःप्रत्यभाषत ॥ साधुगच्छामइत्युक्त्वाखमुत्पेतुर्महाबलाः ॥ २३ ॥ उत्पतन्तमनूत्पेतुःसर्वेतेहरियूथपाः ॥ कृत्वाकाशंनिराकाशंयंत्रोत्क्षिप्ताइवोपलाः ॥ २४ ॥

आपकेही मुखसे निकलकर ऐसे वचन शोभा पाते हैं और कोई ऐसे वचन कहनेके योग्य नहीं आप जिस प्रकारके अतिनम्र औ विनयी हैं सो जिससे आगेको आप अवश्यही अपने भाग्य की उन्नति देखेंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥२०॥ इस समय वानरवीरोंके राजा महात्मा सुग्रीवजी जहां विराजमान हैं वहां जानेके लिये हम सबही अत्यन्त उत्कंठित हो रहे हैं ॥२१॥ परन्तु आपके निकट हम सत्य हीसत्य कहते हैं कि, बिना आपकी आज्ञाके वानर लोग कहींको एकपगचलनेको भी सामर्थ्य नहीं रखते ॥ २२ ॥ जब उन वानरोंने ऐसा कहा तो अंगदजी उनको उत्तर देते हुए कि, बहुत अच्छा चलो हम सबही लोग यहांसे चलें यह कह महाबलवान् सब वानर आकाश को उछले ॥२३॥ अंगदादिवानरों को आकाशमें कूदते देख और दूसरे भी सब वानर कलसे फेंके हुए पत्थर के समान

आकाशमंडलको ढक कर उनके पीछे २ चले ॥ २४॥ इस प्रकार सब वानर अंगद व हनुमानजीको आगे कर अतिवेगसे सहसा आकाशमार्गमें चले ॥ २५॥ पवनसे चलायमान बादलोंके झुण्डके समान अतिघोर गर्जन करते २ वह सब वानर किष्कन्धाके निकट पहुँचे अंगदजीको आते देखकर वानरोंके राजा सुग्रीवजी ॥ २६ ॥ शोकसे संतप्तचित्त कमललोचन श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि, आपका मंगल हो आप सावधान हूजिये निःसंदेह देवी जानकीजीका पता लग गया ॥२७॥हे शुभदर्शन ! कारण कि,हमारा नियत किया समय बीत गया है,सो बिना देवी जानकीजीको देखे यह लोग कभी यहांपर नहीं आय सकते थे और अंगदजीके हर्षसहित शब्द करनेसे भली भाँति ज्ञात होता है॥२८॥ कि जो कार्य सिद्ध न होता तो वानरश्रेष्ठ युवराज महाबाहु अंगद कभी हमारे निकट नहीं आय सकते थे॥२९॥जो वानर लोग बिना कार्य सिद्ध किये ऐसे कार्यको करते तो अंगदजीका मन मलीन,भ्रान्त और उदास होता, इसमें कुछभी संदेह

अंगदंपुरतःकृत्वाहनूमंतंचवानरम् ॥ तेऽम्बरंसहसोत्पत्यवेगवंतःप्लवंगमाः ॥२५॥ विनदंतोमहानादंघनावातेरितायथा ॥ अंगदेसमनुप्राप्तेसुग्रीवोवानरेश्वरः ॥ २६ ॥ उवाचशोकसंतप्तंरामंकमललोचनम् ॥ समाश्वसिहिभद्रंतेदृष्टादेवीनसंशयः ॥ २७ ॥ नागंतुमिहशक्यंतैरतीतसमयैरिह ॥ अंगदस्यप्रहर्षाच्चजानामिशुभदर्शन ॥२८॥ नमत्सकाशमागच्छेत्कृत्येहिविनिपातिते ॥ युवराजोमहाबाहुःप्लवतामंगदोवरः ॥२९॥ यद्यप्यकृतकृत्यानामीदृशःस्यादुपक्रमः ॥ भवेत्तुदीनवदनोभ्रांतोविप्लुतमानसः ॥ ३० ॥ पितृपैतामहंचैतत्पूर्वकैरभिरक्षितम् ॥ नमेमधुवनंहन्याददृष्ट्वाजनकात्मजाम् ॥ ३१ ॥ कौशल्यासुप्रजारामसमाश्वसिहिसुव्रत ॥ दृष्टादेवीनसंदेहोनचान्येनहनूमता ॥ ३२ ॥ नह्यस्यकर्मणोहेतुःसाधनेतद्विधोभवेत् ॥ हनूमतीहसिद्धिश्चमतिश्चमतिसत्तम ॥३३॥ व्यवसायश्चशौर्यंचश्रुतंचापिप्रतिष्ठितम् ॥ जांबवान्यत्रनेतास्यादंगदश्चहरीश्वरः ॥ ३४ ॥ हनूमांश्चाप्यधिष्ठातानतत्रगतिरन्यथा ॥ माभूश्चिंतासमायुक्तःसंप्रत्यमितविक्रम ॥ ३५ ॥

नहीं ॥ ३० ॥ और अधिक करके जानकीजीको बिना देखे हमारे पुरुषाओंकरके रक्षित पिता पितामहादिकोंका प्राप्त यह मधुवन वह लोग कभी न उजाडते ॥३१॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! कौशल्याजी आपको उत्पन्न करके सत्पुत्रवती हुई हैं आप सावधान हूजिये,इसमें कोई संदेह नहीं हनुमानजी जानकीजीको देख आये ॥३२॥हनुमानजीनेही जानकीजीको देखा है और किसीने नहीं,हनुमानजीके समान दूसरा कोई ऐसा कार्य साधन करनेका हेतु नहीं हो सकता कारण कि,हनुमानजीमें ही बुद्धि व इस विषयकी सिद्धि है॥३३॥व्यवसाय शूरता और पंडिताई यह समस्त गुण हनुमानजीमें ही विराजमान हैं; उसपर भी जहाँ जाम्बवान् अंगद कार्यकी प्रेरणा करनेवाले॥३४॥और स्वयं हनुमानजी अधिष्ठाता उस कार्यके अन्यथा होनेकी किसी प्रकारकी संभावना नहीं है । हे अमितविक्रम ! इस

समय कुछ चिन्ता न कीजिये॥३५॥ देखिये वानर लोग गर्वित और उद्धत होकर यहां पर आये हैं, जो कार्य सिद्धि करके न आये होते तो यह लोग कभी इतना आडम्बर न करते ॥ ३६ ॥ मधुके पान करने और मधुवनके उजाड डालनेसे हमने जान लिया कि, यह लोग कार्यसिद्धि कर आये उसके पीछे राजासुग्रीवजीको आकाशमें आते हुए वानरगणोंका किलकिला शब्द सुनाई दिया ॥ ३७ ॥ वह वानरगण हनुमान्जीके कार्यसिद्धि कर आनेसे गर्वितहोकर चिल्लाहट कर रहे थे उससे ऐसा जान पडा कि, वह मानों कार्यकी सिद्धिका समाचार दे रहे हैं॥३८॥उन वानरोंका यह शब्द श्रवण करके वानरश्रेष्ठ सुग्रीवजीने हर्षितचित्त होकर अपनी पूँछ उठाकर घुमाई ॥३९ ॥ इस ओर वहसब वानर अंगद हनुमानजीको आगेकरके श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनकी अभिलाषासे आगमन करने लगे ॥ ४० ॥ उसके पश्चात् अंगदादि वीर वानरगण अत्यन्त हर्षित और गर्वित होकर सुग्रीव और श्रीरामचन्द्रजीके समीप आकाशसे उतरते

यदाहिहर्षितोदग्राःसंगताःकाननौकसः ॥ नैषामकृतकार्याणामीदृशःस्यादुपक्रमः ॥३६॥ वनभंगेनजानामिमधूनांभक्षणेनच ॥ ततःकिलकिलाशब्दंशुश्रावासन्नमंबरे ॥ ३७ ॥ हनूमत्कर्मदृप्तानांनदतांकाननौकसाम् ॥ किष्किंधामुपयातानांसिद्धिंकथयतामिव ३८ ॥ ततःश्रुत्वानिनादंतंकपीनांकपिसत्तमः ॥ आयतांचितलांगूलःसोभवद्धृष्टमानसः ॥३९॥ आजग्मुस्तेपिहरयोरामदर्शनकांक्षिणः ॥ अंगदंपुरतःकृत्वाहनूमंतंचवानरम् ॥ ४० ॥ तेऽङ्गदप्रमुखावीराःप्रहृष्टाश्चमदान्विताः ॥ निपेतुर्हरिराजस्यसमीपेराघवस्यच ॥ ४१ ॥ हनूमांश्चमहाबाहुःप्रणम्यशिरसाततः ॥ नियतामक्षतांदेवींराघवान्यवेदयत् ॥ ४२ ॥ दृष्टादेवीतिहनुमद्वदनादमृतोपमम् ॥ आकर्ण्यवचनंरामोहर्षमापसलक्ष्मणः ॥४३॥ निश्चितार्थंततस्तस्मिन्सुग्रीवंपवनात्मजे ॥ लक्ष्मणः प्रीतिमान्प्रीतोबहुमानादवैक्षत ॥ ४४ ॥ प्रीत्याचपरमोपेतोराघवःपरवीरहा ॥ बहुमानेनमहताहनूमंतमवैक्षत ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे चतुःषष्टितमः सर्गः ॥६४॥

ततः प्रस्रवणंशैलं तेगत्वाचित्रकाननम् ॥ प्रणम्यशिरसारामंलक्ष्मणंचमहाबलम् ॥ १ ॥

हुए ॥ ४१ ॥ उन वानरोंमे महाबाहु हनुमानजीने सबसे प्रथम शिर झुकाय प्रणाम कर श्रीरामचन्द्रजीसे निवेदन किया कि जानकीजी अपने स्वभावकी रक्षा करती कुशल सहित हैं ॥ ४२ ॥ हनुमान्जीके मुखसे "जानकीजीको हमने देखा" यह मधुर अमृतोपम वचन सुन कर श्रीरामलक्ष्मण दोनोंही राजकुमार परमहर्षित हुए ॥ ४३ ॥ तब पवनकुमार हनुमान्जीको निश्चितार्थ जान परमप्रसन्न होकरअधिक सम्मानके साथ सुग्रीवजीको लक्ष्मणजी देखने लगे ॥ ४४ ॥ परवीरघाती श्रीरामचन्द्रकी भी परमप्रीति व अतिआदर मानसे कपिश्रेष्ठ हनुमान्जीको देखने लगे ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चतुःषष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥ उसकेपीछे हनुमानादि वानरगण सबही विचित्र काननयुक्त प्रस्रवण पर्वतपर

आय महाबली श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीको प्रणाम ॥१॥ व सुग्रीवजीको प्रणाम कर युवराज अंगदजीको आगेकर सीताजीका वृत्तांत कहने लगे ॥२॥ यथा क्रमसे रावणके अंतःपुरमें सीताजीका रुद्ध होना, राक्षसियोंका उनको डराना धमकाना और श्रीरामचंद्रजीके प्रति सीताजीका अचल अनुराग और रावणने सीताजीके मारनेके लिये जो दो मासकी अवधि नियत की है ॥३॥ यह सब वृत्तांत उन वानरोंने श्रीरामचन्द्रजी के निकट निवेदन किया, वैदेहीजीकी कुशल सुनकर श्रीरामचंद्रजीने उत्तर दिया ॥४॥ हे वानरगण! देवी जानकीजी कहाँ हैं और वह देवी हमारे प्रति किस प्रकारका व्यवहार करती हैं? सो तुम समस्त विस्तारसहित हमसे वर्णन करो ॥ ५ ॥ वानर लोगोंने श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर सीताजीके वृत्तांत जनानेमें पंडित हनुमानजीकोइसविषयका ठीक २

युवराजंपुरस्कृत्यसुग्रीवमभिवाद्यच ॥ प्रवृत्तिमथसीतायाःप्रवक्तुमुपचक्रमे ॥ २ ॥ रावणांतःपुरेरोधंराक्षसीभिश्चतर्जनम् ॥ रामेसमनुरागंच यथाचनियमःकृतः ॥३॥ एतदाख्यायतेसर्वंहरयोरामसन्निधौ ॥ वैदेहीमक्षतांश्रुत्वारामस्तूत्तरमब्रवीत् ॥ ४ ॥ क्वसीतावर्ततेदेवीकथंचमयिव र्तते ॥ एतन्मेसर्वमाख्यातवैदेहींप्रतिवानराः ॥५॥ रामस्यगदितंश्रुत्वाहरयोरामसन्निधौ॥ चोदयंतिहनूमंतंसीतावृत्तांतकोविदम् ॥६॥ श्रुत्वा तुवचनंतेषांहनूमान्मारुतात्मजः ॥ प्रणम्यशिरसादेव्यैसीतायैतांदिशंप्रति ॥ ७ ॥ उवाचवाक्यंवाक्यज्ञःसीतायादर्शनंयथा ॥ तंमणिंकांचनंदि व्यंदीप्यमानंस्वतेजसा॥८॥ दत्त्वारामायहनुमांस्ततःप्रांजलिरब्रवीत् ॥ समुद्रंलंघयित्वाहंशतयोजनमायतम् ॥९॥ अगच्छंजनकींसीतांमार्ग माणोदिदृक्षया ॥ तत्रलंकेतिनगरीरावणस्यदुरात्मनः ॥ १० ॥ दक्षिणस्यसमुद्रस्यतीरेवसतिदक्षिणे ॥ तत्रसीतामयादृष्टारावणांतःपुरेसती ॥११॥ त्वयिसंन्यस्यजीवंतीरामारामगनोरथम् ॥ दृष्टामेराक्षसीमध्येतर्ज्यमानामुहुर्मुहुः ॥ १२ ॥

समाचार कहनेकेलिये कहा ॥६॥ वचन बोलनेमें चतुर पवनकुमार हनुमानजी शिरझुकाय सीतादेवी और उनकी अधिष्ठित दक्षिणदिशा दोनोंको प्रणाम करके ॥७॥ जिस प्रकार जानकीजीका दर्शन किया था उसको वर्णन करने लगे । उसके पीछे स्वयंही अपने तेजकी प्रभासे दीप्तिमान कांचनमंडित दिव्यमणि॥८॥ श्रीरामचंद्रजीके हाथमें समर्पण कर हाथ जोड कर कहने लगे । कि, हम शत-योजन विस्तारवाला समुद्र नाँघकर ॥ ९ ॥ जानकीजीको खोजते २ गमन करने लगे, वहांपर दुष्टात्मा रावणकी लंका नाम नगरी ॥ १० ॥ दक्षिणसमुद्रके किनारे पर बसती है वहाँ जायकर हमने उस रावणके अन्तःपुरमें देवी जान कीजीको देखा ॥ ११ ॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! वह जानकी आपमें ही चित्त लगाये प्राण धारे हुए हैं, राक्षसियें चारों ओरसे घेरकर उनको वारम्वार डरा

धमका रही हैं ॥ १२ ॥ हे श्रीराम ! प्रमदा बनके बीच कुरूपिणी राक्षसियेंही उनकी रक्षा करती हैं । उन जानकीजीने सदासे सुख भोग किया है, परन्तु इस समय वह आपके विरहमें दारुण दुःख पाय रही हैं ॥ १३ ॥ रावणके अन्तःपुरमें रोकी जाकर निशाचरियोंसे रक्षित हो एक वेणी धारे व्याकुल हो सदाही आपका ध्यान किया करती हैं ॥ १४ ॥ खुली पृथ्वीमें शयन करनेसे विवर्णांगी हो शरदऋतुके आगमनसे कमलिनीके समान जानकीजी होगई हैं, रावणकी ओर उनकी कुछ भी प्रवृत्ति या मन नहीं लगा है, वह आपमेंही चित्त लगाये मरणमें बनाय निश्चय किये हुए हैं ॥ १५ ॥ हे पापरहित महाराज श्रीरामचन्द्रजी ! इस प्रकार किसी भांति जानकीजीको हमने खोज पाया, तत्पश्चात् हमने शनैः इक्ष्वाकुवंशियोंका वर्णन किय ॥ १६ ॥ हे नरशार्दूल ! तब किसी प्रकारसे हमने उनको विश्वास दिलाया,उसके पीछे देवी जानकीजीसे वार्त्तालाप होनेपर यहांका समाचार उनसे कहा गया ॥१७॥ इसी समय हमारे

राक्षसीभिर्विरूपाभीरक्षिताप्रमदावने ॥ दुःखमापद्यतेदेवीत्वयावीरसुखोचिता ॥ १३ ॥ रावणांतःपुरेरुद्धाराक्षसीभिःसुरक्षिता ॥ एकवेणीधरादीनात्वयिचिंतापरायणा ॥ १४ ॥ अधःशय्याविवर्णांगीप द्मिनीवहिमागमे ॥ रावणाद्विनिवृत्तार्थामर्तव्यकृतनिश्चया ॥ १५ ॥ देवीकथंचित्काकुत्स्थत्वन्मनामार्गितामया ॥ इक्ष्वाकुवंशविख्यातिंशनैःकीर्तयतानघ ॥ १६ ॥ सामयानरशार्दूलशनैर्विश्वासितातदा ॥ ततःसंभाषितादेवीसर्वमर्थंचदर्शिता ॥ १७ ॥ रामसुग्रीवसख्यंचश्रुत्वाहर्षमुपागता ॥ नियतःसमुदाचारोभक्तिश्चास्याःसदात्वयि ॥ १८ ॥ एवंमयामहाभागदृष्टाजनकनंदिनी ॥ उग्रेणतपसायुक्तात्वद्भक्त्यापुरुर्षभ ॥ १९ ॥ अभिज्ञानंचमेदत्तंयथावृत्तंतवांतिके ॥ चित्रकूटेमहाप्राज्ञवायसंप्रतिराघव ॥ २० ॥ विज्ञाप्यःपुनरप्येषरामोवायुसुतत्वया ॥ अखिलेनयथादृष्टमितिमामाहजानकी ॥ २१ ॥ अयंचास्मैप्रदातव्योयत्नात्सुपरिरक्षितः ॥ ब्रुवतावचनान्येवसुग्रीवस्योपशृण्वतः ॥ २२ ॥

मुखसे आपकी व सुग्रीवजीकी परस्पर मित्रता होना सुन जानकीजी अत्यन्त प्रसन्न हुई आपमें सदा उनकी एकान्तिक भक्ति है,व उनका पतिव्रत भी अचल है ॥१८॥ हे महाभाग ! इस प्रकारकी अवस्थामें हमने जानकीजीको देखा है;वह जिस प्रकार कठोर तप करनेवाली हैं तैसेही आपके प्रति अतिशय भक्तिमती हैं ॥१९॥ उन्होंने हमको चिह्नरूप यह मणि देकर कहा कि, तुम चित्रकूटमें हुई उस काककी घटना ॥२०॥ कह कर व हे पवनकुमार! यहां पर भी जो कुछ तुमने देखा है वह समस्तही श्रीरामचन्द्रजीसे कहना व जिस प्रकार हमको देखा है वह भी उन प्राणनाथसे कहना, ऐसा श्रीजानकीजीने हमसे कहा ॥ २१ ॥ और यह भी कहाकि,इस मणिकी रक्षा हम बडे यत्नसे करती रहीं इस प्रकारसे वचन सुग्रीवजीके आगेहनुमा नूजीने श्रीरामचन्द्रजीसे कहे ॥२२॥

जानकीजीने यह भी कहा है कि श्रीरामचन्द्रजीको यह कांचनमणि देकर उनसे कहना कि हमने इसकीरक्षा बडे यत्नसे की और आपने हमारे माथेपर जो मैनशिलका तिलक कर दिया था उसकी भी याद करनेको आपसे कहा है ॥ २३॥ उन्होंने यह भी कहा है कि, यह जो मणि हनुमान्‌के हाथ भेजतीहैं तो जब हम बहुतही कष्ट पाती थीं तब इस मणिकाही आपका स्वरूप जानकर अतुल आनंद पाती थीं. हे अनघ ! उस जानकीजीने फिर भी आपसे यह कहाहै ॥२४॥ कि,हे दशरथ कुमार ! हम राक्षसोंके वशमें पडी हैं हम केवल एक मासतक और जियेंगी,परन्तु एक मासके बीत जाने पर हम किसी प्रकार न जीसकेंगी॥ २५॥ मृगीके समान प्रफुल्ल नेत्रवाली रावणके अःतपुरमें रुकी हुई उन धर्मचारिणी दुर्बल गात्रवाली जानकीजीने हमसे यह कहाहै ॥२६॥ हे राघव ! जो हामारा जाना

एषचूडामणिःश्रीमान्मयातेयत्नरक्षितः ॥ मनःशिलायास्तिलकंतत्स्मरस्वेतिचाब्रवीत् ॥ २३ ॥ एषनिर्यातितःश्रीमान्मयातेवारिसंभवः ॥ एनंदृष्ट्वाप्रमोदिष्येव्यसनेत्वामिवानघ ॥ २४ ॥ जीवितंधारयिष्यामिमासंदशरथात्मज ॥ ऊर्ध्वंमासान्नजीवेयंरक्षसांवशमागता ॥ २५ ॥ इतिमामब्रवीत्सीताकृशांगीधर्मचारिणी॥ रावणांतःपुरेरुद्धामृगीवोत्फुल्ललोचना ॥ २६ ॥ एतदेवमयाख्यातंसर्वंराघवयद्यथा ॥ सर्वथासागरजलेसंतारःप्रविधीयताम् ॥ २७ ॥ तौजाताश्वासौराजपुत्रौविदित्वातच्चाभिज्ञानंराघवायप्रदाय ॥ देव्याचाख्यातंसर्वमेवानुपूर्व्याद्वाचासंपूर्णंवायुपुत्रःशशंसः ॥ २८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच० सा० सुंदरकांडे पंचषष्टितमः सर्गः ॥६५॥ एवमुक्तोहनुमताराघवोदशरथात्मजः ॥ तंमणिंहृदयेकृत्वारुरोदसहलक्ष्मणः ॥ १ ॥ तुदृष्ट्वामणिश्रेष्ठंराघवः शोककर्शितः ॥ नेत्राभ्यामश्रुपूर्णाभ्यांसुग्रीवमिदमब्रवीत् ॥ २ ॥ यथैवधेनुःस्रवतिस्नेहाद्वत्सस्यवत्सला ॥ तथाममापिहृदयंमणिश्रेष्ठस्यदर्शनात् ॥ ३ ॥

हुआ था वह समस्तही हमने आपसे कहा,इस समय सब प्रकारसे आपको समुद्र उतरनेका उपाय करना चाहिये * ॥ २७ ॥ राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी दोनोंको प्रसन्न हुआ जान पवनकुमार हनुमान्‌जी इसप्रकार चिह्न चूडामणि श्रीरामचन्द्रजीके हाथमें देकर आदिसे अंततक जानकीजी का सब समाचार वर्णन करते हुए ॥२८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आ०सुन्दरकांडे भाषायां पंचषष्टितमः सर्गः॥६५॥जब हनुमान्‌जीने इस प्रकारसे कहा तब दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी उस मणिको हृदयसे लगाय कर लक्ष्मणजीके सहित रोदन करने लगे॥१॥ उस अत्यन्त श्रेष्ठ मणिको देखकर श्रीरामचन्द्रजी शोकसे व्याकुल हो नेत्रोंमें आँसू भर सुग्रीवजीसे बोले ॥ २ ॥ बछडोंको देख कर स्नेहके मारे पुत्रवत्सला गऊके थनोंमेंसे जैसे दूध चूने लगता है, वैसेही इस श्रेष्ठ मणिको देख कर हमारा मन

* चौ० ॥ सीताकी अति विपति विशाला ॥ विनहिं कहे भल दीन दयाला ॥ दोहा ॥ निमिष २ करुणायतन, जाहि कल्प सम बीति ॥ वेगि चलिय प्रभु आनिये, भुजबल खल दल जीति ॥ १ ॥

इस समय पिघल गया है हमारे॥३॥ श्वशुर राजा जनकजीने विवाहके समय सीताजीकी माता केहाथसे लेकर दशरथजीके हाथमें देकर सीताजीको यह मणि रत्न दान किया था, और इस समय जिससे कि यह मणि अति शोभायमान हो वैसेही सीताजीने इसको अपने चूडेपर बांध लिया था ॥ ४ ॥ बुद्धिमान् इन्द्रजी ने यज्ञमें प्रसन्न होकर समुद्रसे निकली हुई देव पूजित यह मणि जनकजीको दी थी ॥५॥ हे सौम्य इस समय इस मणिको देख कर हमारे पिता का और प्रभु जनकजी का वह रूप हमको याद आता है ॥ ६ ॥ यह मणि हमारी उन प्रियतमाजीके मस्तकही पर शोभायमान होता था, आज इस मणिको देख कर हमको ऐसा मालूम पडताहै कि, मानो हमें प्यारी ही मिल गई ॥ ७ ॥ हे सौम्य ! उन विदेह कुमारी सीताजीने हमारे लिये क्या कहा है ? वह वृत्तान्त तुम बार २ वर्णन करो उन जानकीजीने मूर्च्छित पुरुषके ऊपर जल छिडकनेसे जीवदान करनेके समान वचन रूप वारिसे हमको जिलाया है

मणिरत्नमिदंदत्तंवैदेह्याःश्वशुरेणमे ॥ वधूकालेयथाबद्धमधिकंमूर्ध्निशोभते ॥४॥ अयंहिजलसंभूतोमणिःप्रवरपूजितः ॥ यज्ञेपरमतुष्टेनदत्तः शक्रेणधीमता ॥५॥ इमंदृष्ट्वामणिश्रेष्ठंतथातस्यदर्शनम् ॥ अद्यास्म्यवगतःसौम्यवैदेहस्यतथाविभोः ॥६॥ अयंहिशोभतेतस्याःप्रियायामूर्ध्नि मेमणिः ॥ अद्यास्यदर्शनेनाहंप्राप्तांतामिवचिंतये ॥ ७ ॥ किमाहसीतावैदेहीब्रूहिसौम्यपुनःपुनः ॥ परासुमिवतोयेनसिंचंतीवाक्यवारिणा ॥ ८ ॥ इतस्तुकिंदुःखतरंयमिमंवारिसंभवम् ॥ मणिंपश्यमिसौमित्रेवैदेहीमागतांविना ॥ ९ ॥ चिरंजीवतिवैदेहीयदिमासंधरिष्यति ॥ क्षणंवीरनजीवेयंविनातामसितेक्षणाम् ॥१०॥ नयममपितंदेशंयत्रदृष्टाममप्रिया ॥ नतिष्ठेयंक्षणमपिप्रवृत्तिमुपलभ्यच ॥११॥ कथंसाममसुश्रोणीभीरुभीरुःसतीतदा ॥ भयावहानांघोराणांमध्येतिष्ठतिरक्षसाम् ॥ १२ ॥ शारदस्तिमिरोन्मुक्तोनूनंचंद्रइवांबुदैः ॥ आवृतोवदनंतस्या नविराजतिसांप्रतम् ॥ १३ ॥

॥ ८ ॥ हे लक्ष्मण ! जब कि, बिना जानकीजीके केवल हमकोही समुद्रसे उत्पन्न हुई मणि देखनी पडी, तब इससे अधिक और क्या दुःख हो सकता है ? ॥ ९ ॥ हे वीर ! जानकीजी यदि और एक मासतक जियेगी तो समझेंगे कि, उन्होंने बहुत समय तक प्राण धारण किया । हे वीर ! परन्तु हम अब उन इन्दीवर नयना जानकीजीके विरहमें क्षण भर भी प्राण धारण करनेको समर्थ नहीं हैं ॥१०॥ हे हनुमान् ! हमारी प्राण प्रिया सीताजीको जिस स्थानमें तुमने देखा है, हमको भी उसी स्थानमें लेचलो जब कि, समाचार मिल गया तब तो क्षणभर भी टिकनेको अब हमें सामर्थ्य नहीं है ॥ ११ ॥ हमारी वह सती श्रेष्ठ नितम्बोंवाली जानकीजी अत्यन्त भीत होकर भयंकर राक्षसियोंमें सदा किस प्रकारसे रहती हैं ?॥१२॥अंधकारसे छूटा हुआ शरद् ऋतुका चन्द्रमा मेघसे

ढककर जिस प्रकार प्रकाशित नहीं होता; इसी प्रकार निश्चयही जानकीजी का वदन मंडल शोभायमान न होता होगा ॥१३॥ हे हनुमन् ! जानकीजीने क्या कहा है ? तुम हमारे निकट उसको यथार्थ वर्णन करो. पीडित पुरुष जिस प्रकार औषधिको प्राप्त करके जीवनको पाता है, हम भी वैसेही उनके कथन को सुनकर जीवन लाभ करेंगे ॥१४॥ हे हनुमन् ! सौम्य मूर्त्ति मधुर वचन बोलनेवाली हमारी उन सर्वाङ्गसुन्दरी श्रेष्ठ नितम्बवाली भामिनी जानकीजीने हमारे विरहमें दुःखित होकर हमसे क्या कहा है? सो तुम वर्णन करो; और यह भी कहो कि, सहनेके अयोग्य दुख सहकर श्रीरामचन्द्रजी किस प्रकारसे प्राण धारण कर रही हैं॥१५॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा०आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षट्षष्टितमः सर्गः॥६६॥रघुवंशावतंस श्रीजानकीजीके ऐसे वचन सुन कर हनुमानजी उनसे सीताजी का समस्त वृत्तान्त वर्णन करने लगे ॥१॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! पहले चित्र कूट पर्वतपर जो वृत्तान्त हो गया था, देवी जानकीजी ने उसको ही चिह्न स्वरूप

किमाहसीताहनुमंस्तत्त्वतःकथयस्वमे ॥ एतेनखलुजीविष्येभेषजेनातुरोयथा ॥ १४ ॥ मधुरामधुरालापाकिमाहममभामिनी ॥ मद्विहीनाव रारोहाहनुमन्कथयस्वमे ॥ दुःखाद्दुःखतरंप्राप्यकथंजीवतिजानकी ॥१५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०सुंदरकांडे षट्षष्टितमःसर्गः ॥६६॥ एवमुक्तस्तुहनुमान्राघवेणमहात्मना ॥ सीतायाभाषितंसर्वंन्यवेदयतराघवे ॥ १ ॥ इदमुक्तवतीदेवीजानकीपुरुष र्षभ ॥ पूर्ववृत्तमभिज्ञानंचित्रकूटेयथातथम् ॥२ ॥ सुखसुप्तात्वयासार्धंजानकीपूर्वमुत्थिता ॥ वायसःसहसोत्पत्यविददारस्तनांतरम् ॥ ३ ॥ पर्यायेणचसुप्तस्त्वंदेव्यंकेभरताग्रज ॥ पुनश्चकिलपक्षीसदेव्याजनयतिव्यथाम् ॥ ४ ॥ ततःपुनरुपागम्यविददारभृशंकिल ॥ ततस्त्वंबोधितस्त स्याःशोणितेनसमुक्षितः ॥ ५ ॥ वायसेनचतेनैवंसततंबाध्यमानया ॥ बोधितःकिलदेव्यात्वंसुखसुप्तःपरंतप ॥ ६ ॥ तांदृष्ट्वामहाबाहोदारि तांचस्तनांतरे ॥ आशीविषइवक्रुद्धस्ततोवाक्यंत्वमूचिवान् ॥ ७ ॥

आदिसे अंततक वर्णन किया है॥२॥हे राम ! आपकेसहित एक दिन जानकीजी सुखसे सोयकर आपसे पहलेही उठ बैठी थीं की, इतनेमेंही अचानक एक काकने उडकर उनके स्तनोंके बीचमें घाव कर दिया ॥३॥ हे भरतजीके बडे भ्राता श्रीरामचन्द्रजी ! आप फिर जानकीजीके गोदमें शिर धर सोय गये थे परन्तु उस काकने फिर उनकी छातीमें चोंच मारी व पंजे चलाये कि, जिससे उनकी छाती विदीर्ण होकर अत्यन्त पीडा देने लगी ॥४॥ जब उसने फिर घाव किया तब जानकीजीके शरीरमेंसे रुधिर निकलनेके कारण आपके सब अंग भीग गये और आपभी जाग पडे ॥ ५ ॥ हे परवीरघातिन् ! आप सुखसे सोये हुए थे, उस समय काकके बार २ सताने सेही देवी जानकीजीने आपकी नींद छुटाई ॥ ६ ॥ हे महाबाहो ! उन श्रेष्ठ वर्णवाली जानकीजीके स्तनोंमें घाव देखक

आप विषधर सर्पके समान श्वास लेकर क्रोधसे बोले ॥७॥ हे भीरु ! पंजोंसे तुम्हारे दोनों स्तनोंके बीचमें किसने घाव कर दिया है ? क्रोधमें भरेहुए पंचमुहे सर्पके साथ कौन खेल करताहै ? ॥८॥ कि, इतनेमें ही आपने इधर उधर देखकरहठात् रुधिर लगेहुए तीखे तीखे पंजोंसे युक्त एक काकको देखा, वह श्रीजानकीजीकी ओर मुख किये खडा था ॥९॥ वह काक और कोई नहीं था केवल इन्द्रका पुत्र जयन्त था वह पवनके समान अतिवेगसे एक पलक मारते पातालके मध्यको भागा ॥१०॥ हे बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ ! हे महाबाहो ! उस समय आपके नेत्र मारे क्रोधके घूमने लगे, उस काकके प्रति आपकी क्रोधवासना उपस्थित हुई ॥११॥ आपने आसनके बिछे हुए कुशोंमेंसे एक कुश लेकर उसको ब्रह्मास्त्रसे अभिमंत्रित किया यह कुश प्रलयकी अग्निके समान उस काकके सन्मुख चला ॥ १२ ॥

नखाग्रैःकेनतेभिरुरादितंवै स्तनांतरम् ॥ कःक्रीडतिसरोषेणपंचवक्त्रेणभोगिना॥८॥ निरीक्षमाणःसहसावायसंसमुदैक्षथाः॥ नखैःसरुधिरैस्तीक्ष्णैस्तामेवाभिमुखंस्थितम् ॥ ९ ॥ सुतःकिलसशक्रस्यवायसःपततांवरः ॥ धरांतरगतःशीघ्रंपवनस्यगतौसमः ॥१०॥ ततस्तस्मिन्महाबाहोकोपसंवर्तितेक्षणे ॥ वायसेत्वंव्याधाःक्रूरांमतिंमतिमतांवर ॥ ११॥ सदर्भंसंस्तराद्गृह्यब्रह्मास्त्रेणन्ययोजयः ॥ सदीप्तइवकालाग्निर्जज्वालाभिमुखंखगम् ॥ १२ ॥ सतंप्रदीप्तंचिक्षेपदर्भंतंवायसंप्रति ॥ ततस्तुवासंदीप्तःसदर्भोनुजगामह ॥ १३ ॥ भीतैश्चसपरित्यक्तःसुरैःसर्वैश्चवायसः॥ त्रीँल्लोकान्संपरिक्रम्यत्रातारंनाधिगच्छति ॥१४ ॥ पुनरप्यगतस्तत्रत्वत्सकाशमरिंदम ॥ त्वंतंनिपातितंभूमौधरण्यांशरणागतम् ॥ १५॥ वधार्हमपिकाकुत्स्थकृपयापरिपालयः ॥ मोघमस्त्रंनशक्यंतुकर्तुमित्येवराघव ॥१६॥ ततस्तस्याक्षिकाकस्यहिनस्तिस्मसदक्षिणम् ॥ वायसस्त्वांनमस्कृत्यराज्ञोदशरथस्यच ॥ १७ ॥ विसृष्टस्तुतदाकाकःप्रतिपेदेस्वमालयम् ॥ एवमस्त्रविदांश्रेष्ठःसत्त्ववाञ्छीलवानपि ॥ १८ ॥

उसके पीछे आपने उसको काकके सन्मुख चलाया । तब वह प्रकाशमान कुश उस काकके पीछे २ दौडा ॥१३॥ सब लोगोंने भीत होकर किसी नेभी उसको अपने यहां आश्रय न दिया. वह त्रिलोकीमें घूमा परन्तु कहीं भी उसने अपने उद्धार करनेवालेको न देखा ॥ १४ ॥ हे शत्रुओंके दमन करनेवाले ! तब वह कहीं ठिकाना न पायकर आपहीकी शरणमें आया हे काकुत्स्थ ! वह शरणागत होकर पृथ्वीमें गिर पडा॥१५॥ उसको शरणमें आये जान वधके योग्य होनेपर भी आपने कृपा करकेउसके जीवनकी रक्षा की, परन्तु केवल अस्त्र व्यर्थ करना उचित नहीं है॥१६॥यह कह कर हे श्रीरामचन्द्रजी! आपने उस काककी दाहिनी आंख फोड दी थी । उस कालमें वह काक राजा दशरथजी और आपको प्रणाम करके ॥ १७ ॥ बिदा ले अपने स्थानको चला गया, आप इस प्रकारके अस्त्र

शस्त्र जानने वालोंमें श्रेष्ठ महाबलवान् और मर्यादा पुरुषोत्तम हैं ॥ १८ ॥ तथापि हे श्रीरामचन्द्रजी ! आप किस कारणसे राक्षसोंके ऊपर अस्त्र नहीं चलाते हैं ? क्या दानव; क्या गन्धर्व क्या देव, क्या पवनगण ॥१९॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! कोईभी तुम्हारे सामने संग्राममें नहीं हो सकता है; आप अतिशय वीर्यवान् हैं हमारे प्रति आपका यदि कुछभी आदर हो ॥२०॥ तो शीघ्रही व्यर्थ न होनेवाले बाणोंके समूह चलाय कर युद्धमें रावणका विनाश कीजिये अपने बडेभाईकी आज्ञा ले वह शत्रुओंके तपानेवाले नरश्रेष्ठ लक्ष्मणजी ही ॥ २१ ॥ किस कारणसे हमारा उद्धार नहीं करते हैं । वह दोनों पुरुषश्रेष्ठ अग्नि और पवनके समान तेजस्वी ॥२२॥ देवता लोगोंकोभी अजेय हैं फिर वह किस कारणसे हमारा यहाँ रोका रहना सह रहे हैं ? निःसंदेह ऐसा ज्ञान होता है कि हमाराही कोई महा पाप है ॥ २३ ॥ जो समर्थ होकर भी शत्रुओंके तपानेवाले श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी हमारी रक्षा नहीं करते हैं । श्रेष्ठ जानकीजीके यह करुणा भरे विला

किमर्थमस्त्रंरक्षस्सुनयोजयसिराघव ॥ नदानवानगंधर्वानासुरानमरुद्गणाः ॥ १९ ॥ तवरामरणेशक्तास्तथाप्रतिसमासितुम् ॥ तववीर्यवतःकच्चि न्मयियद्यस्तिसंभ्रमः ॥ २० ॥ क्षिप्रंसुनिशितैर्बाणैर्हन्यतांयुधिरावणः ॥ भ्रातुरादेशमाज्ञायलक्ष्मणोवापरंतपः ॥ २१ ॥ सकिमर्थंनरवरोनमां रक्षतिराघवः ॥ सक्तौतौपुरुषव्याघ्रौवाय्वग्निसमतेजसौ ॥ २२ ॥ सुराणामपिदुर्धर्षौकिमर्थंमामुपेक्षतः ॥ ममैवदुष्कृतंकिंचिन्महदस्तिनसं शयः ॥ २३ ॥ समर्थौसहितौयन्मांनरक्षेते परंतपौ ॥ वैदेह्यावचनंश्रुत्वाकरुणंसाधुभाषितम् ॥ २४ ॥ पुनरप्यहमार्यांतामिदंवचनमब्रुवम् ॥ त्वच्छोकविमुखोरामोदेविसत्येनतेशपे ॥२५॥ रामेदुःखाभिभूतेचलक्ष्मणःपरितप्यते ॥ कथंचिद्भवतीदृष्टानकालःपरिशोचितुम् ॥२६॥ इदं मुहूर्तंदुःखानामंतंद्रक्ष्यसिभामिनि ॥ तावुभौनरशार्दूलौराजपुत्रौपरंतपौ ॥ २७ ॥ त्वद्दर्शनकृतोत्साहौलंकांभस्मीकरिष्यतः ॥ हत्वासमरेरौद्रं रावणंसहबांधवम् ॥ २८ ॥ राघवस्त्वांवरारोहेस्वपुरींनयिताध्रुवम् ॥ यत्तुरामोविजानीयादभिज्ञानमनिंदिते ॥ २९ ॥

पके वचन सुन ॥२४॥ हमने उनसे फिर कहा कि, हम आपके निकट सत्यकी शपथ करके कहते हैं कि, आपके दर्शन न पानेके शोकसे श्रीरामचन्द्रजीका मन किसी कार्यमें नहीं लगता ॥२५॥ और श्रीरामचन्द्रजीके दुःखसे कातर होनेसे लक्ष्मणजी महासंतापित होरहे हैं; जब कि, हमने अनेक कष्टोंसे आपका दर्शन पाया है तो अब शोक करनेका कुछ प्रयोजन नहीं है ॥ २६ ॥ हे भामिनी ! आप इसी समयसे अपने दुःखका अन्त आया जानिये, वह दोनों नरसिंह शत्रु ओंके तपानेवाल राजकुमार ॥ २७ ॥ आपका दर्शन पानेके लिये उत्साहित होकर लंकानगरीको भस्म कर डालेंगे. हे श्रेष्ठवर्णवाली ! क्रूरकर्म करने वाले रावणको बन्धु बान्धवोंके सहित मारकर॥२८॥ आपको ले निश्चय अपने स्थानको लौट जाँयगे, इसमें कुछ भी संदेह नहीं हे श्रेष्ठवर्णवाली ! हे निन्दा

रहित ! और कोई ऐसी निशानी दीजिये कि, जिसके देखनेसे श्रीरामचन्द्रजी हमारा विश्वास मानें कि यह जानकीजीको देख आये ॥ २९ ॥ और उसको देखकर रामचन्द्रको प्रीति उपजे सो दीजिये तब जानकीजी यह सुन और प्रसन्नहो सब ओर दृष्टि कर वेणीमें गूंथनेके योग्य यह उत्तम मणि ॥३०॥ अपने दुपट्टेके अंचलसे खोलकर हमको देदी; हे रघुकुलप्रिय! हे महाबलवान् ! हमने आपके लिये दोनों हाथ फैलाय यह मणि ग्रहण की ॥ ३१ ॥ और शिर झुकाय हम गमन करनेकी शीघ्रता करते हुए, सीताजी हमको चलनेके लिये तैयार देख और समुद्रपार होनेके उत्साही देख श्रेष्ठ वाणी बोलीं ॥३२॥ जानकीजी हमको समुद्र पार होनेको बढ़ते हुए देखकर आंसूभरदीन गद्गद वाणीसे बोलीं ॥ ३३ ॥ हमको उछलनेके लिये तैयार देख सीताजी व्याकुल और शोकसे व्याप्त होकर हमसे बोलीं कि; हे महाकपे ! तुम्हीं भाग्यवान् हो ॥ ३४ ॥ क्योंकि, तुम उन कमललोचन महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी और हमारे उन महाबाहु यशस्वी देवर

प्रीतिसंजननतस्यप्रदातुतत्त्वमर्हसि॥साभिवीक्ष्यदिशःसर्वावेण्युद्ग्रथनमुत्तमम्॥३०॥मुक्त्वावस्त्राद्ददौमह्यंमणिमेतंमहाबल॥ प्रतिगृह्यमणिंदोर्भ्यां तवहेतोरघुप्रिय॥३१॥शिरसासंप्रणम्यैनामहमागमनेत्वरे॥गमनेचकृतोत्साहमवेक्ष्यवरवर्णिनी॥३२॥ विवर्धमानंचहिमामुवाचजनकात्मजा ॥ अश्रुपूर्णमुखीदीनाबाष्पगद्गदभाषिणी॥३३॥ममोत्पतनसंभ्रांताशोकवेगसमाहता॥मामुवाचततःसीतासभाग्योसिमहाकपे॥३४॥ यद्द्रक्ष्यसिमहाबाहुंरामंकमललोचनम्॥लक्ष्मणंचमहाबाहुंदेवरंमेयशस्विनम् ॥३५॥ सीतयाप्येवमुक्तोहमब्रुवंमैथिलींतथा॥पृष्ठमारोहमेदेविक्षिप्रंजनकनंदिनि ॥३६॥यावत्तेदर्शयाम्यद्यससुग्रीवंसलक्ष्मणम्॥राघवंचमहाभागेभर्तारमसितेक्षणे॥३७॥साब्रवीन्मांततोदेवीनैषधर्मोमहाकपे ॥ यतेपृष्ठंसिषेवेहं स्ववशाहरिपुंगव॥३८॥पुराचयदहंवीरस्पृष्टागात्रेषुरक्षसा॥तत्राहंकिंकरिष्यामिकालेनोपनिपीडिता३९॥गच्छत्वंकपिशार्दूलयत्रतौनृपतेःसुतौ॥ इत्येवंसासमाभाष्यभूयःसंदेष्टुमास्थिता ॥४०॥ हनूमन्सिंहसंकाशौतावुभौरामलक्ष्मणौ ॥ सुग्रीवंचसहामात्यंसर्वान्ब्रूयाअनामयम् ॥४१॥

लक्ष्मणजीका दर्शन करोगे॥ ३५॥जानकीजीके यह वचन सुनकर हमने कहा कि हे देवि जनकनंदिनी! आप शीघ्रहमारी पीठपर चढ़िये॥ ३६॥हे श्यामनेत्रोंवाली महाभागे ! जो तुम हमारी पीठपर चढ़ बैठोगी तो अभी तुम लक्ष्मणजी, सुग्रीव और अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन कर सकोगी॥ ३७॥तब देवी जानकीजीने कहा कि हे कपिश्रेष्ठ! पतिव्रतधर्म ऐसा नहीं है कि हम तुम्हारी पीठपर अपनी इच्छानुसार चढें॥ ३८॥हे वीर ! इससे पहले जो राक्षस रावणने हरणके समय हमारे अंगोंको छुआ सो हमारा इसमें क्या वश ? कालकरके पीडित होनेसेही ऐसा हुआ है॥ ३९॥ हे कपिशार्दूल ! वह दोनोंराजकुमार जिस स्थानमें विराजमान हैं तुम इकलेही वहांपर जाओ, इस प्रकारका उपदेश करके वह फिर हमसे संदेशा कहती हुई बोलीं॥ ४०॥हे हनुमन् ! सिंहकेसमान पराक्रमवान् श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्म

णजीसे और मंत्रियोंके सहित सुग्रीवजीसे हमारी कुशलवार्त्ता कहना ॥४१॥ और तुम इस प्रकारसे यहांका समस्त वृत्तान्त कहनाकि जिससे महाबाहु श्रीराम चन्द्रजी हमको इस दुःख समुद्रमेंसे उबारलें ॥४२॥ उनके निकट पहुँचकर तुम हमारे इस अतिशय शोकवेगकी और इन राक्षसियोंसे हमारे पीडित होनेकी समस्त वार्त्ता कहना, हे वानरप्रवीर ! मार्गमें तुम्हारा मंगल हो ॥४३॥ हे राजन् ! श्रेष्ठसीताजीने अतिबिनतीसे व शोक युक्त होकर यह बातें आपसे कही हैं, हमने जिस प्रकारसे जो वार्त्ता आपसे निवेदन की हैं उनको जानकर आप विश्वास कीजिये कि सीताजी कुशलसे हैं ❋ ॥ ४४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां सप्तषष्टितमः सर्गः ॥ ६७ ॥ हे पुरुषशार्दूल ! जब हम चलने के लिये तैयार ही होगये, तब जानकीजीने यह

यथाचसमहाबाहुर्मांतारयतिराघवः॥ अस्माद्दुःखांबुसंरोधात्तत्त्वमाख्यातुमर्हसि॥४२॥इदंचतीव्रंममशोकवेगंरक्षोभिरेभिःपरिभर्त्सनंच॥ ब्रूयास्तुरामस्यगतःसमीपंशिवश्चतेऽध्वास्तुहरिप्रवीर॥४३॥ एतत्तवार्यानृपसंयतासासीतावचः प्रहविषादपूर्वम् ॥ एतच्चबुद्ध्वागदितोयथात्वंश्रद्धस्व सीतांकुशलांसमग्राम् ॥ ४४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सुन्दरकांडे सप्तषष्टितमः सर्गः ॥ ६७ ॥ अथाहमुत्तरंदेव्यापुनरुक्तःससंभ्रमम्॥तवस्नेहान्नरव्याघ्रसौहार्दादनुमान्यच ॥१॥ एवंबहुविधंवाच्योरामोदाशरथिस्त्वया॥ यथामांप्राप्नुयाच्छीघ्रंहत्वा रावणमाहवे ॥२॥ यदिवामन्यसेवीरवसैकाहमरिंदम॥कस्मिंश्चित्संवृतेदेशेविश्रांतःश्वोगमिष्यसि ॥३॥ ममचाप्यल्पभाग्यायाःसान्निध्यात्तववानर ॥ अस्यशोकविपाकस्यमुहूर्तंस्याद्विमोक्षणम्॥४॥गतेहित्वयिविक्रांतपुनरागमनायवै ॥ प्राणानामपिसंदेहोममस्यान्नात्रसंशयः ॥५॥

जानकर कि आपका स्नेह हमपर है, आदर सहित बचे बचाये कार्यके करनेको हमसे कहा ॥ १ ॥ उन्होंने कहा कि तुम इस प्रकारके विविध कथा दशरथ कुमार श्रीरामचन्द्रजीसे कहना कि जिससे वह शीघ्र समरमें रावणको मारकर हमारा उद्धार कर लें ॥२॥ हे शत्रुओंके मारनेवाले वीर ! यदि तुम्हें भावे तो किसी गुप्तस्थानमें आजदिन टिक कल प्रातःकाल श्रम मिटाय कर चले जाना ॥ ३ ॥ हे वानर ! तुम्हारे यहांपर रहनेसे अत्यन्त मंदभागिनी हमारे इस शोकका वेग एक मुहूर्त्तभरके लिये छूट जायगा ॥ ४ ॥ हे विक्रमवान् ! तुम्हारे चले जानेपर, फिर लौटकर जबतक तुम यहां न आओगे तबतक हम

❋ सीताकी कहा विपति सुनाऊं। निजपद नैन दिये रघुनायक निशिदिन जपत रहत तवनाऊं १ इक पल युगसम तिनकहँ बीतत कहां तलक सब कहि समुझाऊं २ आज्ञा दीजै विलम न कीजै लंका सागर मध्य डुबाऊं ३ मिश्रहिये ऐसी आवत है लाय जानकी अबहिं मिलाऊं ।। ४ ।।

तुम्हारी बाट देखती रहेंगी, परन्तु इस बातमें सन्देह है कि तबतक हमारा जीवन रहे या न रहे ॥ ५ ॥ हम दुरवस्थासे युक्त और दुर्भागिनी हैं सो इस समय यह विचार कर कि, तुम्हारा दर्शन फिर होगा या नहीं ? हमारा समय बडे कष्टसे कटेगा इस कारण इस समय और भी दुःख हमको संतापित करेगा ॥ ६ ॥ और हे वीर ! हमको यह भी बडा भारी संदेह होता है, कि तुम्हारे बडे भारी सहायक ऋक्ष और वानर ॥ ७ ॥ इस पार होनेके अयोग्य समुद्रके पार सब वानर रीक्ष किस प्रकारके होंगे, और वह दोनों राजकुमारही किसप्रकार समुद्रके पार होंगे ? ॥८॥ हे पापरहित ! समुद्रको लांघनेकी गति विनतानंदन गरुड; पवन और तुम केवल इन तीन प्राणियोंमें हैं ॥ ९ ॥ इस कारणसे वाक्य जाननेवालोंमें श्रेष्ठ हे वीर ! तुमने इस कठिन कार्यके करनेका क्या उपाय स्थिर किया है ? सो बताओ ॥ १० ॥ हे शत्रुओंके मारनेवाले ! यद्यपि तुम अकेले ही सरलतासे इस कार्यको पूरा कर सकते हो, परंतु ऐसा

तवादर्शनजंचापिभयंमांपरितापयेत् दुःखाद्दुःखपराभूतांदुर्गतांदुःखभागिनीम् ॥६॥ अयंचवीरसंदेहस्तिष्ठतीवममाग्रतः ॥ सुमहांस्त्वत्सहाये नहर्यृक्षेषुनसंशयः ॥ ७ ॥ कथंनुखलुदुष्पारंतरिष्यंतिमहोदधिम् ॥ तानिहर्यृक्षसैन्यानितौवानरवरात्मजौ ॥८॥ त्रयाणामेवभूतानांसागरस्येह लंघने ॥ शक्तिःस्याद्वैनतेयस्यवाथोवातवचानघ ॥९॥ तदस्मिन्कार्यनियोगेवीरैवंदुरतिक्रमे॥ किंपश्यसिसमाधानंब्रूहिवाक्यविदांवर ॥१०॥ काममस्यत्वमेवैकःकार्यस्यपरिसाधने॥पर्याप्तःपरवीरघ्नयशस्यस्तेबलोदयः॥११॥बलैःसमग्रैर्यदिमांहत्वारावणमाहवे ॥ विजयीस्वपुरींरामोन येत्तत्स्याद्यशस्करम् ॥१२॥ यथाहंतस्यवीरस्यवनादुपधिनाहृता ॥ रक्षसातद्भयादेवतथानार्हतिराघवः॥१३॥ बलैस्तुसंकुलांकृत्वालंकांपरब लार्दनः ॥ मांनयेद्यदिकाकुत्स्थस्तत्तस्यसदृशंभवेत् ॥१४॥ तद्यथातस्यविक्रांतमनुरूपंमहात्मनः॥ भवत्याहवशूरस्यतथात्वमुपपादय॥१५॥

करनेसे केवल तुम्हारा ही यश बढेगा ॥ ११ ॥ परन्तु जो श्रीरामचन्द्रजी रावणको उसकी सब सेनाके साथ संहार करके बिजयी हो अयोध्याजीको हमारे साथ जायँगे तो उनका यश भी होगा ॥ १२ ॥ राक्षस रावणने उनकी भार्या हमको जिस प्रकार छल करके हरण किया है, सो रघुवंशमें उत्पन्न हुए श्रीरामचन्द्रजीके योग्य यह कार्य नहीं है कि हम यहांसे लुक छिप कर जायँ ॥ १३ ॥ शत्रुकी सेनाके संहार करनेवाले काकुत्स्थकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजी यदि सेनासे लंकाको व्याकुल कर हमको साथ ले अपनी नगरी अयोध्याको लौटें तो यही कार्य उनके योग्य होगा ॥ १४ ॥ इस कारण जिस कार्यमें उन युद्धशूर महात्माका योग्य कार्य प्रगट हो और जिससे उनके विक्रमका भी प्रकाश हो जाय तुमको वैसा ही उपाय करना चाहिये ॥ १५ ॥

हमने उन जानकीजीके युक्तियुक्त अर्थ सम्पन्न स्नेह साने सब वचन सुन कर पीछेसे उत्तर दिया ॥ १६ ॥ कि हे देवि ! रीछ और वानरोंके अधिपति सत्यनिष्ठ वानरश्रेष्ठ सुग्रीवजीने आपका उद्धार करनेकी प्रतिज्ञा की है ॥ १७ ॥ उन सुग्रीवजीकी आज्ञाके वशमें महाविक्रमी सत्य सम्पन्न इच्छानुसार शीघ्रचलनेवाले महाबली अगणित वानर हैं ॥ १८ ॥ क्या ऊपर क्या नीचे, टेढे न बरन् किसी ओर जानेमें भी उनकी गति नहीं रुकती; वह वानर किसी कार्यके करनेमें व्याकुल नहीं होते और उन लोगोंके बलका भी कुछ पार नहीं ॥ १९ ॥ उन महाभाग वानरोंने पवनके मार्गसेप्रबलबलसे परिपुष्ट होकर वारंवार इस पृथ्वीकी परिक्रमा की है ॥ २० ॥सुग्रीवजीके निकट हमसे अधिक और हमारे तुल्य बलवाले बहुतसे वानर हैं, परन्तु

तथार्थोपहितंवाक्यंप्रश्रितंहेतुसंहितम् निशम्याहंततःशेषंवाक्यमुत्तरमब्रुवम् ॥ १६ ॥ देविहर्यृक्षसैन्यानामीश्वरःप्लवतांवरः ॥ सुग्रीवःसत्त्व संपन्नस्त्वदर्थेकृतनियश्चः ॥ १७ ॥ तस्यविक्रमसंपन्नाःसत्त्ववंतोमहाबलाः ॥ मनःसंकल्पसदृशानिदेशेहरयःस्थिताः ॥ १८ ॥ येषांनोपरिना धस्तान्नतिर्यक्सज्जतेगतिः ॥ नचकर्मसुसीदंतिमहत्स्वमिततेजसः ॥ १९ ॥ असकृत्तैर्महाभागैर्वानरैर्बलसंयुतैः ॥ प्रदक्षिणीकृताभूमिर्वायुमा र्गानुसारिभिः॥२०॥ मद्विशिष्टाश्चतुल्याश्चसंतितत्रवनौकसः॥मत्तःप्रत्यवरःकश्चिन्नास्तिसुग्रीवसन्निधौ॥२१॥ अहंतावदिहप्राप्तःकिंपुनस्तेमहा बलाः ॥ नहिप्रकृष्टाःप्रेष्यंतेप्रेष्यंतेहीतरेजनाः ॥ २२ ॥ तदलंपरितापेनदेविमन्युरपैतुते ॥ एकोत्पातेनतेलंकामेष्यंतिहरियूथपाः ॥ २३ ॥ ममपृष्ठगतौतौचचंद्रसूर्याविवोदितौ ॥ त्वत्सकाशंमहाभागेनृसिंहावागमिष्यतः ॥ २४ ॥

हमसे छोटा तो और कोई वानर है ही नहीं ॥ २१ ॥ जब कि हमही इसपारहोनेके अयोग्य समुद्रके पार आगये तब फिर उन महाबलवान् वानरोंके विषयमें अधिक क्या कहें और देखिये कि बडे पुरुषको कोई कभी किसी कार्यके लिये नहीं भेजता केवल छोटे ही लोग सब कार्योंके लिये भेजजाते हैं ॥ २२ ॥ हे देवि ! अब विलाप करनेका कुछ प्रयोजन नहीं है आपका शोक दूर हो वह समस्त वानरयूथ पति एक छलांग ही भरकर लंकामें आजायँगे ॥ २३ ॥ और हे महावाहो ! वह दो नरश्रेष्ठ श्रीराम लक्ष्मणजीभी हमारी पीठपर सवार होकर उदय हुए सूर्य और चन्द्रमाके सामान आपके

पास आ जायंगे ॥ २४ ॥ आप बहुत ही शीघ्र देखेंगी कि सिंहतुल्य शत्रुओंके मारनेवाले श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी धनुष धारण करके लंकाके द्वार आय पहुँचेंगे ॥ २५ ॥ आप शीघ्र और देखेंगी कि नख और दांतोंको आयुध बनाये सिंहशार्दूलके समान पराक्रम करनेवाले गजराज तुल्य वानरगण शीघ्रही लंकामें इकट्ठे हो आये हैं ॥ २६ ॥ आप बहुत ही शीघ्र श्रवण करेंगी कि पर्वताकार वानर वीरगण लंकाके मेघसमान ऊंचे मलयके कंगूरोंपरगर्जन कररहे हैं ॥ २७ ॥ और आप शीघ्रही देखेंगी कि वनवाससे लौटकर शत्रुओंके दमनकरनेवाले श्रीरामचन्द्रजी अयोध्याके

अरिघ्नंसिंहसंकाशंक्षिप्रंद्रक्ष्यसिराघवम् ॥ लक्ष्मणंचधनुष्मंतंलंकाद्वारमुपागतम् ॥ २५ ॥ नखदंष्ट्रायुधान्वीरान्सिंहशार्दूलविक्रमान् ॥ वानरा न्वारणेंद्राभान्क्षिप्रंद्रक्ष्यसिसंगतान् ॥ २६ ॥ शैलांबुदनिकाशानांलंकामलयसानुषु ॥ नर्दतांकपिमुख्यानांनचिराच्छ्रोष्यसेस्वनम् ॥ २७ ॥ निवृत्तवनवासंचत्वयासार्धमरिंदमम् ॥ अभिषिक्तमयोध्यायांक्षिप्रंद्रक्ष्यसिराघवम् ॥ २८ ॥ ततोमयावाग्भिरदीनभाषिणीशिवाभिरिष्टाभि रभिप्रसादिता ॥ उवाहशांतिंममैथिलात्मजातवातिशोकेनतथातिपीडिता ॥२९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्ये चतुर्विंशति साहस्र्यां संहितायां सुंदरकांडे अष्टषष्टितमः सर्गः ॥ ६८ ॥ इतिसुंदरकांडसंपूर्णम् ॥ अतःपरंयुद्धकांडंभविष्यति ॥ तस्यायमाद्यः श्लोकः ॥ श्रुत्वाहनूमतोवाक्यंयथावदभिभाषितम् ॥ रामःप्रीतिसमायुक्तोवाक्यमुत्तरमब्रवीत ॥ १ ॥

राज्यसिंहासन पर आपके सहित बैठे हैं ॥ २८ ॥ चौपाई—यद्यपि तब दुखसों रघुनाथा । विलपत सीय धुनत निज माथा ॥ तद्यपि मम सुखसों हितकारी । सुनत वचन शुभधरणिकुमारी ॥ तुरत हि दीनभावको त्यागी । भइ तव चरण कमल अनुरागी ॥ हौं प्रियवचनन सों समुझायो । त्यागि शोक सिय हर्ष बढायो ॥ २९ ॥ इति श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आ० सुं ०पं० ज्वालाप्रसादमिश्रकृत भाषायां चतुर्विंशत्साहस्रिकायां संहितायामष्टषष्टितमः सर्गः ॥ ६८ ॥

दोहा—जगजीवन जानकिरमण, जनमन आनँदकंद ॥ चरण शरण दै चक्रसों, काटहु कलुषनि फन्द ॥
निराधार नद मध्यमें, नैया डूबी जाय ॥ तुम बिन हे करुणायतन, कौन उबारे आय ॥
शान्ति करो मो चित्त धरो, बल देवहु श्रीराम ॥ जासों कुछ औरहु कहों, तब गुण चरित ललाम ॥
जनकलडैती जानकी, जग माता यशखानि ॥ अब ज्वालापरसादपै, होहु प्रसन्न भवानि ॥
दुष्टनिकंदन वीर वर, हे श्रीपवनकुमार ॥ प्रभु ज्वालापरसादके, संकट दीजे टार ॥

इति श्रीसुन्दरकांड समाप्त ॥ शुभमस्तु.



हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५,
फैक्स -०२०-२६८७४९०७.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१.
दूरभाष/फैक्स- ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-४२००७८.

इति

श्रीमद्वाल्मीकिरामायणे

सुन्दरकाण्डम्



खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई-४



खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई - ४.